प्रयोजनमूलक हिंदी

ततीय प्रश्न पत्र
Paper-3

एम.ए. हिंदी (उत्तरार्द्ध)
M.A. Hindi (Final)

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय
महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय
रोहतक-124 001

Copyright © 2004, Maharshi Dayanand University, ROHTAK
All Rights Reserved. No part of this publication may be reproduced or stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means; electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the written permission of the copyright holder.

Maharshi Dayanand University
ROHTAK – 124 001

विषय-सूची

अध्याय 1. कामकाजी हिंदी 5

अध्याय 2. हिंदी कंप्यूटिंग 30

अध्याय 3. पत्रकारिता 49

अध्याय 4. मीडिया लेखन 69

अध्याय 5. अनुवाद : सिद्धांत एवं व्यवहार 98

अध्याय 6. पारिभाषिक शब्दावली 143

एम०ए० हिंदी (उत्तरार्द्ध)

प्रयोजनमूलक हिंदी

प्रश्न-पत्र–ततीय

समयः 3 घण्टे
पूर्णांकः 100

नोटः
1. खण्ड 'क' से 'ङ' तक (पांचों खण्डों में) प्रत्येक से एक–एक प्रश्न पूछा जाएगा। परीक्षार्थियों को इनमें से किन्हीं तीन प्रश्नों के विस्तत उत्तर लिखने होंगे। प्रत्येक प्रश्न बीस अंकों का होगा।
2. षष्ठ प्रश्न लघूत्तरी प्रकृति का होगा। इसमें खण्ड 'क' से 'ङ' तक प्रत्येक से विकल्प सहित पांच प्रश्न पूछे जायेंगे, परीक्षार्थियों को पांचों प्रश्नों का उत्तर देना होगा। (विकल्प आधारित दस प्रश्नों में से पांच प्रश्नों के उत्तर देने होंगे।) प्रत्येक प्रश्न 300 शब्दों का होना चाहिए और प्रत्येक प्रश्न 5 अंकों का होगा। पूरा प्रश्न 25 अंक का होगा।
3. अंतिम–सप्तम प्रश्न 'खण्ड ख' निर्धारित शब्दावली पर होगा। बीस शब्द दिये जायेंगे जिनमें से किन्हीं पन्द्रह के हिंदी पारिभाषिक शब्द लिखना होगा। प्रत्येक शब्द के लिए एक अंक निर्धारित होगा। पूरा प्रश्न 15 अंक का होगा।

(क) कामकाजी हिंदी

हिंदी के विविध रूपः सर्जनात्मक भाषा, संचार भाषा, राजभाषा, माध्यम भाषा, कार्यालयी (राजभाषा) के प्रमुख प्रकार्यः प्रारूपण, पत्र–लेखन, संक्षेपण, पल्लवन, टिप्पणी, पारिभाषिक शब्दावलीः परिभाषा, स्वरूप, महत्त्व, पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण के सिद्धांत, ज्ञान–विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों की पारिभाषिक शब्दावली

(ख) हिंदी कंप्यूटिंग

कंप्यूटरः परिचय और उपयोग, इंटरनेटः संपर्क उपकरण परिचय, इंटरनेटः समय मितव्ययिता का सूत्र, इंटरनेट एक्सप्लोरर, नेटस्केप नेवीगेटर, लिंक और ब्राउजिंग, ई–मेल : भेजना, प्राप्त करना (डाउन लोडिंग, अपलोडिंग), मशीनी अनुवादः स्वरूप और प्रविधि

(ग) पत्रकारिता

पत्रकारिता का स्वरूप, भेद एवं महत्त्व, हिंदी पत्रकारिता : उद्‌भव और विकास, समाचार लेखन कला, समाचार के स्रोत, प्रेम विज्ञप्ति, संपादकीय विभाग और संपादन, प्रूफ पठन और व्यावहारिक प्रूफ संशोधन, शीर्षक रचना एवं उसका संपादन, साक्षात्कार, विज्ञापन लेखन

(घ) मीडिया लेखन

जन संचारः प्रौद्योगिकी एवं चुनौतियाँ, जनसंचार माध्यमों का स्वरूपः मुद्रण, श्रव्य, दश्य–श्रव्य, इंटरनेट, श्रव्य माध्यम (आकाशवाणी), मौखिक भाषा की प्रकृति, रेडियो नाटक, उद्‌घोषणा लेखन, फीचर, दश्य–श्रव्य माध्यम (चलचित्र, दूरदर्शन, वीडियो), दश्य माध्यमों की भाषा की प्रकृति, दश्य एवं श्रव्य सामग्री का सामंजस्य, पार्श्ववाचन (वायस ओवर), विज्ञापन की भाषा, इंटरनेटः परिचय एवं सामग्री–सजन,

(ङ) अनुवाद : सिद्धांत एवं व्यवहार

अनुवादः परिभाषा एवं स्वरूप, क्षेत्र और प्रक्रिया, हिन्दी की प्रयोजनीयता में अनुवाद की भूमिका, कार्यालयी हिंदी और अनुवाद, साहित्यिक अनुवादः सिद्धांत एवं व्यवहार, काव्यानुवाद और संबंधित समस्याएँ, कहानी अनुवाद और संबंधित समस्याएँ, विज्ञापन में अनुवाद, विधि ा साहित्य का अनुवाद

(च) पारिभाषिक शब्दावली : भाषा विज्ञान

प्रयोजनमूलक हिंदी

1 कामकाजी हिंदी

1.1 हिंदी के विविध रूप

1.2 कार्यालयी (राजभाषा) के प्रमुख प्रकार्य : प्रारूपण, पत्र–लेखन, संक्षेपण, पल्लवन, टिप्पण

1.3 पारिभाषिक शब्दावली : परिभाषा, स्वरूप, महत्त्व, पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण के सिद्धांत

1.4 ज्ञान–विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों की पारिभाषिक शब्दावली

2. हिंदी कंप्यूटिंग

2.1 कंप्यूटर : परिचय और उपयोग

2.2 इंटरनेट : संपर्क उपकरण परिचय

2.3 इंटरनेट : समय मितव्ययिता का सूत्र

2.4 इंटरनेट एक्सप्लोरर

2.5 नेटस्केप नेवीगेटर

2.6 लिंक और ब्राउजिंग

2.7 ई–मेल : भेजना, प्राप्त करना (डाउन लोडिंग, अपलोडिंग)

2.8 मशीनी अनुवाद : स्वरूप और प्रविधि

3. पत्रकारिता

3.1 पत्रकारिता का स्वरूप, भेद एवं महत्त्व

3.2 हिंदी पत्रकारिता : उद्‌भव और विकास

3.3 समाचार लेखन कला

3.4 समाचार के स्रोत

3.5 प्रेम विज्ञप्ति

3.6 संपादकीय विभाग और संपादन

3.7 प्रूफ पठन और व्यावहारिक प्रूफ संशोधन

3.8 शीर्षक रचना एवं उसका संपादन

3.9 साक्षात्कार

3.10 विज्ञापन लेखन

4. मीडिया लेखन

4.1 जन संचार : प्रौद्योगिकी एवं चुनौतियाँ

4.2 जनसंचार माध्यमों का स्वरूप : मुद्रण, श्रव्य, दश्य–श्रव्य, इंटरनेट

4.3 श्रव्य माध्यम (आकाशवाणी)
4.4 मौखिक भाषा की प्रकृति
4.5 रेडियो नाटक, उद्‌घोषणा लेखन, फीचर
4.6 दश्य–श्रव्य माध्यम (चलचित्र, दूरदर्शन, वीडियो)
4.7 दश्य माध्यमों की भाषा की प्रकृति
4.8 दश्य एवं श्रव्य सामग्री का सामंजस्य
4.9 पार्श्ववाचन (वायस ओवर)
4.10 विज्ञापन की भाषा
4.11 इंटरनेट : परिचय एवं सामग्री–सजन

5. अनुवाद : सिद्धांत एवं व्यवहार

5.1 अनुवाद : परिभाषा एवं स्वरूप, क्षेत्र और प्रक्रिया
5.2 हिन्दी की प्रयोजनीयता में अनुवाद की भूमिका
5.3 कार्यालयी हिंदी और अनुवाद
5.4 साहित्यिक अनुवाद : सिद्धांत एवं व्यवहार
5.5 काव्यानुवाद और संबंधित समस्याएँ
5.6. कहानी अनुवाद और संबंधित समस्याएँ
5.7 विज्ञापन में अनुवाद
5.8 विधि साहित्य का अनुवाद

6. पारिभाषिक शब्दावली (निर्धारत 200 शब्द)

अध्याय-1

कामकाजी हिंदी

1.1 हिंदी के विविध रूप

आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं में हिंदी सर्वाधिक लोगों द्वारा समझी और प्रयोग की जाने वाली भाषा है। इसका प्रयोग देश से लेकर विदेश तक होता है। हिंदी भारतवर्ष की जनभाषा और राष्ट्रभाषा है। संविधान में हिंदी को राजभाषा का गरिमामय पद प्राप्त है। हिंदी भारतवर्ष की राष्ट्रीयता ही नहीं, अस्मिता की पहचान है। विस्तत भौगोलिक क्षेत्र में प्रयुक्त होने से इसमें वैविध्य होना स्वाभाविक है। हिंदी में एकरूपता विकास हेतु इसका मानकीकरण किया गया है। इसीलिए हिंदी को 'मानक हिंदी' नाम भी दिया गया है।

(अ) सर्जनात्मक भाषा

दैनिक जीवन के व्यवहार में सामान्य भाषा का प्रयोग होता है। साहित्य–सजन में परिनिष्ठित और साहित्यिक भाषा का प्रयोग होता है। सर्जनात्मक भाषा का उद्‌भव बोलचाल की भाषा से होता है। जब बोलचाल की भाषा में कल्पना, नवीनता और मुहावरे आदि का प्रयोग होता है, तो सर्जनात्मक भाषा का रूप विकसित हो जाता है। 'गधा' का प्रारंभिक प्रयोग एक पशु विशेष के लिए होता था, किन्तु बाद में इसका प्रयोग मूर्खता के प्रतीक रूप में होने लगा है– "वह बिलकुल गधा है।" भाषा के व्याकरणसम्मत रूप होने के पश्चात् जब उसे साहित्यिक रूप मिलता है तो उसे सर्जनात्मक भाषा कहते हैं। डॉ॰ भोलानाथ तिवारी ने ऐसी भाषा के विषय में लिखा है, "साहित्यकारों ने साहित्य में सामान्य भाषा का प्रयोग करते–करते साहित्यिक भाषा के रूप में नये नूतन रूप का सजन किया और सामान्य भाषा और साहित्यिक भाषा में आदान–प्रदान के बावजूद सामान्य भाषा से अलग साहित्यिक भाषा को सत्ता को स्वीकृति मिल गई।"

सर्जनात्मक भाषा को मुख्यतः दो वर्गों में विभक्त करते हैं– प्रथम, गद्यात्मक भाषा; द्वितीय, पद्यात्मक भाषा। गद्य के अर्न्तगत कहानी, उपन्यास, नाटक, निबंध, संस्मरण और समीक्षा आदि विधाएँ आती हैं। इन सभी विधाओं की भाषा में विधागत वैशिष्ट्य होना स्वाभाविक है; यथा– नाट्यभाषा में ध्वन्यात्मकता के साथ रिक्त वाक्य, संबोधनात्मक और प्रश्नवाचक वाक्यों से भाषा का स्वरूप अभिनेयता के लिए वरदान सिद्ध होता है। गद्य साहित्य का भाषायी रूप सामान्यतः व्याकरणसम्मत होता है।

काव्य-भाषा–लयात्मकता, गेयता ही नहीं, विचलन विलक्षणता के लिए काव्य–भाषा प्रसिद्ध है। यदि काव्य की श्रेष्ठता की पहचान उसकी भाव–प्रवणता, छन्दबद्धता और लयात्मकता से होती है तो निश्चय ही काव्य–भाषा के ये ही गुण हैं

कथा साहित्य की भाषा में यदि प्रवाहमयता होती है तो काव्य–भाषा में व्याकरण के सामान्य नियमों की उपेक्षा कर नया रूप दिया जाता है। भक्त शिरोमणि तुलसीदास ने रामचरितमानस में सुन्दर लयात्मक छन्दबद्ध काव्य की योजना की है–

प्रविसि नगर कीजै सब काजा।
हृदय राखि कोसलपुर राजा।।

इसे गद्यात्मक रूप में प्रस्तुत करने पर भाषा का लयात्मक सौन्दर्य विलुप्त हो जाता है–

कोसलपुर (के) राजा (को) हृदय (में) राखि,
नगर (में) प्रविसि सब काज कीजै।

सर्जनात्मक साहित्य में मुहावरों और लोकोक्तियों के प्रयोग से भावाभिव्यक्ति में गंभीरता और स्पष्टता आती है। अलंकारों के सहज और स्वाभाविक प्रयोग से भाषा को भास्वर रूप मिलता है, जिससे संप्रेषणीयता को सबल आधार मिलता है।

बिम्ब–विधान से अमूर्त भाव मूर्त होकर सहज ग्राह्य और हृदयस्पर्शी बन जाते हैं। महाप्राण निराला की 'संध्या–सुंदरी' रचना की कुछ प्रभावी पंक्तियाँ उल्लेखनीय हैं–

"दिवसावसान का समय
मेघमय आसमान से उतर रही है
वह संध्या–सुंदरी परी–सी –
धरी–धीरे–धीरे।।"

निश्चय ही सर्वजनात्मक भाषा के व्याकरणसम्मत रूप में आकर्षक भाव–प्रवणता, सहज अलंकारिता और अनुकूल प्रवाहमयता होती है। साहित्यकार महान् शब्दशिल्पी होता है। इसलिए शब्द की कुशल–योजना सर्जनात्मक भाषा के लिए वरदान सिद्ध होती है।

(आ) संचार भाषा

भावों का संचार या संप्रेषण मुख्यतः भाषिक और भाषिकेतर दो रूपों में होता है। भाविक रूप मुख्यतः लिखित ओर उच्चरित दो रूपों

में होता है। लिखित रूप लिपिबद्ध होने से स्थान और समय की दूरी पार कर लेता है। वर्तमान युग को कंप्यूटर या संचार का युग माना गया। संचार माध्यम से आज हम एक स्थान पर बैठे हुए विश्व के कोने–कोने की जानकारी पा लेते हैं। समाचार–पत्र, आकाशवाणी और दूरदर्शन संसार के प्रमुख संचार माध्यम हैं। इन वैज्ञानिक आधारों पर भाषा संचार का माध्यम बनती है। ऐसी भाषा को संचार भाषा की संज्ञा दी जाती है। हिंदी भारतवर्ष के अधिकांश लोगों द्वारा समझी और प्रयोग की जाने वाली भाषा है। इसका प्रयोग भारतवर्ष से बाहर गयाना, सूरीनाम, फिजी, ट्रिनीडाड, टुबैगो, कनाडा और अमेरिका आदि देशों में होता है।

विभिन्न संचार माध्यमों में हिंदी अभिव्यक्ति का साधन है। इलेक्ट्रानिक संचार माध्यमों का आधार पाकर हिंदी दिक्–काल की सीमा पार कर वैश्विक धरातल को अपना चुकी है। संचार माध्यमों–आकाशवाणी, दूरदर्शन, दूरसंचार और कंप्यूटर में हिंदी के बढ़ते प्रयोग और प्रयुक्तियों को देख सकते हैं।

(क) आकाशवाणी और हिंदी – श्रव्य संचार माध्यमों में आकाशवाणी सर्वाधिक लोकप्रिय है। हिंदी का प्रयोग भारतवर्ष के अतिरिक्त विदेश में भी किया जाता है। बी॰ बी॰ सी॰ लंदन से हिंदी का आकर्षक प्रयोग सुनाई देता है। ऐसी भाषा में उच्चारण की शुद्धता पर विशेष बल दिया जाता है। व्याकरण–सम्मत रूप होने के साथ बलाघात, विराम, मात्रा और आरोह–अवरोह पर विशेष ध्यान देना होता है। आकाशवाणी का समाचार पठन या प्रसारण जनसामान्य के लिए होता है। इसलिए विज्ञान, खेल–कूद, चिकित्सा, कृषि और स्वास्थ्य आदि सभी विषयों की भाषा यथासाध्य सरल रखी जाती है।

आकाशवाणी के माध्यम से हिंदी में वार्ता, परिसंवाद, नाटक और गीत आदि प्रस्तुत किए जाते हैं। आकाशवाणी के प्रारंभिक चरण में हिंदी की प्रस्तुति प्रायः ऐसी होती है–

"यह आकाशवाणी का ..... केन्द्र है।
अब आप ..... से समाचार सुनिए।"

(ख) दूरदर्शन और हिंदी – वर्तमान समय में दूरदर्शन सर्वाधिक लोकप्रिय दश्य–श्रव्य माध्यम है। भारतवर्ष की अधिकांश जनसंख्या के द्वारा हिंदी का प्रयोग किया जाता है। उपभोक्ता संस्कृति के प्रसार–प्रचार के कारण दूरदर्शन पर हिंदी को गंभीरता से अपनाया जा रहा है। दूरदर्शन पर आने वाले हिंदी सीरियलों की प्रतिस्पर्धा हिंदी के महत्त्व को उजागर करती है। प्रचार–प्रसार की दष्टि से विज्ञापन में हिंदी के बढ़ते प्रयोग से हिंदी का उज्ज्वल भविष्य सामने आ रहा है। दश्य–श्रव्य माध्यम होने के कारण प्रयोक्ता को पर्याप्त अभ्यास करना होता है। दूरदर्शन की हिंदी भाषा को विविधता विभिन्न चैनलों और उनके कार्यक्रमों में देख सकते हैं। सीरियलों में परिमार्जित, व्यंग्यप्रधान और खिचड़ी भाषा उनके प्रारूप के अनुसार मिलती है। विज्ञापनों की हिंदी का अपना ही रूप होता है। चलचित्र जगत् के अदाकारों मुख्यतः अभिनेत्रियों की अंग्रेजी मिश्रित हिंदी का अपना ही रूप होता है; यथा– "मैं चलूँगी बट जल्दी आ जाऊँगी।" दूरदर्शन कार्यक्रम के अन्त में अभिवादन –'नमस्कार' ऐसे शब्दों का प्रयोग करना विशेष प्रभाव छोड़ता है।

(ग) दूरसंचार और हिंदी – दूरसंचार के माध्यमों में टेलीग्राम, टेलीफोन, फैक्स आदि विशेष उपयोगी सिद्ध हो रहे है।। तार की भाषा की संरचना संक्षिप्तता लिए हुए होती है। हिंदी में तार देने से शुल्क कम लगता है और वाक्य के पदों को गिनकर शुल्क लिया जाता है। वाक्य को पद आधार पर शिरोरेखा लगाना अनिवार्य है; यथा– "तुम्हारेलिए दिल्लीसे छतरी लेजारहाहै।" टेलीफोन आज लगभग सर्वसुलभ संचार माध्यम है।

(घ) कंप्यूटर-इंटरनेट और हिंदी – वर्तमान युग में कंप्यूटर मानव को प्रत्येक दिशा में गति देने वाला लोकप्रिय यंत्र है। कंप्यूटर पर हिंदी के सभी कार्य संभव हैं और हो रहे हैं। त्वरित गति से लेखन, छपाई के साथ सामग्री का स्थायी संसाधन संभव है। इंटरनेट पर दूर–देश से ई–मेल के माध्यम से समाचार आदान–प्रदान संभव हो गया है। इंटरनेट पर दूर देश के पुस्तकालय की किसी भी पुस्तक की सामग्री उपलब्ध कर सकते हैं। चिकित्सा के लिए हर देश के डॉक्टर से सलाह ले सकते हैं। यह श्रेष्ठतम संचार माध्यम है।

(इ) राष्ट्रभाषा (National Language)

किसी देश के अधिकांश लोगों द्वारा समझी तथा प्रयुक्त की जाने वाली भाषा राष्ट्रभाषा होती है। यदि किसी राष्ट्र में एकाधिक राष्ट्रीय भाषाओं का प्रयोग होता है हो या वहाँ के संविधान में मान्यता प्राप्त हो, तो उनमें से सर्वाधिक रूप में प्रयुक्त भाषा को राष्ट्रभाषा का स्थान प्राप्त होता है। राष्ट्रभाषा का सम्मान देश को गरिमा और गौरव प्रदान करता है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने राष्ट्रीय भावना से आंदोलित होकर लिखा है–

"निज भाषा उन्नति अहै सब उन्नति को मूल,
बिन निज भाषा ज्ञान के, मिटे न हिय को सूल।।"

हिंदी भारतवर्ष की राष्ट्रभाषा है। हिंदी का प्रयोग भारतवर्ष के विस्तीर्ण भौगोलिक भाग – हरियाणा, उत्तरप्रदेश, बिहार, मध्यप्रदेश, राजस्थान, हिमाचल प्रदेश, उत्तरांचल प्रदेश, दिल्ली में होता है। इस भाग को हिंदी–भाषी प्रदेश की संज्ञा दी जाती है। इसके साथ

भारत के विभिन्न प्रदेशों में हिंदी के विशेष रूप प्रयुक्त होते हैं; यथा– मुम्बईया हिंदी, कोलकतिया हिंदी आदि। हिंदी के विविध रूप राष्ट्रभाषा के आधार–स्वरूप हैं। राष्ट्रभाषा के लिए संविधान में मान्यता की अपेक्षा नहीं होती है। यह देश के अधिकांश लोगों की मानसिक स्वीकृति पर प्रतिष्ठित होती है। राष्ट्रभाषा के विविध रूपों का व्याकरणसम्मत रूप या उनमें एकरूपता की अपेक्षा नहीं होती। विभिन्न अहिंदी–भाषी लोग अपनी भाषा के साथ हिंदी का प्रयोग करते रहते हैं। उनकी हिंदी में उनकी अपनी भाषा की छाया होना स्वाभाविक है। यह राष्ट्रभाषा के विस्तार और स्वरूप की विशेषता है। राष्ट्रभाषा की विविधता में एकता का पूत मंत्र होता है। राष्ट्रभाषा देश को भावात्मक एकता को आधार प्रदान करती है। भारत एक लम्बे समय तक विदेशी शासकों के आधिपत्य में रहा है। यहाँ मुस्लिम और अंग्रेजी शासन की राजभाषा क्रमशः फारसी और अंग्रेजी रही है, किन्तु यहाँ राष्ट्रभाषा सदा से ही हिंदी रही है। राष्ट्रभाषा में साहित्य–सजन की परंपरा, लोकसाहित्य इसके सबल और प्रबल पक्ष हैं। स्वतंत्रता आंदोलन में 'वंदे मातरम्' 'जिंदाबाद' के नारे हिंदी की गरिमा को प्रमाणित करते रहे है।।

(ई) राजभाषा (Official Language)

राजभाषा के लिए अंग्रेजी Official Language पर्याय रूप में प्रयुक्त होता है। इसी आधार पर इसे 'कार्यालयी भाषा' भी कहते हैं, किन्तु 'कार्यालयी भाषा' शब्द 'राजभाषा' का समानार्थी नहीं है। किसी देश या प्रदेश का राज–काज जिस भाषा में होता है, उसे उस देश–प्रदेश की राजभाषा कहते हैं। राजभाषा का क्षेत्र मुख्यतः शासन–प्रशासन, विधान–कार्यपालिका और विधि–न्यायालय है। सामान्यतः देश की राष्ट्रभाषा को ही राजभाषा का स्थान दिया जाता है। सामान्य व्यक्ति राष्ट्रभाषा से जुड़ा होता है, इसलिए उसे राजभाषा बनाने और उसमें कार्य–संचालन सरल होता है। विदेशाी शासन में यह संभावना बहुत कम होती है। विदेशी शासक मनचाही शासन–व्यवस्था हेतु अपनी भाषा को राजभाषा बनाता है। ऐसे में जनसामान्य और शासक की भाषा भिन्न होती है।

भारतवर्ष की गुलामी के समय यहाँ राजभाषा विदेशी ही थी। मुस्लिम शासन काल में यहाँ की राजभाषा फारसी थी तो अंग्रेजी काल में अंग्रेजी थी। 15 अगस्त, 1947 को भारत स्वतन्त्र हुआ और यहाँ की राष्ट्रभाषा हिंदी को 14 सितम्बर, 1949 को राजभाषा का गरिमामय पद दिया गया है।

संविधान के अनुसार हिंदी भारतवर्ष की राजभाषा है। संविधान में हिंदी–प्रयोग के उपयोगी प्रावधान हैं। हिंदी–प्रयोग की स्थिति विचारणीय है। अपेक्षा है, प्रावधानों पर व्यक्तिगत और प्रशासनिक रूप में गंभीरता से कार्य करने की। राष्ट्रीय गरिमा के लिए राजभाषा हिंदी को अनुकूल सम्मान मिलना चाहिए।

(उ) माध्यम भाषा

भाषा सामान्य व्यवहार के माध्यम के साथ विविध ज्ञान–विज्ञान के ज्ञानार्जन का माध्यम है। हिंदी साहित्य–सजन का माध्यम हिंदी भाषा है। हिंदी भाषा के अभाव में हिंदी साहित्य की कल्पना भी असंभव है। जिस प्रकार हिंदी–भाषी समाज के भावादान–प्रदान की भाषा हिंदी है, इसी प्रकार उनके विविध ज्ञानार्जन का माध्यम भी हिंदी भाषा है। इसी प्रकार सभी भाषाओं के माध्यम से उनसे संबंधित भाषा–भाषी समाज विविध क्षेत्रों में उन्नति करता है।

हिंदी भारतवर्ष की राजभाषा, जनभाषा, राष्ट्रभाषा और राजभाषा भी है। वर्तमान समय में विभिन्न विषयों का अध्ययन–अध्यापन हिंदी माध्यम से होने लगा है। हिंदी–भाषी क्षेत्र में वाणिज्य, समाज विज्ञान ही नहीं; विज्ञान विषयों को अध्यापन हिंदी माध्यम से विशेष रूप से होने लगा है। विविध शिक्षा संस्थाओं, महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों में परीक्षा के उत्तर हिंदी माध्यम से लिखने की छूट है। अनेक प्रतियोगी परीक्षाओं में भी हिंदी प्रयोग का ऐसा ही अवसर दिया गयाहै। राजभाषा के नियमानुसार न्यायपालिका और कार्यपालिका की गतिविधियों का माध्यम हिंदी होना चाहिए।

हिंदी को विविध विषयों के चिंतन–मनन, अध्ययन–अध्यापन को दिशा प्रदानकरने के लिए अनेक विषयों की पारिभाषिक शब्दावलियाँ तैयार की गई हैं। इन शब्द–कोषों के अनुसरण से हिंदी पारिभाषिक शब्दों में एकरूपता और स्पष्टता बनी रहेगी।

भारत शताब्दियों तक विदेशी शासन में साँस लेता रहा है। अंग्रेजी शासन का प्रभाव आज भी सुस्पष्ट रूप में दिखाई देता है। शिक्षा और विविध कार्य–क्षेत्र में अंग्रेजी का प्रभाव आज भी दिखाई देता है। यह हमारी भ्रमित मानसिकता है कि ज्ञान–विज्ञान की शिक्षा अंग्रेजी माध्यम से ही संभव है। अंग्रेजी विदेशी भाषा है यह निर्विवाद सत्य है कि कोई भी व्यक्ति किसी भी विषय का ज्ञान जितनी सहजता, सरलता और व्यावहारिकता से अपनी भाषा में सीखता है, उतनी गति से किसी भी विदेशी भाषा को माध्यम बना कर नहीं सीख सकता है। प्रत्येक व्यक्ति का चिंतन–मनन और विचार सर्वप्रथम अपनी भाषा के माध्यम से होता है, उसके पश्चात् अन्य भाषा में अनूदित कर अभिव्यक्ति का अवसर मिलता है।

अपनी भाषा को माध्यम बनाकर की जाने वाली भावाभिव्यक्ति सुस्पष्ट और मौलिक होती है। इसमें जहाँ भाषा का अपना संरचनात्मक रूप होता है, वहीं विषय भाव और संदर्भ के मौलिक रूप का प्रभावी रंग होता है। ऐसी मौलिकता शिक्षा और जीवन के गतिशील पथ पर अपनी पहचान छोड़ती है।

हिंदी का प्रयोग भारतवर्ष के बहुसंख्यक लोग करते हैं। इस प्रकार यदि शिक्षा का माध्यम हिंदी बनाया जाए तो देश को दिशा मिलेगी। इस विषय में शासन शिक्षा संस्थाओं और व्यक्तिगत रूप से भी प्रयास किए जा रहे हैं। विज्ञान, विधि, वाणिज्य, पर्यावरण आदि विषयों में हिंदी को माध्यम बनाने के लिए शासन द्वारा पुस्तकें लिखवाई जार ही हैं, साथ ही ऐसे उत्साही लेखकों को प्रतिवर्ष पुरस्कृत करने की भी योजना चल रही है।

(ऊ) मातभाषा

भारतीय मात–प्रधान संस्कृति के ही समान भाषा को विशेष महत्त्व देने के लिए मातभाषा नाम दिया गया है। भाषा मानव की उन्नति का सर्वप्रधान और महत्त्वपूर्ण माध्यम है। भाषा के आधार पर समाज का विकास हुआ है और समाज के आधार पर भाषा का विकसित रूप सामने आया है। प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी भाषा से आतिय रूप से जुड़ा होता है। इस भाषा के माध्यम से ही उस व्यक्ति का व्यक्तित्व विकसित होता है और उसके जीवन को गतिशीलता मिलती है। व्यक्ति ऐसी ही भाषा के माध्यम से परिवार और समाज में अपना स्थान बनाता है। भक्ति में सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक और दार्शनिक आदि भाव ऐसी भाषा के ही आधार पर विकसित होते हैं।

कुछ विद्वानों का कथन है कि जन्म के पश्चात् बालक जिस भाषायी परिवेश में रहकर प्रारंभिक भाव का आदान–प्रदान करता है; उसे उसकी मातभाषा की संज्ञा देनी चाहिए। माना एक बालक हरियाणवी क्षेत्र में रह कर बड़ा होता है, तो उसकी प्रारंभिक अभिव्यक्ति की भाषा हरियाणवी होगी। इसे दष्टिगत कर कहा जा सकता है कि उस बालक की मातभाषा हरियाणवी नहीं, हिंदी है।

इस पर गंभीर रूप से विचार करते हैं तो ज्ञात होता है कि हरियाणवी भाषी बालक जैसे–जैसे बड़ा होता है, वैसे–वैसे इस भाषा में भावाभिव्यक्ति करने लगता है। इसका प्रयोग बोलचाल या सामान्य व्यवहार में प्रभावी रूप में होता है। जब वह विद्यालय जाने के योग्य होता है, तो मुख्यतः हिंदी भाषा सीखता है। हरियाणवी हरियाणा प्रांत में प्रयुक्त जनपदीय भाषा है। पश्चिमी हिंदी की एक प्रमुख बोली है। हिंदी की बोली होने के कारण हरियाणवी क्षेत्र का बालक हिंदी की संरचना को सरलता से ग्रहण कर लेता है। वह समाज, शिक्षा, राजनीति और धर्म आदि के क्षेत्रों में गतिशील रहने के लिए हिंदी भाषा को ही अपनाता है। ऐसी प्रक्रिया भाषा और बोली के सहज संबंधों के कारण होती है। यही बात हिंदी या किसी भी भाषा की विभिन्न बोलियों के संदर्भ में है।

इस प्रकार जिस भाषा में मनुष्य अपने जीवन में गतिशील रहने के लिए जिस मूल पर प्रारंभिक भाषा को अपनाता है, उसे मातभाषा कहते हैं। यहाँ यह भी ध्यातव्य है कि यदि कोई हिन्दी भाषा–भाषी परवर्ती समय में अंग्रेजी या जर्मन भाषा सीखकर अपने जीवन में विशेष उन्नति कर ले, तो उसकी मातभाषा अंग्रेजी या जर्मन न होकर हिंदी ही होगी।

यह भी निर्विवाद सत्य है कि मातभाषा में भावाभिव्यक्ति सरल और अधिक प्रभावी होती है। मातभाषा के उत्तम ज्ञान के पश्चात् किसी भी अन्य भाषा का शिक्षण सरल होता है। आधुनिक हिंदी साहित्य के जनक भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने हिंदी को मातभाषा के रूप में याद करते हुए इसे 'निजभाषा' की संज्ञा दी है–

"निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल।
बिन निज भाषा ज्ञान के मिटे न हिय को सूल।।

इस प्रकार समस्त भाषाओं में मातभाषा का विशेष महत्त्व है जिसके आधार पर मनुष्य बहुमुखी उन्नति कर सकता है।

1.2 कार्यालयी हिंदी (राजभाषा) के प्रमुख प्रकार्य

1.2.1 प्रारूपण (Drafting)

इसके लिए अंग्रेजी में **ड्राफ्ट (Draft)** और **(Drafting)** दोनों शब्दों के प्रयोग मिलते हैं। प्रारूपण के लिए हिंदी पर्यायी शब्द 'प्रारूप–लेखन', आलेखन, प्रतिलेखन और मसौदा–लेखन भी प्रचलित हैं। वर्तमान समय में 'प्रारूपण' शब्द को ही मानक रूप में मान्यता दी गई है।

हिंदी भारतवर्ष की राजभाषा है। कार्यालयी हिंदी को अनुकूल दिशा और गति प्रदान करने के लिए प्रारूपण का विशेष महत्त्व है। सरकारी और गैर–सरकारी कार्यालयों में कामकाज को सम्पन्न करने के पहले टिप्पण (Noting) की आवश्यकता होती है। वास्तव में कार्यालयी भाषा का यह प्रथम सोपान होता है। इसके पश्चात् उच्च अधिकारी के आदेश या निद्रेशानुसार सूचना भेजने की प्रक्रिया अपनाई जाती है। इस प्रकार उच्च अधिकारी के निर्देश–आदेश के अनुसार किसी आदेश, प्रस्ताव, सूचना या स्मति–पत्र का प्रारूप तैयार करना ही प्रारूपण है। प्रारूपण तैयार होने पर उसे अधिकारी के सामने रखा जाता है। प्रारूपण तैयार कर एक फाइल में रख कर एक **झंडा या चिट (Draft for Approval)** लगा देते हैं। अधिकारी की स्वीकृति अनुमोदन का आवश्यक संशोधन के पश्चात् प्रारूपण तैयार कर दिया जाता है। अनुमोदित प्रारूपण को टाइप कराकर संबंधित व्यक्ति या कार्यालय को भेज दिया जाता है। प्रारूपण का मुख्य उद्देश्य है –कार्य को उत्तम ढंग से सम्पन्नता के लिए व्यवस्थित और श्रेष्ठ प्रारूप तैयार करना। कार्यालय में अनेक

कर्मचारी होते हैं। सभी में कार्य की अलग–अलग क्षमता होती है। तत्परता और अभ्यास में कार्य–क्षमता में वद्धि होती है। अभ्यास से ही श्रेष्ठ प्रारूपण तैयार किया जाता है। प्रारूप तैयार होने पर अधिकारी जब भी चाहे पत्र–व्यवहार कर सकता है।

कर्मचारी की तत्परता, भाषायी दक्षता और अभ्यास से प्रारूपण की भाषा में स्पष्टता, शुद्धता, सरलता, संक्षिप्तता और भावों में पूर्णता, संक्षिप्तत, विनम्रता, शिष्टता का प्रभावी रूप सामने आता है। ऐसे प्रारूपण प्रायः अनुकूल और उपयोगी परिणाम लाते हैं।

प्रारूपण तैयार करते समय ध्यान रखने योग्य तथ्य–सफल प्रारूपण तैयार करने के लिए जहाँ हिंदी भाषा के ज्ञान के साथ सहज प्रयोग की मानसिकता होनी चाहिए वहीं अधिकारी की मानसिकता का ध्यान रखना आवश्यक होता है। प्रारूपण तैयार करते समय निम्न तथ्यों पर ध्यान देना अनिवार्य है–

(i) प्रारूपण स्वयं में तथ्य को पूर्ण रूप से प्रस्तुत करने वाला होना चाहिए।

(ii) प्रारूपण में तथ्य या भाव पूर्ण स्पष्ट होना चाहिए।

(iii) प्रारूपण में संक्षिप्तता होना उसकी श्रेष्ठता है। तथ्य को क्रमशः ही रखना चाहिए। यदि किसी कारणवश प्रारूपण लम्बा हो जाए, तो अंत में सार लिखना उपयोगी होता है।

(iv) किसी के पत्र का उत्तर लिखना हो तो, उसके पत्र की संख्या और दिनांक लिखना सहयोगी होता है।

(v) प्रारूपण की भाषा पूर्णरूपेण बोधगम्य और सरल होनी चाहिए। इसकी भाषा के वाक्य छोटे और सरल होने से इसकी श्रेष्ठता सिद्ध होती है।

(vi) यदि मसौदा को स्पष्ट करने के लिए किसी पत्र, विवरण या कागजात का लगाना आवश्यक लगता है, तो पष्ठ के नीचे बाईं ओर संलग्नक करके उसका उल्लेख करना चाहिए।

(vii) जिस अधिकारी की ओर से मसौदा विवरण या पत्र जारी करना है, उसका नाम, पता और फोन नम्बर नीचे दाहिनी ओर लिखना चाहिए।

(viii) अधिकारी के निर्देशानुसार संबंधित प्रारूपण की शीघ्रता, अनिवार्यता को ध्यान में रखकर उस पर 'तत्काल' या 'प्राथमिकता' लिखकर रेखांकित अवश्य करें।

(ix) प्रारूप यदि किसी आवश्यक कागज, विवरण, ड्राफ्ट आदि से संबंधित हो, तो ऊपर पंजीकृत, स्पीट–पोस्ट, बीमाकृत या कोरियर लिखा जाना चाहिए।

प्रारूपण निर्धारण के समय ध्यान में रखना चाहिए कि यदि अधिकारी ने कोई मानसिकता पहले से ही बना ली है, तो प्रारूपण उनकी मानसिकता के अनुसार या फिर उनसे विचार–विमर्श कर बनाना चाहिए।

प्रारूपण अनुमोदन के लिए अधिकारी के पास अवश्य भेजना चाहिए। अधिकारी के हस्ताक्षर के पश्चात् ही उसे अनुमोदित समझना चाहिए, अर्थात् प्रारूपण पर अधिकारी का हस्ताक्षर अनिवार्य होता है।

प्रारूपण प्रस्तुतीकरण – प्रत्येक कार्य के करने और प्रस्तुत करने की एक पद्धति होती है। प्रारूपण तैयार होने के पश्चात् उसे निम्नलिखित तथ्यों को ध्यान में रख कर अधिकारी के पास प्रस्तुत करना चाहिए–

(i) प्रारूपण सदा फाइल में रखकर भेजना चाहिए।

(ii) फाइल पर विभाग/शाखा और क्रमांक लिखा होना चाहिए। साथ ही एक झंडा या फ्लैग (Draft for Approval) लगा देना चाहिए। इससे कार्य की अनिवार्यता और तथ्य की स्पष्टता रहती है।

(iii) विशेष संवेदनशील, न्यायालीय और गोपनीय विषय के प्रारूपण को फाइल सहित लिफाफे में डालकर लिफाफा चिपका देना चाहिए। लिफाफे पर 'गोपनीय' शब्द लिख देना चाहिए।

(iv) प्रारूपण की श्रेष्ठता उसके सुन्दर रूप में टाइप होने में प्रकट होती है। अधिकारी के लिए प्रारूपण सुस्पष्ट रहता है।

(v) यदि प्रारूपण के साथ कुछ कागज संलग्न हैं, तो उन्हें बाएँ लिखकर अवश्य उल्लेख करें।

(vi) प्रारूपण में संबंधित अधिकारी का नाम, पता और फोन नम्बर अंत में दाहिनी ओर अवश्य लिखें।

प्रारूपण के प्रमुख स्वरूप – सरकारी और अर्धसरकारी कार्यालयों में अनेक प्रकार के कार्य सम्पन्न होते हैं। इसलिए प्रारूपण में विविधता होना अनिवार्य है। इनको मुख्यतः निम्नलिखित शीर्षकों में देख सकते हैं–

(i) अधिसूचना (Notification)

(ii) अनुस्मारक (Reminder)

(iii) अर्ध–सरकारी पत्र (D.O.L.)

(iv) आर्डर (Order)

(v) कार्यालय स्मति–पत्र (Official Memorandom)

(vi) तार (Telegram)

(vii) परिपत्र (Circular)

(viii) प्रस्ताव (Resolution)

(ix) शासनादेश (G.O)

(x) सूचना (Notice)

प्रारूपण संदर्भ -

1. उच्च शिक्षा आयोग, हरियाणा से जारी होने वाले अनुस्मारक का प्रारूप

प्राचार्य

.....महाविद्यालय,

.....

..... (हरियाणा)

विषय : .....

प्रिय महोदय,

उपर्युक्त विषय पर कृपया उच्च–शिक्षा के दिनांक ..... का समसंख्यक पत्र और दिनांक ....., क्रमांक ..... के अनुस्मारक को देखें और तुरंत उत्तर भेजें।

कृते, संयुक्त निदेशक

उच्च शिक्षा आयोग

2. अधिसूचना

..... सरकार के अधिकारी श्री ..... को दिनांक ..... को, ... पूर्वाह्न/अपराह्न से जलपोत परिवहन मंत्रालय में निजी सचिव के रूप में नियुक्त किया जाता है।

सचिव

जलपोत परिवहन मंत्राालय

भारत सरकार

(भारत सरकार के भाग–I, खण्ड–II दो में प्रकाशनार्थ)

3. आदेश

विश्वविद्यालय के आधिकारिक निर्णयानुसार श्री ..... उप–कुलसचिव, स्थापना शाखा को स्थानापन्न कर दूरस्थ शिक्षा निदेशालय के निदेशक पद पर तत्काल प्रभाव से तदर्थ रूप में कार्य करने के लिए नियुक्त किया जाता है।

कुल सचिव

हेमवती नंदन बहुगुणा विश्वविद्यालय

श्रीनगर (उत्तरांचल)

4.

पत्र सं ..... क्रम.....12/1/2004

प्रेषक

श्री .....आई॰ ए॰ एस॰,
उपायुक्त,
मेरठ

सेवा में

मुख्यमंत्री,
उत्तर प्रदेश सरकार,
लखनऊ।

महोदय,

दिनांक 17 जून, 2004 के आपके पत्र ब/3/104/2003 के संदर्भ में सूचित किया जाता है कि 13 जून को मेरठ विश्वविद्यालय के कुछ छात्रों और असामाजिक तत्त्वों ने मिलकर एकाएक दीवान मार्केट पर हमला बोल दिया। देखते–देखते जातीय दंगा भड़क गया। स्थिति संभालने का पर्याप्त प्रयत्न किया गया, किन्तु तब तक कई दुकानें आग की लपटों के घेरे में आ गईं। अब स्थिति काबू में है। लगभग 70 व्यक्तियों को हिरासत में लिया जा चुका है। जातीय विद्वेष फैला हुआ है। किसी भी समय पुनः दंगा भड़क सकता है।

निवेदन है कि पी॰ ए॰ सी॰ की तीन प्लाटून तुरंत मेरठ भेज दें जिससे साम्प्रदायिक दंगा रोका जा सके।

आपको ताजी सूचना लगातार दी जाती रहेगी।

आपका विश्वासभाजन

.....

उपायुक्त

1.2.2 पत्र-लेखन

मनुष्य सामाजिक प्राणी है। वह समाज में एक–दूसरे के साथ हिल–मिल कर रहता है। वह भावादान–प्रदान की प्रक्रिया से समाज में गतिशील रहता है। सामने होने पर भावादान–प्रदान बातचीत से होता है, किन्तु दूर रहने पर पत्र–व्यवहार से भावों का आदान–प्रदान होता है।

पत्रों को मुख्यतः तीन वर्गों में विभक्त करते हैं–

1. व्यावहारिक पत्र
2. व्यावसायिक पत्र
3. शासकीय और अर्ध–शासकीय पत्र

मानव–जीवन में सभी प्रकार के पत्रों का अपना विशेष महत्त्व है। सामाजिक जीवनयापन के लिए व्यावहारिक पत्र की बलवती भूमिका होती है, तो व्यवसाय की उन्नति के लिए व्यावसायिक पत्रों का अपना महत्त्व है। शासन और प्रशासन को गतिशील करने के लिए कार्यालयी पत्रों का अपना महत्त्व है। शासन और प्रशासन को गतिशील करने के लिए कार्यालयी पत्रों की भूमिका का विशेष महत्त्व होता है।

प्रत्येक शहर के पत्रों के लेखन का अपना प्रारूप होता है। उन प्रारूपों के अनुपालन से श्रेष्ठ और सफल पत्र का स्वरूपसामने आता है। कुछ प्रमुख पत्रों के प्रारूप प्रस्तुत हैं –

पत्र लेखन संदर्भ

1. आवेदन पत्र – आकस्मिक अवकाश (Casual Leave) लेने के लिए अधिकारी को लिखे जाने वाला आवेदन–पत्र का प्रारूप।

सेवा में,

सह कुलसचिव,
वित्त अनुभाग,
महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय,
रोहतक।

विषय : आकस्मिक अवकाश हेतु

महोदय,

निवेदन है कि मैं अति आवश्यक कार्यवश 17 सितम्बर, 2004 को कार्यालय आने में असमर्थ हूँ। अतः 17 सितम्बर, 2004 का, एक दिन का आकस्मिक अवकाश प्रदान करें।

सधन्यवाद,

भवदीय
प्रवीण पांचाल
लिपिक
वित्त अनुभाग

2. वेतन वद्धि न मिलने पर इस पर विचार करने के लिए आवेदन–पत्र

सेवा में,

वित्त अधिकारी,
उच्च शिक्षा, उत्तर प्रदेश,
इलाहाबाद।

विषय : वेतन वद्धि दिलाने हेतु

महोदय,

विनम्र निवेदन है कि मैं आपके कार्यालय का स्टैनो हूँ। मेरी वेतन वद्धि हर वर्ष की तरह इस बार भी 20 जुलाई, 2004 को लगनी थी। इस बार यह वेतन वद्धि नहीं लगी है।

कृपया मेरी वेतन वद्धि 20 जुलाई, 2004 से लगवा कर एरियर भी बनवाने का कष्ट करें।

सधन्यवाद,

भवदीय,
मनोज
स्टैनो

दिनांक : 31 अगस्त, 2004

सरकारी पत्र

3. सचिव, कृषि मंत्रालय, भारत सरकार की ओर से मुख्य सचिव, हरियाणा सरकार को पत्र लिखकर जुलाई माह में हुई भीषण वर्षा से हुई हानि का विवरण मांगा गया है।

पत्रांक 3/745/03 (कृषि)
दिनांक : 7/8/2004

प्रेषक,

सचिव, कृषि मंत्रालय
भारत सरकार,
नई दिल्ली।

सेवा में,

मुख्य सचिव
हरियाणा सरकार
चण्डीगढ़।

विषय : वर्षा से हुई हानि का विवरण

महोदय,

आपको यह सूचित करने का निर्देश हुआ कि इस माह जुलाई में हुई भीषण वर्षा से कृषि को विशेष हानि हुई। इससे कई प्रदेश प्रभावित हुए हैं। भारत सरकार इस पर गंभीरता से विचार कर रही है।

आप यथाशीघ्र पूरे हरियाणा में कृषि को हुई हानि का जिले के आधार पर विवरण तैयार कर भेजें, जिससे कृषकों के सहयोग हेतु सरकार अपेक्षित निर्णय ले सके।

आपका सदाभावी,
रामभजन सिंह
सचिव, भारत सरकार

अर्ध-सरकारी पत्र

प्रशासनिक अधिकारी जब किसी संदर्भ की स्पष्ट जानकारी के लिए आपस में पत्र–व्यवहार करते हैं, तो उसे अर्ध–सरकारी पत्र की संज्ञा दी जाती है। ऐसे पत्र के लिखने का मुख्य उद्देश्य उल्लेख्य तथ्य पर गंभीरता से विचार करना या ध्यान देना होता है। प्रेषक का पता पत्र की समाप्ति पर दाहिनी ओर हस्ताक्षर के साथ नीचे लिखा जाता है। ऐसे पत्रों में संबोधन प्रायः 'प्रिय रमेश' या स्नेही विनोद लिखा जाता है।

अ॰ स॰ क्रमांक दिनांक 17 अगस्त, 2004

प्रिय योगेन्द्र,

आपका पत्र क्रमांक हि॰ प्र॰ 237è03 दिनांक 5 अगस्त, 2004 मिला। आपने निदेशालय के वर्तमान पदों पर कार्यरत कर्मचारियों की संख्या और स्वीकृत पदों की जानकारी मांगी है, जो इस प्रकार है–

पद	स्वीकृत पद संख्या	वर्तमान में संख्या
निदेशक	1	2
उपनिदेशक	2	1
सहनिदेशक	5	2
स्टेनो	3	2
अनुसंधाता	8	4
लिपिक	20	13
पियन	5	4

रिक्त पदों के भरने की प्रक्रिया चल रही है।

आपका विश्वासभाजन

निदेशक
केन्द्रीय हिंदी सचिवालय
दिल्ली।

डॉ॰ विजय कुमार,
संयुक्त सचिव,
मानव संसाधन विकास मंत्रालय,
भारत सरकार,
दिल्ली।

ज्ञापन (Memorandum)

ज्ञापन विशेषतः विभागीय पत्राचार हेतु प्रयोग में लाए जाते हैं। जब किसी कार्यालय में कोई प्रार्थना पत्र आवेदन–पत्र प्राप्त होता है, तो उसकी स्वीकृति या उसके निबटाने के लिए ज्ञापन का उपयोग किया जाता है। अधीनस्थ अधिकारियों को सरकारी आदेश में विभिन्न सूचनाएँ आदि देने के लिए सरकारी पत्र–व्यवहार ज्ञापन है।

ज्ञापन लिखते समय ध्यान रखने योग्य बातें –

1. ज्ञापन की भाषा सरल, बोधगम्य होनी चाहिए।
2. ज्ञापन के प्रारंभ में कोई संबोधन और अंत में कोई **स्वनिर्देश या 'स्वाभिव्यक्ति' (Complimentry close)** नहीं होता है।
3. सामान्यतः ज्ञापन एक अनुच्छेद का लिखा जाता है।
4. ज्ञापन पर प्रायः अधीनस्थ अधिकारियों या अधिकृत कर्मचारी के हस्ताक्षर होते हैं।
5. ज्ञापन सदा अन्य पुरुष में लिखा जाता है।
6. ज्ञापन–प्रेषक का हस्ताक्षर नीचे दाहिनी ओर किया जाता है।

उदाहरण

ज्ञापन

पत्रांक 789/8/04

भारत सरकार,

नौ परिवहन मंत्रालय

परिवहन भवन

1. संसद मार्ग,

नई दिल्ली।

विषय : अनुसंधाता नियुक्ति

डॉ॰ राजेन्द्र प्रसाद वर्मा को सूचित किया जाता है कि वह 17 जून 2004 को सम्पन्न हुई उक्त पद की चयन परीक्षा में उत्तीर्ण घाषित किया गया है। अतः उन्हें सूचित किया कि 12 सितम्बर 2004 पूर्वाह्न 10 बजे डॉक्टरी जाँच के लिए कार्यालय में उपस्थित हों।

कृष्ण मोहन

अवर सचिव

नौ परिवहन मंत्रालय

परिपत्र

परिपत्र की रचना सरकारी पत्र के लगभग समान होती है। जब कोई एक सूचना, आदेश या निर्देश कई विभागों, कार्यालयों या संबद्ध विभागों–अनुभागों को भेजनी होती है, तो परिपत्र का रूप दिया जाता है।

केन्द्र सरकार के द्वारा विभिन्न राज्य सरकारों को या राज्य सरकार अपने अधीनस्थ कार्यालयों को या कोई विश्वविद्यालय अपने विभिन्न विभागों को जो आदेश अनुदेश भेजता है, उसे परिपत्र (Circular) कहते हैं।

परिपत्र तैयार करते समय ध्यान रखने योग्य बातें

(i) परिपत्र के शीर्ष पर परिपत्र संख्या ओर दिनांक अंकित किया जाता है।

(ii) परिपत्र में ऊपर प्रेषक मंत्रालय/कार्यालय का पता लिखा जाता है।

(iii) परिपत्र में ऊपर संबोधन (महोदय, श्रीमान आदि) और नीचे स्वबोधक (भवदीय, आपका, आपकी आदि) नहीं लिखा जाता है।

(iv) परिपत्र अन्य पुरुष में ही लिखा जाता है।

(v) परिपत्र की भाषा सरल तथा बोधगम्य होनी चाहिए।

(vi) परिपत्र के अंत में दाहिनी ओर संबंधित अधिकारी के हस्ताक्षर होना चाहिए।

(vii) परिपत्र प्रायः टंकित या चक्रटंकित (साइक्लोस्टाइल) होते हैं, क्योंकि इनकी संख्या ज्यादा होती है।

उदाहरण

महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक

क्रमांक एमध 3/4/सा॰प॰/2004/2553-60, दिनांक : 20-8-2004

परिपत्र

विश्वविद्यालय के सभी शिक्षक और शिक्षकेतर कर्मचारियों को सूचित किया जाता है कि वे अपनी कारों के आगे शीशे पर विश्वविद्यालय का निर्धारित स्टीकर अवश्य लगाएँ और कार निर्धारित शेड में ही खड़ी करें, जिससे सुरक्षा व्यवस्था अनुकूल रहे।

ह॰ कुलसचिव

क्रमांक एम॰ 3/4/सा॰प॰/2004/2555-60 दिनांक .....

प्रतिलिपि सूचनार्थ एवं आवश्यक कार्यवाही हेतु

1. सचिव, कुलपति–सूचनार्थ –
2. सचिव, कुसचिव
3. सचिव, परीक्षा नियंत्रक

4. समस्त अधिष्ठाता, विभिन्न संकाय
5. समस्त विभागाध्यक्ष
6. समस्त उप कुलसचिव/सह कुलसचिव, शाखा अधिकारी
7. निदेशक, खेलकूद
8. जनसंपर्क अधिकारी
9. सुरक्षा अधिकारी

अनुस्मारक

क्रमांक शै॰ 5/973/04
दिनांक 15.6.04

प्रेषक,

उपकुल सचिव (शैक्षिक),
महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय,
रोहतक।

सेवा में,

अध्यक्ष, वाणिज्य विभाग,
महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय,
रोहतक।

विषय : सत्र 2004-2005 के वार्षिक कैलेंडर निर्माण हेतु विवरण।

महोदय,

निवेदन है कि पत्र क्रमांक शै॰ 5/921/04 दिनांक 10/5/04 के द्वारा विश्वविद्यालय के सत्र 2004-2005 के कैलेंडर प्रकाशन के लिए विभागीय गतिविधियों का विवरण 30 मई, 2003 तक मांगा गया था। उक्त विवरण अब तक उपलब्ध नहीं हो सका है। कृपया उक्त विवरण 25 जून, 2004 तक अवश्य भिजवा दें।

भवदीय
ह॰
उपकुल सचिव (शैक्षिक)

अनुस्मारक II

क्रमांक शै॰ 5/1071/04
दिनांक 30.6.04

प्रेषक,

उपकुल सचिव (शैक्षिक),
महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय,
रोहतक।

सेवा में,

अध्यक्ष, वाणिज्य विभाग।

विषय : सत्र 2004-2005 के वार्षिक कैलेंडर निर्माण हेतु विवरण।

महोदय,

कार्यालय के क्रमांक शै॰ 5/973/04 दिनांक 15/6/04 के द्वारा आवश्यक विवरण 25 जून, 2004 तक मांगा गया था। उक्त विवरण अब तक प्राप्त नहीं हो सका है।

कृपया उक्त विवरण पत्र प्राप्ति के तीन दिन के अंदर अवश्य भिजवाएँ। इसे अति आवश्यक समझा जाए।

भवदीय
ह॰
उपकुल सचिव (शैक्षिक)

अधिसूचना (Notification)

सरकार की ओर से जनसामान्य, सरकारी कार्यालयों, तत्संबंधित, अधिकारियों और कर्मचारियों की जानकारी के लिए अधिकारियों की नियुक्ति, सरकारी आदेश, अवकाश और पद–त्याग आदि संबंधित सूचनाएँ जो सरकारी बजट में प्रकाशित होती हैं, उन्हें अधिसूचना (Notification) कहते हैं।

अधिसूचना जारी करते समय यह स्पष्ट निर्देश दिया जाता है कि यह गजट के किस भाग में प्रकाशित किया जाएगा। इसके लेखन में अन्य पुरुष का ही उपयोग किया जाता है। अधिसूचना का क्रमांक, दिनांक के साथ, उसे जारी करने वाले अधिकारी का नाम, पद और पता लिखा जाता है।

उदाहरण 1.

अवकाश

कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय,
कुरुक्षेत्र

दिनांक : 16 जनवरी, 2004

विश्वविद्यालय की शैक्षिक परिषद् की 7 जनवरी, 2004 की बैठक के प्रस्ताव सं॰ 43 के आधार पर विश्वविद्यालय के शैक्षिक विभागों और संबंद्ध महाविद्यालयों में सत्र 2004&2005 का ग्रीष्मावकाश 1 मई से 30 जून, 2004 तक होगा।

ह॰/–
उपकुल सचिव (स्थापना)

अधि संख्या .....
प्रतिलिपि–सूचनार्थ एवं आवश्यक कार्यवाही हेतु

1. सचिव, कुलपति
2. सचिव, कुलसचिव
3. समस्त अधीष्ठाता संकाय
4. समस्त विभागाध्यक्ष
5. समस्त प्राचार्य, संबद्ध महाविद्यालय
6. जनसंपर्क अधिकारी

ह॰/–
उपकुल सचिव (स्थापना)

उदाहरण-दो

भारत सरकार के गजट, भाग–1, खंड–3 में प्रकाशनार्थ

भारत सरकार
विदेश मंत्रालय, नई दिल्ली

20 जून, 2004

नियुक्ति

इस मंत्रालय के डॉ॰ मनोज कुमार जो अनुसंधान अधिकारी के पद पर कार्यरत है, को 22 जून, 2004 से उपनिदेशक (राजभाषा) पद पर प्रतिनियुक्ति (डेपुटेशन) रूप में नियुक्त किया जाता है।

.....
(क ख ग)
संयुक्त सचिव
विदेश मंत्रालय

अधि संख्या .....
प्रतिलिपि सूचनार्थ एवं आवश्यक कार्यवाही हेतु।

1. वेतन और लेखाधिकारी, विदेश मंत्रालय
2. अवर सिचव, विदेश मंत्रालय
3. डॉ॰ मनोज कुमार, अनुसंधान अधिकारी

कार्यालय आदेश (Office Order)

पंजाब विश्वविद्यालय चण्डीगढ़

क्र॰ सं॰ बी॰ डी॰/213/9/04 दिनांक 2 मई, 2004

विश्वविद्यालय की व्यवस्था हेतु तुरंत प्रभाव से श्री रामेहर दहिया, सह कुलसचिव, स्थापना शाखा और श्री मनोहर लाल सलूजा, अधीक्षक सामान्य शाखा से क्रमशः पंजीकरण शाखा और शैक्षिक शाखा में स्थानांतरित किया जाता है। इसके साथ ही पंजीकरण शाखा में सह कुलसचिव पद पर कार्यरत श्री भीमसिंह को स्थापना में और श्री प्रभु चावला अधीक्षक शैक्षिक शाखा से सामान्य शाखा में स्थानान्तरित किया जाता है।

प्रतिलिपि – सूचनार्थ एवं आवश्यक कार्यवाही हेतु :

1. सचिव, कुलपति
2. सचिव, कुलसचिव
3. वित्त अधिकारी
4. श्री रामेहर दहिया, सह कुलसचिव (स्थापना)
5. श्री मनोहर लाल सजूजा, अधीक्षक (सामान्य)
6. श्री भीमसिंह, सह कुलसचिव (पंजीकरण)
7. श्री प्रभु चावला, अधीक्षक (शैक्षिक)

उपकुलसचिव (स्थापना)

तार (Telegram)

जब शहर से बाहर किसी स्थान पर तत्काल सूचना भेजनी हो तो तार से समाचार भेजा जाता है। तार का उपयोग किसी कार्य की अनिवार्यता और सामान्य पत्र के लिए समय न होने की स्थिति में किया जाता है। तार में संक्षिप्त, किन्तु स्पष्ट समाचार भेजा जाता है।

हिंदी में तार लिखते समय ध्यान देने योग्य बातें-

1. समाचार/संदेश संक्षिप्त होना चाहिए।
2. भाषा सरल और स्पष्ट होनी चाहिए।
3- शब्द–चयन के समय अर्थ–स्पष्टता पर ध्यान रखना चाहिए।
4. तार के प्रारूप के अनुसार पहले संक्षिप्त किन्तु पूर्ण पता, इसके बाद समाचार/संदेश और अंत में प्रेषक का नाम होता है।
5. प्रेषक का पूरा पता बिलकुल नीचे लिखा जाता है, जो तार में भेजा नहीं जाता है।
6. समाचार लिखते समय वाक्य–निर्माण में पूरे पद पर एक ही शिरोरेखा लगानी चाहिए। इससे एक शब्द की गणना होने से तार का प्रभार अपेक्षाकृत कम लगता है; यथा–

(i) वह यहाँ से आज जा रहा है। (सामान्य वाक्य)

(ii) वह यहाँसे आज जारहाहै। (तार वाक्य)

प्रथम सामान्य वाक्य तार में लिखा जाएगा, तो सात शब्दों का प्रभार देना होगा। हिंदी तार में दूसरी पद्धति का वाक्य लिखा गया है, जिसमें केवल चार शब्दों का प्रभार देना होगा।

7. पुष्टि हेतु तार की प्रतिलिपि सामान्य डाक से भी भेजनी चाहिए।

इस प्रकार हिंदी में तार करना अन्य भाषा की अपेक्षा सस्ता है।

उदाहरण

तार सरकारी तत्काल (Urgent)

मधुर शर्मा

अधीक्षक, वसंत शिक्षण संस्थान, 317/9 चण्डीगढ़

आपके आवेदनके संदभमें उपकुलसचिव पदके साक्षात्कारकेलिए 11 जून 11 बजे अपने मूल प्रमाणपत्रों केसाथ कुलपति कार्यालय में उपस्थित हों।

कुलसचिव

काहिवि

तार में शामिल न किया जाए,

कुलसचिव दिनांक 1 जून, 2004

काशी हिंदू विश्वविद्यालय .....

वाराणसी फोन– 327888, 327879

1.2.3 संक्षेपण

किसी भाव–विचार, समाचार–संदेश और लेख–आलेख को कम से कम शब्दों में पूर्णता और स्पष्टता के साथ व्यक्त करना संक्षेपण है। इसके लिए संक्षिप्तीकरण और संक्षेपीकरण नाम भी दिए जाते हैं।

संक्षेपण की व्युत्पत्ति संक्षिप् + ल्युट् + अन्न के रूप में की जा सकती है। इसमें काट–छाँट कर संक्षिप्त करने की क्रिया होती है। वर्तमान वैज्ञानिक युग में भाव को संक्षिप्त और सारगर्भित बनाकर प्रस्तुत करना ही श्रेष्ठता है। वास्तव में यह भी एक कला है, जो सतत अभ्यास से विकसित होती है। आज के कंप्यूटर युग में संक्षिप्तता, स्पष्टता और त्वरा का महत्त्व बहुत बढ़ गया है। इंटरनेट के आगमन और उस पर हिंदी के कुशल प्रयोग से संक्षेपण का महत्त्व और बढ़ गया है।

वर्तमान समय में परीक्षाओं के स्वरूप में पर्याप्त परिवर्तन आ चुका है। प्रश्न का शब्द–सीमा में उत्तर देना होताहै। प्रतियोगी परीक्षाओं में इस कला को विशेष महत्त्व दिया गया है। सीमित शब्दों में स्पष्ट अभिव्यक्ति को अधिमान दिया जाता है। इसके विपरीत अधिक विस्तार पर अंक में कटौती होती है। वर्तमान मीडिया अर्थात् आकाशवाणी, दूरदर्शन पर तो समय की सीमा को बहुत गंभीरता से लिया जाता है। परिसंवाद वार्ता आदि सभी की अवधि नियति होती है। दूरदर्शन पर तो एक मिनट में कई विशेष समाचार प्रस्तुत किए जाने लगे हैं। निर्धारित अवधि का अनुपालन करते हुए प्रस्तुति ही सफलता का आधार है। इस प्रकार वर्तमान जीवन के ही समान लेखन में संक्षेपण का महत्त्व बहुत बढ़ गया है।

संक्षेपण की परंपरा बहुत पुरानी है। इसी कला के विकास से सूत्रात्मक भाषा सामने आई है। वेद के एक–एक सूत्र में अत्यन्त विस्तत विचार का स्वरूप देख सकते हैं। ऐसे सूत्रों के कंठाग्र करने और उनकी व्याख्या करते रहने की समद्ध परंपरा रही है। वर्तमान वैज्ञानिक युग में सारगर्भित, संक्षिप्त व्याख्यान और आलेख को विशेष महत्त्व दिया जाता है। कार्यालय में विभिन्न विवरणों, पत्रों ओर विचारणीय विषयों पर सफल टिप्पणी करने के लिए संक्षेपण की कला विशेष उपयोगी सिद्ध होती है। इस प्रकार संक्षेपण के द्वारा कम समय और कम शक्ति में अपेक्षित अभिव्यक्ति संभव होता है। इस प्रकार इस की उपयोगिता स्वयं सिद्ध है।

संक्षेपण-प्रक्रिया

संक्षेपण प्रक्रिया हेतु संबंधित भाषा पर अधिकार होना अनिवार्य होता है। भाषा–शक्ति के द्वारा ही समग्र भाव को ग्रहण कर सीमित शब्दों में अभिव्यक्ति प्रदान की जाती है। इस प्रक्रिया में निम्नलिखित तत्त्वों पर ध्यान रखना होता है–

1. **वाचन** – मूल पाठ या संदर्भ को एकाग्रता, गंभीरता से पढ़ कर मूल भाव ग्रहण करना चाहिए। इसके साथ ही महत्त्वपूर्ण अंशों को हृदयंगम करना चाहिए। एक बार के त्वरित पाठ पर यदि भाव ग्रहण में स्पष्टता न हो, तो दो या तीन बार पढ़कर समग्र भाव ग्रहण करना अनिवार्य होता है।

2. **महत्त्वपूर्ण अंश रेखांकन** – मूल पाठ के केन्द्रीय भाव ग्रहण के पश्चात् उससे जुड़े महत्त्वपूर्ण शब्दों, पदों या वाक्यों को रेखांकित कर लेना चाहिए। इससे उत्तम कोटि का संक्षेपण होता है, जिसमें सभी मुख्य बातें आ जाती हैं।

3. **अनुच्छेद योजना** – मूल पाठ से मुख्य तथ्यों या अंशों के ग्रहण करते हुए भावाभिव्यक्ति के लिए अपने वाक्यों की रचना की जाती है। इससे संक्षेपण में मौलिकता आती है। संक्षेपण में चमत्कारिक या मुहावरेदार–अलंकृत भाषा का प्रयोग नहीं होना चाहिए। सरल वाक्यों की रचना संक्षेपण के लिए उपयोगी होती है। वर्णनात्मक वाक्यों को सूत्रात्मक वाक्य में परिवर्तन कर लेना चाहिए। संवाद शैली पर आधारित पाठों के संक्षेपण में सामान्य वाक्य–रचना उपयोगी होती है।

संक्षेपण प्रायः मूल पाठ का एक–तिहाई भाग होता है। इस प्रकार मूल पाठ के तीन वाक्यों के स्थानपर एक वाक्य की योजना उपयोगी होती है।

4. **स्पष्टता** – संक्षेपण में जहाँ मूलपाठ के केन्द्रीय भाव के साथ अन्य महत्त्वपूर्ण तथ्यों का होना आवश्यक है, वहीं उनको संक्षिप्त प्रस्तुति में स्पष्ट अभिव्यक्ति होनी चाहिए। इसके लिए मूलपाठ के संक्षिप्तीकरण में अपनी ओर से कुछ नहीं जोड़ना चाहिए। इसके साथ ही किसी संदर्भ को दूसरी बार नहीं लाना चाहिए। स्पष्टता के लिए भाषा पर अधिकार होना चाहिए। ऐसा होने पर गागर में सागर भर कर उत्तम संक्षेपण लेखन संभव होता है।

5. **शीर्षक** – मूल पाठ का शीर्षक केन्द्रीय भाव पर आधारित होता है। शीर्षक की ऐसी भाषा होनी चाहिए जिसे पढ़ते ही पाठ का मूल भाव प्रथम दष्टि में ही सामने आ जाए। शीर्षक का संक्षिप्त रूप ही उपयोगी माना जाता है। शीर्षक चयन मूल पाठ से दो–तीन शब्द को आधार बनाकर किया जा सकता है। नए और सटीक शब्द या दो–तीन शब्दों का चयन अलग से ही किया जा सकता है।

6. **पुनरावलोकन** –संक्षेपण लिख लेने के पश्चात् एक बार गंभीरता से पढ़ लेना चाहिए कि पूरा भाव आ गया है या नहीं? संक्षेपण में अनुकूल स्पष्टता है? भाषा भी अपेक्षित रूप में है? ऐसा न होने पर सुधार कर अनुकूल रूप प्रदान करना चाहिए।

आदर्श संक्षेपण स्वरूप

आदर्श संक्षेपण अपने में पूर्ण मौलिक रचना होती है, जो मूल पाठ या विषय की एक–तिहाई में होती है। इसमें केन्द्रीय भाव अपेक्षाकृत अधिक स्पष्ट होता है। इसकी रेखांकन योग्य कुछ विशेषताएँ इस प्रकार होती हैं–

1. **पूर्णता** – संक्षेपण में मूलपाठ का लगभग एक–तिहाई ही विस्तार होता है। इसमें केन्द्रीय भाव के साथ समग्र भाव स्वरूप विद्यमान होता है। इसमें कोई अनावश्यक या असंबद्ध तथ्य नहीं होता है। विभिन्न भाव–बिन्दुओं को क्रमशः प्रस्तुत कर भाव–पूर्णता बनाए रखना अनिवार्य होता है।

2. **संक्षिप्तता** – संक्षेपण नाम से ही स्पष्ट है कि मूलपाठ को संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत किया जाता है। संक्षेपीकरण में ध्यान रखना होता है कि मूलपाठ का कोई महत्त्वपूर्ण अंश छूटने न पाये। इस प्रक्रिया में मूलपाठ का लगभग एक–तिहाई रूप अपनाना वैज्ञानिक होता है।

3. **मौलिकता** –संक्षेपण में मूलपाठ के कुछ वाक्यों को पूर्ववत् अपनाना उचित नहीं है। छोटे मूलपाठ को पूरा पढ़कर अपनी भाषा में संक्षेपण करना चाहिए। यदि मूलपाठ विस्तत हो, तो कुछ अंश पढ़कर उसका संक्षेपण अपनी भाषा में करके फिर शेष भाग को इसी क्रम से अपनी भाषा में प्रस्तुत करना चाहिए। मौलिकता ही संक्षेपण को प्रभावी रूप प्रदान करती है।

4. **स्पष्टता** – संक्षेपण में भाषा का सरल और भाव का प्रवाहमय तरल रूप होना अनिवार्य होता है। प्रत्येक वाक्य की रचना पूर्ण सुस्पष्ट होनी चाहिए। जब मूलपाठ के भावक्रम को सरल रूप में और यथाक्रम में प्रस्तुत किया जाता है, तो उसमें स्पष्टता होना स्वाभाविक है। स्पष्टता संक्षेपण की अपनी प्रमुख विशेषता है।

5. **शीर्षक** – पुस्तक का नामकरण जिन गुणों से सम्पन्न होता है, मूलपाठ का शीर्षक भी उन्हीं गुणों से सम्पन्न होना चाहिए। शीर्षक पढ़ते ही मूलपाठ के केन्द्रीय भाव के ज्ञान के साथ समग्र भाव का स्पष्ट आभास हो जाना चाहिए। शीर्षक सीमित शब्दों का होना विशेष उपयोगी होता है। शीर्षक होने से पाठक प्रथम दष्टि में ही मूलपाठ के भाव को ग्रहण कर लेता है। यह ही शीर्षक की सफलता का परिचायक है।

उदाहरण 1. – विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा देश के सभी विश्वविद्यालयों में समान पाठ्यक्रम लागू करने के लिए करने के लिए एक समिति का गठन किया गया। समिति ने राष्ट्रीय स्तर पर लागू करने के लिए एक पाठ्यचर्या का निर्धारण किया है। भारत के समस्त विश्वविद्यालयों के पास यह पाठ्यचर्चा भेजी गई है। सभी विश्वविद्यालय इसे लागू करने पर विचार कर रहे हैं।

संक्षेपण

*** विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा राष्ट्रीय स्तर पर समान पाठ्यक्रम लागू करने हेतु तैयार पाठ्यचर्चा पर सभी विश्वविद्यालय विचार कर रहे हैं।**

उदाहरण 2. – पहले दिन मैं विद्यार्थियों के एक होटल में ठहरा था – एक छात्रावास में जो कि ग्रीष्मावकाश में विद्यार्थियों द्वारा होटल के रूप में चलाया जा रहा है। किन्तु दूसरे दिन मेरे लिए दूसरी जगह व्यवस्था कर दी गई। यह दूसरा होटल प्राइवेट होटल था। कुल आठ कमरे और पहाड़ी ढाल पर बनी हुई पाँच मंजिलों की इमारत में पाँचवीं मंजिल पर था। वह होटल 'लेखकों का होटल' प्रसिद्ध था। कुछ ऐसी परंपरा थी कि स्टाकहोम आने वाले विदेशी लेखक यहीं ठहरते या ठहराए जाते थे। होटल का खाता देखने पर अनेक प्रसिद्ध नाम मुझे मिले, यह भी ज्ञात हुआ कि स्ट्रिंडबर्ग भी कभी वहाँ रहे थे।

संक्षेपण

*** पहले दिन विद्यार्थियों के एक होटल में ठहरने के पश्चात् दूसरे दिन पहाड़ी पर स्थित पाँच मंजिली होटल में रहने की व्यवस्था की गई। स्टाकहोम के इस 'लेखकें के होटल' में प्रायः हर आने वाले लेखक को ठहराया जाता था।**

1.2.4 पल्लवन

पल्लवन प्रक्रिया संक्षेपण प्रक्रिया के ठीक विपरीत है। संक्षेपण में मूलपाठ का सार प्रस्तुत किया जाता है, जबकि पल्लवन में मूल कथन को विस्तत करते हुए प्रस्तुत किया जाता है। विस्तार करने की प्रक्रिया को देखते हुए इसे विशदीकरण और भाव–विस्तार भी नाम दिया जाता है। इस प्रकार किसी गंभीर संक्षिप्त भाव या विचार को स्पष्ट करने के लिए किया जाने वलाा विस्तारीकरण पल्लवन है।

प्राचीनकाल से सूत्रात्मक भाषा के प्रयोग की परंपरा चली आ रही है। साहित्यकारों, विचारकों, दार्शनिकों और मनीषियों के द्वारा आदर्श वाक्य, सूक्तियों का प्रयोग किया जाता रहा है। ऐसे सूत्रात्मक अभिव्यक्ति को स्पष्ट करने के विस्तार दियाजाना अनिवार्य होता है। ऐसी प्रक्रिया में सूक्ति या नीति वाक्य विस्तार पाकर लघु निबंध का स्वरूप धारण कर लेता है। इसमें पल्लवनकर्ता अपने तर्क का भी उपयोग करता है। भाषा अभिव्यक्ति का आधार है। इसलिए पल्लवन में श्रेष्ठ भाषाविद् की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। मूलपाठ के शब्दों, पदों और वाक्यों के अर्थ ओर भाव को विस्तार देते हुए उसे सरल भाषा में प्रस्तुत करना होता है।

जिस प्रकार साहित्य, दर्शन और व्याकरण आदि में पल्लवन का महत्त्व है, उसी प्रकार प्रयोजनमूलक हिंदी में इसका महत्त्व है। हिंदी सलाहकार के द्वारा अधिकारियों, मंत्रियों के समक्ष आए सूत्रात्मक वाक्यों को बोधगम्य बनाने के लिए पल्लवन करना होता है।

पल्लवन प्रक्रिया

1. सर्वप्रथम मूलपाठ को पढ़कर उसके मूलभाव को हृदयंगम करना चाहिए। इसके साथ ही पूरे पाठ का समग्रभाव से सपरिचित हो जाना चाहिए।
2. अवतरण आए विशेष शब्दों, सूक्तियों आदि को ध्यान से पढ़कर उसका स्पष्ट भाव समझ लेना चाहिए।
3. पल्लवन में केन्द्रीय भाव की मूल तथा गौण दिशाओं पर विचार करने के पश्चात् उनमें से उपयोगी अंश अपनाया जा सकता है।
4. मूलभाव को स्पष्ट करने के लिए समतुल्य उदाहरणों का उपयोग किया जा सकता है। इससे भावात्मक स्थिति पर्याप्त स्पष्ट हो जाती है।
5. मूलभाव को केन्द्र में रखते हुए अनुच्छेद के विभिन्न भावों को पूर्वक्रमानुसार रखना ही उपयोगी होता है।
6. पल्लवन में ध्यान रखना चाहिए कि अनावश्यक उदाहरण या अनावश्यक चर्चा से विस्तार नहीं होना चाहिए।
7. पल्लवन में व्याख्यात्मक रूप अपना कर भाव या भाषा सौन्दर्य की चर्चा नहीं होनी चाहिए।
8. किसी उक्ति या कथन को असहमत होने पर भी उस पक्ष की ही चर्चा करनी होगी, किन्तु उसका खण्डन नहं करना चाहिए।
9. पल्लवन की भाषा सरल, सहज तथा बोधम्य होनी चाहिए। अनावश्यक चमत्कारिक या अलंकारिक भाषा के प्रयोग से बचना चाहिए।
10. पल्लवन में अन्य पुरुष का उपयोग होना चाहिए।
11. पल्लवन में अति विस्तार से भी बचना चाहिए।

उदाहरण 1. "लघुता से प्रभुता मिले प्रभुता से प्रभु दूर।"

विनम्रता मनुष्य की सफलता का विशेष आधार है। विनम्र व्यक्ति गुणों का ग्राहक बन कर धीरे–धीरे शिक्षित ओर गुणी बन जाता है। विनम्रता में पल्लवित होने वाली श्रद्धा भावना उसे श्रेष्ठ व्यक्तियों का सानिध्य प्रदान करती है। सज्जनों की संगति से उसे प्रभुता मिल जाती है, क्योंकि कहा भी गया है, "जैसी सगति बैठिए तैसे ही गुण होत।"

संसार गुणों और विशेषताओं से भरा हुआ है। आवश्यकता है उसको अपनाने के लिए सुपात्र बनने की। यदि हम किसी के उठे हुए हाथ के नीचे अपना हाथ रखकर कुछ पाना चाहेंगे, तो अवश्य मिलेगी, किन्तु यदि उस हाि से ऊपर रखकर उसमें से पाने की आशा रखेंगे, तो असफल ही होंगे। इसी प्रकार यदि मनुष्य में अहं का भाव भर जाएगा, तो विनम्रता होगी, न गुण–ग्राह्यता आएगी और न ही भक्ति का आदर्श भाव विकसित हो सकेगा। इस प्रकार विनम्रता ही मनुष्य को गुणसम्पन्न कर ईश्वर–दर्शन कराती है।

उदहारण 2. - "परिश्रम सफलता की कुंजी है।"

मनुष्य को जीवन का वास्तविक आनन्द अपने अपने श्रम से प्राप्त होता है। जो सुबह से शाम तक अपना खून–पसीना एक करते हुए कर्मक्षेत्र में लगा रहता है, चिंता उससे दूर–दूर, बहुत दूर भाग जाती है। ऐसे व्यक्ति के मन में व्यर्थ की बातों को सोचने का अवसर ही नहीं मिलता है। परिश्रमी व्यक्ति के लिए कोई भी लक्ष्य दूर नहीं, कोई भी रास्ता दुर्गम नहीं। यह संघर्ष में मुस्कराता हुआ आगे

बढ़ता रहता है। उसे अपने चिंतन और शक्ति पर पूरा विश्वास होता है। वह किसी के सहारे नहीं रहता। वह आत्मबल पर विश्वास और आत्म–सम्मान का अभिलाषी होता है। वह जानता है उसके पास दो हाथ हैं और इन्हीं हाथों के बल पर सफलता का वरण करता है। वह अपने भाग्य का स्वयं निर्माता है। उसमें कठिनता को सरलता में बदलने की अपूर्व शक्ति होती है। पश्रिमी व्यक्ति को अपूर्व आनन्द की अनुभूति और जीवन में सतत सफलता मिलती है।

1.2.5 टिप्पण (Noting)

'टिप्पणी' के लिए अंग्रेजी में 'Note' शब्द का प्रयोग पर्याय रूप में किया जाता है। सभी कार्यालयों में विभिन्न संदर्भों से पत्राचार का कार्यक्रम चलता रहता है। विभिन्न आवेदनों और फाइलों के निपटाने के लिए समय–समय पर अभ्युक्तियाँ (Remarks) लिखी जाती हैं, उन्हें टिप्पणी (Noting) कहते हैं। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि वे अभ्युक्तियाँ जो किसी विचारधीन विषय पर लिखी जाती हैं, जिसके आधार पर उसका निस्तारण संभव हो।

टिप्पण लिखते समय संबंधित अभिलेख, नियम, उपनियम या आधिकारिक निर्देश को अच्छी तरह देख कर उसका संदर्भ देना चाहिए। यदि नीति संबंधी कोई विशेष विषय हो तो नियम–विवरिणका संलग्न करना उपयोगी होता है। अधिकारी की सुविधा को ध्यान में रखकर निर्दिष्ट पताका (फ्लैग) लगाना चाहिए।

टिप्पण विषय–संगत और संक्षिप्त होनी चाहिए। टिप्पणी का स्पष्ट ओर स्वतःपूर्ण रूप उसकी पहचान है। टिप्पणी में निम्नलिखित तथ्य संभावित होते हैं–

विचारार्थ प्रस्तुत विषय से संबंधित पूर्व की कार्यवाही, पत्र–व्यवहार आदि का संक्षिप्त 'सार' हो सकता है।

उद्देश्य – कार्यालयीय पत्र या विषय पर किसी अधिकारी से सीधे अनुमोदन कराया जा सकता है, किन्तु यदि बाद में कोई प्रश्न उठता है कि ऐसा निर्णय क्यों लिया गया? इस तथ्य को स्पष्ट करने के लिए टिप्पणी की आवश्यकता होती है। टिप्पण से यह स्पष्ट हो जाता है कि किस परिस्थिति या नियम के अनुसार निर्णय लिया गया है। टिप्पणी एक ऐसा आधार हे जिससे अधिकारों को अनुमोदन के लिए उपयोगी आधार मिल जाता है। इनमें कुछ प्रमुख हैं – संबंधित विषय या समस्या से जुड़ी समस्त उपयोगी जानकारी मिल जाती है। अधिकारी को निर्णय लेने के लिए एकाधिक विकल्प सामने आ जाते हैं, जिनमें से उपयुक्त विकल्प का चयन संभव हो जाता है।

सैद्धांतिक आधार

कार्यालय में अनेकानेक प्रकार के विषय आते रहते हैं। अधिकारी द्वारा निर्णय लेने से पूर्व टिप्पण की अपेक्षा होती है। अनुकूल और तर्कसंगत टिप्पणी के लिए विवेक, चिंतन और आत्मविश्वास भरे मानसिक संतुलन की आवश्यकता होती है। टिप्पण–लेखन के अनुरूप भी विशेष भूमिका होती है। टिप्पण–लेखन के समय कुछ प्रमुख बातों पर ध्यान रखना चाहिए–

1. टिप्पण सदा ही निर्धारित कागज पर ही लिखना चाहिए।
2. टिप्पण लिखते समय टिप्पण कागज के बगल में पर्याप्त स्थान (Margin) छोड़ा जाता है। इस भाग में क्रमांक, पताका, अंक या संकेत विवरण और प्राप्तकर्ता का नाम लिखते हैं।
3. सरकारी पत्र या विषय के संदर्भ में टिप्पणी लिखते समय प्रारंभ मे ंपत्र–संदर्भ (पत्रांक, दिनांक आदि) का उल्लेख अवश्य करना चाहिए।
4. टिप्पण पूर्णरूपेण विषय से ही संबंधित होनी चाहिए। विचार भी स्पष्ट होना चाहिए।
5. टिप्पण का स्वरूप संक्षिप्त अर्थात् नातिलघु नातिदीर्घ हो। जितने सीमित–विस्तार से भाव स्पष्ट हो, उतना ही विस्तार होना चाहिए।
6. पत्र में जितने तथ्यों का उल्लेख जिस क्रम से हो, उसी क्रम में उन पर टिप्पण लिखना चाहिए।
7. टिप्पण में यदि अनुच्छेद के अनुसार क्रमांक डाला जाए, तो अधिक उपयोगी होता है।
8. टिप्पण में विषय से संबंधित तर्क, नियम या पूर्व के निर्णय आदि का उल्लेख उपयोगी होता है। कार्य सम्पन्नता हेतु दिया जाने वाला सुझाव अंत में होना चाहिए।
9. टिप्पण की संक्षिप्तता बनाए रखने के लिए किसी तथ्य या संदर्भ की पुनरावत्ति नहीं होनी चाहिए।
10. समस्या समाधान या विषय–निष्पादन के लिए संभावनाओं की स्थिति में विकल्प भी सुझाया जा सकता है। इससे अधिकारी को चिंतन–आधार पर निर्णय की सुविधा हो।
11. यदि पत्र या विषय से संबंधित किसी तथ्य में कोई भूल हो, तो उसका उल्लेख अवश्य करना चाहिए, किन्तु ऐसे में भाषा पूर्ण संतुलित होनी चाहिए। किसी पर आक्षेप लगाने वाली भाषा का प्रयोग नहीं होना चाहिए।
12. यदि किसी विषय–संदर्भ में कई अनुस्मारक दिए गए हों, तो उनकी संख्या बताते हुए अंतिम अनुस्मारक का संदर्भ

(पत्रांक–दिनांक) अवश्य देना चाहिए।

13. टिप्पण सदा तटस्थ भाव से लिखनी चाहिए अर्थात् व्यक्तिगत संबंधों से ऊपर उठकर टिप्पण लिखना अनिवार्य होता है अन्यथा टिप्पण का उद्देश्य समाप्त हो जाएगा।
14. टिप्पण की भाषा सरल, सहज और बोधगम्य होनी चाहिए। हिंदी में टिप्पण लिखते समय यदि किसी शबद के भिन्न अर्थ में ग्रहण करने की संभावना हो, या अस्पष्टता लगे, तो उसके लिए कोष्टक में उसका पर्यायी अंग्रेजी शब्द लिख देना चाहिए।
15. टिप्पण लिखने के पश्चात् अंत में अद्याक्षर (Initial) अवश्य करना चाहिए।

इस प्रकार टिप्पण के विषय में कहा जा सकता है कि टिप्पण आत्म–विश्वास, गंभीर चिंतन और तटस्थ भाव से संयत भाषा में, संक्षिप्त रूप में, तर्कसंगत–नियम पुष्ट और स्पष्ट रूप से लिखना ही उसक अनुकूलता और श्रेष्ठता का परिचायक है।

टिप्पण के भेद

टिप्पण को संबंधित विषय और उसके लेखन को दष्टिगत कर निम्नलिखित प्रमुख भागों में विभक्त कर सकते हैं–

1. **लघु टिप्पण (Short Notiing)** – इसके लिए 'टीप' शब्द का भी प्रयोग किया जाता है। जब एक कर्मचारी के पास से दूसरे कर्मचारी या अधिकारी के पास पत्र या कागज भेजा जाता है तो बाईं ओर किनारे पर लघु टिप्पण लिखा जाता है। एक अनुभाग से दूसरे अनुभाग या एक शाखा से दूसरी शाखा में पत्र/कागज भेजते समय ऐसे टिप्पण का उपयोग किया जाता है। जब किसी अधिकारी अथवा कर्मचारी से अनौपचारिक रूप से निर्देश पाने या विचार जानने के लिए कुछ लिखना होता है, तो वह लघु टिप्पण ही होता है; यथा– सम्मति के लिए, विचारार्थ, अवलोकनार्थ आदि।

औपचारिक कार्यवाही में लघु टिप्पण उपयोगी होता है; यथा– उच्च अधिकारी से कार्य सम्पन्न कराने के लए अग्रसारित, संस्तुत आदि लिखा जाता है। अधिकारी के द्वारा अधीनस्थ कर्मचारी को भी निर्देश देने के लिए 'लघु टिप्पण' का प्रयोग किया जाता है; यथा– बात करें, विमर्श करें, कृपया मिलिए, देख लिया, ठीक है आदि।

2. **सामान्य टिप्पण (Simple)** – जब कोई पत्र या कागजात कार्यालय में आता है, तो पहला टिप्पण सामान्य प्रकृति का ही होता है। किसी पत्र या कागजात को उसके उद्देश्य तक पहुँचाने के लिए प्रारंभिक टिप्पण में विषय का स्पष्ट और विवरणात्मक रूप प्रस्तुत करना अनिवार्य होता है। प्रारंभिक विवरण की पूर्णता और स्पष्टता से उसके अनुकूल और कम से कम समय में निपटाने का सबल आधार मिलता है। समग्र जानकारी से अधिकारी को स्वीकृत करने, अनुमोदन करने अथवा आदेश करने में सरलता होती है।

3. **समग्र टिप्पण (Full Notiing)** – जब किसी विवादास्पद विषय या बहुत दिनों से उलझे हुए प्रसंग पर टिप्पण देना होता है, तो उसमें विषय पर गंभीरता से विचार कर विषय पर विस्तार से प्रकाश डालने की आवश्यकता होती है। ऐसे उलझे विषय से संबंधित पूर्व के समस्त टिप्पण का अध्ययन करते हुए उसकी विषयवस्तु को भी समझना होता है। लम्बे समय से लंबित विषय के पूरे इतिहास की जानकारी के पश्चात् ही सामने आई समस्या पर अनुकूल विचार संभव होता है। इसके साथ यह भी ध्यान रखना होता है कि यदि इस प्रकार का विषय या ऐसी समस्या पहले कभी आई हो, तो उसका समाधान कैसे हुआ था, देखना अनिवार्य होता है। यदि कार्यालय या मंत्रालय में ऐसी प्रक्रिया रही हो, तो से आधार बनाना उपयोगी होता है। ऐसे विवादित विषय में नियम–उपनियम आदि का भी उल्लेख करना होता है।

समग्र टिप्पण मे तथ्य–विवरण, तर्क–आधार और नियम एवं उपनियम से पुष्ट संयत विचार होता है। समग्र टिप्पण कार्यालय या मंत्रालय के लिपिक अथवा सहायक के द्वारा तैयार किया जाता है। अधिकारी द्वारा विवादास्पद विषय का समाधान इसी समग्र टिप्पण के विस्तत फलक के ही आधार पर संभव होता है।

4. **विभागीय टिप्पण (Sectional Noting)** –एक मंत्रालय या संस्थान से जुड़े हुए अनेक विभाग या अनुभाग होते हैं। प्रत्येक विभाग या अनुभाग का कार्य बाँटा होता है। जिसके निष्पादन का भार उक्त विभाग या अनुभाग पर होता है। कभी–कभी ऐसे विषय या संदर्भ आ जाते हैं, जिन परसभी विभागों या अनुभागों से अलग–अलग विचार जानने की आवश्यकता होती है। प्रत्येक विभाग या अनुभाग अपनी कार्य–प्रक्रिया के आलोक में टिप्पण तैयार करता है। समस्त विभागों से टिप्पण उपलब्ध कर बाद में निर्णय लिया जाता है।

हिंदी टिप्पण में प्रयुक्त प्रमुख वाक्य

हिंदी में टिप्पण लिखना सरल है। छोटे–छोटे वाक्यों के आधार पर टिप्पण लिखना उपयोगी होता है। ध्यान रखना चाहिए कि हम उसी शब्द का प्रयोग करें, जिससे सुपरिचित हैं। सरल तथा छोटे वाक्यों का प्रयोग निश्चय ही उपयोगी है। कुछ बहुप्रचलित टिप्पण के छोटे–छोटे वाक्य उद्धरणीय हैं–

1. अग्रसरित। 2. आदेशार्थ प्रेरित।
3. संस्तुत। 4. सूचनार्थ प्रेषित।

5. विचारार्थ प्रेषित। 6. कृपया बात करें, बात करें।

7. विमर्श (चर्चा करें) 8. अपेक्षित विवरण प्रस्तुत करें।

9. आगे कोई कार्यवाही अपेक्षित नहीं है।

10. हम ऊपर के 'क' भाग से सहमत हैं।

11. अनुस्मारक भेजें।

12. यह विषय इस विभाग का नहीं है। यह विषय वाणिज्य विभाग का है। उक्त विभाग में भेजा जाए।

13. इस व्यय के लिए बजट में व्यवस्था है।

14. इस व्यय के लिए बजट में व्यवस्था नहीं है।

15. प्रारूप विचारार्थ प्रेषित है।

16. प्रारूप पर सहमति दी जाती है, छपवाएँ।

17. अपेक्षित विवरण दिल्ली विश्वविद्यालय से मंगाया जा रहा है, प्राप्त होते ही भेजा जाएगा।

टिप्पण लेखन के उदाहरण

1. कार्यालय के कर्मचारी श्री योगेन्द्र कुमार, लिपिक का स्थानांतरण रोहतक से हैदराबाद हो गया है। उसने आवेदन किया है कि उसकी घरेलू परिस्थितियाँ अत्यन्त चिंताजनक हैं। दोनों बच्चे स्कूल में पढ़ रहे हैं। हैदराबाद जाकर इनको हिंदी माध्यम से पढ़ाने में बहुत कठिनाई आएगी, क्योंकि वहाँ शिक्षा का माध्यम भिन्न है।

इस संदर्भ में समग्र टिप्पण का उदाहरण प्रस्तुत है–

क्र॰ सं॰ 14 (अ)

केन्द्रीय कार्यालय के आदेश क्रमांक च/3-1701, दिनांक 13-07-04 के संदर्भ में श्री योगेन्द्र कुमार, लिपिक ने अपने स्थानांतरण के विषय में आवेदन किया है। (आवेदन पत्र संलगन है) कि इस समय उसके वद्ध पिता काफी दिनों से बीमार चल रहे हैं। उनकी देखभाल के लिए उसका रहना बहुत जरूरी है। उसके साथ ही उसने संकेत किया है कि उसके दोनों बच्चे स्कूल में पढ़ रहे हैं। हैदराबाद में शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी या तेलुगु है। उसके हिंदी माध्यम से पढ़ने वाले उसके बच्चों की शिक्षा की समस्या हो जाएगी। इस वर्ष उनक बच्चे उच्च माध्यमिक शिक्षा उत्तीर्ण कर लेंगे। इस आधार पर श्री योगेन्द्र कुमार ने अनुरोध किया है कि उनका स्थानान्तरण अभी न किया जाए।

श्री योगेन्द्र कुमार की परिस्थिति को देखते हुए उनका स्थानान्तरण करना उचित नहीं होगा। यदि वहाँ कार्य–संचालन हेतु स्थानांतरण अनिवार्य हो तो कार्यालय से किसी अन्य कर्मचारी को भेजा जा सकता है। इस विषय में सुझाव है कि श्री योगेन्द्र कुमार का स्थानान्तरण रद्द कर दिया जाए।

उ॰च॰गु॰

3.08.04

2. प्रो॰ रामेश्वर ने एक आवेदन पत्र लिखकर कोलकाता में हो रहे अन्तर्राष्ट्रीय हिंदी संगोष्ठी में अपना शोध–पत्र पढ़ने के बाद अगले ही दिन होने वाली विश्वविद्यालय की सर्वोच्च समिति 'कार्यकारी परिषद्' की बैठक में सम्मिलित होने के लिए हवाई यात्रा की अनुमति मांगी है। उन्होंने बताया है कि संगोष्ठी समाप्त होने के दूसरे ही दिन कार्यकारी समिति की बैठक हैं रेल से पहुँच पाना असंभव है। वापसी यात्रा हवाई जहाज से करना चाहते हैं।

क्र॰ सं॰ 23 (आ)

प्रो॰ रामेश्वर ने कोलकाता में हो रही अन्तरराष्ट्रीय हिंदी संगोष्ठी में सम्मिलित होकर शोधपत्र प्रस्तुत करने के बाद हवाई यात्रा से वापसी की अनुमति मांगी है। (आवेदन पत्र संलग्न है) उन्हें संगोष्ठी में सम्मिलित होने की स्वीकृति और वातानुकूलित रेल यात्रा करने की विश्वविद्यालय से अनुमति दी जा चुकी है। उन्होंने बताया कि गोष्ठी समाप्त होने के अगले ही दिन विश्वविद्यालय की कार्यकारी परिषद् की आवश्यक बैठक है। इसमें उनकी उपस्थिति आवश्यक है। रेल से कलकत्ता से रोहतक की यात्रा करके अगले दिन पहुँचना असंभव है। वातानुकूलित प्रथम दर्जे और हवाई यात्रा के खर्चे में बहुत अन्तर भी नहीं है। प्रो॰ रामेश्वर की उक्त बैठक में उपस्थिति भी आवश्यक है। डॉ॰ रामेश्वर वरिष्ठ प्रोफेसर हैं और उन्हें हवाई यात्रा की अनुमति दी जा सकती है।

अतः सुझाव दिया जाता है कि प्रो॰ रामेश्वर को संगोष्ठी समाप्ति क अगले दिन वापसी हेतु हवाई यात्रा करने की अनुमति दी जा सकती है।

च॰ला॰द

11.8.04

3. सुरेन्द्र महाजन ने अपने अधिकारी के पास आवेदन किया है कि उनके बड़े भाई कनाडा में रहते हैं। वे कुछ दिन बाद उनसे मिलने के लिए कनाडा जाना चाहते हैं। इसके उन्हें पासपोर्ट बनवाने के लिए अनुमति प्रमाण–पत्र चाहिए।

अधिकारी द्वारा उक्त आवेदन–पत्र पर लघु टिप्पण की जाती है।

.....

आवश्यक कार्यवाही हेतु संस्तुत

उपकुलसचिव (स्थापना) म॰ए॰कर॰

15-08-04

1.3 पारिभाषिक शब्दावली

1.3.1 परिभाषा, स्वरूप और महत्त्व

शब्द–भण्डार को प्रयोग की दष्टि से मुख्यतः तीन वर्गों में विभक्त कर सकते हैं–

1. **सामान्य शब्द** – बोल–चाल या सामान्य व्यवहार में प्रयुक्त होने वाले शब्दों को सामान्य शब्द की संज्ञा दी जा सकती है; यथा– दादा, चाचा, नाना, नानी, घर, खाना, रोना, सोना आदि।

2. **अर्ध-पारिभाषिक शब्द** –जब शब्द सामान्य व्यवहार में प्रयुक्त होने के साथ यदा–कदा विशेष क्षेत्र में भी प्रयुक्त होते हैं, तो उन्हें अर्ध–पारिभाषिक शब्द कहते हैं; यथा– कमल, अर्थ, गुरु, सूर्य, रस, अलंकार, ध्वनि आदि।

3. **पारिभाषिक शब्द** – जिन शब्दों का प्रयोग सामान्य प्रयोग और साहित्य के संदर्भ से भिन्न किसी क्षेत्र विशेष के लए परिसीमित कर दिया जाता है, उन्हें पारिभाषिक शब्द कहते हैं। ये क्षेत्र विधि, व्यवसाय, भाषाविज्ञान, दर्शन, चिकित्सा और ज्योतिष आदि से संबंधित हो सकते हैं।

परिभाषा – पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग प्राचीनकाल से ही होता आ रहा है। किन्तु आधुनिक युग में इस संदर्भ पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। विभिन्न विद्वानों ने पारिभाषिक शब्द को अपने–अपने चिंतन के अनुसार परिभाषित किया है। कुछ प्रमुख विद्वानों की परिभाषाएँ उद्धरणीय हैं–

डॉ॰ भोलानाथ तिवारी ने पारिभाषिक शब्द को परिभाषित करते हुए लिखा है, "पारिभाषिक शब्द ऐसे शब्दों को कहते हैं जो रसायन, भौतिक, दर्शन, राजनीति आदि विभिन्न विज्ञानों या शास्त्रों के शब्द होते हैं तथा जो अपने–अपने क्षेत्रों में विशिष्ट अर्थ में सुनिश्चित रूप से परिभाषित होते हैं। अर्थ और प्रयोग की दष्टि से निश्चित रूप से परिभाषित हाने के कारण ही ये शब्द पारिभाषिक शब्द हो जाते हैं।"

डॉ॰ रघुवीर ने इस विषय में अपना विचार इस प्रकार व्यक्त किया है, "जिन शब्दों की सीमा बाँध दी जाती है, वे पारिभाषिक शब्द हो जाते हैं और जिनकी सीमा नहीं बाँधी जाती, वे साधारण शब्द होते हैं।"

डॉ॰ महेन्द्र चतुर्वेदी ने पारिभाषिक शब्दों के दो गुणों की ओर संकेत करते हुए कहा है, "पारिभाषिक शब्द के दो प्रमुख गुण होते हैं– (i) नियतार्थक, और (ii) परस्पर अपवर्जिता (Mutual exclusiveness)। पारिभाषिक शब्द का अर्थ नियत–निश्चित होना चाहिए और एक (प्रमुख) अर्थ को व्यक्त करने वाला केवल एक ही शब्द होना चाहिए।"

मेरे विचार से पारिभाषिक शब्द को इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है– "जिन शब्दों को ज्ञान–विज्ञान के किसी निश्चित क्षेत्र में किसी अर्थ विशेष में परिसीमित कर प्रयोग किया जाए, उन्हें पारिभाषिक शब्द कहते हैं।"

इस परिभाषा में पारिभाषिक शब्द के मुख्य तत्त्व इस प्रकार सामने आते हैं–

(i) इन शब्दों का प्रयोग सामान्य व्यवहार से भिन्न ज्ञान–विज्ञान के किसी एक क्षेत्र विशेष में प्रयोग होता है।

(ii) संबंधित क्षेत्र के विशेष अर्थ में ही ऐसे शब्द का प्रयोग होता है।

(iii) इनका अर्थ सामान्य शब्दों की तरह लचीला न होकर पूर्णरूपेण सुनिश्चित होता है।

स्पष्ट, बोधगम्य पारिभाषिक शब्द सरलता से लोकप्रिय हो जाते हैं। छोटे, सरल, प्रचलित और मुख सुख देने वाले पारिभाषिक शब्द अपेक्षाकृत अधिक बोधगम्य होते हैं। चार या पाँच वर्णों तक के आधार पर निर्मित पारिभाषिक शब्दों का उच्चारण सरल होता है, अतः ये सरल लगते हैं।

महत्त्व – प्राचीनकाल से ही मानव सामान्य व्यवहार या बातचीत के साथ धर्म, दर्शन, न्याय, गणित, व्याकरण, ज्योतिष और चिकित्सा आदि से जुड़ा रहा है। विभिन्न क्षेत्रों के महान विद्वानों ने उत्तम कोटि के ग्रंथों का निर्माण भी किया है। इन ग्रंथों में पारिभाषिक शब्दों का प्रचुर भण्डार मिलता है। वेदों में सभी विषयों का महिमामंडित स्वरूप ऐसी शब्दावली का प्रबल आधार सिद्ध हुआ है। आचार्य भरतमुनि का 'नाट्यशास्त्र', 'नाट्य' और 'काव्यशास्त्र' संबंधी शब्दावली का समद्ध भण्डार है।

वर्तमान समय में विज्ञान और तकनीकी ज्ञान का आशातीत विस्तार हुआ है। पारिभाषिक शब्दों की आवश्यकता मुख्यतः उच्च–शिक्षा में उस समय आई है जब शिक्षा का माध्यम हिंदी और भारतीय भाषाओं को बनाया गया है। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि ज्ञान–विज्ञान की शिक्षा हिंदी और भारतीय भाषाओं में तब ही संभव है जब उनसे संबंधित पारिभाषिक शब्दों का हिंदीकरण किया जाए।

पारिभाषिक शब्दों का उतना ही महत्त्व ज्ञान–विज्ञान के विभिन्न विषयों की पुस्तकों को हिंदी माध्यम से लिखने में होता है। पारिभाषिक शब्दों की अनुकूल व्यवस्था पर हिंदी में ऐसे ग्रंथों का लेखन सरल हो जाएगा।

वर्तमान समय में जब ज्ञान–विज्ञान के विभिन्न विषयों की शिक्षा हिंदी माध्यम से होने लगी है, तो शिक्षा और पुस्तक लेखन में पारिभाषिक शब्दों की भूमिका विशेष महत्त्वपूर्ण हो गई है।

भारत स्वतंत्र होने के पश्चात् हिंदी देश की राजभाषा के पद पर प्रतिष्ठित हुई। विभिन्न विषयों की शिक्षा हिंदी में दी जाने लगी। इसलिए अंग्रेजी के पारिभाषिक शब्दों के लिए हिंदी रूप निर्धारण किए जाने लगे। इस दिशा में एक ओर भाषाविदों की सराहनीय भूमिका रही है, तो दूसरी ओर कुछ संस्थाओं को योगदान परम उत्साहवर्द्धक रहा है। व्यक्तिगत रूप से कार्य करने वालों में डॉ॰ रघुवरी और डॉ॰ भोलानाथ तिवारी के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। संस्था के संदर्भ में हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग का कार्य और मानव संसाधन विकास मंत्रालय के अधीन कार्यरत वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग का कार्य विशेष प्रेरक रहा है। इस आयोग द्वारा विभिन्न अनुशासनों से संबंधित पारिभाषिक शब्दावलियों का अनुप्रेरक निर्माण कार्य किया गया है। इस आयोग के द्वारा पारिभाषिक शब्दावली निर्माण हुतु सतत कार्यशालाओं का आयोजन कर इसे नया रूप देने का प्रयास सराहनीय है। इस प्रकार शब्दावली के सुदढ़ आधार से विभिन्न विषयों का हिंदी माध्यम से अध्ययन–अध्यापन सरल हो रहा है। उन विषयों से संबंधित पुस्तकों का निर्माण भी गति पा सकेगा।

1.3.2 पारिभाषिक शब्दावली निर्माण के सिद्धान्त

आधुनिक युग में मनुष्य का चिंतन बहुआयामी हो गया है। उसने सूक्ष्मातिसूक्ष्म अणु और परमाणु पर अपना आधिपत्य जमा लिया है। ज्ञान की इस पिपासा में वह सब कुछ जानने के लिए उत्सुक है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् देश की राष्ट्रभाषा और राजभाषा में समस्त ज्ञान–विज्ञान के अध्ययन–अध्यापन हेतु उनसे संबंधित अंग्रेजी शब्दों के हिंदीकरण की अपेक्षा हुई। हिंदी पारिभाषिक शब्दों के निर्माण में विद्वानों का मतवैविध्य सामने आया।

कुछ विद्वानों ने भारत की प्रमुख भाषा संस्कृत को आधार बनाकर उनके उपसर्ग, प्रत्यय ओर संधि आदि को महत्त्व दिया है। इनमें डॉ॰ रघुवीर प्रमुख थे। विद्वानों का एक वर्ग हिंदी की सामान्य प्रकृति पर पारिभाषिक शब्द निर्माण पर बल दे रहा था। विद्वानों का एक अन्य वर्ग तकनीकी शब्दों को ज्यों का त्यों अपनाने के पक्ष में था। कुछ समन्वयवादी विद्वानों की मान्यता थी कि हिंदी में प्रयुक्त तत्सम, तद्भव, देशी विदेशी आदि रूपों में ही पारिभाषिक शब्दों को भी अपना लिया जाए।

(क) पारिभाषिक शब्दावली निर्माण संबंधी वाद

इस प्रकार मतवैविध्य के आधार पर मुख्यतः चार वाद सामने आए हैं–

1. **संस्कृतवादी** – विद्वानों का एक वर्ग अंग्रेजी के पारिभाषिक शब्दों के हिंदीकरण के लिए मुख्यतः वैदिक और संस्कृत के शब्द, धातुओं, उपसर्ग और प्रत्ययों को अपनाया है। इस वर्ग में डॉ॰ रघुवीर अग्रणी रहे हैं। उनकी स्पष्ट मान्यता रही है कि देश की समस्त भाषाओं में संस्कृत के शब्द विद्यमान हैं। इस प्रकार उन्हें स्थान देने पर बोधगम्यता का श्रेष्ठ गुण सामने आएगा। राष्ट्रीय संदर्भ से जोड़ने के कारण इसे राष्ट्रीयतावादी भी कहा गया है। इस संदर्भ में तर्क दिया गया है कि संस्कृत में धातु, प्रत्यय, उपसर्ग आदि आधार पर शब्द–निर्माण की अनूठी क्षमता है। वेद और संस्कृत में ज्ञान–विज्ञान के विभिन्न विषयों के पारिभाषिक शब्द पहले ही विद्यमान हैं। पारिभाषिक शब्द विशेष क्षेत्र से जुड़े होते हैं। इसलिए इनका प्रयोग विशिष्ट विद्वान ही करते हैं, अतः इनको सरल होना अनिवार्य गुण नहीं मानना चाहिए। इस विषय में कहा गया है कि संकल्पनात्मक शब्दों में समानता रहनी चाहिए और यह ऐसी प्रकृति से संबंधित होनी चाहिए कि एक से ही अनेक शब्द बनाए जा सकें; यथा– **दूर (Tele)** शब्द से दूरदर्शन, दूरभाष, दूरदर्शी, दूरचित्र आदि। अंग्रेजी के वस्तुबोधक शब्दों को पूर्ववत् लेने की स्वीकृति प्रदान की गई है।

इस मत के विपरीत कुछ निम्नताओं की ओर संकेत किया गया। संस्कृत के धातु, उपसर्ग और प्रत्ययों द्वारा ज्ञान–विज्ञान के सभी भाव प्रकट करना संभव न होगा। बहुप्रचलित शब्दावली की उपेक्षा कर नए शब्दों का निर्माण उचित नहीं; यथा– मीटर, किलोमीटर और रेडियो आदि का परिवर्तन। मात्र तत्सम शब्द को अपनाना और अन्य शब्द वर्ग को छोड़ना उचित नहीं।

2. **अन्तरराष्ट्रीयवादी** – इसके लिए 'शब्द–ग्रहणवादी' और 'शब्द स्वीकारवादी' नाम भी दिए गए हैं। इस वर्ग के विद्वानों की मान्यता है कि विश्व में अंग्रेजी के पारिभाषिक शब्द सर्वाधिक रूप से स्वीकृति पा चुके हैं। अतः भारत में भी इन्हें पूर्ववत् अपना लेना चाहिए। यहाँ यह भी कहा गया कि यदि इन शब्दों को ले लेंगे तो दुनिया की विभिन्न भाषाओं से जुड़ जाएँगे। इस प्रकार हमारी भाषा से विदेशी भी सरलता से परिचित हो जाएँगे। विदेश में नये शब्द बनते रहेंगे और क्या भारतीय नए–नए शब्द गढ़ते रहेंगे ? इस प्रकार प्रचलित अंग्रेजी पारिभाषिक शब्दों को ही अपनाने पर बल दिया गया।

इस मत में अनेक न्यूनताएँ भी दर्शाई गईं। अंग्रेजी को ही अन्तरराष्ट्रीय भाषा मानना और विश्व की पारिभाषिक शब्दावली से जोड़ना उचित नहीं, जबकि रूप, फ्रांस और जर्मन आदि में उनकी भाषा में ही पारिभाषिक शब्द हैं। विदेशी भाषा के सारे पारिभाषिक शब्दों को ग्रहण करना तर्कसंगत नहीं है।

इस प्रकार गंभीरता से चिंतन करने से ज्ञात होता है कि अंग्रेजी के शब्द यदि लिए जाएं तो उनको हिंदी की प्रवत्ति के अनुसार मूलरूप में या परिवर्तित रूप में अपनाना चाहिए। शब्दों में अनुकूलन अपेक्षित होगा।

3. **लोकवादी** –इस वर्ग के विद्वान भारत की उदारवादी संस्कृति के ही समान हिंदी के समस्त स्रोतों से आए शब्दों को पारिभाषिक वर्ग में स्थान देने के पक्षधर हैं। इसी दष्टिकोण के आधार पर इसे प्रयोगवादी भी कहा गया है। हिंदी भाषा में यदि परंपरागत तथा तत्सम और तद्भव शब्द हैं तो विभिन्न देशों के अरबी, फारसी, तुर्की, अंग्रेजी आदि शब्द प्रयुक्त होते हैं। इन विद्वानों का कहना है कि यदि सामान्य प्रयोग और साहित्य में ये शब्द सरलता से प्रयुक्त होते हैं, तो ज्ञान–विज्ञान के विविध विषयों में पारिभाषिक शब्दों के रूप में भी प्रयुक्त होने चाहिएं। पंडित सुन्दरलाल और डॉ॰ जफ़र हसन आदि ने सरकार से अनुदान प्राप्त कर ऐसी शब्दावली भी बनाई। 1954 ई॰ में इलाहाबाद से 'हिंदुस्तानी के लिए शब्दयाती असूल' प्रकाशित हुआ। इसके कुछ शब्द अवलोकनीय हैं–

Chairman	-	मसनदी
Emergency	-	अचानकी
Government	-	शासनिया
Psychology	-	मनविद्या

यह शब्दावली जो खिचड़ी रूप में सामने आई, हास्यास्पद हो गई।

इसमें तत्सम तथा तद्भव शब्दों को भी मान्यता दी गई, किन्तु अन्य वर्गों को अधिक महत्त्व देने से शब्दावली का स्वरूप अमान्य हो गया।

4. **समन्वयवादी** – इस वर्ग को मध्यमार्गी भी नाम दिया गया। पारिभाषिक शब्द निर्माण में पूर्व के तीनों मतों के उपयोगी तथ्यों को अपनाया गया। इसके अनुसार जहाँ पर संस्कृत की धातु, उपसर्ग, प्रत्यय आदि के आधार पर शब्दनिर्माण सरलता से संभव हो किया जाए। इसके लिए पूर्व प्रयुक्त संस्कृत के शब्दों को अपना लिया जाए। अंग्रेजी के शब्द जनसामान्य में प्रचलित हो गए हों और उनके लिए संस्कृत में उतना अनुकूल शब्द न हो, तो अंग्रेजी शब्द पूर्ववत् अपना लिय जाए। यदि लोक–प्रचलित या किसी भारतीय भाषा का शब्द यदि उपयुक्त लगता है, तो उसे अपना लेना चाहिए। उसे छोड़ कर नया शब्द गढ़ना उचित नहीं है। यदि परम्परागत तद्भव शब्द उच्चारण में दुरूह न हो तो उसे पारिभाषिक रूप में अपनाना उचित है। यदि अंग्रेजी का कोई शब्द उच्चारण या प्रयोग में विषय या जटिल हो तो, उसका हिंदीकरण करके अपना लेना श्रेयस्कर होगा।

(ख) पारिभाषिक शब्द : रचना विधि – पारिभाषिक शब्द–निर्माण के लिए एक तर्कसंगति पद्धति को अपनाते हैं। सर्वप्रथम संस्कृत के शब्द उनके उपसर्ग, प्रत्यय और समास को आधार बनाते हैं। इसके पश्चात् हिंदी के तद्भव, देशी आदि शब्दों के साथ उपसर्ग और प्रत्यय और फिर भारत की भाषाओं के शब्द पर विचार करते हैं। उक्त में अंतरराष्ट्रीय भाषाओं के शब्द पर चिंतन करते हैं।

सामान्यतः संस्कृत और हिंदी के ही आधार पर पारिभाषिक शब्दों का निर्माण हो जाता है। आवश्यक होने पर अन्य वर्ग का उपयोग किया जाता है। पारिभाषिक शब्द निर्माण को निम्नलिखित वर्गों में विभक्त कर विश्लेषण कर सकते हैं–

1. **उपसर्ग आधार पर निर्मित शब्द** – उपसर्ग का प्रयोग स्वतन्त्र रूप में नहीं होता है। ये शब्द के पूर्व लगकर शब्द विशेष निर्माण करते हैं। पारिभाषिक शब्द–निर्माण में उपसर्ग की विशेष भूमिका होती है। इसे पुनः निम्नलिखित वर्गों में विभक्त कर सकते हैं–

(क) तत्सम उपसर्ग – शब्द रचना में ऐसे उपसर्गों की विशेष भूमिका होती है। कुछ प्रमुख उपसर्ग की पारिभाषित शब्द–रचना में भूमिका अवलोकनीय है–

अति–	अति+रिक्त–	अतिरिक्त	Surplus
अधि–	अधि+भार–	अधिभार	Surcharge
अधि–	अधि+कर–	अधिकर	Supe-lax

अनु–	अनु+कृति–	अनुकृति	Copy
अनु–	अनु+दान–	अनुदान	Grant
अप–	अप+वाद–	अपवाद	Exception
अभि–	अभि+नेता–	अभिनेता	Actor
अभि–	अभि+लेख–	अभिलेख	Record
आ–	आ+बंटन–	आबंटन	Allotment
उप–	उप+अध्यक्ष–	उपाध्यक्ष	Vice-Chairman
प्र–	प्र+आचार्य–	प्राचार्य	Principal
स–	स+क्षम –	सक्षम	Competent

(ख) तद्भव उपसर्ग –परंपरागत तद्भव उपसर्ग भी पारिभाषिक शब्द निर्माण प्रभावी भूमिका निभाते हैं, यथा–

अन–	अन+मोल–	अनमोल	Priceless
अध–	अध+पका–	अधपका	Half-ripe
नि–	नि+डर –	निडर	Fearless
बिना–	बिना+शर्त–	बिनाशर्त	Unconditional

(ग) विदेशी उपसर्ग – हिंदी के साथ विदेशी भाषाओं के प्रयोग के कारण विदेशी भाषा के उपसर्ग भी प्रचलित हो गए हैं। इनके आधार पर भी पारिभाषिक शब्दों का निर्माण सभव हुआ है; यथा–

ना–	ना+पसंद–	नापसन्द	Disliked
बे–	बे+शक–	बेशक	Doubtless
बद–	बद+नाम–	बदनाम	Defamed
बा–	बद+तमीज–	बदतमीज	Insolent
हम–	हम+दर्द–	हमदर्द	Sympathetic

2. **प्रत्यय आधार पर निर्मित शब्द** – प्रत्यय का प्रयोग स्वतंत्र रूप में न होकर शब्द के साथ उसके उत्तरांश में होता है। शब्द–रचना में प्रत्ययों की विशेष भूमिका होती है। प्रत्यय परम्परागत तत्सम अथवा तद्भव हो सकते हैं। इसके साथ विदेशी अथवा देशज भी हो सकते हैं। पारिभाषिक शब्द–रचना में भी इनकी विशेष भूमिका होती है।

(क) तत्सम प्रत्यय

अन–	पंजी+अन–	पंजीयन	Registration
इक–	शरीर+इक–	शारीरिक	Manual
इक–	यंत्र+इक–	यांत्रिक	Mechanical
इका–	शयन+इका–	शायिका	Sleeper
इत्र–	जन+इत्र–	जनित्र	Gonerator
इम–	अग्र+इम–	अग्रिम	Advance
ई–	दैनिक–ई–	दैनिकी	Joiurnal
ईय–	स्तर+ईय–	स्तरीय	Standard
ईय–	राष्ट्र+ईय–	राष्ट्रीय	National
करण–	पंजी+करण–	पंजीकरण	Registration
तर–	लघु+तर–	लघुतर	Smaller
तम–	वरिष्ठ+तम–	वरिष्ठतम	Seior-most
ता–	तीव्र+ता–	तीव्रता	Intensity
न–	अंक+न–	अंकन	Numbering

(ख) तद्भव प्रत्यय

आई	महंगा+आई–	महंगाई	Dearness
आहट	आकुल+आहट	अकुलाहट	Anxiety
औती	कट+औती	कटौती	Deduction

(ग) विदेशी प्रत्यय

खोर	आदम+खोर	आदमखोर	Maneater
इयत	इंसान+इयत	इंसानियत	Humanity
	काबिल+इयत	काबिलियत	Qualification
मंद	अकल+मंद	अकलमंद	Intelligent
दार	वफा+दार	वफादार	Faithful
बंदी	गिरोह+बंदी	गिरोहबंदी	Groupism

(घ) देशज प्रत्यय

अक्कड़	घूमना+अक्कड़	घुमक्कड़	Wanderer
	पीना+अक्कड़	पियक्कड़	Drunkard

(iii) सामासिक शब्द-निर्माण – जब पारिभाषिक शब्द निर्माण में दो शब्द आपस में एक साथ प्रयुक्त होते हैं, तो उस विशेष रचना को इस वर्ग में स्थान देते हैं। सामासिक शब्दों में समान स्रोतीय शब्दों की विशेष भूमिका होती है। भिन्न स्रोतीय शब्दों से पारिभाषिक शब्दों की रचना अपेक्षाकृत कम होती है।

तत्सम + तत्सम

राज्यपाल	–	Governor
घोषणा–पत्र	–	Manifesto
राष्ट्र–ध्वज	–	National Flag

तद्भव + तद्भव

महंगाई भत्ता	–	Dearness Allowance
आधी छुट्टी	–	Half Holiday

विदेशी + विदेशी

गैर सरकारी	–	Non-Official
कार ड्राइवर	–	Car Driver

तद्भव + तत्सम

पहचान पत्र	–	Identity Card

विदेशी + तत्सम

बाजार मूल्य	–	Market Value

विदेशी + तद्भव

रेलगाड़ी – Railway Train

इस प्रकार पारिभाषिक शब्द रचना में स्पष्टता, बोधगम्यता के साथ विषय से संबंधित तथ्य के उद्घाटन का सबल आधार अपेक्षित होता है।

(ग) वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली निर्धारण सिद्धांत – वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग द्वारा दिसम्बर, 1950 में पारिभाषिक शब्दों के निर्माण के लिए कुछ सिद्धांतों का निर्धारण किया गया है–

(i) वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दों को यथासंभव प्रचलित अंग्रेजी में अपनाना चाहिए, साथ ही हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं की प्रकृति के ही अनुसार लिप्यंतरण करना चाहिए। इन शब्दों के अन्तर्गत तत्त्वों और यौगिकों के नाम; यथा– आक्सीजन, कार्बन आदि। माप–तौल की इकाई–लीटर, मीटर आदि; वस्तुओं के नाम–एम्पियर, वोल्टमीटर आदि को पूर्ववत् अंग्रेजी में रखना चाहिए।

(ii) प्रतीक नामों को रोमन लिपि के साथ नागरी में लिखे जा सकते हैं; यथा– cm. से॰ मी, km. कि॰ मी॰ आदि।

(iii) ज्यामितीय आकृतियों के साथ अंग्रेजी के ABC के स्थान पर अ ब स या क ख ग लिखना चाहिए।

(iv) संकल्पनाओं को व्यक्त करने वाले शब्दों का सामान्यतः अनुवाद होना चाहिए।

(v) हिंदी शब्द–चयन में सरल, स्पष्ट और सुबोध चयन होना चाहिए।

(vi) सभी भारतीय भाषाओं में एकरूपता लाने के उद्देश्य से शब्द–चयन होना चाहिए।

(vii) जनसामान्य में प्रचलित हो गए अंग्रेजी, पुर्तगाली, फ्रांसीसी आदि भाषाओं के पारिभाषिक शब्दों को पूर्ववत् ग्रहण कर लेना चाहिए; यथा – इंजन, मशीन, मीटर, टार्च आदि।

(viii) देशी शब्द जो अंग्रेजी शब्दों के स्थान पर प्रचलित हो गए हैं, उन्हें अपना लेना चाहिए।

(ix) अंग्रेजी शब्दों के देवनागरी लिप्यंतरण के समय उसके उच्चरित मूल रूप को यथासंभव निकट रखना चाहिए।

(x) हिंदी में अपनाए गए अन्तरराष्ट्रीय शब्दोंको विशेष कारण न होने पर पुल्लिंग रूपों में अपनाना चाहिए।

(xi) वैज्ञानिक शब्दावली में आवश्यकतानुसार संकर शब्दों का निर्माण करते हुए उनकी स्पष्टता, संक्षिप्तता और बोधगम्यता पर ध्यान रखना चाहिए; यथा– Ionization - आयनीकरण, Sopanifier - साबुनीकारक।

(xii) वैज्ञानिक शब्दावली में छोटे सामासिक शब्दों का प्रयोग उपयोगी होता है। दो शब्दों के बीच में योजक चिह्न (हाइफन) लगा देना चाहिए।

(xiii) पंचम वर्ण (ङ् ञ् ण् न् म्) के अर्ध रूप के स्थान पर अनुस्वार का प्रयोग करना चाहिए; यथा– Lens- लेंस, Patent - पेटेंट आदि।

4. **ज्ञान-विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों की पारिभाषिक शब्दावली** – वर्तमान समय में मनुष्य का चिंतन और विकास बहुआयामी हो गया है। ज्ञान–विज्ञान के विविध विषयों की शिक्षा हिंदी माध्यम से सम्भव हो गई है। विभिन्न विषयों की शिक्षा हिंदी माध्यम से गतिशील करने के लिए उनसे संबंधित पारिभाषिक शब्दावलियों को विकसित करने की बात सामने आई। इस दिशा में व्यक्तिगत और प्रशासनिक संदर्भ में सराहनीय कार्य किए गए हैं। विभिन्न विषयों से संबंधित पारिभाषिक शब्दावलियों का निर्माण हो चुका है। मानव संसाधन विकास मंत्रालय भारत सरकार से संबंधित वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग इस दिशा में कार्यरत है। आयोग के द्वारा विभिन्न पारिभाषिक शब्दावलियों को अद्यतन रूप देने के प्रयास चल रहे हैं।

कुछ विषयों की शब्दावलियों के कुछ प्रतिनिधि शाब्द विचारार्थ प्रस्तुत है–

1. **प्रशासनिक शब्दावली (Adminstrative Terms)**

Ability	योग्यता	Address	पता
Adjornment	स्थगत	Adminstration	प्रशासन
Approve	अनुमोदन	Clerk	लिपिक
Fee	शुल्क	Honoranium	मानदेय
Pay	वेतन	Pension	पेंशन
Registration	पंजीकरण	Standard	मानक
Occupation	व्यवसाय		

2. **समाज विज्ञान (Sociology)**

Abduction	अपहरण	Adaptation	अनुकूलन
Contract	संविदा	Crime	अपराध
Family	परिवार	Ghost	भूत, प्रेत
Incarnation	अवतार	Rural	ग्रामीण
Socialism	समाजवाद	Solidarity	एकता
Welfare	कल्याण		

अध्याय-2

हिंदी कंप्यूटिंग

2.1 कंप्यूटर : परिचय और उपयोग

मानव के नवीनतम आविष्कार कंप्यूटर ने संपूर्ण जगत को अपनी गति से प्रभावित कर लिया है। इस अनोखे यंत्र ने अपनी कार्यक्षमता से मानव के सर्वांगीण विकास में कई नए अध्याय जोड़ दिये हैं। विज्ञान, वाणिज्य, स्वास्थ्य, संगीत, साहित्य आदि सभी क्षेत्र इस अनोखी मशीन से प्रभावित हैं। सम्प्रति चारों ओर कंप्यूटर का आधिपत्य है। कंप्यूटर का आविष्कार विदेश में हुआ। भारत में उसका आयात किया गया। अतः कंप्यूटर–उद्योगों पर विदेशी दबाव के कारण प्रारंभ में केवल अँग्रेजी में कार्य करना संभव था, लेकिन गत दशक में भारतीय उद्योगपतियों एवं सरकार की जागरूकता से कंप्यूटर के कदम हिंदीकरण की ओर द्विभाषिक प्रणाली के आविष्कार के साथ आगे बढ़ रहे हैं जिससे सुखद परिणाम प्राप्त हुए हैं। संप्रति, सरकारी, गैर–सरकारी, निजी संस्थाओं के साथ–साथ शिक्षण संस्थाओं में हिंदी कंप्यूटर की कार्य–प्रणाली को आसानी से देखा जा सकता है। ये सभी संस्थाएँ हिंदी कंप्यूटर के अधिकाधिक प्रयोग पर बल दे रही हैं। कंप्यूटर के हिंदीकरण के लिए लगभग एक दर्जन भारतीय कंप्यूटर निर्माता प्रयत्नरत हैं। उनके अथक परिश्रम से आज बाजार में हिंदी में कार्य करने के लिए, लगभग डेढ़ दर्जन छोटे–बड़े द्विभाषिक प्रोग्राम सॉफ्टवेयर, हार्डवेयर, जिस्टकार्ड रूप में उपलब्ध हैं। इनका प्रयोग करके हम हिंदी भाषा और प्रकाशन उद्योग को विकसित करने के लिए महत्त्वपूर्ण कार्य कर सकते हैं। इसके लिए यह आवश्यक है कि हमें कंप्यूटर तथा उसकी उपलब्ध प्रणालियों की जानकारी हो।

कंप्यूटर शब्द की उत्पत्ति अँग्रेजी शब्द कंप्यूटर से हुई है, जिसका अर्थ होता है 'गणना'। किंतु कंप्यूटर का कार्य केवल गणना करना ही नहीं अपितु सूचनाओं और निर्देशों के आधार पर मनुष्य को प्रत्येक क्षेत्र में सहायता प्रदान करता है। इस आधार पर हम इसे इन्फोर्मेशन अथवा सूचना के माध्यम से संगणना (प्रोसेसिंग) करने वाला उपकरण कह सकते हैं। इसीलिए इसका नामकरण हिंदी में 'संगणक' हुआ है। वैसे कंप्यूटर नाम ही मानक रूप में स्वीकार किया गया है।

कुल मिलाकर यह कहा जा सकता हे कि कंप्यूटर या संगणक मानव मस्तिष्क का वह मशीनी प्रतिरूप है जो एक निश्चित भाषा में प्राप्त सूचनाओं एवं निर्देशों के माध्यम से विभिन्न कार्यों को त्वरित गति से सम्पन्न करता है।

कंप्यूटर की संरचना

कंप्यूटर वस्तुतः एक इकाई नहीं बल्कि विभिन्न इकाइयों का समूह है। कंप्यूटर की कार्यप्रणाली पर दष्टि डालने से ज्ञात होता है कि कंप्यूटर का कार्य आदेश लेना, आदेशों को प्रोग्राम के रूप में संचित करना; उसका क्रियान्वयन करना; परिणाम संचित करना और आदेशानुसार परिणामों को सामने रखना है। ये सभी कार्य कंप्यूटर की विभिन्न इकाइयाँ करती हैं। इन्हें हम दो भागों में बाँट सकते हैं– (क) हार्डवेयर और (ख) साफ्टवेयर।

(क) हार्डवेयर

ये कंप्यूटर के बाह्य प्रभाग होते हैं। इन्हें हम मोटे तौर पर दो भागों में विभाजित कर सकते हैं–

1. **मुख्य प्रभाग** – इनके बिना कंप्यूटर पर कार्य करना संभव नहीं होता। ये निम्नवत हैं–

(i) **दश्यपटल** – इसको अँग्रेजी में डी॰ पी॰ यू॰ अथवा वी॰ डी॰ यू॰ के नाम से जाना जाता है जो कि क्रमशः डिसप्ले यूनिट विडिओ डिस्प्ले यूनिट का संक्षेपीकरण हैं। देवनागरी अक्षरों को दर्शाने के लिए दश्य पटल में कोई विशेष परिवर्तन की आवश्यकता नहीं पड़ती, किंतु अँगेजी अक्षरों की अपेक्षा हिंदी अक्षरों की बनावट अधिक जटिल होती है जैसे अक्षर के ऊपर–नीचे मात्राएँ लगाना, अनुस्वार, आधे व संयुक्ताक्षर आदि इसलिए अधिक रिजोल्युशन वाले दश्य पटल का प्रयोग अधिक उपयोगी है। इस तरह का रिजोल्युशन वाला एक दश्य–पटल, हरक्युलिस दश्यपटल है। इसके उपयोग के लिए कंप्यूटर में हरक्यूलिस कोर्ड लगाया जाता है। यह सुविधा 'ईगा' कोर्ड द्वारा प्रदान की जाती है।

(ii) **कुंजीपटल** – इसे अँग्रेजी में 'की–बोर्ड' कहते हैं। इसी से कंप्यूटर को निर्देशित और संचालित किया जाता है। पहले केवल अँग्रेजी कंप्यूटर उपलब्ध थे, जिससे यह 'की–बोर्ड' रोमन के अक्षरों का था, किंतु अब द्विभाषिक कंप्यूटर उपलब्ध हैं। इस कारण अन्य लिपि संकेतकों की आवश्यकता महसूस की गई। परिणामतः की–बोर्ड भी संयुक्त बनने लगे। पहले कुंजीपटल पर देवनागरी अक्षर भिन्न–भिन्न स्थानों में पाये जाते थे, कुछ रेमिंगटन टाइपराइटर के कुंजीपटल जैसे थे तो कुछ फोनेटिक, जिसमें अर्धाक्षरों को कुंजीपटल पर दिखाने की आवश्यकता नहीं थी, किंतु संप्रति कंप्यूटर पर उपलब्ध कुंजीपटल पर रोमन और देवनागरी दोनों लिपियों में अक्षर अंकित होते हैं। भारत सरकार के इलेक्ट्रोनिक विभाग से 1988 में एक मानकीकृत

ध्वन्यात्मक कुंजीपटल का एक मानक ले–आउट प्रस्तुत किया था। जिससे कुंजीपटल पर केवल रोमन अक्षर अंकित होने पर भी देवनागरी में कार्य किया जा सकता है। वैसे अधिकांशतः निर्माता स्टीकर उपलब्ध करा देते हैं।

(iii) **क्रियाकलाप**–केन्द्र – इसे अँग्रेजी में सेंट्रल प्रोसेसिंग यूनिट या मदरबोर्ड कहते हैं। यह कंप्यूटर का सबसे महत्त्वपूर्ण प्रभाग है। इसे हम कंप्यूटर का मस्तिष्क कह सकते हैं। यह समस्त निर्देशों को ग्रहण करके सूचनाएँ संचित करके परिणाम देता है किंतु यह मस्तिष्क एक निश्चित भाषा में कोड ग्रहण करता है जिसे 'मशीनी भाषा' (निम्न स्तरीय भाषा) कहते हैं। इस मशीनी भाषा पद्धति को 'वाईनरी सिस्टम' के नाम से जाना जाता है। कंप्यूटर को सामान्य व्यक्ति से जोड़ने के लिए उच्चस्तरीय भाषाओं का गठन किया गया है। वर्तमान में गणितीय समस्याओं के लिए 'फोस्ट्रान' व्यापारिक कार्यों के लिए 'कोबोल' तथा अन्य कार्यों के लिए बेसिक पेस्कल, सी आदि भाषाएँ रोमन में उपलब्ध हैं।

यह सर्वविदित है कि कंप्यूटर केवल मशीनी भाषा जानता है; अतः उपर्युक्त भाषाओं को मशीनी भाषा में परिवर्तित करने के लिए एक इंटरप्रेटर दुभाषिये की आवश्यकता है। कंप्यूटर की दुनिया में इसे 'कमपाइलर' कहा जाता है। यदि कंप्यूटर की कोड भाषा को देवनागरी पढ़वा दी जाये तो कंप्यूटर हिंदी या देवनागरी में कार्य करने लगेगा। इसी प्रकार जरा सी परिवर्तन से अन्य भाषाओं में कंप्यूटर पर कार्य करना संभव हो जाता है किंतु कंप्यूटर उद्योग एक बड़ी क्रांति के लिए अपेक्षित है। इसके लिए भारतीय इलेक्ट्रोनिकी विभाग ने कोड का मानकीकरण करके हमें आशान्वित किया है। रोमन के लिए 'आस्की' मानकीकृत कोड है और भारतीय लिपियों में सूचना के आदान–प्रदान के लिए 'इस्की' 8 बाईट कोड मानकीकृत किया गया है। संप्रति, ग्राफिक्स एंड इंडियन स्क्रिप्ट टर्मिनल ने अपनी तकनीक से एक इलैक्ट्रोनिक जिस्ट कार्ड रूपी दुभाषिये को ढूँढ लिया है, जिसके सहयोग से एक कंप्यूटर प्रणाली में उपलब्ध कार्यक्रमों को देवनागरी में चलाया जा सकता है। साथ ही विभिन्न संस्थानों ने इसकी मदद से अँगरेजी प्रोग्रामों में लिप्यंतरित करने का सफल उद्यम कर लिया है जिससे हिंदी प्रयोग का क्षेत्र विस्तत हुआ। इस 'जिस्ट कार्ड' का उपयोग मिनी कंप्यूटर तथा पर्सनल कंप्यूटर दोनों में किया जा सकता है। जैसे किसी मिनी कंप्यूटर में यदि वाणिज्य एवं सस्थागत खातों पर नियन्त्रण रखने के लिए पैकेज रोमन में बना है तो इस तकनीक के द्वारा उस पैकेज का प्रयोग देवनागरी तथा अन्य भाषाओं में किया जा सकता है। ज्ञातव्य है कि गहमंत्रालय के राजभाषा विभाग के तकनीकी कक्ष ने 'जिस्ट कार्ड' युक्त पर्सनल कंप्यूटरों तथा 'जिस्ट' टर्मिनल के साथ जीनिक्स पर आधारित प्रणालियों के लिए एक ऐसे साफ्टवेयर पैकेजका विकास कर लिया है। इस तकनीक से अब हिंदी अथवा देवनागरी में कार्य अधिक सरलता से संपन्न हो जाते हैं।

2. सहायक प्रभाग – वैसे कंप्यूटर के सहायक प्रभागों में माउस, अंकक (प्लीटर) पंच कार्ड, प्रिंटर आदि आते हैं, किंतु इन सबमें महत्त्वपूर्ण है प्रिंटर। वर्तमान में डॉट मैट्रिक्स, डेजी व्हील, गोल्फ बाल, लाईन तथा लेजर पिंटर बाजार में उपलब्ध हैं। गोल्फ बाल प्रिंटर तथा डेजी व्हील प्रिंटर एक बार में एक ही लिपि को पिंट कर सकते हैं। जबकि डॉट मैट्रिक्स, लाईनतथा लेजर प्रिंटर में द्विभाषिक कार्य करने की क्षमता विद्यमान है। वर्तमान में ऐसे डॉट मैट्रिक्स प्रिंटर उपलब्ध हैं जिनकी सहायता से लगभग तीन सौ पंक्तियाँ प्रति मिनट की गति से देवनागरी लिपि छापी जा सकती हैं। प्रकाश की उच्च क्वालिटी के लिए लाइन तथा लेसर प्रिंटर उपयोग में लाए जाते हैं। इनके आगमन से घरेलू प्रकाशनों को विशेष बल मिला है। हिंदी के अधिकांश लघु प्रकाशकों, प्रकाशनों के लिए लेजर प्रिंटर प्रणाली ने नया रास्ता खोल दिया है।

(ख) सॉफ्टवेयर

सॉफ्टवेयर कंप्यूटर के वास्तविक कार्य करने वाले प्रभाग हैं। ये वास्तव में पूर्व उपलब्ध प्रोग्राम होते हैं। इनके प्रयोग से विभिन्न कार्य संपन्न होते हैं। हम यह जानते हैं कि अधिकांश कंप्यूटर की इनपुट–आउटपुट व्यवस्था द्विभाषिक है, उसे हिंदी में कार्य करने के योग्य बनाया जा सकता है, किंतु आवश्यकता इस बात की है कि वह कंप्यूटर या प्रविष्ट प्रोग्राम के हिंदी अक्षरों को पहचान सके। द्विभाषिक रूप में कई सॉफ्टवेयर बाजार में उपलब्ध हैं जो देवनागरी अथवा हिंदी में काग्र करने के लिए अत्यन्त उपयोगी है। वर्तमान में साफ्टटैक लि॰ दिल्ली का 'अक्षर' देवबेस' प्रोग्राम सोनाटा, दिल्ली का 'मल्टीवड', टाटा कंसल्टेंसी बंबई का शब्दमाला, साफ्टवेयर रिचर्स ग्रुप, बंगलौर का 'शब्दरत्न' हिंदीट्रान कंप्यूटर, बंबई का 'आलेख' किर्लोस्कर बंगलौर का एम॰ एल॰ वर्क्स, सी एम सी दिल्ली का 'बाईस्क्रिप्ट', 'नेशनल इन्फोमेशन, दिल्ली का 'संगम' तथा अन्य विभिन्न कंपनियों के 'सुलेख' आदि सॉफ्टवेयर बाजार में उपलब्ध हैं। उपर्युक्त सॉफ्टवेयर में वैसे तो सभी का प्रयोग हिंदी कंप्यूटर जगत में सुचारू रूप से हो रहा है, किंतु साफ्टटैक लि॰ दिल्ली के प्रोग्राम अक्षर तथा देवबेस ने आरंभिक होने के कारण तथा अपनी गुणवत्ता के कारण इनके बीच अपनी अलग पहचान बनाई है। 'अक्षर' की सहायता से प्रार्थना–पत्र, कार्यालयी पत्र एवं पुस्तक टाईपिंग देवनागरी में सुचारु रूप से की जा सकती है। यहाँ तक डी॰ टी॰ पी॰ तथा प्रिंटर पर होने वाले अधिकांशतः हिंदी कार्यों के लिए यह एक अत्यन्त सफल कार्यक्रम सिद्ध हुआ है।

'देवबेस' इससे भिन्न होता है। यह एक विशेष प्रकार की प्रोग्राम व्यवस्था है जिसके अंतर्गत किसी भी प्रकार के आंकड़े सुव्यवस्थित

ढंग से संग्रहीत किया जा सकता है और आवश्यकतानुसार उन्हें छापा जा सकता है। इसमें रोमन पैकेज डी॰ बेस–8 की सभी सुविधाएँ उपलब्ध हैं। कार्यालयों के अतिरिक्त यह शिक्षण जगत के लिए अत्यन्त लाभकारी है। विद्वत्जन इस कार्यक्रम से अत्यन्त शुद्ध, प्रामाणिक कोश बना सकते हैं क्योंकि आपके एक इशारे से उलटे सीधे भरे सुव्यवस्थित रूप से सामने आ जाते हैं किंतु इसके लिए आवश्यकता यह है कि आज अपने विचार कंप्यूटर को उसकी भाषा में समझा दे। यह यह मिनी प्रोग्राम अत्यन्त लाभदायक होगा। साथ ही थोड़े से प्रयत्न से देवनागरी में मानक कूट पद, वर्तनी आदि कार्य संपादित किये जा सकते हैं। पुस्तकालयों के लिए भी यह प्रोग्राम उपयुक्त है। इससे पुस्तकों की कटालागिंग अधिक सुव्यवस्थित ढंग से हो सकती है। इसके अतिरिक्त कर्मचारियों का लेखा–जोखा, आय–व्यय के आँकड़े, प्रकाशनों की सूची आसानी से सुव्यवस्थित हो सकती है।

इसी प्रकार सरकारी उपक्रम सी॰ एम॰ सी॰ दिल्ली ने टेलीफोन डायरेक्टरी एवं रेलवे आरक्षण के लिए उपलब्ध रोमन कार्यक्रमों को बाईस्क्रिप्ट सॉफ्टवेयर प्रोग्राम के माध्यम से देवनागरी में लिप्यंतरित करके हिंदी के उपयोग में एक नया अध्याय जोड़ा है। राष्ट्रीय सॉफ्टवेयर टेक्नोलॉजी बंबई ने एयर इंडिया के लिए हिंदी पैकेट का निर्माण करके हिंदी को नई दिशा दी है। अगर इन साफ्टवेयरों के समकक्ष और प्रोग्राम बन सकें तथा उनका उचित प्रयोग हो तो हिंदी विश्वभाषा के रूप में अपनी उपस्थिति दर्ज करा सकती है। डी॰ टी॰ प्रणाली अथवा डेस्क टॉप पब्लिशिंग सिस्टम प्रकाशन के लिए अत्यन्त सफल सिद्ध हुआ है। हिंदी प्रकाशन, अपने सीमित संसाधनों एवं कम सर्कुलेशन के कारण उच्चस्तरीय प्रकाशन करने में अक्षम रहे हैं। अँग्रेजी प्रकाशन अपनी अधुनातन तकनीक के कारण सदैव हिंदी प्रकाशन पर हावी रहे हैं। कंप्यूटर की उपयुक्त प्रणाली में उचित हिंदी सॉफ्टवेयर का प्रयोग कर सुंदर, स्वच्छ प्रकाशन करके अँग्रेजी प्रकाशन से प्रतियोगिता संभव हो सकती है।

छोटे कंप्यूटर के द्वारा दस्तावेजों की टाइप सैटिंग की जा सकती है और चित्रों आदि के साथ विस्तत ले–आउट बनाया जा सकता है। यह लघु प्रकाशन प्रणाली कहलाती है। आज ऐने अनेक लघु प्रकाशन प्रणाली–कार्यक्रम बाजार में उपलब्ध हैं जिसकी सहायता से देवनागरी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में छपाई संभव है। पूर्वोल्लिखित है कि 'इलेक्ट्रानिक कार्ड जिस्ट' नामक दुभाषियों का आगमन इस जगत में हो चुका है जिसमें मशीनी भाषा में रूपान्तरण करने की सामर्थ्य है। इसकी सहायता से 'वेनचुरा' एवं 'पेजमेकर' के पैकेज देवनागरी में चलाए जा सकते हैं। इनके साथ–साथ डिजाइनिंग के लिए, द्विभाषिक डी॰ टी॰ पी॰ प्रणालियाँ – शबा कार्टेल, दिल्ली के सॉफ्टवेयर 'एप्पल', सोनाटा, दिल्ली के प्रकाशक, सॉफ्टवेयर रिसर्च ग्रुप बंगलौर के 'वीनस', फिफ्थ जनरेशन, दिल्ली के 'रंगोली' तथा ए॰ टॅ॰ आई॰ अहमदाबाद के हार्डवेयर 'लेखनी' आदि बाजार में उपलब्ध हैं इनके प्रयोग से हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं के प्रकाशन को समद्ध किया जा सकता है। फिफ्थ जनरेशन, दिल्ली के 'रंगोली' सॉफ्टवेयर में भारतीय सांस्कृतिक, धार्मिक चित्रों के निर्माण की भी क्षमता है। निश्चित रूप से इसके माध्यम से भारतीय संस्कृति एवं धर्म को नया आयाम मिलेगा। इन सभी के प्रयोग से लघु एवं घरेलू प्रकाशनों को अधिक शुद्ध, स्पष्ट सत्ता तथा उच्चकोटि का बनाया जा सकता है जिससे वे बाजार प्रतियोगिता में खरे उतरें।

हिंदी कंप्यूटर जगत् में इन सभी परिवर्तनों ने यह भ्रम तोड़ दिया है कि केवल अँग्रेजी की कंप्यूटर प्रोग्रामिंग, हमारे देश में इसी दशक में आरम्भ हुई है। भारत में कंप्यूटर का प्रवेश होते ही अंग्रेजी का वर्चस्व एक बार फिर बढ़ गया था लेकिन अब धीरे–धीरे उसका सम्मोहन कम हो रहा है और केंद्रीय कार्यालयों में हिंदी कंप्यूटर लोकप्रिय हो चला है। तमाम संवैधानिक व्यवस्थाओं के बावजूद सरकारी कार्यालयें में अँगेजी को तब तक अपदस्थ नहीं किया जा सकता, जब तक कंप्यूटर पर हिंदी भाषा–भाषियों का पूरा अधिकार न हो जाए। हाँ, कुछ आरम्भिक तैयारियाँ हमें करनी होंगी; जैसे– संकेताक्षरों, कूटपदों की रचना तथ उनकी व्यापक स्वीकृति; हिंदी कंप्यूटर प्रशिक्षण की व्यापक व्यवस्था; पारिभाषिक शब्दों का एकीकरण; कंप्यूटर के अनुकूल वर्णमाला एवं लिपि में अपेक्षित सुधार इत्यादि। साथ ही यह भी आवश्यक है कि हमें हिंदी को कंप्यूटर की आधुनिक जनसंचार प्रणालियों–टेलीप्रिंटर, टेलेक्स, फेसीमाईल टेलीग्राफी, फैक्स, टेलीटेक्स्ट, वीडियोटेक्स्ट प्रणाली, इलेट्रानिक मेल, कंप्यूटर कांफ्रेंस सिस्टम आदि से जोड़ना पड़ेगा तथा नई हिंदी तकनीकी शब्दावली निर्माण तक पूर्व प्रचलित अँग्रेजी शब्दावली को खुलेपन से अपनाना होगा जिससे कि हिंदी अपनी पूर्ण क्षमताओं के साथ विश्व से जुड़ सके।

यह सर्वमान्य तथ्य है कि कंप्यूटर के बिना इस प्रचंड भौतिक स्पर्धा में अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर कोई भी औद्योगिक संगठन, प्रतिष्ठान, प्रकाशन तथा जनसंपर्क कार्य संभव नहीं है। मानव संसाधनों के बावजूद कंप्यूटर विभिन्न कार्यों के लिए अपरिहार्य है। इसलिए युद्ध स्तर पर हिंदी भाषा–भाषियों को उसका अधिकाधिक प्रशिक्षण देना ही एकमात्र समाधान है।

साहित्य के अध्ययन–अध्यापन में कंप्यूटर के समक्ष एक और चुनौती है। कंप्यूटर द्वारा सुजनात्मक लेखन और विशेषतः कंप्यूटर समीक्षा। जब कंप्यूटर मानव मस्तिष्क का विकल्प बन गया है तो उसे फार्मूलाबद्ध कहानी, कविता आदि का लेखन करना होगा। अब यह मिथ टूट चुका है कि सर्जना केवल दैवी अनुकंपा से प्राप्त प्रतिभा द्वारा ही होती है। व्यावहारिक समीक्षा के क्षेत्र में कंप्यूटर

बहुत उपयोगी हो सकता है। यदि हम एक रचना के विभिन्न उपादानों को वर्गीकरण कर लें और उनका अलग–अलग मूल्यांकन कर डालें तो कंप्यूटर द्वारा वस्तुनिष्ठ आकलन बेहतर ढंग से किया–कराया जा सकता है, उसी तरह जैसे कि परीक्षा के वस्तुनिष्ठ प्रश्नों का निर्णय कंप्यूटर के माध्यम से किया जा रहा है। अभी तो हमारी साहित्य–समीक्षा ह्रमजिकल प्रभावकारी शैली की है। हम समग्र मूल्यांकन तो कर ले जाते हैं किन्तु रचना के अलग–अलग घटकों (कम्पोनेन्ट्स) का सही विश्लेषण नहीं कर पाते हैं। जैसे काव्य भाषा को ले लें। किसी कवि के समस्त भाषिक प्रयोगों को लेकर हम एक प्रभाव तो बना सकते हैं, लेकिन उसने कितने नए शब्द निर्मित किए? कितने अशुद्ध शब्द लिखे? उसके कितने शब्द दुरूह सिद्ध हुए हैं, कितने गूढार्थ व्यंजक रहे हैं? जब तक इन सब पर अलग–अलग अंक नहीं दिए जायेंगे, तब तक वस्तनिष्ठ मूल्यांकन संभव नहीं हो पाएगा। यह कंप्यूटर द्वारा ही संभव है। इसी प्रकार विचारधारा, शिल्प अर्थात् बिम्ब–विधान, प्रतीक विधान, उद्भावना शक्ति, मौलिकता, प्रवाह आदि का भी अलग–अलग विश्लेषण और मूल्यांकन करना होगा। एक साहित्यकार जो अपनू पूरे जीवन में लगभग दस लाख शब्दों का प्रयोग करता है, उसे मानव मस्तिष्क वर्गीकृत एवं विश्लेषित नहीं कर सकता। यह कंप्यूटर का ही कार्य है इसलिए अब कंप्यूटर समीक्षा अपरिहार्य हो गई है। तात्पर्य यह है कि हिंदी में कंप्यूटरीकरण की अनंत संभावनाएँ हैं। धीरे–धीरे कंप्यूटर का महत्त्व बढ़ता जा रहा है। कंप्यूटर के सहारे मानव की कार्यक्षमता पर्याप्त तेज होती जा रही है। इस प्रकार कंप्यूटर वर्तमान युग की सर्वश्रेष्ठ उपलब्धि है।

2.2 इंटरनेट : संपर्क उपकरण-परिचय

वर्तमान युग को सूचना प्रौद्योगिकी का युग कहा गया है। आज सूचना हमारे दैनिक जीवन की एक आधारभूत आवश्यकता बन चुकी है। आाज से लगभग दो दशक पहले तक अनेक प्रकार की सूचनाओं को प्राप्त करना सहन नहीं था। सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में इंटरनेट का आविष्कार मानव के लिए एक अनुपम उपहार है। इंटरनेट के कारण आज हर प्रकार की सूचना का संचार संभव हो गया है। कण–कण में बसे असीम शक्तिशाली ईश्वर की सत्ता की भाँति इंटरनेट भी आज एक सर्वव्यापी सत्ता बन गया है। इंटरनेट को हम वर्तमान सभ्यता के कृष्ण का विराट विश्व रूप मान सकते हैं। प्रकाश के समान तीव्र गति से समस्त संसार में सूचनाओं का संचार करने में सक्षम इंटरनेट, इलैक्ट्रॉनिक संचार युग का अद्भुत उपादान है। इसके आगमन से संपूर्ण विश्व में एक हलचल–सी हो गई है।

कंप्यूटरों के विस्तत महाजाल को इंटरनेट कहते हैं। इसकी व्याप्ति पूरे विश्व में है। इसमें विराट नेटवर्क की भूमिका होती है। इसी आधार पर इसे हिंदी में 'विश्वजाल' की संज्ञा दी जाती है। छोटे–बड़े कंप्यूटर टेलीफोन की लाइनों तथा केबिल के माध्यम से जुड़े होते हैं। इस प्रकार से विश्व के कोने–कोने तक संवाद स्थापित किया जा सकता है। इसे विस्तत फैलाव को ध्यान में रखकर इसे सूचनर तंत्र का 'सुपर हाइवे' अथवा 'साइबर स्पेश' नाम से संबोधित किया जाता है। वास्तव में यह इस युग की सूचना प्रणाली की विशेष उपलब्धि है। इसी व्यवस्था या देख–रेख की कोई केंद्रीय इकाई नहीं है। जो भी अपने कंप्यूटर को इस नेटवर्क से जोड़ता है, वह इसका अंग बन कर संदेशवाहक के रूप में सामने आ जाता है। इंटरनेट वास्तव में लोगों की इच्छा, भावनाओं और ज्ञान का प्रवक्ता है, जो लोगों के उपयोगार्थ संचार माध्यम के रूप में लोगों द्वारा निर्मित है। इस प्रकार कह सकते हैं कि इंटरनेट कंप्यूटर के माध्यम से भौतिक दूरी को समाप्त कर दूर से दूर अर्थात् विश्व के किसी भी कोने का समाचार या ज्ञान पलक झपकते ही उपलब्ध कराने वाला विशेष आधार है। कंप्यूटर के माध्यम से विश्व एक ग्लोबल विलेज 'विश्वग्राम' बन गया है।

इंटरनेट सूचनाओं का एक विशाल सागर है जिसका प्रमुख कार्य है सूचनाओं का आदान–प्रदान। सूचनाओं के इस अनंत असीम आकाश में ब्रह्मांड की समस्त जानकारी सिमटी हुई है। संचार माध्यमों के क्षेत्र में इसने अभूतपूर्व क्रांति ला दी है। समाचार–पत्रों का प्रचार–प्रसार इससे प्रभावित अवश्य हुआ है, परंतु उसके महत्त्व को इंटरनेट तनिक भी कम नहीं कर पाया है। अपितु पत्रकारिता और इंटरनेट आज एक–दूसरे के पूरक बन गए हैं। इंटरनेट ने पत्रकारिता को तीव्र गति प्रदान की है। यही कारण है कि आज पत्रकारों को वह सामग्री भी उपलब्ध हो रही है जिसकी उन्होंने कल्पना तक नहीं की थी। समय की बचत, बहुभाषीय ऑनलाइन वार्ता, सुपरटैक सॉफ्टवेयर आदि के निर्मित होने से आज अनेक कार्य सहजता और सरलता से होने लगे हैं। इंटरनेट आज विचारों की अभिव्यक्ति का सर्वाधिक प्रभावी माध्यम बन गया है। समय के साथ घर–घर में घर कर गया है यह इंटरनेट।

इंटरनेट से जुड़ते ही विश्व के अलग–अलग स्थानों पर स्थित इंटरनेट से जुड़े लाखों कंप्यूटरों से क्षण भर में ही हमारा संपर्क स्थापित हो जाता है। विभिन्न प्रकार की जानकारियाँ, सूचनाएँ और आँकड़ों के विशास सागर में हम डूबने–उतरने लगते हैं। इंटरनेट के माध्यम से कुछ खरीदना तो एक मामूली–सी सुविधा है। हम चाहें तो भौतिक जगत् में किए जाने वाले समस्त कार्य इंटरनेट पर कर सकते हैं। समाचार–पत्र, पत्रिकाएँ और पुस्तकें हमारे लिए इंटरनेट पर उपलब्ध हैं। ई–मेल से हम संदेश भेज सकते हैं। संदेश प्राप्त कर सकते हैं। चैटिंग अर्थात् हजारों किलोमीटर दूर बैठे लोगों से गप–शप कर सकते हैं। यहाँ तक कि कैमरे के द्वारा उन्हें अपने कंप्यूटर के स्क्रीन पर देख भी सकते हैं। पलक झपकते ही हम समाचार–पत्र, पत्रिकाएँ, सिनेमा, खेल, पुस्तकालय, उद्योग, मौसम, शिक्षा,

विश्वविद्यालय आदि किसी भी क्षेत्र से संबंधित नवीनतम इंटरनेट पर उपलब्ध उपयोगी वेबसाइट से प्राप्त कर सकते हैं।

आखिर यह इंटरनेट है क्या बला? विश्व में अलग–अलग स्थानों पर स्थित अनेक कंप्यूटरों को एक नेटवर्क के द्वारा आपस में जोड़ा जाता है। इस नेटवर्क के माध्यम से सूचना के संचार के लिए बनाई गई एक विशेष प्रकार की प्रणाली ही इंटरनेट कहलाती है। किसी भी कार्यालय में टेलीफोन लाइनों से जुड़े मात्र दो कंप्यूटर भी नेटवर्क कहे जा सकते हैं। इंटरनेट तो नेटवर्कों का भी नेटवर्क है। इंटरनेट बिना किसी भेदभाव के संपूर्ण विश्व को एक साथ, एक समान रूप से एक अनोखे रिश्ते में बाँध देता है। अमेरिका के **'डिफेंस एडवांस्ड रिसर्च प्रोजेक्ट एजेंसी' (Defence Advanced Research Project Agency) ने अर्पानेट (Arpanet)** के माध्यम से सन् 1969 में मात्र चार कंप्यूटरों को आपस में जोड़ा था। इनमें से तीन कंप्यूटर कैलिफोर्निया में तथा एक यूटा में था। यह नेटवर्क सफलतापूर्वक काम करने लगा। विश्वविद्यालय तथा अनुसंधान केंद्रों ने भी ऐसे अनेक नेटवर्क स्थापित कर लिए। ये सभी नेटवर्क आपस में एक अटूट रिश्ते बँधते चले गए। देखते ही देखते 'वसुधैव कुटुंबकम्'की कल्पना को साकार करते हुए एक विशाल नेटवर्क इंटरनेट के रूप में विश्व स्तर पर स्थापित हो गया।

कंप्यूटर का आरंभ और विकास ऐसे देशों में हुआ जिनकी भाषा अंग्रेजी अथवा रोमन लिपि पर आधारित कोई यूरोपीय भाषा थी। इसीलिए अन्य लिपियों में कंप्यूटर पर कार्य देरी से प्रारंभ हुआ। रोमन लिपि अथवा अंग्रेज़ी को कंप्यूटर के लिए एक आदर्श भाषा मानने में कोई तकनीकी कारण निहित नहीं हैं कंप्यूटर का कार्य तो दो संकेतों की एक स्वतंत्र गणितीय भाषा पर आधारित है। इसी आधार पर वह हमारी भाषा को स्वीकार कर अपने सब कार्य करता है। अतः स्पष्ट है कि किसी भाषा को अपनाने में कंप्यूटर के लिए कोई तकनीकी बाधा नहीं है। यह सच है कि रेखिकीय (linear) लिपि होने के कारण यांत्रिक कारणों से रोमन लिपि निश्चय ही देवनागरी की अपेक्षा सरल है। गहराई से खोज की जाए तो पता चलता है कि रोमन की अपेक्षा अन्य सभी लिपियों में इतनी अधिक जटिलता ओर विविधता है कि उन्हें एक ही कुंजी पटल (Key-board) पर लाना अत्यन्त दुष्कर कार्य है। ब्राह्मी लिपि से विकसित होने के कारण भारतीय लिपियाँ अपने मूल रूप में अक्षरात्मक हैं, परंतु लेखन की भिन्नता के कारण इनके बाह्य स्वरूप में बहुत अंतर आ गया है। अनेकता में एकता की बात भारतीय संस्कृति पर ही नहीं, अपितु भारतीय भाषाओं और उनकी लिपियों पर भी खरी उतरती है। भारतीय भाषाओं और उनकी लिपियों में अंतनिर्हित इसी समानता के आधार पर **'इस्की' (ISCII) [Indian Standard code for information interchange]** नाम से एक **कोड प्रणाली (Code system)** का निर्माण किया गया है। इस कोड प्रणाली में भारतीय तथा दक्षिण दक्षिण पूर्व एशिया की लिपियों, भाषाओं के साथ–साथ रोमन लिपि पर आधारित समस्त यूरोपीय भाषाओं को भी सम्मिलित किया गया है। इस मानक कोडिंग प्रणाली के निर्माण से भारत की सभी भाषाओं के लिए प्रौद्योगिकी के पल–पल परिवर्तित हो रहे क्षेत्र में एक नई राह खुल गई है।

भारत के सर्वप्रथम सुपर कंप्यूटर के निर्माता पुणे स्थित 'सी–डैक' नामक सरकारी संस्था ने 'इस्की' के आधार पर ही 'आई॰ आई॰ टी॰' कानपुर की सहायता से **'जिस्ट' (Graphics and Script Technology)** नामक भाषा नतकनीक का विकास किया। इसका प्रदर्शन सन् 1984 में नई दिल्ली में आयोजित 'विश्व हिंदी सम्मेलन' में किया गया था। इसी तकनीक के कारण आज कंप्यूटर से संबंधित सभी प्रकार के कार्य हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में किए जा सकते हैं। 'डॉस', 'विंडोज़' और 'यूनिक्स' के अंतर्गत संपन्न होने वाले कार्य इस तकनीक के द्वारा भारत की सभी भाषाओं में शब्द–संसाधन Word-processing) तथा डाटा–संसाधन (Data-Processing) का कार्य संभव है। इनमें हिंदी में स्पैल–चैकर, ऑनलाइन, शब्दकोश, ई–मेल तथा वेब प्रकाशन की सुविधा भी उपलब्ध है। इंटरनेट में ई–मेल और वेबसाइट की प्रमुख भूमिका रहती है।

इलैक्ट्रॉनिक मेल (Electronic mail)

ई–मेल एक इलैक्ट्रॉनिक डाक प्रणाली है। इसके माध्यम से कंप्यूटर का कोई भी उपयोगकर्ता किसी अन्य कंप्यूटर उपयोगकर्ता तक अपने संदेशों का आदान–प्रदान कर सकता है। एक ही संदेश अनेक व्यक्तियों के पास एक साथ भेजा जा सकता है। इसके लिए सर्वप्रथम आवश्यकता है उस व्यक्ति या संस्था के ई–मेल पते की, जिसे ई–मेल भेजी जानी है, यथा pranavapathak8@hotmail.com. इसके बाद हम पहले तय स्थलों पर पता, विषय, पाठ, संदेश आदि कंप्यूटर से टंकित करते हैं और आवश्यक कमांड देकर ई–मेल भेज देते हैं। यह मेल जिसे भेजी गई है उसके मेल–बॉक्स में पहुँच जाती है और भेजने वाले के मेल–बॉक्स में भी संग्रहीत हो जाती है। ई–मेल संचार का अत्यंत तीव्रगामी और बहुत ही सस्ता माध्यम है। इसे गोपनीय रखने के लिए पासवर्ड दिया जाता है। इसकी विश्वसनीयता प्रामाणिक है क्योंकि इसके माध्यम से कुछ खरीदा तथा बेचा भी जा सकता है। ई–मेल की विशेषता है कि पत्र भेजने वाले और पाने वाले दोनों के पास एक ही वेबसाइट का होना ज़रूरी नहीं है। 'याहू', 'हॉटमेल', 'रैडिफ़मेल', 'इंडियाटाइम्स' आदि कुछ प्रमुख वेबसाइटें हैं जो यह सुविधा मुफ्त प्रदान करती हैं। 'सी–डैक' संस्था द्वारा निर्मित 'इज़्म' सॉफ्टवेयर पर ग्यारह भारतीय भाषाओं में यह सुविधा उपलब्ध है। यदि आप हिंदी में ई–मेल भेज रहे हैं तो पाने वाले के कंप्यूटर में भी हिंदी फॉन्ट का होना आवश्यक है। 'सी–डैक' संस्था ने 'हॉटमेल' के समान हिंदी और मराठी में 'मल्टीमेल' की सुविधा भी प्रदान की है।

विश्वव्यापी वेब (World Wide Web)

इसे 'डब्ल्यू डब्ल्यू डब्ल्यू' के नाम से जाना जाता है। सूचनाओं से भरपूर यह एक विश्वव्यापी डेटाबेस है। इंटरनेट के प्रयोग में इसने मानव की कल्पना को सर्वाधिक प्रभावित किया है। इंटरनेट को इतनी लोकप्रियता इस विश्वव्यापी वेब ने ही दिलाई है। इंटरनेट विश्व भर की समस्त जानकारियों से भरपूर एक पुस्तक है। वेबसाइट को हम इसका एक अध्याय मान सकते हैं। यदि हमें किसी क्षेत्र–विशेष के बारे में जानना है तो उससे संबंधित साइट का नाम कंप्यूटर पर टाइप करना होगा। पलक झपकते ही इच्छित जानकारी हमारे कंप्यूटर के मॉनीटर पर उपलब्ध होगी। वेबसाइट के पते के अन्तिम तीन अक्षर अति महत्त्वपूर्ण होते हैं। इन्हीं से पता चलता है कि खोला गया साईट किस प्रकार का है। अंतिम तीन अक्षर यदि edu किसी शैक्षणिक संस्थान का साइट है। यदि ये अखर com हैं तो यह कॉमर्शियल आर्गेनाइज़ेशन है। जिनके अंत में मात्र दो अक्षर हैं वे किसी देश–विशेष की वेबसाइट को दर्शाते हैं। यथा– भारत के लिए in, ब्रिटेन के लिए uk और आस्ट्रेलिया के लिए au हैं। अक्षरों द्वारा खोला गया पता आँकड़ों का रूप लेकर 'हाइपर टैक्स्ट प्रोटोकॉल' (http) के माध्यम से वांछित साइट खोलता है। यदि किसी व्यक्ति को यह पता नहीं है कि उसे जो जानकारी चाहिए, वह कहाँ मिलेगी तो किसी सर्च इंजन की सहायता से वह मनचाही जानकारी पा सकता है। सर्च इंजन लाखों वेबसाइटों में से उसके मतलब की वेबसाइट बता देगा। 'इंफोसीक', 'अल्टाविस्टा', 'लाइकोसिस', 'आर्ची', 'गोफर', 'वैरानिका' तथा 'डब्ल्यू॰ ए॰ आई॰ एस॰' आदि कुछ लोकप्रिय सर्च इंजन हैं। 'याहू' विश्व का सबसे बड़ा सर्च इंजन है।

आजकल वेब इंटरनेट पर प्रचार का महत्त्वपूर्ण माध्यम बन गया है। वेब के पते समाचार–पत्र, पत्रिकाओं ओर टेलीविज़न पर भी प्रसारित किए जा रहे हैं। आज वेब प्रकाशन कॉरपोरेट संप्रेषण का महत्त्वपूर्ण भाग हो गया है। देव आलेख एक उद्योग के हिस्से के रूप में विकसित हो रहे हैं। किसी भी सूचना के विषय के अंतर्गत हम विभिन्न प्रकार के वेब पेज देख सकते हैं। पहले वेब पर केवल लिखित सामग्री ही उपलब्ध होती थी, परंतु अब मल्टीमीडिया के विकास से चित्र, ध्वनि और संगीत आदि भी वेब पर संभव हो गए हैं। इसे हाइपर मीडिया भी कहा जाता है। वस्तुतः यह हाइपर टैक्स्ट और मल्टीमीडिया का ही मिश्रित स्वरूप है। किसी ब्राउज़र द्वारा ही इस वेब को इंटरनेट पर देखा जा सकता है। नेटस्केप नेवीगेटर आजकल विशेष रूप से लोकप्रिय है। माइक्रोसॉफ्ट का इंटरनेट एक्सप्लोरर भी इसकी प्रतिस्पर्धा में तेज़ी से उभर रहा है।

संचार के क्षेत्र में एक अन्य महत्त्वपूर्ण प्रणाली है – ब्रॉडबैंड वीडियो नेटवर्किंग। मनोरंजन की दुनिया में इसने एक क्रांति उपस्थित कर दी है। यह एक ऐसा नेटवर्क है जिसके माध्यम से अति तीव्र गति से आँकड़े भेजे ओर प्राप्त किए जा सकते हैं। भविष्य में इस प्रणाली में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि होगी वीडियो ऑन डिमांड।

अनेक न्यूज़ नेटवर्क यूज़नेट कहलाता है। न्यूज़ रीडर की सहायता से हम यूज़नेट की सूचनाएँ प्राप्त कर सकते हैं। यूज़नेट पर हम अपने विचार भेज सकते हैं, प्रश्न पूछ सकते हैं। इसके लिए नेटीक्वेटी (Netiquette) नियमों का पालन आवश्यक है। कुछ भी पूछने से पहले एफ॰ ए॰ क्यू॰ (F.A.Q) फाइल को पढ़ लेना चाहिए क्योंकि पूछे जाने वाले अधिकांश प्रश्नों के उत्तर इसमें पहले से ही विद्यमान रहते हैं।

एफ॰ टी॰ पी॰ (File Transfer Protocal)

फाइल ट्रांसफर प्रोटोकॉल द्वारा इंटरनेट के अंतर्गत किसी भी दूरस्थ कंप्यूटर में कॉपी किया जा सकता है। इस कार्यक्रमके द्वारा अन्य किसी भी कंप्यूटर से संपर्क स्थापित कर उसमें उपलब्ध फाइलों को देखकर उनमें से मनचाही सामग्री को अपने कंप्यूटर में स्थानांतरित किया जा सकता है। इसी तरह अपने कंप्यूटर में संग्रहीत किसी फाइल को भी इंटरनेट से जुड़े अन्य किसी भी कंप्यूटर में भेज सकते हैं।

टेलनेट (Telnet)

टेलनेट सेवा के माध्यम से हम अपने कंप्यूटर को इंटरनेट से जुड़े किसी कंप्यूटर का टर्मिनल बना लेते हैं। इस सेवा के माध्यम से हम दूरस्थ कंप्यूटर के उपयोगकर्त्त बन जाते हैं। इस सुविधा को 'रिमोट लॉग इन' भी कहते हैं। फाइल ट्रांसफर प्रोटोकॉल की सहायता से टेलनेट द्वारा नेटवर्क के एक कंप्यूटर से दूसरे कंप्यूटर पर आवश्यक नई तथा उपयोगी सूचनाओं को डाउनलोड किया जा सकता है।

टेलिकॉन्फ्रेंस (Tele-Conference)

संचार–साधनों के द्वारा दो या दो से अधिक स्थानों पर तीन या तीन से अधिक व्यक्तियों द्वारा परस्पर विचार–विमर्श करना टेलि–कॉन्फ्रेंस कहलाता है। ऑडियो कॉन्फ्रेंस में भाग लेने वाले व्यक्ति परस्पर बातचीत तो कर सकते हैं, परंतु एक–दूसरे को देख नहीं सकते। ऐसी कॉन्फ्रेंस टेलिफोन से संभव है। वीडियो–कॉन्फ्रेंस में लोग एक–दूसरे को देख भी सकते हैं और आपस में विचार–विमर्श भी कर सकते हैं। कंप्यूटर कॉन्फ्रेंस में अलग–अलग स्थानों पर बैठे लोग कंप्यूटर के माध्यम से सूचनाओं का

आदान–प्रदान कर सकते हैं। इंटरनेट के माध्यम से होने वाली कॉन्फ्रेंस में अनेक व्यक्तियों से बातचीत भी की जा सकती है और उन्हें कंप्यूटर के मॉनीटर पर देखा भी जा सकता है।

चैटिंग (Chatting)

चैटिंग ने हज़ारों–लाखों किलोमीटर की दूरियों को समाप्त कर दिया है। इंटरनेट के सहारे व्यक्ति स्थानीय कॉल की दर से अमेरिका या इंग्लैंड में किसी से भी बात कर सकता है। इंटरनेट पर टेलिफोन के द्वारा केवल एक स्थानीय कॉल के खर्च पर विश्व में कहीं भी कितनी भी देर बात की जा सकती है। यह सेवा विश्व–भर में अत्यंत तेज़ी से लोकप्रिय हो रही है। वैसे तो यह चैटिंग सामान्य तौर पर लिखित में होती है, परंतु आजकल वॉयस (Voice) चैटिंग अधिक लोकप्रिय हो रही है, जिसमें इंटरनेट और टेलिफोन के माध्यम से व्यक्ति की आवाज़ हजारों मील दूर बैठे साथी के पास पहुँच जाती है। यदि कंप्यूटर में कैमकॉर्डर अर्थात् कंप्यूटर कैमरा लगा हो तो जिस व्यक्ति से आज चैटिंग कर रहे हैं, वह अपने कंप्यूटर के मॉनीटर पर आपको देख भी सकता है।

इंट्रानेट (Intranet)

इंट्रानेट सविधा की पहुँच बहुत कम लोगों तक होती है। बडी–बड़ी कंपनियाँ अपने मुख्यालय तथा अन्य शाखाओं का आपस में संपर्क बनाए रखने के लिए इस सुविधा का प्रयोग करती हैं। इसकी पहुँच केवल उन्हीं लोगों तक होती है, जो कंपनी के कर्मचारी या सदस्य हों और जिनके पास वेबसाइट तक पहुँचने का अधिकार हो। इंट्रानेट के दो रूप हैं– लोकल एरिया नेटवर्क (लैन), तथा वाइड एरिया नेटवर्क (वैन)। इसमें स्टेशनरी तथा धन की बचत होती है। जानकारी के तीव्र आदान–प्रदान से कंपनी की उत्पादकता और क्षमता में विस्तार होता है।

ई-कॉमर्स (E-Commerce)

ई–कॉमर्स ने समस्त संसार को एक विशाल मंडी में परिवर्तित कर दिया है। इस मंडी में आप छोटी–से–छोटी और बड़ी–से–बड़ी वस्तु को खरीद और बेच सकते हैं। ई–कॉमर्स की किसी भी वेबसाइट को खोलकर और उसे ऑर्डर देकर घर बैठे ही अपनी मनपसंद वस्तु प्राप्त की जा सकती है। इंटरनेट पर खरीदारी करने का सबसे सुलभ माध्यम क्रेडिट कार्ड है।

इंटरनेट पर उपलब्ध इन सभी सुविधाओं में हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं का प्रयोग संभव है और बहुत लोगों द्वारा यह प्रयोग किया भी जा रहा है। परंतु इसमें सबसे अधिक आवश्यक है कि जिससे आप संपर्क साध रहे हैं, उसके कंप्यूटर में भी उस भाषा का फॉन्ट या सुविधा उपलब्ध हो, जिसका प्रयोग आप कर रहे हैं। हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में कंप्यूटर पर कार्य करने के लिए सॉफ्टवेयर तैयार करने में पुणे स्थित सरकारी संस्था 'सी–डैक' का योगदान द्वितीय है। सामान्य व्यक्ति 'विंडोज़' से सर्वाधिक परिचित है। 'विंडोज़' के अंतर्गत कार्य करने के लिए भारतीय भाषाओं में विभिन्न प्रकार के 'इंटरफेस' विकसित किए गए हैं। यहाँ प्रमुखता 'सी–डैक' द्वारा विकसित 'लीप–ऑफिस' और 'इज़्म ऑफिस' की ही है। 'इस्की' (ISCII) के आधार पर भारत की सभी भाषाओं की लिपियों के लिए (उर्दू को छोड़कर) 'इन्स्क्रिप्ट' (Inscript-Indian Language Script) नामक समान कुंजी पटल का विकास किया गया है। अंग्रेजी के क्वर्टी (Querty) कुंजी पटल पर आधारित 'इन्स्क्रिप्ट' के द्वारा टंकण कार्य अंग्रेजी के साथ–साथ भारतीय भाषाओं की लिपियों में भी किया जा सकता है। इसके अंतर्गत भाषाओं में परस्पर 'लिप्यंतरण' (Transliteration) की सुविधा भी उपलब्ध है।

वर्तमान समय में विंडोज़ का अद्यतन विकास – 'विंडोज 2000 और 'विंडोज़ एक्स॰ पी॰' के रूप में नज़र आता है। इसके के अनुरूप माइक्रोसॉफ्ट संस्था ने एम॰ एस॰ ऑफिस के अंतर्गत 'ऑफिस 2000' जारी किया है जिसमें विश्व की कठिन और जटिलतम लिपियों को सम्मिलित किया गया है। विंडोज़ के अद्यतन एवं विकसित रूपों के आने से स्थानीय भाषाओं मेंभी 'इंटरफेस' की सुविधा हो गई है। आज हम देवनागरी लिपि में संदेशों का आदान–प्रदान कर सकते हैं। कंप्यूटर पर पाठों का टंकण देवनागरी में कर सकते हैं। आर॰ के॰ कंप्यूटर के सहयोग से आई॰ बी॰ एम॰ टाटा कंपनी ने 'हिंदी डॉस' के रूप में एक ऐसी परिचालन प्रणाली (Operating System) का विकास किया है जिसके अंतर्गत 'कमांड' और 'मेन्यू' भी हिंदी में दिए गए हैं। फाइल का नाम भी हिंदी में दिया जा सकता है। 'सी–डैक' ने व्यक्तिगत स्तर पर लेखकों के लिए कुंजी पटल को सरल बनाने के लिए 'आई–लीप' (I-lrap) नामक 'इंटरफेस' का विकास किया है। इसके द्वारा लेखक अपनी पांडुलिपि स्वयं टंकित कर सकता है और 'बहुभाषी स्पैल चैकर' की सहायता से उसमें प्रूफ संशोधन भी कर सकता है। सूचना–प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में 'सी–डैक' संस्था के क्रांतिकारी कार्यों ने हिंदी भाषा और देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता को प्रमाणित कर दिखाया है।

भारतीय भाषाओं में कंप्यूटर तकनीक के क्षेत्र में हो रहे तीव्रगामी विकास के कारण आज कठिन से कठिन और जटिल जटिल कंप्यूटर संबंधी कार्यों में हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं का व्यापक प्रयोग हो रहा है। भारतीय रेल की आरक्षण–व्यवस्था की सुविधा आज आम आदमी को हिंदी में भी सुलभ है। देश में हो रहे आम चुनावों में करोड़ों मतदाताओं की सूचियाँ कंप्यूटर के माध्यम से हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में तैयार की गई हैं। भारतीय भाषाओं के साहित्य में उपलब्ध कालजयी गोरवपूर्ण कृतियाँ इंटरनेट पर और सी॰ डी॰ के रूप में उपलब्ध है। सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हो रहे तीव्रतम विकास के कारण इंटरनेट के क्षेत्र में आज भी हमारे

सम्मुख अनेक चुनौतियाँ उभर रही हैं। इन चुनौतियों का सामना करने के लिए हमें और अधिक परिश्रम करना होगा। भविष्य में वही भाषा और लिपि लोकप्रिय होगी जो पूर्णतः वैज्ञानिक होगी। प्रत्येक दष्टि से समद्ध हिंदी भाषा आज किसी से कम नहीं है। इसे और अधिक समद्ध बनाने के लिए कंप्यूटरविज्ञ तथा भाषाविज्ञ दोनों को एक साथ मिलकर निरंतर कार्य करना होगा। निश्चय ही हिंदी एक दिन विश्व की भाषाओं में प्रथम स्थान पर आएगी।

2.3 इंटरनेट : समय मितव्ययिता का सूत्र

इंटरनेट कंप्यूटरों का एक ऐसा महाजाल है, जिसकी व्याप्ति दुनिया भर में है। इससे संबद्ध कोई भी दो कंप्यूटर आपस में संवाद स्थापित कर सकते हैं। इसीलिए इसे सूचना का 'सुपर हाइवे' या 'साइबर स्पेस' जैसे नामों से भी संबोधित किया जाता है। वस्तुतः यह एक संगठित सूचना–तंत्र है लेकिन इसकी देख–रेख या नियंत्रण–निरीक्षण करने वाली कोई केन्द्रीय व्यवस्था नहीं है। जो कोई अपने कंप्यूटर को इंटरनेट से जोड़ता है, वह इसका हिस्सा बन जाता है। यह लोगों द्वारा निर्मित, लोगों के लिए और लोगों का ऐसा सूचना–तंत्र है जो सच्चे अर्थों में लोगों की मानसिकता, उनके ज्ञान और उनकी भावनाओं का प्रवक्ता है।

घर बैठे दुनियाभर में किसी से बातें करनी हों, विशिष्ट विषयों पर चर्चा–सत्र आयोजित करना हो, किसी भी देश के कंप्यूटर की तमाम फाइलों की जानकारी अल्पसमय में प्राप्त करनी हों या किसी शोध–सामग्री को उपलब्ध करना–कराना हो, इंटरनेट के जरिए यह सब संभव है। यह ज्ञान का महासागर है। शोध से लेकर खरीद–फरोख्त तक संसार का एक भी विषय ऐसा नहीं है, जिसकी जानकारी इंटरनेट पर उपलब्ध न हो। विज्ञान, व्यापार, कला और साहित्य आदि विविध क्षेत्रों की ज्ञान–धाराएँ इस महाज्ञान–गंगा में मिलकर इसे सागर रूप में परिणत करती रहती हैं। लाखों लोगों के 'होम पेज' इंटरनेट पर उपलब्ध हैं। भारतीय संस्कृति में कल्पवक्ष की कल्पना की गई है। इंटरनेट ज्ञान का ऐसा ही कल्पवक्ष है। हमारे मन में ज्ञान संबंधी कोई भी लालसा हो, यह कल्पवक्ष पूरा कर देता है।

इंटरनेट का एक ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य भी है। यह सूचना–क्रांति का वह अंग है, जिसकी शुरुआत विश्व की दो महाशक्तियों –रूस और अमेरिका के बीच चल रहे शीतयुद्ध के दौरान हुई थी। अमेरिकी रक्षा–विभाग ने संभावित रूसी परमाणु–आक्रमण से अपनी आयुध संबंधी सूचनाएँ बचाने के लिए 1969 में एक कंप्यूटर नेटवर्क का निर्माण किया था, जिसे 'अपरा' के नाम से जाना जाता है। बाद में इसी नेटवर्क के अंतर्गत एक ऐसा 'रिमोट पर्सनल मेल बॉक्स' विकसित किया गया जिसके माध्यम से सूचनाओं का आदान–प्रदान किया जाने लगा। इन सूचनाओं में अस्त्र–विद्या संबंधी ही नहीं, व्यक्तिगत पत्रों का भी समावेश रहता था। इसी का विकसित रूप है ई–मेल। बाद में अमेरिकी रक्षा मंत्रालय ने रक्षा संबंधी सूचनाओं की गोपनीयता बनाए रखने के लिए एक अलग नेटवर्क 'MILNET' शुरू किया। वहीं के 'नेशनल साइंस फाउंडेशन' ने NSF NET नामक नेटवर्क स्थापित किया, जिसका उद्देश्य शैक्षणिक संस्थाओं को अत्याधनिक शोधों की जानकारी तुरंत उपलब्ध कराना था। इसी प्रक्रिया में आगे चलकर 1990 में विश्व–व्यापी नेटवर्क इंटरनेट का प्रारंभ हुआ और शीघ्र ही इसका विस्तार दुनियाभर में हो गया। वैज्ञानिक शोध, अत्याधुनिक तकनीकी सूचना, कला, इतिहास, साहित्य आदि जितने भी विषय हैं, सबकी जानकारी आज इंटरनेट पर सहज ही उपलब्ध है। इसके लिए उत्तम दर्जे के कंप्यूटर, टेलीफोन और इन दोनों को जोड़ने वाले 'मोडेम' की आवश्यकता होती है। हर देश के लिए सर्वर हैं, जो इंटरनेट जगत् से संबंध जोड़ते हैं।

यूरोपीय वैज्ञानिकों ने ज्ञान की विविध शाखाओं में हो रहे अनुसंधानों से एक–दूसरे को परिचित कराने के लिए एक विश्व डाटाबेस यानी ज्ञान–संग्रह की कल्पना की थी। इसी क्रम में वर्ल्ड वाइड वेब (WWW) की शुरूआत हुई थी। ये वेबसाइट ही आज अपार ज्ञान–संग्रह बने हुए हैं। इन पर प्राप्त जानकारी को 'पेज़' कहते हैं। वेब पर आज करोड़ों 'पेज' उपलब्ध हैं। इनकी जानकारी के लिए तमाम 'साफ्टवेयर' उपलब्ध हैं।

इस ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य के तहत इंटरनेट ने जिस तरह कम से कम समय में जीवन के हर क्षेत्र को प्रभावित करना शुरू कर दिया है, उससे इसका एक अलग समाजशास्त्र और अर्थशास्त्र विकसित हो रहा है। इसने वर्तमान सांस्कृतिक जीवन को भी बहुत हद तक प्रभावित किया है। सूचना एवं संचार क्रांति का तो यह एक अभिन्न अंग बन गया है। इसी कारण प्रिंट मीडिया की प्रतिद्वंद्विता आज सिर्फ टीवी चैनलों की पत्रकारिता तक ही सीमित नहीं रह गई है बल्कि इंटरनेट के तमाम वेबसाइट भी इस दौड़ में आ गए हैं। इससे यह लगने लगा है कि जैसे–जैसे वेबसाइटों का प्रसार बढ़ेगा, मीडिया का स्वरूप और चरित्र भी बदलता जाएगा। इसमें इंटरनेट की भूमिका अहम् होगी। 'दैनिक जागरण' उत्तर भारत के किसी गाँव का स्थानीय समचार छपेगा तो उसे अखबार के रूप में रोहतक या दिल्ली में पढ़ पाना संभव नहीं होगा किंतु वही समाचार जागरण के वेबसाइट पर रोहतक या दिल्ली ही नहीं अमेरिका में भी पढ़ा जा सकेगा।

इस तरह इंटरनेट की खास विशेषता यह है कि वह किसी भी देश की भौगोलिक सीमा में न बँधकर विश्वव्यापी बन जाता है। इस व्यापकता के कारण ही इसका अर्थशास्त्र भी अलग धरातल पर निर्मित हो रहा है, जिसके मूल में वर्तमान समय की महत्त्वपूर्ण चुनौती बाजारवाद है। इंटरनेट मीडिया के एक अलग बाजार–भाव का निर्माण कर रहा है। जिस वेबसाइट के प्रयोक्ता अधिक संख्या में

एवं गुणवत्ता वाले होंगे, उसकी आय भी अधिक होगी। मीडिया विश्लेषक आलोक पुराणिक के अनुसार 'इंडिया वर्ल्ड' नामक वेबसाइट को सत्यम कंप्यूटर्स ने करीब पाँच सौ करोड़ रुपये में खरीदा। इसका प्रमुख कारण यह है कि इसके अधिकांश प्रयोक्ता विदेशों में रहने वाले अनिवासी भारतीय हैं। जबकि इसके समानांतर कई अखबार समूहों की कुल पूँजी इतनी नहीं है।

मीडिया के रूप में इंटरनेट एक विशिष्ट तंत्र है, जिसका अलग ढंग से बाजार विकसित हो रहा है। अतः यह भी संभव है कि जैसे 'होतमेठ' ने मुफ्त ई–मेल की सुविधा शुरू की थी और उसे देखकर औरों ने भी मुफ्त सुविधाएँ उपलब्ध कराईं, उसी तरह हो सकता है कि भविष्य में कुछ अखबारों के वेबसाइट विशिष्ट प्रयोक्ताओं को न सिर्फ निःशुल्क सुविधाएँ दें बल्कि उन्हें धन देकर आकर्षित करें क्योंकि उनकी आय विज्ञापनों पर निर्भर होती है और अच्छे विज्ञापन प्रयोक्ताओं की गुणवत्ता के आधार पर मिलते हैं। दूसरे, वेबसाइट थोड़े संसाधनों से भी चलाया जा सकता है जबकि प्रिंट मीटिया के लिए यह संभव नहीं है। अतः यह उसके समक्ष एक बड़ी चुनौती है।

सूचना एवं संचार–क्षेत्र में इंटरनेट के उपयोग का एक अन्य मुख्य तंत्र है 'ई–मेल'। अमेरिकी इंजीनियर रे टामलिंसन ने सन् 1971 में एक 'रिमोट पर्सनल मेल बॉक्स' डिजाइन किया था जो कंप्यूटर नेटवर्क के जरिए संदेशों का आदान–प्रदान कर सकता था। यही आज ई–मेल के नाम से सारी सभ्यताओं और राष्ट्रीयताओं की सीमाएँ नकारता हुआ दुनियाभर में फैल चुका है। कंप्यूटरों का संवाद–तंत्र है इंटरनेट और इंटरनेट की आत्मा है ई–मेल। इंटरनेट के ट्रैफिक का साठ फीसदी हिस्सा ई–मेल ही होता है। इसका आकर्षण इतना बढ़ा है कि जिनके पास कंप्यूटर रखने की हैसियत नहीं है, वे भी साइबर कैफे के जरिए इसका इस्तेमाल कर रहे हैं। व्यावसायिक क्षेत्र में भी इसने संचार–खर्च घटाकर महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की। ई–मेल के माध्यम से अलग–अलग उम्र के लोग अपने व्यक्तिगत संदेश भेजकर अपने मन की कोमल भावनाओं को अभिव्यक्त करते हैं। ई–मेल सिर्फ व्यवसाय, मनोरंजन ओर फुरसत में की जाने वाली चैटिंग के लिए ही नहीं है। जिस समय संचार के दूसरे माध्यम ठप्प पड़ जाते हैं, उस समय भी ई–मेल द्वारा सूचनाएँ प्रचारित होती रहती हैं। वर्ल्ड ट्रेड सेंटर पर हुए हमले के बाद जब टेलीफोन सेट जाम हो गए थे तो इसी के माध्यम से सूचनाओं का संचार हो रहा था।

ई–मेल का यही एक पहलू नहीं है। 21 वीं सदी की एक बड़ी चुनौती आतंकवाद से भी इसका गहरा रिश्ता है। अमानवीय एवं खुराफाती दिमाग वाले लोग ई–मेल का प्रयोग आतंकवादी गतिविधियाँ चलाने के लिए भी करते रहे हैं। पिछले वर्षों ई–मेल से ही 'निमड़ा' वायरस के रूप में हमले करके अमेरिकी कंप्यूटर–सिस्टम खराब करने का प्रयास किया गया था। अफगानिस्तान के युद्ध के बाद आतंकवाद के विरोध में सारी दुनिया एकजुट है। ऐसे में आतंकवादी संगठन इन उपकरणों का सहारा लेकर प्रच्छन्न युद्ध कर सकते हैं। कंप्यूटर विशेषज्ञों का मानना है कि अब वायरस हमलों से मोबाइल फोनों के उपकरण भी निशाना बन सकते हैं। तमाम वेबसाइट ऐसे बन रहे हैं, जिनमें आकर्षक नामों वाली फाइलें हैं, जिनको खोलते ही इन वायरसों की तबाही शुरू हो जाती है।

इंटरनेट के कारण साइबर–कैफे की संस्कृति भी जोरों से पनप रही है। युवा पीढ़ी साइबर कैफे का प्रयोग ज्ञानार्जन के लिए कम चैंटिंग के लिए अधिक कर रही है। इस चैटिंग का विषय युवा–उमंगों के अनुरूप प्रेम और सेक्स से संबंधित भी होता है। मीडिया पंडितों ने एक नया शब्द भी गढ़ लिया है – 'साइबर सेक्स'। इंटरनेट के अनेक साइट अश्लीच चित्रों से भरे पड़े हैं। युवा–पीढ़ी एवं छोटे बच्चों को इन अश्लील एवं अवांछित वेबसाइटों से किस तरह दूर रखा जाए, यह एक सामाजिक–सांस्कृतिक संकट और चुनौती है।

इन चैट–लाइनों वाले वेबसाइटों का नया चेहरा 'साइबर अपराध' के रूप में भी सामने आया है। महानगरों की पुलिस भी पहले तो यह नहीं समझ पा रही थी कि इन अपराधों को कानून की किस धारा के अंतर्गत निपटाया जायं अतः साइबर–अपराध संबंधी नए कानून बने। इंटरनेट के जरिए कितने भयंकर रूप में चरित्र–हनन के प्रयास हो सकते हैं, इसका पर्दाफ़ाश दिल्ली की एक घटना द्वारा हुआ था। एक सभ्य परिवार की महिला से बदला लेने के लिए किसी ने उसका टेलीफोन नंबर सेक्स चैट लाइन के रूप में इंटरनेट पर दे दिया। जब उसके यहाँ अश्लील ढंग से बातें करने वालों के फोन आने लगे तो इसकी खोज शुरू हुई और पुलिस की सहायता से इसका भंडाफोड़ हो सका।

इंटरनेट महानगरों में एक एडिक्शन का रूप लेता जा रहा है। इन वेबसाइटों में रमे रहने वालों की व्यस्तता और पारिवारिक दायित्वों के प्रति उदासीनता के कारण आपसी पारिवारिक रिश्तों में भी तनाव की स्थिति पैदा होती जा रही है। इससे सामाजिक एवं पारिवारिक असंतुलन की संभावना भी निर्मित हो सकती है।

इस अत्याधुनिक मीडिया ने बहुत कम समय में व्यापक ढंग से हमें प्रभावित किया है। ऐसे में प्रश्न यह है कि यह अत्याधुनिक सूचनातंत्र समाज की किस दिशा में ले जा रहा है। इंटरनेट का अनियंत्रित महाजाल क्या हमें उस मूल्यहीन, निरंकुश और नितांत भोगवादी मानसिकता की ओर नहीं ले जा रहा है? कुछ मीडिया विशेषज्ञ इसे उत्तर आधुनिकता का जामा पहनाते हुए स्वस्थ मानसिकता एवं रुग्ण मानसिकता की बहस में उलझा सकते हैं किंतु अंततः हमें ही यह सोचना है कि इसका प्रयोग हम किस तरह करें। अपनी सारी

संभावनाओं के साथ निरंतर विकासशील इस उच्च तकनीक वाले सूचनातंत्र का उपयोग संप्रभु वर्ग द्वारा अपनी मानसिकता के अनुकूल अपने निहित स्वार्थों के लिए किए जाने की उम्मीद अधिक है क्योंकि यह तकनीक है और तकनीक का स्वरूप उसका संचालन करने वाले की इच्छा के अनुरूप ही विकसित होगा। वह मनुष्य और उसकी रचनात्मक शक्ति का पर्याय नहीं बन सकता। अतः इंटरनेट के वर्तमान स्वरूप में उभर रही चुनौतियों को हमें पहचानना होगा अन्यथा इस महाजाल में उलझ जाना बड़ा ही आसान हो जाएगा जो मनुष्यता के लिए घातक हो सकता है। सूचना–तंत्र एवं ज्ञान के स्रोत के रूप में इसका उपयोग ही अभीष्ट होगा। ई–मेल तो नहीं किंतु इंटरनेट के तमाम वेबसाइट हिंदी भाषा की प्रयोजनमूलकता की अनंत संभावनाओं का मार्ग प्रशस्त करते हैं। उम्मीद है कि निकट भविष्य में ई–मेल पर भी हिंदी का व्यपक प्रयोग शुरू हो जाएगा।

2.4 इंटरनेट एक्सप्लोरर

इंटरनेट में एक्सप्लोरर का विशेष महत्त्व होता है। माइक्रोसाफ्ट इंटरनेट एक्सप्लोरर प्रयोक्ता को वैब से सामग्री लेने ओर ई–मेल को प्रेषित या ग्रहण करने की अनुमति देता है। यह अव्यावसायिक प्रयोग के लिए मुफ्त में उपलब्ध है। साफ्टवेयर को माइक्रोसॉफ्ट वैब साइट से उतारा (Download) कहा जा सकता है। इंटरनेट एक्सप्लोरर के संस्थापन (Installation) तथा बाहरी आकार (Configuration) संबंधी क्रमवार निर्देश इस प्रकार हैं–

(i) इंटरनेट एक्सप्लोरर लिए हुए सेल्फ एक्सट्रैक्टिंग आकाइव को माइक्रोसाफ्ट के वैब साइट से उतारे (Download)।

(ii) सेल्फ एक्सट्रैक्टिंग एक्सक्यूटेबल फाइल को चलाएं। यह इंटरनेट एक्सप्लोरर के प्रतिष्ठापन के लिए अपेक्षित विभिन्न फाइलों को निकालेगी।

(iii) इंटरनेट एक्सप्लोरर के प्रतिष्ठापन्न को शुरू करने के लिए उप–निर्देशिका (Sub-Directory) से SETIP फाइल चलाए। यह स्वागत–पटल को प्रदर्शित करेगा और प्रतिष्ठापन्न प्रक्रिया आरम्भ हो जाएगी। जारी रखने के लिए 'आगे' Next) को दबाएं।

(iv) लाइसैंस समझौता प्रदर्शित होगा। 'मैं समझौता स्वीकृत करता हूँ' को दबाएं। इसके बाद 'आगे' को दबाएं।

(v) अब आपको प्रतिष्ठापन्न विकल्प–स्टैंडर्ड या फुल्ल (Full) प्रतिष्ठापन्न को चुनना है। यदि डिस्क स्पेस तथा अन्य प्रणालियाँ संसाधन (System Resources) कोई बंधन नहीं है तो पूरा प्रतिष्ठापन्न चुने नहीं तो स्टैंडर्ड को चुने।

(vi) इंटरनेट एक्सप्लोरर अद्यतन विंडोज डैस्कटाप के साथ आता है जो आपके डेस्कटाप की प्रापर्टीज को परिवर्तित करता है। 'नहीं' रेडियो बटन को चुने और आगे जारी रखने के लिए 'आगे' को दबाएं।

(vii) सक्रिय चैनल चनाव (Selection) पटल प्रदर्शित होता है। सक्रिय चैनल इंटरनेट पर सूचना प्रदाता (Server) है, जिसके लिए आप अंशदान कर सकते हैं और इंटरनेट एक्सप्लोरर के द्वारा आपके कंप्यूटर पर सामग्री स्वतः प्रेषित कर दी जाती है। देशों की सूची में 'भारत' चुनें और दबाएं 'आगे'।

(viii) अब आपसे गन्तव्य फोल्डर के चुनाव के लिए पूछा जाएगा जहाँ पर इंटरनेट एक्सप्लोरर प्रतिष्ठापित होगा।

(ix) फाइलों की प्रतिलिपि की प्रक्रिया आरंभ होगी। यह प्रक्रिया कुछ समय लेगी। इस अवधि में प्रक्रिया की प्रगति–स्थिति प्रदर्शित होगी। एक बार यदि यह प्रक्रिया पूरी हो गई तो आप कंप्यूटर को पुनः चालू करेंगे। दोबारा शुरू करने हेतु 'ओ॰ के॰' दबाएं।

(x) विंडोज 95 & 98 पुनः आरंभ होगा और इंटरनेट एक्सप्लोरर कुछ मिनट सिस्टम सैटिंग को अद्यतन करने के लिए लेगा। आप अपने डेस्कटाप पर कुछ परिवर्तन देखेंगे।

(xi) अब आप वैब–ब्राउजिंग को शुरू करने के लिए तैयार है। इंटरनेट एक्सप्लोरर शुरू करने के लिए डेस्कटाप पर इंटरनेट एक्सप्लोरर को दो बार दबाएं।

2.5 नेटस्केप नेवीगेटर

इंटरनेट के उपयोग में नेटस्केप नेवीगेटर की विशेष भूमिका होती है। नेटस्केप या नेटस्केप नेवीगेटर एक ग्राफिकल वैब ब्राउजर है जो प्रयोक्ता को विश्वव्यापी वैब पर उपलब्ध हाइपर टैक्सट, चित्र, आवाज, दश्य आदि का पूर्ण रूप से अवलोकन करने में समर्थ बनाता है। नेटस्केप, इंटरनेट के संसाधनों तक पहुँचने में 'प्वाइंट एण्ड क्लिक' तकनीक का उपयोग करता है ताकि हाइपर–टैक्सट लिंक्स और 'ड्राप डाउन मौनूज तथा टूलबार, बटनों, का चुनाव करके एक पष्ठ से दूसरे पष्ठ तक जाया जा सके। नेटस्केप को 1993 के प्रारंभ मे मार्क एंड्रीसेन और उनके विद्यार्थी दल ने विकसित किया। प्रयोक्ता कुछ विशेष फाइलों का अवलोकन कर सके या उन्हें सुन सके, इस सहायता के लिए नेटस्केप के भीतर से 'हैल्पर एप्लिकेशंज' को चालू किया जा सकता है। 'हैल्पर एप्लिकेशंज' साफ्टवेयर प्रोग्राम्स हैं जिनकी बिंबों को प्रदर्शित करने, आवाजों को सुनने, चलचित्र कतरनों आदि को देखने में अवश्यकता होती है। इंटरनेट से संदर्भ में, उदाहरण के लिए नेटस्केप को कॉनफिगर किया जा सकता है ताकि एक विशिष्ट

आडियो–प्लेयर साफ्टवेयर पैकेज स्वतः ही सहायतार्थ आ जाए जब कभी प्रयोक्ता लिंक को आडियो–क्लिप के लिए दबाए। भविष्य में सरलता से पहुँचने के लिए वैब पष्ठों को बुकमार्क फाइल में जोड़ा जा सकता है। इसके अतिरिक्त प्रयोक्ता अपनी व्यक्तिगत प्राथमिकताओं– डिफाल्ट फोंट आकार को बड़ा बनाना, के लिए नेटस्केप को रूढ़ (Customise) कर सकता है।

2.6 लिंक्स और ब्राउजिंग

वर्तमान समय में इंटरनेट में लिंग और ब्राउजिंग की बलवती भूमिका है। लिंक्स, टैक्सट आधारित वैब ब्राउजर है जो विश्वव्यापी वैब पर उपलब्ध फाइलों की टैक्सट देखने के लिए प्रयोक्ता को सक्षम बनाता है। लिंक्स प्रयोक्ता वैब पर उपलब्ध ग्राफिक्स, आवाज, दश्य, चित्र आदि को देखने–सुनने में समर्थ नहीं होगा। इसके बावजूद, क्योंकि यह ग्राफिक्स को उतारता (Download) नहीं है, अतः जब कभी केवल टैक्सट की आवश्यकता हो, लिंक्स एक तेज ब्राउजर है और इसका चुनाव करना अच्छा है। लिंक्स को मूलतः कंसास विश्वविद्यालय के डिस्ट्रीब्यूटड कंप्यूटिंग ग्रुप ने विकसित किया था।

यदि लिंक्स प्रयोक्ता ऐसे वैब पष्ठ पर जाता है जिसमें ग्राफिक्स बिंब है ताो वह बिंब नहीं देखेगा बल्कि वह दो वस्तुओं में से एक को संभवतः देखेगा–

(i) प्रयोक्ता टैक्सट देख सकता है जो बिंबों का वर्णन करेगा 'ALT" टैक्सट कहते हैं और वैब पष्ठ पर लेखक इसे निविष्ट करता है। 'ALT' निविष्ट करना ऐच्छिक है, लेकिन यह दढ़ता से संस्तुत है।

(ii) यदि लेखक ने 'ALT' को निविष्ट नहीं किया है तब प्रयोक्ता कोष्ठों (INLINE) शब्द को देखेगा।

लिंक्स प्रयोक्ता पट से इधर–उधर जाने (Navigate) के लिए कुंजी पटल पर उपयोग करते हैं। वे कार्य को पूरा करने के लिए, हाइपर लिंक्स और अन्य कुंजी स्ट्रोक के मध्य घूमने के लिए दोनों तीर–कुंजियों का प्रयोग करते हैं। लिंक्स, प्रयोक्ता की अधिकांश इंटरनेट संसाधनों–गोफर तथा FTP तक पहुँचने में समर्थ बनाता है। इस के अतिरिक्त लिंक्स में कितने ही स्तरीय वैब ब्राउजर रूप प्राप्त किये जा सकते हैं।

ब्राउजिंग

नेट ब्राउजिंग या नेट सर्फिंग के लिए एक विशेष साफ्टवेयर की आवश्यकता होती है। इसे ब्राउजर कहा जाता है। ऐसी ब्राउजर भी है जो केवल टैक्सट है और इस प्रकार की भी हैं जो टैक्सट, ग्राफिक्स नेवीगेटर, नेट मैनेज सरफर आदि ग्राफिकल ब्राउजर हैं। लिंक्स टैक्सट–आधारित ब्राउजर है। टैक्सट आधारित ब्राउजर से प्रयोक्ता केवल टैक्सट को देख सकता है। इसमें ग्राफिक तत्त्वों को प्रदर्शित नहीं किया जाता।

ब्राउजर परिचय

ब्राउजर साफ्टवेयर क एक टुकड़ा है। यह प्रयोक्ता और इंटरनेट की आन्तरिक कार्यशीलता, विशेषतः विश्वव्यापी वैब के मध्य इंटरफेस का काम करता है। ब्राउजर्स को वैब ग्राहक या वैश्विक ग्राहक के नाम से भी जाना जाता है, क्योंकि ग्राहक/सर्वर मॉडल में ब्राउजर ग्राहक प्रोग्राम के रूप में कार्य करता है। ब्राउजर प्रयोक्ता के पक्ष में कार्य करते हुए निम्नलिखित कार्य करता है–

(i) वैब सर्वर से संपर्क करके सूचना के लिए प्रार्थना करना।

(ii) सूचना प्राप्त करके प्रयोक्ता के कंप्यूटर पर उसे प्रदर्शित करना।

ब्राउजर ग्राफिकल या टैक्सट आधारित हो सकता है अैर इंटरनेट के प्रयोग को सरलतम और अधिक सहजबोधनीय बना सकता है। ग्राफिकल ब्राउजर प्रयोक्ता को अपने कंप्यूटर पर बिंबों (Images) के अवलोकन की अनुमति देता है। हाइपर टैक्सट लिंक्स को चुनने के लिए माउस के प्रयोग से 'प्वाइंट एण्ड क्लिक' करके और ड्राप–डाउन मीनूज तथा टूलबार बटनों को प्रयुक्त कर नेवीगेट करके इंटरनेट पर संसाधनों तक पहुँचाता है।

विश्वव्यापी वैब (WWW) हाइपर टैक्सट, चित्र, आवाज, दश्य आदि को आत्मसात् करता है जिन्हें ग्राफिकल ब्राउजर से पूर्णतः अनुभव किया जा सकता है। ब्राउजर में प्रायः 'हैल्पर एल्पिकेशंस' होती हैं जो कि वास्तव में साफ्टवेयर प्रोग्राम हैं जिनकी बिंबों को प्रदर्शित करने, आवाजों को सुनने तथा प्राण संचारक अनुक्रम (Animation Sequences) को चलााने में आवश्यकता होती है। जब प्रयोक्ता संसाधन के लिए एक लिंक को चुनता है तो ये हैल्पर एप्लिकेशंज, ब्राउजर द्वारा अपने आप सहायतार्थ उठा ली जाती हैं।

2.7 ई-मेल : भेजना, प्राप्त करना (डाउन लोडिंग, अपलोडिंग)

ई-मेल स्वरूप : आज विश्वजात (इंटरनेट) में हिंदी का उपयोग बढ़ता जा रहा है। हिंदी प्रचार–प्रसार के सबल आधार इलेक्ट्रानिक मेल (ई–मेल) के द्वारा विश्व के कोने–कोने में बैठे लोगों से समाचार आदान–प्रदान सरल हो गया है। यह सुविधा अब भारत में पर्याप्त रूप से प्रचलित हो चुकी है। ई–मेल अब टेलीफोन पर विदेशों से बातचीत का स्थान लेता जा रहा है। यह माध्यम अपेक्षाकृत अधिक सरल, सस्ता और उपयोगी है।

वर्तमान समय में संदेश भेजने का सबसे सरल और त्वरित माध्यम ई–मेल है। इसमें लिफाफे और टिकट आदि की आवश्यकता नहीं होती है। इसे लेटर बॉक्स में डालने या पोस्ट ऑफिस में देने के लिए वहाँ जाने की आवश्यकता नहीं है। इसमें तो समाचार लिखने के बाद 'Send' की बटन दबाने की ही देरी है कि समाचार अपने गंतव्य स्थान या विदेश पहुँच जाता है।

हिंदी का प्रयोग विश्वपटल पर तीव्रगति से बढ़ रहा है। वर्तमान समय में हिंदी ई–मेल की संख्या देख–देशांतर में तीव्र गति से बढ़ रही है। हम भले ही 'Send' बटन दबाते हैं, किंतु इतनी सी देर में समाचार गंतव्य पर पहुँच जाता है।

इंटरनेट पर ई–मेल भेजने या प्राप्त करने के लिए ई–मेल का अपना खाता होना चाहिए। यह खाता किसी इंटरनेट सेवा प्रदाता कंपनी के द्वारा उपलब्ध किया जा सकता है। ई–मेल का खाता खोलने के लिए ई–मेल का पता बनाना होता है। ई–मेल पता में चार तत्त्वों की योजना होती है; यथा–

raman@indiatime.com
raman@yahoo.com
raman@sify.com
raman@hotmail.com

इनका विश्लेषण इस प्रकार कर सकते हैं–

(i) raman प्रयोगकर्ता का नाम (यूजरनेम) है।

(ii) @ इसका उच्चारण ऐट द रेट ऑफ किया जाता है। यह प्रयोगकर्ता के नाम को अलग करता है और मेल सर्वर के नाम को अलग करता है।

(iii) indiatime, yahoo, rediffmail, sify, hotmail मेल सर्वर के अपने नाम हैं। इनमें से किसी को अपना सकते हैं। इसके द्वारा मेल सर्वर की पहचान होती है। इसके द्वारा ही मेल भेजा जाता है और प्राप्त किया जाता है। वर्तमान समय में इनके अतिरिक्त अनेक सर्वर काम कर रहे हैं। इनकी वद्धि से ई–मेल की गतिशीलता और उपयोगिता का बोध होता है।

(iv) com इसका उच्चारण 'डॉटकॉम' किया जाता है। यह एक विस्तार नाम है जो कि ई–मेल सेवा देने वाली कंपनी का प्रकार बताता है। विस्तार सेवा देने वाले अनेक नाम हैं; यथा– com, org, edu, net आदि।

ई-मेल प्रेषण और ग्रहण

सर्वप्रथम कंप्यूटर के स्टार्ट (START) पर क्लिक करके विभिन्न संदर्भों में से प्रोग्राम खोलने हेतु प्रोग्राम पर क्लिक करते हैं। इसके बाद विभिन्न संदर्भों में से एक्सेसरी पर क्लिक करेंगे। इसके बाद पुनः आए विभिन्न संदर्भों में से कम्युनिकेशन पर क्लिक करने से 'डायल अॅप नेट वर्किंग' (Dial up net working) पष्ठ आ जाएगा। इसमें अपना ई–मेल का लिया हुआ कनेक्शन आएगा, उसे ढूँढना होगा। यह कनेक्शन प्रत्येक प्रयोगकर्त्ता को किसी नाम से लेना होता है। माना कनेक्शन 'MANU-3' नाम से लिया गया है, तो इस पर दो बार क्लिक करने से कनेक्ट टु (Connect to) सामने आ जाता है। इसमें वर्डस्, फोन नंबर आदि विवरण लिख दिए जाते हैं। इसी विवरण के आधार पर जब कनेक्ट (connect) पर क्लिक करते हैं, तो इंटरनेट के लिए फोन लाइन उपलब्ध (कनेक्ट) हो जाएगी।

इसके बाद इंटरनेट एक्सप्लोरर जो अंग्रेजी के ई (e) अक्षर के रूप में लिखा होता है। दो बार क्लिक करने पर एक होम पेज खुलेगा जिसमें पता (Address) अर्थात् अपनी साइट क नाम लिखना होगा। माना कि yahoo साइट है, तो WWWyahoo.com लिखकर 'इंटर' से संबंधित साइट खुल जाएगी।

समाचार भेजने के लिए निर्धारित स्थान में टाइप कर लेना होता है। इस पष्ठ पर तभी लिखा जाता है, जब समाचार सीमित हो। जब समाचार या विवरण विस्तत हो तो पहले किसी फाइल में टाइप कर सुरक्षित कर लेते हैं और ई–मेल भेजने के लिए फाइल अटैच कर दी जाती है। इससे टेलीफोन के कनेक्शन का समय सीमित होने से खर्च की बहुत बचत होती है।

समाचार या विवरण तैयार होने के साथ 'To' अर्थात् जिसके पास 'ई–मेल' भेजना है, उसका ई–मेल आई डी' लिखते हैं यदि संबंधित व्यक्ति के एकाधिक 'ई–मेल आई डी' है और दोनों पर समाचार/विवरण भेजना चाहते हैं, तो सी सी (cc) में वह दूसरा 'ई–मेल आई डी' लिख देते हैं। यदि दो व्यक्तियों को समाचार/विवरण देना चाहें, तो सीसी (cc) में दूसरे व्यक्ति का 'ई–मेल आई डी' लिखते हैं। यदि दो व्यक्तियों को एक ही विवरण/समाचार भेजना चाहें और यह भी चाहें कि उन दोनों की आपस में यह न पता लगे कि दोनों को समान समाचार/विवरण दिया गया, तो बीसीसी (BCC) में दोनों के 'ई–मेल आई डी' लिख देंगे। इसके पश्चात् सेंड (SEND) पर क्लिक करते ही ई–मेल गंतव्य की ओर चल पड़ेगा। पल में ही सामने अंकित हो जाता है कि संबंधित 'ई–मेल' 'आई डी' पर समाचार भेज दिया गया है। यहाँ यह भी ध्यातव्य है कि इसी पष्ठ पर लेखन की साइज (size) और रंग (colour) आदि के विवरण भी आ जाते हैं।

ई–मेल उपलब्ध करने के लिए पूर्व की तरह क्रमशः स्टार्ट, प्रोग्राम, एक्सेसरी, कम्युनिकेशन से डायल ॲप नेट वर्किंग में अपनी निश्चित साइट पर क्लिक करते हैं। कनेक्ट होने पर इंटरनेट एक्सप्लोरर पर दो बार क्लिक करते हैं। कनेक्ट न होने पर उस भाग की प्रक्रिया दोहराते हैं। इसके बाद अपनी वेबसाइट लिखते हैं। माना वेबसाइट लिखा है– wwwyahoo.com इसके बाद जो क्लिक करते हैं, तो होम पेज आ जाएगा। उस पर अपना ई–मेल आई डी और पास वर्ड्स लिखा जाएगा। इसके पश्चात् 'साइन इन' (sign in) पर क्लिक करेंगे, तो 'इन बाक्स' का सारा विवरण आ जाएगा। इसके पश्चात् चैक मेल (check mail) पर क्लिक करने से पूरा विवरण सामने आ जाता है। मेल आने की तिथि, विषय, प्रेषक का ई–मेल आई डी आदि सब कुछ सामने होता है। यदि नया कोई संदेश नहीं होता, तो 'नया समाचार नहीं' (unread message) संकेत आएगा। यदि बिना पढ़ा हुआ संदेश होगा, तो उनकी संख्या फोल्डर के नाम के सामने कोष्ठक में दिखाई देगी। संदेश की तिथि के अनुसार ग्रहण करने के लिए Received कालम को क्लिक करके भेजने वाला के नाम के अकारादिक्रम में छाँट कर प्रस्तुत किया जाता है। ई–मेल संदेश को पढ़ने के लिए आगे–पीछे किया जा सकता है। ई–मेल संदेश पढ़ने के बाद आवश्यक न होने पर इसे हटाया (Delete) भी किया जा सकता है।

आज ई–मेल (इंटरनेट–विश्वजाल) से सारा विश्व एक गाँव बन गया है। इसके आधार पर विश्व की सभी सभ्यताओं और राष्ट्रों की सीमाएँ सिमट गई हैं। वास्तव में कंप्यूटर का संवाद–तंत्र ही ई–मेल है और इंटरनेट की आत्मा ई–मेल है। आज जिसकी सामर्थ्य कंप्यूटर रखने की नहीं है वह साइबर कैफे के माध्यम से ई–मेल आधार पर सफल संदेशवाहक की भूमिका अदा करता है। जब अमेरिका ट्रेड सेंटर पर हमला हुआ और सारे संचार माध्यम ठप्प हो गए, तो ई–मेल ही संदेश–वाहक बना था। इंटरनेट पर होने वाली दूर–दूर देश के डॉक्टरों से उपलब्ध चिकित्सा जीवनदान दे रही है। इंटरनेट विश्व के कोने–कोने का ज्ञान–विज्ञान पूर्ण प्रभावी और सुग्राह्य रूप में कुछ ही पल में कंप्यूटर स्क्रीन पर उपलब्ध करा देता है। इस परम उपलब्धि के आधार पर वर्तमान युग को कंप्यूटर युग की संज्ञा दी गई है।

इक्कीसवीं शताब्दी में उभरते आतंकवाद में ई–मेल का भी दुरुपयोग संभावित है। अमानवीय दिमाग वाले व्यक्ति इसका दुरुपयोग आतंकवादी गतिविधियों के लिए करने लगे हैं। कुछ समय पूर्व निमडा वायरस से अमेरिका कंप्यूटर सिस्टम नष्ट करने का घातक प्रयास किया गया था। आतंकवादी संगठन अपनी विषम गतिविधियों के लिए इसका दुरुपयोग कर सकते हैं।

वर्तमान समय में इंटरनेट (विश्वजाल) के अनुकूल उपयोग की चुनौतियों को ध्यान में रखना होगा। इसे जीवनोपयोगी सूचना–तंत्र ओर ज्ञान–स्रोत के रूप में उपयोग करना होगा। इंटरनेट–ई–मेल पर बढ़ते हिंदी–प्रयोग से इसके उज्ज्वल भविष्य का स्पष्ट ज्ञान होता है।

2.8 मशीनी अनुवाद : स्वरूप और प्रविधि

वर्तमान में देश विदेश के ज्ञान–विज्ञान को जानने के लिए अनुवाद की विशेष अपेक्षा है। मशीनी अनुवाद इसे गति और दिशा दे रहा है। पिछले पाँच दशकों में मशीनी अनुवाद के क्षेत्र में कई महत्त्वपूर्ण प्रयास किए गए हैं – फलस्वरूप इस संबंध में कई अनुवाद वर्षों का सामान्यतया विकास भी हुआ है। मशीनी अनुवाद के विकास–क्रम को पाँच चरणों में बाँटा जाता है। मशीनी अनुवाद के प्रारंभिक काल से लेकर एल्पैक समिति की रिपोर्ट तक के समय को इसका प्रारंभिक युग माना जाता है। इसके बाद 1966 से 1976 के समय को शून्यकाल या अलंकार युग की संज्ञा दी जाती है। 1976 के बाद से इस क्षेत्र में पुनर्स्फूर्तिसे कार्य होने लगा तथा कई सीमित प्रयोग क्षेत्रों के लए विकास कार्य किए गए। वर्तमान युग में मशीनी अनुवाद की विधियों प्रविधियों में महत्त्वपूर्ण अंतर आया है। जहाँ प्रारम्भ में अंतरण विधि के आधार पर कार्य हो रहा है, आगे चलकर माध्यमिक भाषा विधि को प्रधानता मिली, इधर कुछ वर्षों से विभिन्न संगणक परक भाषा विश्लेषण मॉडलों के विकास के साथ–साथ मशीनी अनुवाद एवं प्रकृत भाषा संसाधन के क्षेत्र में नियम आधारित, सिद्धांत आधारित एवं कार्पस आधारित मशीनी अनुवाद प्रविधियों का विकास हो गया है। प्रस्तुत लेख में मशीनी अनुवाद की विकसित विधियों/प्रविधियों तथा विभिन्न चरणों एवं पीढ़ियों की चर्चा की गई है। साथ ही प्रमुख अनुवाद तंत्रों का संक्षिप्त परिचय भी दिया गया है।

मशीनी अनुवाद के क्षेत्र में 1947 से अब तक काफी उतार–चढ़ाव आये हैं। इस संबंध में उपलब्ध साहित्य तथा मशीनी अनुवाद विषयक संगोष्ठियों और सम्मेलनों में इन पर प्रकाशित तथ्यों के आधार पर मशीनी अनुवाद के इतिहास को पाँच चरणों में बाँटा गया है। इसी काल में विश्व के इस क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण कार्य हुए हैं और चल रहे हैं। मशीनी अनुवाद की विधियों एवं प्रविधियों के क्षेत्र में भी काफी परिवर्तन हुए हैं और इनके फलस्वरूप कई संगणक व्याकरणिक विश्लेषण सिद्धांतों का विकास हुआ है। मशीनी अनुवाद का प्रारंभ वस्तुतः वारेन वोवर के मार्च 1947 के लेख से माना जाता है। इससे पूर्व भी सन 1933 से इस दिशा में कई इंजीनियरों ने प्रयत्न किए। अनुवाद को उस समय कोड ब्रेकिंग के रूप में ग्रहण किया गया। अनुवाद में द्विभाषी कोशों की भी महत्ता स्वीकार की गई और कंप्यूटर द्वारा द्विभाषी कोशों को प्रविष्टियों के स्वरूप के संबंध में महत्त्वपूर्ण विचार सामने आये। वोबर से पहले ही मशीनी अनुवाद के क्षेत्र में पूर्व संपादन (Pre-editing) तथा पश्च संपादन (post-editing) की संकल्पना का विकास हो चुका था। तब कंप्यूटर के स्वरूप एवं उसकी स्मति क्षमता में आज के कंप्यूटरों से काफी फर्क था। प्रारंभ में अंग्रेजी ओर अन्य यूरोपीय भाषाओं के संदर्भ में प्रयास किए गए।

मशीनी अनुवाद की तीन पीढ़ियाँ और पाँच युग

वोवर से लेकर सन् 1954 तक मशीनी अनुवाद के युग को प्रारंभिक युग की संज्ञा दी जाती है। इसी समय आई॰ बी॰ एम॰ तथा जार्ज टाउन विश्वविद्यालय के एक दल ने मिलकर मशीनी अनुवाद का नमूना प्रदर्शित किया। इस प्रदर्शन ने इस क्षेत्र में चिंगारी का काम किया। संयुक्त राज्य अमेरिका में सरकारी और गैर–सरकारी स्तरों पर इस क्षेत्र के लिए अपार धन जुटाना शुरू हो गया। उस समय कंप्यूटर से अनुवाद (सभी विषयों एवं विकास क्षेत्रों) के संबंध में महत्त्वाकांक्षाएँ शुरू हो गईं। बड़े उत्साह के साथ अमेरिका तथा यूरोप में अनेक स्थानों पर कार्य प्रारंभ हुए। प्रारंभ में रूसी अंग्रेजी अनुवाद के क्षेत्र में SYSTRAN अनुवाद तंत्र पर कार्य प्रारंभ हुआ। इसका उद्देश्य प्रारंभ में अंतरिक्ष कार्यक्रम से संबंधित महत्त्वपूर्ण रूसी दस्तावेजों का तीव्रगति से अंग्रेजी में अनुवाद उपलब्ध कराना था। इस युग में मशीनी अनुवाद के क्षेत्र में अपार धनराशि का प्रावधान किया गया। विभिन्न विश्वविद्यालयों में इस संबंध में कार्य प्रारंभ हुए – वोनो रूसी, फ्रेंच, जर्मन आदि विभिन्न भाषाओं में अंग्रेजों से इन भाषाओं में अनुवाद तंत्रों के विकास के संबंध में कार्य प्रारंभ हुए। यह अत्युत्साह का युग लगभग 1964 तक चला। इस काल को मशीनी अनुवाद के क्षेत्र में पहली पीढ़ी या दूसरे युग की संज्ञा दी जाती है। इस युग में मशीनी अनुवाद से अपार अपेक्षाएँ की जाने लगीं। लगभग 10 वर्षों के विविध प्रयोगों तथा करोड़ों डालर की धनराशि के व्यय के बावजूद उपलब्ध मशीनी अनुवाद की गुणवत्ता पर काफी आक्षेप होने लगे तथाइ से काफी खर्चीली तथा मानव अनुवाद की तुलना में काफी अक्षम पाया गया।

मशीनी अनुवाद की प्रगति का लेखा–जोखा लेने तथा इस क्षेत्र में दिशा–निर्देश देने के संबंध में संयुक्त राज्य अमेरिका में एक समिति का गठन किया गया जिसे, ए॰ एल॰ पी॰ ए॰ सी॰ ALPAC समिति के नाम से जाना जाता है। इस समिति ने लगभग दो वर्षों के अध्ययन के बाद 1966 में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की जिसमें मुख्य रूप से यह कहा गया था–

(i) उपलब्ध मशीनी अनुवाद गुणवत्ता की दष्टि से बहुत ही कम एवं चिंताजनक है।

(ii) वर्तमान स्थिति में मशीनी अनुवाद संभव नहीं है।

(iii) मशीनी अनुवाद के लिए आधारभूत भाषा विश्लेषण सिद्धांतों का अभाव है। व्याकरणिक भाषा विश्लेषण सिद्धांतों के विकास पर बल देना आवश्यक है।

परिणामस्वरूप अमेरिका में मुख्य रूप से तथा अन्य देशों में इस क्षेत्र में वित्तीय सहयोग मिलना बंद हो गया। सारे प्रयास ठप्प हो गए। व्याकरणिक या भाषा विश्लेषण सिद्धांतों के विकास के संबंध में सरकारी स्तर पर धन उपलब्ध होना शुरू हो गया। फलस्वरूप 1965-66 से रूपांतरण मूलक व्याकरण (Transformational Grammar) रूपांतरण प्रजनक व्याकरण (Transformational Generative Grammar) सिस्टीमिक व्याकरण (Systemic Grammar) स्तरीकृत व्याकरण (Stratificational Grammar) कारक व्याकरण (Case Grammar) संबंधपरक व्याकरण (Relational Grammar) आदि विभिन्न भाषा विश्लेषण मॉडलों का विकास हुआ। सन् 1966 से 1976 तक के युग को मशीनी अनुवाद के क्षेत्र में अंधकार युग की संज्ञा दी जाती है।

सन् 1976 में कनाडा सेवा द्वारा TAUM-METEO अनुवाद तंत्र के विकास और संचालन से इस क्षेत्र में नए युग का सूत्रपात होता है। यह अनुवाद तंत्र सीमित विषय क्षेत्र (Limited Domain) मौसम विज्ञान संबंधी सूचनाओं के सफल अनुवाद (अंग्रेजी–फ्रेंच) के क्षेत्र में सफलतापूर्वक प्रयोग किया जाने लगा। इसी से प्रेरित होकर यूरोपीय समुदाय के आयोग ने SYSTRAN अनुवाद तंत्र को अंग्रेजी से फ्रेंच में तथा बाद में अन्य यूरोपीय भाषाओं में परस्पर अनुवाद करने का निर्णय किया। फिर तो विभिन्न विश्वविद्यालयों तथा वाणिज्यिक संस्थाओं ने एक के बाद एक अनुवाद तंत्रों के विकास में कार्य करना शुरू कर दिया। फलस्वरूप ग्रोनोब्ल विश्वविद्यालय ने ARIAN, टैक्साय में METAL, सारब्रुकेन में SUSY, तथा जापान (क्योतो विश्वविद्यालय) में MU तंत्र विकसित हुए। ये चारों अनुवाद तंत्र कार्यक्षमता की दष्टि से प्रतिनिधि माने जाते हैं। इसी समय यूरोपीय समुदाय ने EUROTRA बहुभाषिक अनुवाद तंत्र के विकास का कार्य शुरू किया। इसी युग में मशीनी अनुवाद का प्रयोगशाला से निकलकर बाजार एवं कार्यालयों में पहुँचना प्रारंभ हुआ। 1980 के आसपास ALPS, wildner तथा लोगोस कार्पोरेशन ने विभिन्न प्रकार के मशीनी अनुवाद तंत्रों को उपलब्ध कराना शुरू कर दिया। PAHO के SPANAM तथा ENGSPAN अनुवाद तंत्रों ने सफलतापूर्वक कार्य करना शुरू कर दिया। लगभग सभी जापानी कंप्यूटर कंपनियों ने इस दिशा में शोधकार्य शुरू कर दिये। इस युग में विषय क्षेत्रों के लिए अनुवाद तंत्र विकसित किए गए। मशीनी अनुवाद के क्षेत्र में सीमित आवश्यक शोधकार्यों के संयोजन एवं विकास के लिए अंतरराष्ट्रीय मशीनी अनुवाद परिषद् (I.A.M.T.) की स्थापना हुई। इस परिषद् का उद्देश्य मशीनी अनुवाद के क्षेत्र में शोधकर्ताओं, प्रयोगकर्ताओं तथा नीति–निर्माताओं को एक मंच पर उपस्थित करके इस दिशा में किए जा रहे प्रयोगों के लिए अन्तरराष्ट्रीय मंच प्रदान करना था। यूरोपीय समुदाय के आयोग ने इस संबंध में विभिन्न सदस्य देशों में इस संबंध में कई सम्मेलनों/संगोष्ठियों का आयोजन कर भाषा उद्योग के विकास के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण योगदान किया। इससे मशीनी अनुवाद और अनुवाद सहायक तंत्रों के विकास को काफी बल मिला। जापान में हुए मशीनी अनुवाद विषयक

शोध के संबंध में अमेरिका नीति निर्माताओं के लिए JTEC नामक रिपोर्ट (1992) से अमेरिका में इस क्षेत्र में सरकारी वित्त सहयोग का नया दौर शुरू हुआ। सन् 1976 से 1989 तक के काल की मशीनी अनुवाद की दूसरी पीढ़ी की संज्ञा दी जाती है।

सन् 1989 में मशीनी अनुवाद के क्षेत्र में नए युग का सूत्रपात होता है। यह युग अब तीसरी पीढ़ी के रूप में जाना जा रहा है। इस युग में मशीनी अनुवाद की विधियों, प्रविधियों में एक महत्त्वपूर्ण अन्तर आया। इससे पूर्व की विधि (अंतरण तथा माध्यमिक भाषा) के स्थान पर कार्पस आधारित मशीनी अनुवाद को बल दिया जा रहा है। मशीनी अनुवाद के विभिन्न प्रयोगकर्ताओं के लिए अनुवाद सहायक तंत्रों के विषय पर अधिक बल दिया जाने लगा है। मशीनी अनुवाद को महत्त्वाकांक्षी धरातल से उतार कर वास्तविक धरातल पर स्थापित किया जा रहा है। मशीनी अनुवाद मे मशीन की भूमिका तथा उनके कार्यों को स्वीकारा जा रहा है तथा मशीनी अनुवाद को मानव अनुवाद के समकक्ष बनाने के प्रयासों को छोड़कर मानव अनुवादक के सहायक के रूप में मशीनी अनुवाद को ग्रहण किया जा रहा है। इस युग में यूरोपीय समुदाय द्वारा वित्तपोषित EUROLANG परियोजना की शुरुआत की गई है। जिसका उद्देश्य 1995 तक उपयोग कर्ताओं की विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति करते हुए अंग्रेजी से फ्रेंच, जर्मन, स्पेनिश तथा इटेलियन तथा इन भाषाओं से अंगेजी में दस भाषाई जोड़ों में अनुवाद क्षमता का विकास किया जाएगा। यह वस्तुतः पूर्व में प्रारंभ की गई EUROTRA परियोजना का पल्लवित एवं वाणिज्यिक रूप होगा। आई॰ बी॰ एम॰ के जर्मनी, स्पेन, इजराइल तथा अमेरिका में विभिन्न शोध–केंद्रों में L.M.T. परियोजना (1985-86) प्रारंभ की गई जिसका उद्देश्य अंग्रेजी–जर्मन, जर्मन–अंग्रेजी तथा अग्रेजी–स्पेनिश अनुवाद तंत्रों को प्रोटोटाइप तैयार करना था। 1980 के दशक में जापान में इस दिशा में कई परियोजनाओं का संचालन प्रारंभ हुआ जिसके परिणामस्वरूप PIVOT अनुवाद तंत्र का विकास हुआ जिसका अंग्रेजी जापनी, कोरियन फ्रेंच तथा स्नेनिश में अनुवाद के लिए सफल प्रदर्शन किया गया। जापान के CICC द्वारा जापानी चीनी, मलय, कोरियन आदि भाषाओं में परस्पर अनुवाद की अंतरराष्ट्रीय परियोजना पर कार्य चल रहा है।

विधियाँ एवं प्रविधियाँ

भाषा विश्लेषण मॉडल मशीनी अनुवाद के प्रारंभिक चरण में शाब्दिक स्थानापन्न विधि का ही प्रयोग किया जाने लगा था, ऐसी स्थिति में शब्दकोश की महत्ता अवश्य बढ़ जाती है। एल्पैक–पूर्व युग में भाषा–विज्ञान के क्षेत्र में सरंचनात्मक भाषा विश्लेषण के सिद्धांत की प्रमुखता के कारण इसी के परवर्ती रूप फ्रेजस्ट्रक्चर ग्रामर को आधार बनाकर स्रोत भाषा के विश्लेषण का कार्य किया जाने लगा। आगे चलकर रूपांतरण मूलक एवं रूपांतरण मूलक प्रजनक व्याकरण की प्रमुखता के कारण इसी सिद्धांत के आधार पर भाषा विश्लेषण का कार्य किया जाता रहा।

एल्पैक समिति की रिपोर्ट के बाद भाषा विश्लेषण मॉडलों के विकास का दौर शुरू हुआ। वोमैस्को ने रूपांतरण मूलक व्याकरण (1957) से जो इस सिद्धांत की यात्रा प्रारंभ हुई, वह चलते–चलते कई संशोधनों/परिवर्तनों के बाद गवर्नमेंट एंड बाइडिंग (1981) के भाषा विश्लेषण सिद्धांत के रूप में फलीभूत हुई। इस सिद्धांत के समर्थकों का दावा है कि यह सिद्धांत वस्तुतः मशीनी अनुवाद अथवा प्रकृत भाषा संसाधन के क्षेत्र की संगणकीय आवश्यकताओं की पूर्ति करने में पूर्णतया सक्षम है। इसी बीच सन् 1968 में फिलमोर कांग्रेस ग्रामर (कारक व्याकरण) का सिद्धांत सामने आया। इसने भी भाषा विश्लेषण को काफी प्रभावित किया। जापान तथा कई यूरोपीय देशों के मशीनी अनुवाद तंत्रों के विकास में इसकी भूमिका प्रमुख रही है।

प्रकृत भाषा संसाधन के क्षेत्र में विशेषकर मशीनी अनुवाद के लिए पार्सर निर्माण के लिए कापलान और ब्रेसनिन का लैक्सीकल फंकशनल ग्रामर (एल॰ एफ॰ जी॰) का सिद्धांत 1979 प्रकाश में आया। इसी सिद्धांत के आधार पर K.B.M.T.(1989) के अनुवाद तंत्र (कार्नेजी मेलन विश्वविद्यालय अमेरिका) का विकास किया गया। यूरोप तथा अमेरिका में इस भाषा विश्लेषण मॉडल पर काफी काम हुआ है। इसे भी संगणक भाषा विश्लेषण सिद्धांत के रूप में ख्याति प्राप्त है। इन्हीं आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए गाजदार तथा अन्य का 'जनरमाइण्ड फ्रेज स्ट्रक्चर ग्रामर' (जी॰ पी॰ एस॰ जी॰ 1984) प्रकाश में आया। पार्सर निर्माण के लिए प्रयुक्त अन्य भाषा विश्लेषण सिद्धांतों में ट्री एडज्वाइनिंग ग्रामर (टी॰ ए॰ जी॰) डेफिनिट क्लाज ग्रामर (डी॰ सी॰ जी॰) भी प्रकाश में आए।

मशीनी अनुवाद के तीन वर्ष

तकनीकी की दष्टि से मशीनी अनुवाद को निम्नलिखित वर्गों में विभाजित किया गया है :

1. **शाब्दिक अनुवाद** – मशीनी अनुवाद की पहली पीढ़ी के दौरान इस तकनीक का प्रयोग किया गया। इसे WORD EXPERT मॉडल की भी संज्ञा दी गई है। इसके अंतर्गत स्रोत भाषा के वाक्यों के शब्दों को तदनुरूपी लक्ष्य भाषा के शब्दों में बदला जाता था। उसके बाद उन शब्दों को लक्ष्य भाषा के वाक्य विन्यास के आधार पर पुनर्नियोजित किया जाता था। SYSTRAN इसी तकनीक का नमूना माना जा सकता है। इस तकनीक के अंतर्गत अनुवाद दो स्तरीय प्रक्रिया माना जा सकता है। इस तकनीक के अंतर्गत अनुवाद दो स्तरीय प्रक्रिया माना जाता है। अंतरण तथा संश्लेषण।

2. **संरचनात्मक अंतरण** – इसके अंतर्गत स्रोत भाषा के वाक्यों का संरचनात्मक विश्लेषण किया जाता है तथा विश्लेषण

संरचनाओं का तदनुरूपी लक्ष्य भाषा की संरचनाओं में अंतरण कर अनूदित वाक्य संरचना प्राप्त की जाती है। संयुक्त राज्य अमेरिका में 1976 के बाद विकसित अनुवाद तंत्र इसी तकनीक का नमूना है। यूरोपीय समुदाय को महत्त्वकांक्षी मशीनी अनुवाद परियोजना EUROTRA में भी इसी तकनीक को अपनाया गया। इसके अंतर्गत अनुवाद त्रिस्तरीय प्रक्रिया विश्लेषण अंतरण तथा संश्लेषण माना जाता है। ARIANE तथा GETA में भी इसी तकनीक का प्रयोग किया गया।

3. **आर्थी माध्यमिक भाषा संरचना** – इसके अंतर्गत स्रोत भाषा की संरचना का विश्लेषण कर तथा इसमें निहित आर्थी सूचना को माध्यमिक भाषा के रूप में अंतरित किया जाता है। इसी आर्थी सूचना (माध्यमिक प्रतिरूपण) से लक्ष्य भाषा की संरचना का प्रजनन (Generation) किया जाता है। जापानी मशीनी अनुवाद तंत्रों के विकास में इसी तकनीक का प्रयोग किया गया है। जापानी तंत्र MU तथा PIVOT में इसी के अनुसार पार्सर तैयार किया गया है। clee द्वारा विकसित किए जा रहे चीनी, जापानी, कोरियन, भाषा–मयल के परस्पर अनुवाद तंत्र में भी इसी के आधार पर कार्य चल रहा है। जापान में कारक संरचना के आधार पर स्रोत भाषा के वाक्यों की आर्थी सूचना को माध्यमिक प्रतिरूपण में परिवर्तित किया जाता है। इस पार्सिंग तकनीक के प्रयोग का आधार जापानी तथा अन्य एशियाई भाषाओं की यूरोपीय भाषाओं से वाक्य विन्यासीय भिन्नता है। कार्नेजी मेलन विश्वविद्यालय में विकसित ज्ञान आधारित मशीनी अनुवाद तंत्र KBMT (1989) में भी इसी तकनीक का उपयोग किया गया है।

मशीनी अनुवाद की प्रविधियाँ

मशीनी अनुवाद के इतिहास पर दष्टि डालने पर यह ज्ञात होता है कि मुख्य रूप से दो मुख्य विधियाँ प्रयोग की जाती रही हैं–

1. नियम–आधारित मशीनी अनुवाद
2. कार्पस आधारित मशीनी अनुवाद

1. **नियम आधारित मशीनी अनुवाद (Rule Based MT)** – इसके अंतर्गत मशीनी अनुवाद को स्रोत भाषा पाठ के विश्लेषण तथा उसमें निहित आर्थी तत्त्वों के प्रतिरूपण तथा लक्ष्य भाषा के पाठ के रूप में में उसकी प्रजनन प्रक्रिया के रूप में माना जाता है। स्रोत पाठ के विश्लेषण से उद्‌भूत प्रतिरूपण इस प्रकार का होना चाहिए ताकि उसमें किसी प्रकार की शाब्दिक या कोशीय संरचनात्मक द्रवि अर्थता (Ambiguity) न हो। इनके अंतर्गत दो मुख्य प्रविधियों (Approaches) का विकास हुआ है–

(क) अंतरण प्रविधि – इसके अंतर्गत अनुवाद को त्रिस्तरीय प्रक्रिया–विश्लेषण, अंतरण तथा संश्लेषण के रूप में स्वीकार किया जाता है तथा माध्यमिक प्रतिरूपण प्रविधि – इसके अंतर्गत अनुवाद को दो–स्तरीय प्रक्रिया–स्रोत भाषा पाठ का माध्यमिक भाषा में अंतरण तथा उसके लक्ष्य–भाषा का पाठ प्रजनन माना जाता है। 1980 के दशक के दो महत्त्वपूर्ण अनुवाद परियोजनाएँ ARIANE तथा Eurotra नियमाधारित अंतरण प्रविधि के उपयोग का सफल नमूना है। इनमें विभिन्न स्तरीय विश्लेषण शाब्दिक, वाक्य विन्यासीय, अभ्यांतर वाक्य विन्यासीय तथा आर्थी का प्रयोग किया गया। भाषा व्यवहार एवं प्रोक्ति विषयक सूचनाओं का प्रयोग नहीं किया गया। इसी प्रविधि का प्रयोग METAL अनुवाद तंत्र के विकास में किया जा रहा है। 1985-86 में प्रारंभ हुई LMT (Logic based M.T.) परियोजना में भी इसी प्रविधि का प्रयोग किया जा रहा है। इसके अंतर्गत अनुवाद को चार स्तरीय प्रक्रिया के रूप में लिया गया है। ये प्रक्रियाएँ हैं– शब्दस्तरीय विश्लेषण, स्रोत भाषा के शब्दों का विवरण और अंतरण, स्रोत भाषा के पाठ का वाक्य विन्यासित विश्लेषण (बाह्य एवं आभ्यांतर तार्किक संबंधों के विश्लेषण) अंतरण (संरचनात्मक अंतरण एवं समायोजन) तथा लक्ष्य भाषा पाठ का शब्दस्तरीय प्रजनन। इसमें स्लाट ग्रामर Slot Grammar तथा एल॰ एफ॰ जी का मिला–जुला रूप भी प्रयोग किया गया। जापानी PIVOT अनुवाद तंत्र के निर्माण में अंतरण प्रविधि को नकारा गया किंतु ये भी नियम आधारित माध्यमिक प्रतिरूपण का ही नमूना माना जाता है। इसी प्रविधि का अन्य महत्त्वपूर्ण अनुवाद तंत्र KBMT (1989) है। इस प्रविधि के अंतर्गत अनुवाद के लिए यह माना जाता है कि भाषा वैज्ञानिक ज्ञान ही पर्याप्त नहीं है। इसमें बोधन को भी सम्मिलित किया जाना चाहिए। इस तंत्र के विकास में सामान्य वाक्यविन्यासीय विश्लेषण और प्रजनन के अतिरिक्त भाषिक संरचनाओं को आर्थी प्रतिरूपण में परिवर्तित करने के लिए 'मैपिंग रूप इंटरप्रेटर' का प्रयोग किया गया। इसका उद्देश्य विषय क्षेत्र विषयक (Domain Specific) ज्ञान को ज्ञान–डेटा बेस से प्राप्त करना था। इस अनुवाद तंत्र के लिए संगणक भाषा विश्लेषण सिद्धांत एल॰ एफ॰ जी॰ का प्रयोग किया गया है। इस प्रयोग की सफलता से प्रेरित होकर न्यू मैक्सिको स्टेट विश्वविद्यालय में माध्यमिक प्रतिरूपण आधारित दूसरी अमेरिकी परियोजना के ULTRA (1991) में प्रारंभ की गई है। जिसके अनुसार इस बहुभाषी माध्यमिक भाषिक तंत्र (अंग्रेजी, बोली जर्मन, जापानी तथा स्नेनिश) में कई व्याकरणिक–विश्लेषण–सिद्धांतों–डीसीजी कारक व्याकरण, कैटेमोरियल ग्रामर के अलावा मशीन द्वारा पठनीय शब्दकोश (Machine Readable Dictonary) तथा बहुभाषिक पाठ–संपादन का प्रयोग किया जा रहा है।

नियम आधारित मशीनी अनुवाद में एल॰ एफ॰ जी, एफ॰ यू॰ जी॰ (Functional Unification Grammar) का काफी प्रभाव रहा है। अन्य

महत्त्वपूर्ण भाषा विश्लेषण सिद्धांत जो METEO परियोजना के सफल क्रियान्वयन से निकला, वह है Q system भाषा विश्लेषण मॉडल, इसी से डेफिनिट क्लाट ग्रामर, (डी॰ सी॰ जी॰) तथा स्लाट ग्रामर मॉडलों का विकास हुआ। ये सभी भाषा विश्लेषण मॉडल ओर गैर रूपांतरण मूलक हैं। गैर रूपांतरण मूलक विश्लेषण मॉडलों के विकास में जी॰ पी॰ जी॰ तथा एच॰ वी॰ एस॰ जी॰ (Head Driver Phrase Structure Grammer) का अपना विशिष्ट स्थान है। मशीनी अनुवाद के क्षेत्र में पिछले 10 वषोमें जो पार्सिंग विकास का कार्य हुआ है वह इन्हीं सिद्धांतों से काफी प्रभावित या इन पर आधारित है।

(ख) सिद्धांत आधारित मशीनी अनुवाद (Principles Based MT) – पिछले कुछ वर्षों में विशेषकर 1980 के दशक में गवर्नमेंट एंड वाइडिंग मॉडल के अंतर्गत पिंसिपल्स एंड पैरा–मीटर प्रविधि के अंतर्गत काफी काम हुआ है। इस सिद्धांत का मुख्य आधार यह है कि ये प्रिंसिपल्स सार्वभाषिक है – विभिन्न भाषाओं में प्राप्त अंतर 'पैरामीटरों' की स्थिति के अनुसार होता है। जेनेवार में I.T.S नामक फ्रेंच–अंग्रेजी अनुवाद को इसी सिद्धांत के आधार पर विकसित किया जा रहा है। इसका अन्य महत्त्वपूर्ण उदाहरण UNITRAN है। इसके अंतर्गत दो संसाधन घटक हैं – वाक्य विन्यासीय संसाधन (व्याकरणिक रूप से शुद्ध वाक्यों को स्वीकार करने तथा उनका लक्ष्य भाषा में प्रजनन करने के लिए तथा कोशीय आर्थी संसाधन) आभ्यांतर, संकल्पनात्मक प्रतिरूपण प्राप्त करने तथा लक्ष्य भाषा की तदनुरूपी संरचना से मिलान करने के लिए।

2. **कार्पस-आधारित मशीनी अनुवाद** – सन् 1980 के दशक में विशेषकर जापान में कार्पोरा (मशीन पठनीय रूप में) "विपुल भाषिक सामग्री के विकास के लिए विशेष कार्य हुआ। विभिन्न कंपनियों द्वारा मशीन पठनीय कोश तैयार किए गए। कार्पेरा विकसित किया गया"। इस का प्रभाव विशेषकर आगे चलकर मशीनी अनुवाद तंत्रों के विकास तथा तीसरी पीढ़ी के मशीनी अनुवाद पर पड़ा। सन् 1989 से मशीनी अनुवाद में नए युग का सूत्रपात हुआ। 1980 के दशक के अंतिम चरण में एल्पैक–पूर्व मशीनी अनुवाद की सांख्यिकीय प्रविधि को पुनर्जीवित किया गया है। आई॰ बी॰ एम॰ ने संसदीय परिचर्या के विपुल भंडार के आधार पर भाषिक पैटर्न निकालने का काम किया। इसे मशीनी अनुवाद के साहित्य में पैटर्न आधारित या उदाहरण आधारित (Example Based MT) मशीनी अनुवाद की संज्ञा दी जाती है। इसका प्रयोग Speech Recongnition के क्षेत्र में सफलतापूर्वक किया गया है। जिसमें स्रोत तथा लक्ष्य भाषाओं के शब्दों के तदनुरूपों Bigrms की संभावनाओं का पता लगाया जाता है। इस सिद्धांत की सफलता ने मशीनी अनुवाद के क्षेत्र में शोधकर्ताओं का ध्यान आकृष्ट किया।

(क) उदाहरण आधारित मशीनी अनुवाद – 1984 के आसपास इसका प्रस्ताव नागाओ (Nagao) ने किया लेकिन इसका क्रियान्वयन उउत्रेख्त में डी॰ एल॰ टी॰ परियोजना के रूप में 1989 में किया गया। इसका एक अन्य महत्त्वपूर्ण क्रियान्वयन मौखिक भाषा के अनुवार के क्षेत्र में ATR परियोजना के रूप में किया जा रहा है। इसमें स्रोत तथा लक्ष्य भाषाओं की संरचनाओं के समान साँचों का विश्लेषण किया जाता है तथा उसका अनुवाद में अंतरण किया जाता है। इसे ट्रांसफर ड्रिवन मशीनी अनुवाद की संज्ञा भी दी जाती है। आई॰ बी॰ एम॰ जापान को SHALT परियोजना पर भी इसी सिद्धांत के आधार पर कार्य चल रहा है। इसमें पाँच प्रकार के ज्ञान साधनों का उपयोग किया जा रहा है। व्याकरणिक नियम, संकल्पनात्मक परिभाषाएँ, वाक्य विन्यासीय तथा संकल्पनात्मक संरचनाओं के मैपिंग नियम संकल्पनात्मक पैराफ्रेजिंग नियम तथा उदाहरण – वाक्यों का कार्पस। यह मशीनी अनुवाद सिद्धांत एल॰ एफ॰ जी॰ व्याकरणिक सिद्धांत का उपयोग करता है।

उक्त सांख्यिकी एवं उदाहरण आधारित मशीनी अनुवाद सिद्धांतों ने मशीनी अनुवाद के अनुसंधान में भाषा–कार्पोरा की महत्ता को स्वीकार किया है – यहाँ तक कि नियम आधारित अनुवाद में भी विश्वसनीय डेटा की आवश्यकता महसूस की जा रही थी।

मशीनी अनुवाद में कार्पोरा विकास को निम्नलिखित कार्यों के लिए महत्त्वपूर्ण माना जाता है–

– विषय क्षेत्र विशिष्ट मशीनी अनुवाद तंत्रों के विकास के लिए : इन तंत्रों के विकास के लिए स्रोत भाषा की शब्दावली तथा व्याकरणिक संरचनाओं का विस्तत ज्ञान अपेक्षित होता है।

– कोशीय तथा ज्ञान डेटा बेसों का निर्माण माध्यमिक प्रतिरूपण तंत्रों के विकास के लिए भी आवश्यक होता है। इस क्षेत्र में एक बार डेटा बेस निर्माण होने के बाद उसके विभिन्न शोधकर्ताओं द्वारा उपयोग करने से इस क्षेत्र में सहकारिता की भावना का विकास हुआ है। इसी का एक महत्त्वपूर्ण उदाहरण जापान में आठ कंपनियों द्वारा 'इलैक्ट्रानिक शब्दकोश निर्माण' का है।

– द्विभाषी टैक्स्ट डेटा बेसों की आवश्यकता उदाहरण आधारित मशीनी अनुवाद तथा अनुवादक 'वर्क स्टेशन' निर्माण में भी अनुभव की जा रही है।

कार्पोरा का उपयोग शब्दों की द्वि अथवा बहु अर्धता के समाधान के लिए भी किया जा सकता है। इधर बहुत सी जापानी परियोजनाओं में सांख्यिकी तथा उदाहरण आधारित प्रविधि का प्रयोग स्रोत भाषा में बहुअर्थता तथा लक्ष्य भाषा में कोशीय चयन की समस्याओं के समाधान के लिए किया जा रहा है। इन सिद्धांतों के समन्वय पर आधारित अनुवाद तंत्र अंग्रेजी–चीनी अनुवाद के लिए ताईवान में विकसित किया जा रहा है।

इधर मशीनी अनुवाद के क्षेत्र में एक महत्त्वपूर्ण दिशा सामान्य एवं पूर्ण अनुवाद से हटकर विषय क्षेत्र–विशिष्ट अनुवाद की ओर चल रही है। एल्पैक–पूर्व काल में मशीनी अनुवाद से जैसी गुणवत्ता अपेक्षित रही जबकि अब यह स्वीकार किया जाने लगा है कि मशीन की अपनी सीमाएँ हैं तथा इसे मानव अनुवादक के तदनुरूप समझना एक भारी भूल होगी। अब मशीनी अनुवाद–तंत्रों के विकास का उद्देश्य अनुवादक के लिए मशीनी–सहायक तंत्र विकसित करना है जो पश्च–संपादन के द्वारा अनुवाद को लक्ष्यभाषा की प्रकृति के अनुरूप बना सके।

भारतीय परिदृश्य

उक्त सर्वेक्षण यदि भारतीय प्रयासों का उल्लेख नहीं करता तो अवश्य ही अधूरा रहेगा। भारत में इस दिशा में किए गए प्रयासों में इलैक्ट्रानिकी विभाग (भारत सरकार) के वित्त पोषण से रूसी तमिल अनुवाद परियोजना (तमिल विश्वविद्यालय तंजावुर) संस्कृत से हिंदी एवं हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में परस्पर अनुवाद परियोजना (आई॰ आई॰ टी॰, कानपुर) तथा अंग्रेजी से हिंदी अनुवाद परियोजना (आई॰ आई॰ टी॰ कानपुर) आदि हैं। अन्य संस्थाओं ने इस दिशा में छुट–पुट प्रयास किए, लेकिन उल्लेखनीय सफलता नहीं मिली है। रूसी–तमिल अनुवाद परियोजना (चेलामुत्तु तथा अन्य) पर प्रारंभिक कार्य पिछले दशाक में प्रारंभ हुआ। इससे उत्साहजनक परिणाम भी निकलने की आशा थी, लेकिन वित्त पोषण के अभाव में यह कार्य अब समाप्त प्रायः ही है।

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, कानपुर द्वारा संचालित भारतीय भाषाओं की परस्पर मशीनी अनुवाद परियोजना (संगल, चैतन्य व अन्य) के अंतर्गत हिंदी–तेलुगु अनुवाद का कार्य हाथ में लिया गया। हिंदी के पार्सर निर्माण की दिशा में उपलब्ध व्याकरणिक मॉडलों के आधार पर – जी॰ बी॰, एल॰ एफ॰ जी॰, जी॰ पी॰ एस॰ जी॰ एवं टी॰ ए॰ जी॰ के आधार पर पार्सर निर्माण किए गए लेकिन हिंदी भाषा विश्लेषण में जो समस्याएँ आयीं उनके लिए विशिष्ट पार्सिंग तकनीक की आवश्यकता महसूस की गई। यह परियोजना सन् 1987 से चल रही है। जिससे केंद्रीय हिंदी संस्थान भी जुड़ा हुआ है। पार्सर एवं जेरनेटर निर्माण का कार्य एक ओर जहाँ भाषा विश्लेषण की अपेक्षा रखता है वहीं पार्सिंग के लिए उपयुक्त संगणक आधार की भी। उक्त पश्चिमी भाषा एवं संगणक भाषा विश्लेषण मॉडलों की भारतीय भाषाओं (प्रारंभ में हिंदी तथा तेलुगु, आगे चलकर कन्नड़, तमिल, पंजाबी, मराठी आदि) के संदर्भ में अनुपयुक्तता को देखते हुए इस परियोजना में भारतीय भाषा विश्लेषण सिद्धांत (पाणिनीय कारक व्यवस्था पर आधारित) का विकास किया गया और भारतीय भाषाओं की पार्सिंग में इसे सफल एवं सक्षम भी पाया गया।

इस परियोजना के अंतर्गत विकसित मशीनी अनुवाद का मॉडल इस प्रकार है–

(i) स्रोत भाषा पाठ का त्रिस्तरीय (शाब्दिक, शब्द–वर्ग तथा कारक संबंध) विश्लेषण पर पार्स संरचना तक पहुँचा जता है – यही संरचना माध्यमिक प्रतिरूपण भी कहलाती है।

(ii) माध्यमिक प्रतिरूपण के अंतरण (द्विभाषी कोश एवं तदनुरूपी लक्ष्य भाषा की संरचनाओं के आधार पर) की प्रक्रिया शुरू होती है।

(iii) माध्यमिक प्रतिरूपण से लक्ष्य भाषा के जेनरेटर की सहायता से लक्ष्य भाषा में अनूदित पाठ प्राप्त किया जाता है।

पार्सर की संरचना को निम्न आरेख द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है–

स्रोत भाषा वाक्य

शब्दकोष	शब्द–स्तरीय विश्लेषण कोशीय शब्द	(व्याकरणिक सूचनाओं सहित)
क्रिया रूप चार्ट	शब्द वर्ग विश्लेषण शब्द वर्ग	(विभक्ति स्तरीय)
कारक एवं लक्षण चार्ट	कोर्ट पार्सर पार्स की गई संरचनाा (माध्यमिक प्रतिरूपण)	(कारक संरचना)

जैसा कि ऊपर बताया गया है, इस परियोजना में विशिष्ट भाषा विश्लेषण व्याकरणिक सिद्धांत तथा उसके आधार पर 'पार्सर' निर्माण के लिए पाणिनीय कारक सिद्धांत को अपनाने का मुख्य आधार यही है कि भारतीय भाषाएँ – (अन्य एशियाई भाषाओं की तरह) पश्चिमी भाषाओं से आर्थी संबंधों को प्रकट करने की दष्टि से भिन्न है। पश्चिमी भाषाओं में जहाँ अर्थपूर्ण होता है, वही भारतीय भाषाओं में अपेक्षाकृत मुक्त शब्दक्रम पाया जाता है। दूसरा अंतर यह भी है कि भारतीय भाषाओं में विभक्तियों, परिसर्गों अथवा दोनों के द्वारा आर्थी संबंध प्रकट किए जाते हैं। शब्द स्तर पर तो समानता है ही।

इस अनुवाद परियेाजना में 'पाणिनी' पार्सर के द्वारा स्त्रोत भाषा का विश्लेषण किया जा रहा है तथा सरल वाक्यों के स्तर पर हिंदी से तेलुगु अनुवाद का प्रोटो टाईप तैयार किया गया है। इसमें माध्यमिक भाषा (Interlingua) विधि का उपयोग किया गया है। यह सिद्धांत कारक संबंधों के विश्लेषण के द्वारा स्त्रोत भाषा के पाठ में प्राप्त कारक संबंधों के आधार पर लक्ष्य भाषा में तदनुरूपी कारक संबंधों को प्रकट करने वाली भाषिक संरचनाओं का प्रजनन करता है। इस परियोजना से भारतीय भाषाओं में परस्पर अनुवाद तंत्र विकसित होने को काफी संभावनाएँ प्रतीत होती हैं।

पूर्ण एवं मानव अनुवादक के समान मशीनी अनुवाद को असंभव मानते हुए तथा विश्व में इस दिशा में जो कार्य हो रहे हैं उनसे तालमेल रखते हुए आई॰ आई॰ टी॰ कानपुर में जब अनुवाद वर्क स्टेशन अथवा 'अनुसारक' निर्माण की दिशा में कार्य किया जा रहा है। कन्नड़, तमिल, पंजाबी से हिंदी अनुसारकों पर कार्य चल रहा है जिसके परिणाम शीघ्र ही सामने आएँगे।

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर में ही एक अन्य वर्ग (सिन्हा तथा अन्य) अंग्रेजी–हिंदी अनुवाद तंत्र के विकास पर कार्य हो रहा है। इसमें उदाहरण आधारित मशीनी अनुवाद प्रविधि को अपनाया गया है – इस वर्ग का उद्देश्य तीसरी पीढ़ी के मशीनी अनुवाद प्रविधियों का उपयोग करते हुए अनुवाद तंत्र विकसित करना है। यह कार्य प्रारंभिक स्थितियों में है।

उपर्युक्त सर्वेक्षण से यह प्रतीत होता है कि विश्व में मशीनी अनुवाद के क्षेत्र में काफी कार्य हो रहे हैं – विभिन्न विधियों एवं प्रविधियों एवं प्रविधियों का विकास किया गया है। प्रारंभ में जहाँ सामान्य एवं पूर्ण भाषा के आधार पर अनुवाद तंत्र विकसित करने का लक्ष्य था, वहाँ अब भाषा के विशिष्ट प्रयोग क्षेत्रों के आधार पर सीमित अनुवाद तंत्र विकास पर बल दिया जा रहा है। ऐसे अनुवाद तंत्रों के निर्माण में सफलता भी प्राप्त हुई है। अब तीसरी पीढ़ी के मशीनी अनुवााद के संदर्भ में जो कार्पोरा निर्माण के कार्य चल रहे हैं, इनसे न केवल मशीनी अनुवाद, बल्कि प्रकृत–भाषा संसाधन के विभिन्न क्षेत्रों में भी विकास को बल मिलेगा।

अध्याय-3

पत्रकारिता

3.1 पत्रकारिता का स्वरूप, भेद एवं महत्त्व

पत्र–पत्रिकाएँ समाज का दर्पण होती हैं। समाज में घटित हुआ अथवा जो घटित होगा – उन सबका वर्णन–विवरण पत्र–पत्रिकाओं में किसी न किसी रूप में अवश्य होता है। पत्रकार के पास इन सब घटनाओं का पूरा हिसाब होता है। पत्रकार का यह कार्यकलाप ही पत्रकारिता कहा जाता है। पत्रकार के पास सजग कान तथा पैनी दष्टि होती है। इन इन्द्रियों के आधार पर वह समाज में घटित होने वाली घटनाओं का गहनता और सूक्ष्मता से अध्ययन और विश्लेषण करता है तथा उन्हें समाचार–पत्र में प्रकाशित करता है। समाज उसके इस विश्लेषण से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। वह किसी पीड़ित और दलित की आवाज नहीं होता, बल्कि समूचे समाज की पीड़ा को अभिव्यक्ति प्रदान करता है। वह पत्रकार रूप में जिस साहित्य की सष्टि करता है वह समाज का साहित्य होता है जिसमें समाज के सुख–दुःख, हर्ष–विषाद, राग–द्वेष, आशा–निराशा आदि होते हैं।

पत्रकारिता के स्वरूप को स्पष्ट करने के लिए विभिन्न विद्वानों ने अपने विचार इस प्रकार दिए हैं।

(i) **चैम्बर तथ न्यू वेबसटर्ज शब्दकोश** – "प्रकाशन, संपादन, लेखन एवं प्रसारणयुक्त समाचार माध्यम का व्यवसाय ही पत्रकारिता है। पत्रकारिता अभिव्यक्ति की एक मनोरम कला है। इसका कार्य जनता तथा जननेताओं के समक्ष लोक–कल्याण संबंधी कार्यों की सूची प्रस्तुत करता है।"

(ii) **जोसेफ पुलित्जर** – "Nothing less than the highest ideals, the most scruppulus anxiety to do right, the most accurate knowledge of the proble it has to meet, and a Sincere sense of Social responsibility will save journalism."

(iii) **विखेमस्टीड** – "मैं समझता हूँ कि पत्रकारिता कला भी है, वत्ति भी, जनसेवा भी। जब तक कोई यह नहीं समझता कि मेरा कर्त्तव्य अपने समाचार–पत्र के द्वारा लोगों का ज्ञान बढ़ाना, उनका मार्ग–दर्शन करना है तब तक उसे पत्रकारिता की चाहे जितनी ट्रेनिंग दी जाए, वह पूर्ण रूप से पत्रकार नहीं बन सकता।"

(iv) **सी॰ जी॰ मूलर** – "सामयिक ज्ञान का व्यवसाय ही पत्रकारिता है। इसमें तथ्यों की प्राप्ति, उनका मूल्यांकन और समुचित प्रस्तुतीकरण होता है।"

(v) **महात्मा गांधी** – "पत्रकारिता का एक उद्देश्य जनता की इच्छाओं–विचारों को समझना और उन्हें व्यक्त करना है। दूसरा उद्देश्य जनता में वांछनीय भावनाओं को जागत करना और तीसरा उद्देश्य सार्वजनिक दोषों को निर्भयतापूर्वक प्रकट करना है।"

(vi) **महादेवी वर्मा** – "पत्रकारिता एक रचनाशील विद्या है। इसके बगैर समाज को बदलना असंभव है। अतः पत्रकारों को अपने दायित्व और कर्त्तव्यों का निर्वाह निष्ठपूर्वक करना चाहिए क्योंकि उन्हीं के पैरों के छालों से इतिहास लिखा जायेगा।"

(vii) **के॰ पी॰ नारायणन्** – "पत्रकारिता लोकप्रिय अभिव्यक्ति की एक कला है। पत्रकारिता सभी मामलों में चर्चा के लिए जनता के सामने लोक–कल्याण कार्यों की सूची पेश करती रहती है।"

इस प्रकार पत्रकारिता से जुड़े हुए विद्वानों ने पत्रकारिता के स्वरूप को स्पष्ट करने का प्रयास किया है। उपर्युक्त सभी परिभाषाओं में समाज और समय के संदर्भ में सजगता और नागरिकों में दायित्वबोध कराने की बात पर बल दिया गया है। 'गीता' में इसी बात को स्थान–स्थान पर 'शुभ दष्टि' के प्रयोग से कहा गया है। यह 'शुभ दष्टि' ही पत्रकारिता है जिसमें मंगलकारी तत्त्वों को प्रकाशित करना आता है। आचार्य खाडिलकर ने इस संबंध में विचार व्यक्त करते हुए कहा है– "ज्ञान और विचार शब्दों एवं चित्रों के रूप में दूसरे तक पहुँचना ही पत्रकला है।" आरम्भ में पत्रकारिता के अंतर्गत समाचारों के संग्रहण और प्रकाशन को ही लिया जाता था, परंतु जैसे–जैसे समाचार–पत्रों में प्रेषण, मुद्रण तथा वितरण के साधन सम्मिलित होते गये, पत्रकारिता के क्षेत्र का विस्तार होता गया। केवल प्रकाशन योग्य समाचार तैयार कर लेना ही पत्रकारिता नहीं रह गई, बल्कि आकर्षक शीर्षकों की संरचना, पष्ठ–सज्जा, नव्यतम समाचार प्रकाशित करने की होड़, अधिकाधिक विज्ञापन प्राप्त करने की लालसा, सुंदर मुद्रण – इस प्रकार की अनेक बातें पत्रकारिता के अन्तर्गत सम्मिलित हो गईं।

अंग्रेजी भाषा में पत्रकारिता के लिए 'जर्नलिज्म' शब्द का प्रयोग किया जाता है जो 'जर्नल' शब्द से व्युत्पन्न है। इस शब्द का तात्पर्य दैनिक है। पहले दिन–भर के कार्यकलाप और गतिविधियों का विवरण 'जर्नल' में रहता था। इसीलिए इस शब्द से 'जर्नलिज्म' बना लिया गया। एक प्रकार से समाचार पत्र में एक दिन की दुनिया की गतिविधियों का ही विवरण होता है। ये गतिविधियाँ पत्रकारों द्वारा संकलित की जाती हैं, समाचारपत्रों को प्रेषित की जाती हैं, उनके आकर्षक समाचार बनाये जाते हैं, शीर्षक बिठाये जाते हैं,

समाचार संपादकों द्वारा भेजे गए समाचारों का चुनाव किया जाता है, उनकी काँट–छाँट की जाती है और उन्हें पठनीय बनाकर प्रकाशित किया जाता है। ये सभी क्रियाएँ और गतिविधियाँ तथा इनका सम्पूर्ण संगठन पत्रकारिता है। संचार से संबद्ध समस्त साधन जो समाकालीन गतिविधियों को प्रेषित करते हैं, वे सभी पत्रकारिता के अन्तर्गत सम्मिलित किये जाते हैं।

पत्रकारिता के भेद

जीवन की विविधता और नये–नये साधनों के आविष्कार ने पत्रकारिता को बहुआयामी बना दिया है। वर्तमान काल क्योंकि विशिष्टीकरण का काल है, अतः पत्रकारिता के क्षेत्र में आने वाले पत्रकार अपनी रुचि और प्रवत्ति के अनुसार अपने लिए विशिष्ट क्षेत्रों का चुनाव कर रहे हैं। इसके परिणामस्वरूप पत्रकारिता के विभिन्न स्वरूप उभर कर सामने आ रहे हैं। इन स्वरूपों को निम्न प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है–

1.	अन्वेषी (खोजी) पत्रकारिता	2.	आर्थिक पत्रकारिता
3.	ग्रामीण पत्रकारिता	4.	व्याख्यात्मक पत्रकारिता
5.	विकास पत्रकारिता	6.	संदर्भ पत्रकारिता
7.	संसदीय पत्रकारिता	8.	खेल पत्रकारिता
9.	रेडियो पत्रकारिता	10.	दूरदर्शन पत्रकारिता
11.	फोटो पत्रकारिता	12.	विधि पत्रकारिता
13.	अंतरिक्ष पत्रकारिता	14.	सर्वोदय पत्रकारिता
15.	चित्रपट पत्रकारिता		

1. **अन्वेषी पत्रकारिता** – जिस पत्रकारिता में जासूसी को प्रस्तुत किया जाता है, उसे अन्वेषी या अनुसंधानात्मक पत्रकारिता कहा जाता है। इसमें पत्रकार अपनी प्रतिभा और तत्परता के बल पर शारीरिक जोखिम उठाकर गुप्तचर के रूप में कार्य करते हैं। इसके द्वारा समसामयिक विषयों, घटनाओं, तथ्यों तथा स्थितियों का सूक्ष्म सर्वेक्षण कर अनुसंधान के आधार पर चौंकाने वाले निष्कर्ष निकाले जाते हैं। बाबग्रीन का इस संबंध में कथन है कि जिस तथ्य को कोई छिपाना चाहे अथवा जो अनुद्घाटित हो, वैसे समाचार को प्रकाश में लाने का कार्य अन्वेषी पत्रकारिता का है। अमरीका का 'वाटरग्रेट काण्ड' तथा भारत का 'कफन–घोटाला' और 'बोफोर्स–तोप सौदा' इसके सुन्दर उदाहरण हैं।

2. **आर्थिक पत्रकारिता** – अर्थ या पैसा जीवन का एक प्रमुख तत्त्व है। इसके बिना जीवन को चलाना अत्यन्त कठिन है। अर्थ से जुड़े हुए विभिन्न कार्यकलापों और गतिविधियों को उद्घाटित करने के लिए इस पत्रकारिता का विकास हो रहा है। पूंजी बाजार, वस्तु बाजार, बैंक, श्रम, ग्रामोद्योग, बजट, शेयर, राष्ट्रीय आय आदि से संबद्ध समाचार आज के पाठक को आकर्षित कर रहे हैं। 'द इकोनामिक टाइम्स', 'व्यापार भारती', 'फाइनैंसियल एक्सप्रेस' जैसे समाचार–पत्रों की बढ़ती हुई प्रसार संख्या इसके सुंदर उदाहरण हैं।

3. **ग्रामीण पत्रकारिता** – भारत की अधिकांश जनता गांवों में बसती है। गाँव, देश के स्वतंत्र होने के छप्पन वर्ष बाद भी पिछड़े हुए हैं। सुदूर गाँवों में नयी चेतना के तथा विकास के स्वर को समाचार–पत्र ही पहुँचा सकते हैं। इस संदर्भ में विख्यात पत्रकार गणेश शंकर विद्यार्थी लिखते हैं– "राष्ट्र महलों में नहीं रहता, प्रकृत राष्ट्र के निवास–स्थल के अगणित झोंपड़े हैं जो गांवों और पुरवों में फैले हुए खुले आकाश के देदीप्यमान सूर्य और शीतल चंद्र और तारागण से प्रकृति का संदेश लेते हैं। इसीलिए राष्ट्र का मंगल और उसकी जड़ उस समय तक मजबूत नहीं हो सकती जब तक कि अगणित लहलहाते पौधों की जड़ों में जीवन का जल नहीं सींचा जाता।" ग्रामीण स्वास्थ्य, कुटी उद्योग, लोककलाओं, लोक–संस्कृति आदि की समर्पित पत्रकारिता ही ग्रामीण पत्रकारिता है।

4. **व्याख्यात्मक पत्रकारिता** – जैसा इसके नाम से स्पष्ट है, इस पत्रकारिता के अन्तर्गत समाचार कार्यालय में समाचार एजेंसियों तथा संवाददाताओं द्वारा प्रेषित समाचारों का विश्लेषण, उनकी पष्ठभूमि और उनके भविष्य में होने वाले परिणामों का व्याख्यात्मक पत्रकारिता द्वारा समाधान दिया जाता है। इस पत्रकारिता का उद्देश्य समाचारों के वास्तविक परिवेश में उनका मूल्यांकन करना होता है। आधुनिकतम द्रुतगामी संचार साधनों द्वारा प्रेषित समाचारों के स्पष्टीकरण के लिए इस पत्रकारिता की आवश्यकता पड़ती है।

5. **विकास पत्रकारिता** – जिस पत्रकारिता में सामाजिक, आर्थिक तथा वैज्ञानिक प्रगति से संबंधित विकास के समस्त पक्षों पर प्रकाश डाला जाता है, उसे विकास पत्रकारिता कहते हैं। देश के किसी भाग में कोई नहर बनती है या कोई सरकारी उद्योग स्थापित होता है तो अभियंता और ठेकेदार मिलकर गोलमाल करते हैं। कहीं भ्रष्टाचार व गबन होता है, ये सभी विकास पत्रकारिता के अन्तर्गत आते हैं। इस पत्रकारिता में यद्यपि दष्टि विकास पर केंद्रित होती है, परंतु फिर भी भ्रष्टाचार के मामले में भी इसी के अन्तर्गत आ जाते हैं। उद्योगधंधों, विज्ञान, औषधि आदि अनेक क्षेत्रों में हो रहे विकास की ओर भी यही संकेत करती है। केंद्र सरकार द्वारा प्रकाशि 'योजना' पत्रिका विकास–पत्रिका का उदाहरण प्रस्तुत करती है।

6. **संदर्भ पत्रकारिता** – इस पत्रकारिता में जो लोग कार्य करते हैं वे स्तंभ–लेखकों, संवाददाताओं, प्रशासनिक अधिकारियों तथा संपादकों को आवश्यकता पड़ने पर संदर्भ की आपूर्ति करते हैं। ये लोग पत्रकारिता तथा पुस्तकालय विज्ञान में प्रशिक्षित होते हैं तथा पुरानी कतरनों, लेखों, संदर्भों, ग्रंथों तथा चित्रों द्वारा उनकी सहायता करते हैं। इन्हें संस्थान के विश्वकोश भी कहा जाता है।

7. **संसदीय पत्रकारिता** – इस पत्रकारिता के अंतर्गत संसद के दोनों सदन प्रादेशिक विधानसभाओं, परिषदों की कार्यवाही की रिपोर्टिंग अत्यंत सावधानी से की जाती है। जरा सी असावधानी हो जाने पर संसद की अवमानना का प्रश्न उठ सकता है अतः सावधानीपूर्वक कार्य किया जाता है। संसद कार्यवाही प्रकाशन अधिनियम 1965 को पूरी तरह से समझ कर ही समाचार–पत्र के लिए सामग्री तैयार की जाती है।

8. **खेल पत्रकारिता** – समाचार पत्रों का उनके आकार के अनुसार एक पष्ठ खेल समाचारों को समर्पित होता है। खेलों के विषय में दो प्रकार से समाचार लिखे जाते हैं – अग्रिम तथा चल। अग्रिम लेखों में सम्मिलित होने वाली टीमें, खिलाड़ियों के नाम, क्रीड़ा–व्यवस्था और खेल–विशेष की पष्ठभूमि को दिया जाता है, जबकि 'चल' लेख में खेल का निष्पक्ष और समीक्षात्मक विश्लेषण किया जाता है। समाचार को रोचक और आकर्षक बनाने के लिए लेखक तथ्यों, टिप्पणियों, उक्तियों आदि का प्रयोग करता है। वह खेल के पूर्व इतिहास की पष्ठभूमि का भी व्यवहार करता है। इस वर्ष हुए विश्व क्रिकेट कप के अवसर पर ग्रेग चैपल, दिलीप वेंगसरकर, रविशास्त्री, चेतन शर्मा के संवाद दोनों ही प्रकार के थे। 'स्पोर्टस–वीक', 'खेल युग', 'क्रिकेट सम्राट', 'खेल खिलाड़ी' आदि अनेक पत्रिकाएँ खेल पत्रकारिता को आगे बढ़ा रही हैं।

9. **रेडियो पत्रकारिता** – रेडियो पत्रकारिता के अंतर्गत समाचार दर्शन, समाचार बुलेटिन, सामयिक समीक्षा, व्याख्यात्मक सामग्री, ध्वनि–संपादन, समाचार–वाचन तथा अन्य प्रकार की प्राविधिक जानकारी को समाहित किया जा सकता है।

10. **दूरदर्शन पत्रकारिता** – गत बीस वर्ष से इस पत्रकारिता का पर्याप्त विकास हुआ है। चित्र और ध्वनि के प्राविधिक ज्ञान, लेखन और वाचन की क्षमता तथा इलेक्ट्रोनिकी की जानकारी के द्वारा इसमें सफलता प्राप्त होती है। दूरदर्शन पत्रकार को अपने साथ छापाकारों को ले जाना पड़ता है। छायाकार चित्रों से तथा पत्रकार अपनी लेखन और वाचन–कला से इसे रोचक और प्रभावशाली बनाता है।

11. **फोटो पत्रकारिता** – चित्रों का प्रभाव शब्दों से अधिक होता है। सुनी–सुनायी बात और आंखों देखी बात में पर्याप्त अंतर होता है। चित्र के आते ही कहानी की झलक सी मिल जाती है जबकि शब्दों के एक बड़े समूह से गुजरकर तथ्य सामने आता है। इसलिए यह पत्रकारिता अधिक आकर्षक है। चित्र–तकनीक में क्रांतिकारी परिवर्तन आ जाने से यह पत्रकारिता काफी लोकप्रिय हो गयी है। फोटो पत्रकार समाचारों से जुड़े हुए चित्र लेकर उनका प्रयोग करते हैं। इनके क्षेत्रों में पशु–पक्षी, ऐतिहासिक भवन, प्राकृतिक दश्य तथा समारोह स्थल आदि आते हैं। इस पत्रकारिता में फोटो खींचने का ज्ञान तथा समाचार–चेतना का होना अत्यन्त आवश्यक है।

12. **विधि पत्रकारिता** – इस पत्रकारिता के अंतर्गत देश के कानूनों, मौलिक अधिकारों, मानहानि, अदालत–अवमानना, अपमान–लेख, सार्वजनिक व्यवस्था, विदेशी राज्यों के साथ संबंध, भारतीय डाक–तार अधिनियम, समुद्र सीमा शुल्क, पुस्तक पंजीयन नियम, कापीराइट अधिनियम आदि अनेक विधियाँ आ जाती हैं। विधि पत्रकार को इस प्रकार की विधियों और कानूनों की जानकारी होनी चाहिए तभी वह इस प्रकार की पत्रकारिता करने में सफल हो सकता है।

13. **अंतरिक्ष पत्रकारिता** – आधुनिक काल में सूचना का आधार आकाशीय ग्रह और उपग्रह बन चुके हैं। पथ्वी अंतरिक्ष में घूमती है और सूर्य का चक्कर लगाती है। चंद्रमा पथ्वी के चारों ओर घूमता है। चंद्रमा प्राकृतिक उपग्रह है जबकि कृत्रिम उपग्रहों को मानव ग्रहों के चारों ओर परिक्रमा करने के लिए भेजा है। उपग्रहों के कारण संचार की दुनिया में क्रांति आ गई है। अंतरिक्ष संचार प्रणाली के कारण समाचारों और चित्रों का संप्रेषण हो रहा है। उपग्रहों के कारण ही एक ही समाचार–पत्र के कई संस्करण प्रकाशित हो रहे हैं। उपग्रहों के कारण एक ही समाचार पत्र के कई संस्करण प्रकाशित हो रहे हैं। इलैक्ट्रोनिक्स विधियों से समाचार, शीर्षक, लेख, फोटो, विज्ञान को कमांड देकर वीडियो स्क्रीन पर देखकर महत्त्व के आधार पर पष्ठ का समायोजन कर लिया जाता है। मुद्रण, संप्रेषण और प्रकाशन के क्षेत्रों में हो रहे परिवर्तन अंतरिक्ष पत्रकारिता के अंतर्गत आकर उसकी काया बदल रहे हैं।

14. **सर्वोदय पत्रकारिता** – इस पत्रकारिता को करने वाले पत्रकार को अत्यंत धैर्य और संयम से काम लेन पड़ता है। सर्वोदय पत्रकार के मन में किसी वर्ग, जाति, धर्म या संप्रदाय के प्रति किसी प्रकार का द्वेष नहीं होता। वे सभी लोगों के उदय, उनकी उन्नति के लिए सोचते हैं और प्रत्येक समाचार में अपने 'सर्वजनहिताय' दष्टिकोण को प्रस्तुत करते हैं। हिंदी पत्रकारिता के गांधी युग में 'यंग इंडिया', 'नवजीवन', 'हिंदी नवजीवन', 'हरिजन' आदि समाचार पत्र सर्वोदय पत्रकारिता करते रहे हैं। इसी प्रकार गीता प्रेस गोरखपुर द्वारा प्रकाशित रचनाएँ भी इसी पत्रकारिता की उदाहरण कही जा सकती हैं।

15. **चित्रपट पत्रकारिता** – प्रत्येक समाचार पत्र में सिने उद्योग से जुड़े हुए समाचार होते हैं। कभी ये समाचार सिने–पष्ठ पर प्रकाशित होते हैं तो कभी सिने–कालमों में। इन समाचारों में सिने जगत् के कलाकारों अभिनेताओं–अभिनेत्रियों के कार्य कलापों,

उनकी फिल्मों, फिल्मों की इनडोर या आउटडोर शूटिंग आदि पर लेख, टिप्पणियाँ या रोचक सामग्री होती है जिसे युवा वर्ग पसंद करता है। कौन सी फिल्म हिट हो रही है और कौन–सी बाक्स–आफिस पर पिट रही है, किस फिल्म का मुहूर्त हो रहा है अैर कौन बड़ा अभिनेता उसका उद्घाटन कर रहा है, किस शराब–पार्टी में झगड़ा हुआ और किस में मारपीट हुई – इन सभी की चर्चा इस पत्रकारिता में होती है। सिने पत्रकार मिर्च–मसाला लगाकर ऐसे कालमों को प्रस्तुत करते हैं और पाठक इन्हें चटखारे ले–लेकर पढ़ते हैं। माया नगरी में घूमने वाले पत्रकारों की यह रोचक सामग्री चित्रपट पत्रकारिता कहलाती है। 'फिल्मी दुनिया', 'फिल्मी कलियाँ', 'मायापुरी', 'स्टारडस्ट', 'चित्रलेखा', 'सुषमा' आदि अनेक पत्रिकाएँ और उनके स्तंभ इसके उदाहरण हैं।

पत्रकारिता के उपर्युक्त प्रकारों के अतिरिक्त दो और भी प्रकार हैं जिन पर संक्षेप में विचार करना आवश्यक प्रतीत होता है। ये हैं–

(क) कार्टून पत्रकारिता और (ख) वीडियो पत्रकारिता

(क) **कार्टून पत्रकारिता** – आजकल लगभग प्रत्येक समाचार पत्र में, जो कार्टूनिस्ट का खर्चा उठा सकता है, कार्टूनिस्ट है। ये कार्टूनिस्ट ऐसे कार्टून बनाते हैं जिनकी स्मति पाठक के मन में वर्षों तक बसी रहती है। चित्रों की भाँति समाचार को आकर्षक बनाने में इनका भी योगदान रहता है। कार्टूनकार अपने कार्टूनों के माध्यम से अर्थपूर्ण, ठोस, रचनात्मक, व्यंग्यात्मक तथा संक्षिप्त टिप्पणियाँ या व्याख्या प्रस्तुत करता है। कार्टूनों के माध्यम से किसी राजनीतिक, सामाजिक या समसामयिक समस्या अथवा गतिविधि पर व्यंग्य या टिप्पणी की जाती है। 'शंकर्ज वीकली' इस प्रकार की पत्रिका रही है। शंकर, लक्ष्मण इस प्राकर के कार्टूनिस्ट हैं।

(ख) **वीडियो पत्रकारिता** – अमेरिका में 'न्यू जर्नलिज्म' का आंदोलन पचास वर्ष पुराना है। इसे ही वीडियो पत्रकारिता कहा जाता है। इसमें दश्य–श्रव्य संचार माध्यम से समाचार वाचक अपनी बात को एक टिप्पणीकार की भाँति कहता है। वे अपने चेहरे, भंगिमा और आवाज में आरोह–अवरोह का प्रयोग कर, पष्ठभूमि में दिखाये जाने वाले दश्यों पर टिप्पणी करते हैं। भारत में 'मूवी वीडियो', 'इन साइट', 'न्यूजट्रैक', 'कालचक्र', 'लहरें' आदि पत्रिकाएँ वीडियो पत्रकारिता के क्षेत्र में अग्रसर हैं।

पत्रकारिता : महत्त्व

हम अपने जीवन में पत्रकारिता के बढ़ते हुए महत्त्व को कई स्तरों पर देख सकते हैं। पहला स्तर जनसामान्य के सामान्य ज्ञान को बढ़ाने का है। कभी समय था जब ज्ञान–विज्ञान केवल कुछ ही लोगों तक सीमित था। समाज के वे लोग जो शिक्षित थे, विद्या के उपासक थे तथा जिनके पास बुद्धि और विवेक थे वे ही बड़े–बड़े ग्रंथ पढ़ते थे और ज्ञान प्राप्त करते थे। जनसामान्य का ज्ञान की ऊँची–ऊँची बातों से कोई संबंध न था। शिक्षा के व्यापक प्रसार और पत्रकारिता के उदय ने उस एकाधिकार को तोड़कर ज्ञान–विज्ञान की उन बातों को सहज और सरल भाषा में सामान्य पाठक तक पहुँचा कर उसके ज्ञान में अभूतपूर्व वद्धि की है।

पत्रकारिता ने ज्ञानवर्द्धन के साथ–साथ मनुष्य की रुचि को भी परिष्कृत किया है। पत्र–पत्रिकाएँ जनता की समाचार की भूख को ही नहं मिटाती प्रत्युत समाचारों के प्रति अपने दष्टिकोण को प्रस्तुत कर विभिन्न समस्याओं का समाधान भी प्रस्तुत करती हैं। भारत जैसे देश में जहाँ अभी भी निरक्षरता का बोलबाला है और जनमत की कमी है, वहाँ पर किसी बात को दढ़तापूर्वक स्थापित कर जनमत तैयार करना और उसकी रुचि को परिष्कृत करना पत्रकारिता काा ही काम है।

सूचना के अभाव में निरक्षर समाज में अफवाहें बड़ी तेजी से फैलती हैं। पत्रकारिता के माध्यम से पत्रकार अपने पाठकों के सामने सही स्थिति को प्रस्तुत करता है। वह घटित हुई घटना का सही समाचार देकर वस्तुस्थिति का सही चित्र प्रस्तुत करता है। इस प्रकार निराधार अफवाहों को रोकने और जनता को सही सूचना प्रदान करने में पत्रकारिता की महत्ती भूमिका है।

पत्रकार पत्रकारिता के माध्यम से सार्वजनिक सेवा भी करते हैं। वे सामाजिक हित को ध्यान में रखकर लेख लिखते हैं। लेखों और संपादकीय में वे यह भी बताते हैं कि क्या करने में राष्ट्रहित है। किन योजनाओं और कार्यक्रमों में लोकहित तथा राष्ट्रहित हो सकता है। इसके साथ लोगों को यह जानकारी भी उपलब्ध कराते हैं कि हमारा जीवन किस दिशा की ओर अग्रसर हो रहा है और भविष्य में क्या होने वाला है। हमें कौन से उपाय करने चाहिएं जिससे देश क उन्नति और विकास हो सके तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर ख्याति प्राप्त हो सके।

इस प्रकार स्पष्ट है कि सामान्य पाठक के ज्ञानवर्द्धन, रुचि–परिष्करण, वस्तुस्थिति के चित्रण, जनमत–निर्माण में पत्रकारिता का अत्यंत महत्त्व है।

3.2 हिंदी पत्रकारिता : उद्भव और विकास

समाचार–पत्र समाज का सजग प्रहरी है। इसे जहाँ सामान्य समाचार मिलते हैं, वहीं ज्ञान–विज्ञान की जानकारी होती है। समाचार–पत्र किसी सूचना या घटना को मुद्रित रूप में पाठकों के सम्मुख लाते हैं। मुम्बई में घटित कोई दिल्ली या चंडीगढ़ के समाचार पत्रों के माध्यम से हम तक पहुँचती है। यही समाचार की यात्रा है। इस यात्रा के दर्शन हमें पौराणिक युग में नारदजी के माध्यम से हो जाते हैं जो एक दिशा की बात को दूसरी दिशा तक पहुँचाने की कला में सुदक्ष थे। प्राचीन युग में आग जलकर या ढोल पीटकर सूचनाओं का आदान–प्रदान होता था। प्राचीन भारत में गुप्तचरों के माध्यम से सूचनाओं का आदान–प्रदान होता था। प्राचीन भारत में गुप्तचरों के माध्यम से सूचनाएँ मिलती थीं। मध्यकाल में वीर शिवाजी, नानाा फड़वीस और मुगल दरबारों में 'वाक्यानवीस' होते थे। इसी प्रकार सिक्ख, मराठा और राजपूत दरबारों में भी शासन के प्रयोगार्थ सूचनाओं का लेखन और संकलन

होता था। मुगलों की अंतिम डायरी उर्दू अखबार थी जो 1857 तक प्रचलन में रही। ये सभी समाचार पत्र के पूर्वरूप तथा पड़ाव हैं। कागज और मुद्रण के आविष्कार से इस क्षेत्र में एक क्रांति आई। भारत में पहला प्रेस सन् 1950 में पुर्तगाली मिशनरियों ने आरंभ किया। 1757 में प्लासी युद्ध जीतने के बाद ईस्ट इंडिया कंपनी भारत की शासक बनी और अंग्रेजी भाषा में अंग्रेजों के लिए समाचार–पत्र आरंभ किया। पहले पत्रकार विलियम बोल्ट्स थे। इन्हीं का चिपकाया गया नोटिस ही पत्रकारिता का आरंभ था। 1787 में जैम्स आगस्त हिबकी ने 'बंगाल गजट' साप्ताहिक को शुरू किया।

भारतीय भाषाओं की प्रथम पत्रिका 'दिग्दर्शन' थी जिसे 1818 में ईसाई मिशनरियों ने निकाला था। यह अंग्रेजी बंगला तथा हिंदी में थी परंतु इसका कोई अंक उपलब्ध नहीं है। बूंदी से प्रकाशित 'दरबार रोजनामचा' भी इसी समय प्रकाश में आया परंतु इसका भी कोई अंक उपलब्ध नहीं हैं।

हिंदी का प्रथम समाचार-पत्र

'उदंत मार्तण्ड' को हिंदी का पहला समाचार–पत्र माना जाता है। यह सन् 1826 में कलकत्ता के 'कोल्हू टीला' स्थान से प्रकाशित हुआ और इसके संपादक, मुद्रक और प्रकाशन पं॰ युगल किशोर शुक्ल थे जो मूलतः कानपुर के निवासी थे और दीवानी अदालत में रीडर थे। संपादक ने इस पत्र के माध्यम से अपनी आकांक्षा को इस प्रकार व्यक्त किया– 'नाना देश के सत्य समाचार हिन्दुस्तानी लाग देखकर आप पढ़ें और समझ लें और पराई अपेक्षा अपनी भाषा की उपज न छोड़ें। इससे स्पष्ट है कि इस समाचार–पत्र से पूर्व हिंदी में कोई पत्र न था और इसे भारतीयों के हित में हिंदी भाषा में प्रकाशित किया गया था।

हिंदी पत्रकारिता : काल विभाजन

पत्रकारिता के इतिहास के विकास क्रम काो कालों में विभक्त करने के संबंध में इतिहासकारों में मतभेद है। नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित हिंदी 'साहित्य का बहत् इतिहास' में प्रथम उत्थान (1826-1867), द्वितीय उत्थान (1868-1920) और आधुनिक काल (1920 के बाद) रूप में इसका काल विभाजन किया गया है। बाबू बालमुकुन्द गुप्त ने पहला चरण (1845-1877), दूसरा चरण (1877-1890) और तीसरा चरण (1890 के बाद) माना है। डॉ॰ रामरत्न गुप्त ने 1826 से 1945 तक के इतिहास के छः भाग किये हैं – आरंभिक युग (1826-1867), उत्थान और अभिवद्धि युग प्रथम (1867-1883), द्वितीय चरण (1883-1900), विकास युग प्रथम (1900-1921) और द्वितीय (1921-1935) और आधुनिक युग।

डॉ॰ कृष्ण बिहारी मिश्र के उदयकाल (1826-1867), दूसरा चरण (1867-1900) और तीसरा चरण (बीसवीं शताब्दी की पत्रकारिता) माना है। उपर्युक्त काल विभाजन के स्थान पर स्थूल रूप से यह विभाजन इस प्रकार किया जा सकता है–

(1) प्रारंभिक पत्रकारिता (1826 से 1867)
(2) भारतेन्दु युग पत्रकारिता (1867 से 1900)
(3) द्विवेदी युग पत्रकारिता (1900 से 1920)
(4) स्वातंत्र्य पूर्व युग पत्रकारिता (1920 से स्वतंत्रता–प्राप्ति तक)
(5) स्वातंत्र्योत्तर युग पत्रकारिता (1947 से आज तक)

(1) **प्रारंभिक पत्रकारिता (1826-1867)**

हिंदी पत्रकारिता के उदय के समय भारत में समाचार–पत्रों की कोई परंपरा न थी। इस युग के संपादक, संचालक भी थे। उनके सामने समाचार–पत्र की कोई संकल्पना नहीं थी। उन्हें अपने ज्ञान और कल्पना का प्रयोग से ही कार्य कर अपने पथ का निर्माण करना था। सीमित आर्थिक साधनों से समाचार–पत्र को निकालना, पाठकों को पढ़ने के लिए प्रेरित करना तथा नागरी भाषा का प्रचार–प्रसार करना ही उनका लक्ष्य था। डॉ॰ कृष्ण बिहारी मिश्र के शब्दों में– "हिंदी पत्रकारिता के आदि उन्नायक का आदर्श बड़ा था, किंतु साधन–शक्ति सीमित थे। वे नयी सभ्यता के संपर्क में आ चुके थे और अपने देश तथा समाज के लोगों को नवीनता से संयुक्त करने के आकुल–आकांक्षी थे। उन्हें न तो सरकारी संरक्षण और प्रोत्साहन प्राप्त था और न ही हिंदी समाज का सक्रिय सहयोग। इसलिए 'उदन्त मार्तण्ड' अधिक समय तक जीवित नहीं रह सका। 1850 में पं॰ युगल किशोर शुक्ल ने 'सामदण्ड मार्तण्ड' निकाला। 'उदन्त मार्तण्ड' में सरकारी कर्मचारियों की नियुक्ति, उनका स्थानान्तरण तथा कलकत्ता बाजार के भाव आदि होते थे। इसकी भाषा के संबंध में पं॰ अम्बिका प्रसाद वाजपेई लिखते हैं– "यह उस समय लिखी जाने वाली भाषा से हीन नहीं थी।" उनकी भाषा में आज की भाँति वर्तनी और विराम चिह्नों का प्रयोग नहीं किया जाता था। तत्सम शब्दों के अभाव के कारण भाषा जनभाषा के निकट थी।

'उदन्त मार्तण्ड' की अल्पकालिक सफलता से प्रेरित होकर राजा राममोहन राय ने बंगला और फारसी भाषा में 'बंगदूत' प्रकाशित किया जो साप्ताहिक था। इसकी भाषा पर बंगला भाषा का स्पष्ट प्रभाव है।

हिंदी भाषी प्रदेश के प्रकाशित होने वाले पहले समाचार पत्र का का श्रेय 'बनारस अखबार' को है जो 1845 में शुरू हुआ। शिवप्रसाद सिंह सितारेहिन्द इसके संचालक तथा पं॰ गोविन्द रघुनाथ इसके संपादक थे। इसकी लिपि तो नागरी थी परंतु भाषा में उर्दू शब्दों की बहुलता थी।

सन् 1848 में हिंदी–उर्दू भाषाओं में 'मालवा' ओर 1849 में बंगला–हिंदी में 'जगदीप भास्कर 1850 में बनारस से 'सुधाकर, 1852 में आगरा से 'बुद्धि प्रकाश' आदि प्रकाशित हुए। आचार्य शुक्ल ने 'बुद्धि प्रकाश्य' की बड़ी प्रशंसा की है। 1854 में बंगला और हिंदी में 'समाचार सुधार वर्षण' कलकत्ता से निकला। जातीय अभिमान से पूर्ण होने के कारण इसे अंग्रेजी के कोप का शिकार बनना पड़ा। यह चौदह वर्ष चला।

1857 से पूर्व भारतीय भाषाओं के समाचार पत्र कंपनी शासन विरोधी थे। प्रथम स्वीधीनता संग्राम ने उनकी सोच को बदला। अब समाचार–पत्र आंदोलनकारियों से सहानुभूति रखने लगे। 1857 में दिल्ली से 'पयामे आजादी' का हिंदी संस्करण निकला जिसमें राष्ट्र–प्रेम की सामग्री रहती थी। यह समाचार पत्र भी अंग्रेजों को खटका और इसके संपादक अजीमुल्ला खाँ को जान से हाथ धोना पड़ा। 1858 में अहमदाबाद से 'धर्म प्रकाश', 1861 में आगरा से 'सूरज प्रकाश', 1883 में आगरा से 'लोकहित', 1865 में बरेली से 'तत्त्वबोधिनी', 1866 में लाहौर से 'ज्ञान दायिनी' आदि प्रकाशित हुए। इस काल के विश्लेषण से स्पष्ट है कि हिंदी पत्रकारिता का धीरे–धीरे उदय हुआ। इन समाचार पत्रों का कोई निश्चित स्वरूप नहीं है। भाषा में कहीं बंगाली का प्रभाव है तो कहीं उर्दू का। इतना अवश्य है कि यह भाषा जनभाषा के निकट है।

(2) भारतेन्दुयुगीन पत्रकारिता

प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के क्रूरतापूर्वक दमन से भारत की राजनीतिक चेतना, सांस्कृतिक और सुधारवादी आन्दोलनों से जुड़ी। रामकृष्ण परमहंस, केशवचन्द्र सेन, स्वामी दयानन्द, विवेकानन्द के नेतत्व में देशवासी एक बार पुनः जुड़े। इसी समय भारतेन्दु का आगमन हुआ और उन्होंने हिंदी गद्य और पद्य से एक नयी चेतना और दिशा प्रदान की। भारतेन्दु ने काशी से 1867 में 'कविवचन सुधा' को आरंभ किया जो 1885 तक चली। 1873 में उन्होंने 'हरिश्चन्द्र चंद्रिका' को शुरू किया जिसका पूर्वनाम 'हरिश्चन्द्र मैगजीन' था। उन्होंने 'बालबोधिनी' पत्रिका भी शुरू की। इन पत्रिकाओं के विषय साहित्य, नारी–चेतना आदि रहे।

सन् 1877 में बालकृष्ण भट्ट ने 'हिंदी प्रदीप' को आरंभ किया। इस मासिक पत्रिका ने हिंदी पत्रकारिता को एक नयी दिशा प्रदान की। इसका स्वर राष्ट्रीय था। इस अवधि में कानपुर से 'हिंदू प्रकाश', ललितापुर से 'बुंदेलखण्ड अखबार', 'अल्मोड़ा अखबार', 'हिंदी दीप्तिप्रकाश', 'बिहार बंधु', 'जबलपुर समाचार', 'भारत पत्रिका', 'नाटक प्रकाश', 'नागरी प्रकाश', 'भारतबंधु', 'ध्धर्मप्रकाश', 'काशी पत्रिका', 'मित्र विलास', 'भारत मित्र', 'सार सुधानिधि', 'उचित वक्ता' आदि का प्रकाशन हुआ। इन सभी ने युगीन समस्याओं को वाणी दी तथा इनका स्वर राष्ट्रीय रहा।

सन् 1885 में राजा रामपाल सिंह ने 'हिंदोस्तान' को कालाकांकर से प्रकाशित किया। इसका संपादन पं॰ मदनमोहन मालवीय ने किया तथा इन्होंने पत्रकारिता की अमूल्य सेवा की। यह पत्र कांग्रेस का समर्थक था। इसकी भाषा सरल और सुबोध थी। सन् 1890 में हिंदी का महत्त्वपूर्ण समाचार पत्र 'हिंदी बंगवासी' प्रकाशित हुआ। इस पत्र में बालमुकुन्द गुप्त, बाबू राम विष्णु पराड़कर ने काम किया। इसमें नवीनतम समाचार तथा लेख होते थे। सन् 1986 में काशी से 'नागरी प्रचारिणी पत्रिका' का त्रैमासिक प्रकाशन शुरू हुआ। इसमें हिंदी साहित्य से जुड़े हुए लेख होते थे। बाबू श्यामसुन्दर दास, सुधाकर द्विवेदी, रामकृष्ण दास, आचार्य शुक्ल, गुलेरी जी आदि विद्वान् इससे जुड़े रहे हैं। इस युग के पत्रकार आदर्शवादी थे। इन्होंने देश की उन्नति के साथ–साथ हिंदी पत्रकारिता के विकास में भी उल्लेखनीय योगदान दिया।

(3) द्विवेदीयुगीन पत्रकारिता

इस युग तक आते–आते देश में एक नयी चेतना जागत हो गयी थी। स्वदेशी और स्वराज के नारे गूँजने लग गये थे। बंगाल का विभाजन भी इसी काल में हुआ जिसके विरुद्ध पूरा देश उठ खड़ा हुआ। लोकमान्य तिलक के विचारों का प्रभाव इस युग की पत्रकारिता पर पड़ा। राजभक्ति का स्थान देशभक्ति ने ले लिया। इसे तिलक युग भी कहा जाता है। आचार्य द्विवेदी ने इस युग में 'सरस्वती' पत्रिका के माध्यम से भाषा का परिष्कार किया। द्विवेदी जी ने 20 वर्ष तक इसका परिश्रमपूर्वक संपादन कर पत्रकारिता के स्तर को ऊँचा उठाया। इन्हीं की प्रेरणा से अनेक साहित्यकार मैथिलीशरण गुप्त, अयोध्यासिंह उपाध्याय, रामनरेश त्रिपाठी आदि इस क्षेत्र में आए।

इस युग की पत्रिकाओं में 'भारतमित्र', हिंदी केसरी', 'नसिंह', 'मारवाड़ी बंधु', 'प्रताप', 'कर्मयोगी', 'कर्मवीर', 'सिपाही' आदि का नाम उल्लेखनीय है। 'प्रभा', 'चाँद', 'माधुरी' भी इसी युग की महत्त्वपूर्ण पत्रिकाएँ हैं। इस युग में 'क्षमालोचक', 'हितवार्ता', 'देवनागर', 'इन्दु', 'मर्यादा' जैसी साहित्यिक पत्रिकाएँ भी प्रकाशित हुईं। इस युग की पत्रिकाओं में विषय की विविधता है तथा भाषा के संस्कार पर बल है।

(4) स्वातंत्र्य-पूर्व युगीन पत्रकारिता (1920 से स्वतंत्रता-प्राप्ति तक)

महात्मा गांधी का भारतीय राजनीति में आगमन इतिहास की महत्त्वपूर्ण घटना है। गांधी जी ने देश को न केवल राजनीतिक दिशा

ही प्रदान की, बल्कि सामाजिक, आर्थिक ओर सांस्कृतिक दिशा भी दी। उन्होंने 'नवजीवन' हरिजन', 'यंग इंडिया' के माध्यम से रचनात्मक कार्यक्रम देश के सामने प्रस्तुत किये।

इस युग में छायावाद का आगमन हो गया था। बाद में प्रगतिवाद और प्रयोगवाद के स्वर भी गूँजे। 'माधुरी' और 'चाँद' 1922 में प्रकाशित हुई। 'सरस्वती' के बाद उच्च पत्रिका का सम्मान 'माधुरी' को मिला। इस युग की साहित्यिक पत्रिकाओं में 'मतवाला', 'हंस', 'सुधा', 'विशाल भारत' का नाम उल्लेखनीय है। अन्य पत्रिकाओं में 'समन्वय', 'सेनापति' 'बालक', 'युवक', 'भारत', 'वीणा', 'गंगा', 'जागरण', 'योगी', 'साहित्य', 'जनता', 'संघर्ष', 'मधुकर', 'नवजीवन' आदि का नाम लिया जा सकता है।

गांधी जी ने हिंदी भाषा को राष्ट्रीय स्तर पर लाने के लिए अहिंदी प्रदेशों में राष्ट्र भाषा प्रचार समिति वर्धा तथा दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा की स्थापना की। इसके लिए हिंदुस्तानी एकादमी की 'हिंदुस्तानी' पत्रिका का सहारा लिया। इस युग मे ंदैनिक समाचार पत्रों की भी वद्धि हुई। 1929 में 'आज' प्रकाशित हुआ जो अब तक चल रहा है। 1923 में 'अर्जुन', 1925 में 'सैनिक', 1930 में 'प्रताप', 1933 में 'दैनिक नवयुग', 1956 में 'इंदौर समाचार', 1958 में 'नवभारत दैनिक', 1942 में 'आर्यावर्त', 'दैनिक जागरण', 1947 में 'नवभारत' (आज का नवभारत टाइम्स) तथा 'नई दुनिया' प्रकाशित हुए।

इस युग में राष्ट्रीयता और देशभक्ति के स्वर प्रबल हुए। आर्थिक–सांस्कृतिक उत्थान पर बल है। हिंदी को सबल, सशक्त और प्रौढ़ बनाने में इस युग के पत्र–पत्रिकाओं का महत्त्वपूर्ण योगदान है।

(5) **स्वातंत्र्योत्तर युगीन पत्रकारिता (1947 से आज तक)**

स्वतंत्रता–प्राप्ति के बाद जिस प्रकार देश की सोच बदली, उसी प्रकार पत्रकारिता में भी परिवर्तन आये। इसके उद्देश्यों में बदलाव आया। वे उद्देश्य बहुमुखी थे – नये भारत का निर्माण, हिंदी माध्यम से ज्ञान–विज्ञान का उद्घाटन, भारतीय सभ्यता और संस्कृति का विकास, विभिन्नता में एकता का प्रचार, मौलिक शोध को प्रोत्साहन तथा नये विषयों का अनावरण। हिंदी के पत्र–पत्रिकाएँ इन्हीं उद्देश्यों को लेकर आगे बढ़े जिससे इनकी पाठ संख्या में अभूतपूर्व वद्धि हुई। साहित्य, संस्कृति, धर्म, विज्ञान, दर्शन, महिला, बाल, कला, नत्य, नाटक, खेलकूद, स्वास्थ्य, योग, वाणिज्य, उद्योग, बीमा, वित्त, बैंकिंग, कानून, कृषि, पशुपालन, परिवहन, ज्योतिष आदि अनेक विषयों को लेकर पत्रिकाएँ प्रकाशित हो रही हैं।

इस युग में पत्र–पत्रिकाओं ने मुद्रण की नयी से नयी विधियों को अपनाकर नया रूप विन्यास किया है। समाचार–पत्रों और पत्रिकाओं के प्रस्तुतीकरण में एक नयी चेतना आई है। रेखाओं, नक्शों, चित्रों का उपयोग, आकर्षक साज–सज्जा, बढ़िया प्रिंटिंग, विषय की विविधता, मौलिकता, नये ज्ञान का समावेश आदि ने इनके रूप को एमदम बदल दिया है। साहित्य के क्षेत्र में नई प्रवत्तियों का विकास हुआ है। कविता, कहानी, नाटक आदि के क्षेत्रम ंनये प्रयोग हो रहे हैं जिन्हें पत्रकारिता बढ़ावा दे रही है। समाचार–पत्रों ने अपने लिए नयी भाषा का निर्माण कर लिया है। उसमें अधिक से अधिक अर्थ–बोध कराने की क्षमता विकसित हुई है।

'नई दुनिया' जैसे समाचार–पत्र इंटरनेट से जुड़ कर नई प्रौद्योगिकी का इस क्षेत्र में प्रयोग कर रहे हैं। उनके अपने पोर्टल हैं। इसी प्रकार अन्य अनेक समाचार–पत्र भी नयी प्रौद्योगिकी को अपना कर अपने पत्रों के स्तर को ऊँचा उठाने का प्रयास कर रहे हैं। अतः कहा जा सकता है कि स्वातंत्र्योत्तर युग में पत्रकारिता ने काफी उन्नति और विकास किया है।

3.3 समाचार लेखन कला

कहानी–लेखन की भाँति समाचार–लेखन भी एक कला है। पत्रकारों की भाषा में समाचार को 'कथा' या 'स्टोरी' कहा जाता है। किसी बात या घटना को साधारण ढंग से प्रस्तुत करना एक सरल कार्य है, परन्तु उसे समाचार बनाकर रोचक कहानी की भाँति प्रस्तुत करना असाधारण और कलात्मक कार्य है। यह कार्य असाधारण प्रतिभा, परिश्रम और कलाकारी की अपेक्षा करता है। समाचार–लेखक को सफल समाचार लिखने में और पाठकों के सम्मुख कलात्मक रूप में प्रस्तुत करने में तभी सफलता प्राप्त होती है जब समाचार–लेखन में निम्नलिखित गुण विद्यमान हों –

(i) **सत्यता** – सत्यता समाचार का प्रथम गुण है। पत्रकार या समाचार लेखक अपने समाचार पत्र में जिस किसी कथा या समाचार को प्रस्तुत करे, उसमें सत्यता का गुण अनिवार्य रूप में होना चाहिए। वह कल्पना की उड़ान न होकर घटित हई काई घटना होनी चाहिए जोकि पाठक के ह्रदय का स्पर्श करे। सत्यता के अभाव में समाचार अपनी विश्वसनीयता को खो बैठता है। समाचार–लेखक को घटना का समाचार बनाकर उसे अच्छे ढंग से प्रस्तत करना चाहिए।

(ii) **रोचकता** – समाचार तभी सफल है जब वह पाठकों के मन को पूर्णतः बाँधे रखे। पाठक के मन को पकड़ने के लिए उसका रोचक होना आवश्यक है। समाचार का रोचक ढंग से लिखा जाना चाहिए। समाचार–लेखक को ऐसा ढंग निकालना चाहिए कि पाइक उसके समाचार में रुचि लें। समाचार लेखक को यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि पाठक को पढ़ने के लिए प्रेरित

करना अत्यन्त कठिन कार्य होता है। नीरस और अरुचिकर समाचारों को पाठक नहीं पढ़ते। अतः समाचारों में रोचकता अवश्य होनी चाहिए।

(iii) **प्रवाहमयता** – समाचार या 'कथा' में कहानी की भाँति प्रवाह का गुण होना चाहिए। पाठक समाचार के प्रथम वाक्य को पढ़ते ही उसके साथ बहना आरम्भ कर दे। समाचार का प्रवाह नदी के प्रवाह की भाँति होना चाहिए। यदि कथा नदी के प्रवाह की भाँति गतिशील है तो पाठक समाचार को अन्त तक पढ़कर ही दम लेगा।

(iv) **वस्तुनिष्ठता** – अच्छे समाचार–लेखन में वस्तुनिष्ठता का गुण होना चाहिए जब समाचार–लेखक समाचार को लिखता है तो उसकी पसंद या नापसंद का स्पर्श नहीं आना चाहिए। उसे व्यक्तिगत धारणाओं या भावावेगों से दूर रह कर 'कथा' को लिखना चाहिए। सी॰ पी॰ स्काट लिखते हैं– "समाचार संग्रह समाचार पत्र का प्रथम कर्त्तव्य है। समाचार भले ही उसकी भावना पर चोट करता हो किंतु उसे समचार को दूषित नहीं होने देना चाहिए। ..... सत्य को ठेस नहीं पहुँचनी चाहिए। तथ्य पवित्र है, व्याख्या स्वतंत्र है।"

(v) **उपदेश का अभाव** – पाठक अच्छे समाचार को पढ़ना चाहता है और उसकी प्रशंसा भी करता है परन्तु उसे भाषणबाजी और उपदेश से चिढ़ होती है। संवाद–लेखक को असत्य या गलत तथ्य नहीं लिखना चाहिए। संवादलेखक का एकमात्र ध्येय सत्य और सम्पूर्ण सत्य होना चाहिए। उसे कठोर से कठोर सत्य को भी प्रिय ढंग से प्रस्तुत करना चाहिए। भाषणबाजी और उपदेश का अभाव समाचार को आकर्षक और रोचक बना देता है जबकि इसकी बहुलता उसे नीरस और विकर्षक बना देती है।

(vi) **स्पष्टता** – समाचार–लेखक को समाचार स्पष्ट वाक्यों में लिखना चाहिए। उसके लिखने का ढंग ऐसा होना चाहिए कि पाठक उसके समाचार को पढ़ें। लंबे–लंबे और जटिल तथा दुरूह वाक्य समाचार को बोझिल बना देते हैं। तेज गति से भागते हुए जीवन में पाठक के पास इतना समय नहीं होता कि वह जटिल वाक्यों को स्पष्ट करना फिरे। वह तो चाहता है कि समाचार, दर्पण की भाँति उसके सामने स्पष्ट हो।

(vii) **सरल भाषा का प्रयोग** – समाचार–लेखन करते हुए समाचार–लेखक को भाषा में प्रवीण होना चाहिए। यदि उसकी भाषा में प्रवाह है तो वह समाचार को स्पष्ट और आकर्षक रूप में प्रस्तुत करता जाता है। इसके विपरीत यदि भाषा कठिन हो तो पाठक उसे पढ़ते हुए खीझ जाता है और समाचार पढ़ना छोड़ देता है। समाचार–लेखन करते हुए इस बात का विशेष रूप से ध्यान रखना चाहिए कि समाचार–पत्र को सभी वर्गों के पाठक पढ़ते हैं। इन पाठकों में शिक्षित, अल्पशिक्षित, उच्च–शिक्षित सभी प्रकार के व्यक्ति होते हैं। यदि समाचार की भाषा सरल है तो उसे सभी वर्गों के लोग सहज रूप में समझ लेंगे।

(viii) **आडम्बरपूर्ण शैली से बचाव** – समाचार–लेखन करते हुए समाचार–लेखक को आडम्बरपूर्ण शैली से सदैव बचना चाहिए। समाचार–पत्र को अपना लेख लिखते हुए इस बात का अवश्य ध्यान रखना चाहिए कि उसके पाठकों में सभी वर्गों के लोग होते हैं।वे बड़ी–बड़ी और ऊँची बातें समझ नहीं पाते हैं। उन्हें तो सामान्य ज्ञान की बातें ही अच्छी लगती हैं। आडंबरपूर्ण शैली में लिखी गयी बड़ी–बड़ी बातें उन्हें समाचार–पत्र से दूर ले जाती है और लेखक का श्रम वथा हो जाता है। अतः लेखक को इससे यथासंभव बचना चाहिए।

(ix) **तथ्यों की शुद्धता** – समाचार–लेखन करते हुए केवल सुनी–सुनायी बातों को ही नहीं लिख देना चाहिए, बल्कि तथ्यों की शुद्धता की पूरी तरह से जाँच करके ही समाचार–लेखन करना चाहिए। तथ्यों की अशुद्धता जहाँ समाचार–पत्र की विश्वसनीयता को घटा देती है, वहाँ समाज में भ्रम और आतंक को भी फैला सकती है। सफल लेखक वही कहलाता है जो तथ्यों को शुद्धता की विभिन्न स्रोतों से जाँच–पड़ताल करके समाचार–निर्माण करता है।

(x) **पथ-प्रदर्शन** – समाचार लेखक अपने पाठकों का मित्र ही नहीं होता बल्कि उनका पथ–प्रदर्शक भी होता है। पाठकों का ज्ञान सीमित होता है। वह अपने पाठकों को ज्ञान में वद्धि करता है। उन्हें भाषा, नये शब्द, मुहावरे, व्याकरण आदि देकर उनके सामान्य ज्ञान में वद्धि के साथ–साथ उनकी अभिव्यक्ति क्षमता को भी बढ़ाता है। उन्हें नये और आकर्षक शीर्षक ही प्रदान नहीं करता, बल्कि उन्हें नये वाक्य और नयी भावाभिव्यक्तियाँ देकर पाठकों के शिक्षण कार्य को भी करता है। वह पाठकों की भाषा को सुधार कर उनका मार्गदर्शन भी करता है।

3.4 समाचार-स्रोत

समाचार का क्षेत्र पर्याप्त विस्तत है। मनुष्य की पहुँच जल, थल और आकाश तक हो गई है। संवाददाता अपने समाचार पत्रों के लिए विभिन्न स्रोतों से समाचारों को प्राप्त करते हैं। इन स्रोतों के तीन वर्ग बनाये जा सकते हैं। ये वर्ग इस प्रकार हैं–

(i) **प्रत्याशित स्रोत** – समाचार प्राप्त करने के प्रत्याशित स्रोतों में पुलिस स्टेशन, अस्पताल, रेलवे स्टेशन, बस–अड्डा, नगरपालिका, स्कूल, कॉलेज, विश्वविद्यालय, विधानसभा, संसद, पत्रकार सम्मेलन, विविध समितियों की बैठकें, नेताओं के सार्वजनिक भाषण, संस्थाएँ, संस्थाओं के सम्मेलन आदि को सम्मिलित किया जा सकता है।

(ii) **पूर्वानुमानित स्त्रोत** – इन स्त्रोतों के अंतर्गत मंदी और मलिन बस्तियाँ, कारखाने, कार्यालय आदि आते हैं। इनमें पूर्वानुमान लगाकर समाचारों की खोज की जा सकती है।

(iii) **अप्रत्याशित स्त्रोत** – संवाददाता के पास कुछ समाचार अप्रत्याशित रूप में आते हैं। पत्रकार इनमें समाचार चेतना, तर्क शक्ति, अनुभव तथा दूर–दष्टि का प्रयोग कर समाचार खोज लेते हैं। पं॰ कमलापति त्रिपाठी ने अपनी पुस्तक 'पत्र और पत्रकार' में एक सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत किया है– "कुछ वर्ष पहले की बात है कि काशी के एयरोड्रम से 'आज' कार्यालय में संपादक के नाम टेलीफोन आया। ..... क्या आप कोई ऐसा संबंध कर सकते हैं कि मुझे 15-16 गैलन पेट्रोल मिल जाये? असंगत प्रश्न ने संपादक की उत्सुकता को जाग्रत किया। संपादक ने पूछा, "आप कौन हैं, पेट्रोल की खोज क्यों कर रहे हैं?" उत्तर मिला, "तातानगर का हूँ और ताता के विमान का संचालक हूँ। जमशेदपुर से अपने विमान में पं॰ जवाहर लाल नेहरू को लेकर लखनऊ जा रहा था। अंधड़ के कारण रास्ता भूल गया और व्यर्थ ही लंबा चक्कर लगाना पड़ा। इसमें मेरा पेट्रोल खत्म हो गया। फलतः यहाँ बनारस में उतरा हूँ। मुझे पेट्रोल की टंकी भी लेनी है और पंडित जी को लेकर उड़ जाना है। मैं जानता नहीं कि पेट्रोल कहाँ मिलेगा इसलिए आपको टेलीफोन किया है।" इस प्रकार असंगत टेलीफोन से हुई बातचीत से एक अप्रत्याशित समाचान बन गया।

संवाददाता के पास स्त्रोत चल कर नहीं आते। उसे स्त्रोतों तक जाना पड़ता है। समाचार निकालने का प्रयास करना पड़ता है। इस प्रयास में कई बार लोगों से बातचीत करके सूत्रों को खोजना पड़ता है। संवाददाता के कार्य का कोई समय निश्चित नहीं होता। उसे सदैव अपने अस्त्र–शस्त्रों से लैस होना पड़ता है। समाचार–चेतना, तर्क–शक्ति, अनुभव तथा दूर–दष्टि काप्रयोग कर प्रत्याशित और अप्रत्याशित स्त्रोतों से समाचार निकाल कर अपने कार्यालय को बिना समय गँवाये तत्काल उसे प्रेषित करना होता है।

3.5 प्रेस विज्ञप्ति

प्रेस विज्ञप्ति के लिए 'प्रेस कम्यूनिक', 'प्रेस नोट', 'प्रेस रिलीज', 'प्रेस सूचना' आदि शब्दों का भी प्रयोग होता है। कई बार इन्हें एक भी समझ लिया जाता है जबकि इन सब में अन्तर है। इसे समझने के लिए निम्नलिखित आरेख सहायक होगा–

प्रेस विज्ञप्ति के रूप

प्रेस कम्यनिक　　प्रेस नोट　　प्रेस रिलीज　　प्रेस अधिसूचना

(क) प्रेस विज्ञप्ति (Press Communiqe)

सरकार जब किसी निर्णय, प्रस्ताव अथवा आदेश विशेष को व्यापक रूप से प्रचारित या प्रसारित करने के लिए समाचार पत्रों की विज्ञप्ति जारी करती है, उसे प्रेस कम्यूनीक कहा जाता है। इसका प्रयोग सामान्य कार्यों के लिए नहीं होता बल्कि इसे विशेष अवसरों पर जारी किया जाता है।

प्राधिकृत अधिकारी/व्यक्ति/एजेंसी

प्रेस कम्यूनीक जारी करने के लिए राष्ट्रपति, राज्यपाल, विदेश मंत्रालय, प्रेस सूचना ब्यूरो, समाचार सेवा प्रभाग तथा विदेशी दूतावास या राजदूत प्राधिकृत हैं।

जारी करने की स्थितियाँ

(i) दो देशों के राष्ट्रध्यक्षों, प्रधान मंत्रियों, विदेश मंत्रियों की वार्ता तथा लिये गए निर्णय के अवसर पर

(ii) किसी नीति के निर्णय की घोषणा के समय।

(iii) दूसरे देशों के साथ दौत्य, राजनीतिक, कूटनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक संबंधों की घोषणा के समय।

(iv) अन्तरराष्ट्रीय सम्मेलनों की संस्तुतियों की घोषणा के समय।

(v) विशेष राजकीय निर्णयों को जानकारी देने के समय।

प्रेस विज्ञप्ति का ढाँचा

(i) इसमें प्रकाशन संबंधी निर्देश दिया जाता है।

(ii) इसके अंतर्गत विषय, शीर्षक का उल्लेख होता है।

(iii) इसमें रचना रूप का उल्लेख किया जाता है।

(iv) यहाँ पर विषयवस्तु को प्रस्तुत किया जाता है।

(v) इसके अंतर्गत प्रकाशन का आदेश दिया जाता है।

(vi) इसमें जारी करने वाले के हस्ताक्षर व पदनाम होता है।

(vii) इसमें मंत्रालय का नाम, स्थान, तिथि का उल्लेख होता है।

विशेषताएँ

(i) इसे योग्य और अनुभवी व्यक्ति तैयार करता है।

(ii) इसमें प्रेषक/प्रेषिती संबोधन या स्वनिर्देश का अभाव होता है।

(iii) शब्दों का चुनाव अत्यंत सावधानी से किया जाता है।

(iv) यहाँ पर अर्थाभिव्यक्ति सुस्पष्ट होती है तथा अभीप्सित अर्थ को ही प्रकट करती है।

(v) इसे सूचना विभाग समाचार माध्यमों को प्रेषित करता है।

(vi) सूचना अधिकारी मूल विज्ञप्ति के साथ हस्ताक्षरित टिप्पणी भेजता है।

(ख) **प्रेस नोट**

प्रेस नोट सरकारी कार्यालयों, शासन, अधीनस्थ कर्मचारियों तथा अधिकारियों और सामान्य व्यक्तियों का संबंधित व्यक्तियों तक सूचना पहुँचाने के लिए सरकारी गजट या समाचार पत्रों में प्रकाशित किये जाते हैं। इन्हें भी प्रेस विज्ञप्ति की भाँति जारी किया जाता है। इसका उद्देश्य सरकार द्वारा जनसाधारण को किसी प्रकार की सूचना देना, किसी विवादास्पद मामले में सरकार के पक्ष को प्रस्तुत करना अथवा जनता में व्याप्त किसी भ्रम को दूर करना होता है। इसके माध्यम से राष्ट्रपति, उप–राष्ट्रपति, प्रधान मंत्री आदि के यात्रा कार्यक्रम की सूचना दी जाती है। यह प्रेस विज्ञप्ति का ही एक रूप है।

रूपरेखा

(i) सबसे ऊपर प्रकाशन संबंधी निर्देश होता है।

(ii) इसके रचना रूप का उल्लेख किया जाता है।

(iii) रचना रूप के नीचे शीर्षक या विषय दिया जाता है।

(iv) शीर्षक के नीचे विषयवस्तु होता है।

(v) इसके बाद प्रकाशन के लिए आदेश होता है।

(vi) आदेश के बाद प्रेस नोट जारी करने वाले के हस्ताक्षर तथा पद नाम होता है।

(vii) इसके बाद मंत्रालय का नाम, स्थान तथा तिथि दी जाती है।

प्रेस नोटादि जारी करने का अधिकार

प्रेस विज्ञप्ति या प्रेस कम्यूनीक या प्रेस नोट जारी करने का अधिकार कतिपय विशिष्ट अधिकारियों को ही प्राप्त है जो सरकारी कार्यों से संबद्ध होते हैं। दूसरे शब्दों में, केंद्रीय या राज्य के सर्वोच्च अधिकारी ही इसके लिए प्राधिकृत है। निजी संस्थानों के उच्च अधिकारियों यथा प्रबंधक या निर्देशक को इस प्रकार का संवैधानिक अधिकार प्राप्त नहीं है। ये लोग अपनी संस्था के कार्यकलापों से सामान्य जनता को परिचित कराने के लिए प्रेस कांफ्रेंस कर सकते हैं।

(ग) **प्रेस प्रकाशनी (Press Release)**

प्रेस प्रकाशनी को भी कई बार प्रेस विज्ञप्ति कह देते हैं, परन्तु तथ्य यह है कि प्रेस प्रकाशनी पत्रकारिता शैली में लिखित या समाचारत्व युक्त सामग्री होती है। विभिन्न संस्थान पाठकों को सूचना देने के लिए अथवा पाठकों की रुचि के अनुकूल किसी विशेष विषय का तथ्यात्मक विवरण उपलब्ध कराने के लिए प्रेस रिलीज जारी करते हैं। यह संक्षिप्त, सारपूर्ण तथा आधार सामग्री पर आधारित लिखित वक्तव्य होता है।

(घ) **प्रेस अधिसूचना (Press Notification)**

जब सरकार, कोई संस्थान, प्राधिकरण या प्रतिष्ठान विभिन्न स्थानों पर कार्य कर रहे हजारों–लाखों व्यक्तियों तक सूचना पहुँचाने के लिए समाचार माध्यमों, पोस्टरों, सूचना पट्टों, विज्ञापन होर्डिंग का सहारा लेकर सूचना प्रसारित करते हैं तो उसे प्रेस सूचना कहा जाता है। इसे अग्रेषण पत्र के साथ समाचार माध्यमों को प्रेषित किया जाता है तथा निश्चित दिन, तिथि और पष्ठ पर मुद्रित करने का निर्देश भी दिया जाता है।

प्रेस अधिसूचना का ढाँचा

शीर्षक	सूचनार्थ सामग्री	अनुमोदन व हस्ताक्षर	तिथि

इसे चार प्रकार का माना जाता है–

(i) सरकारी कार्यालयों में रिक्तियों के विज्ञापन की सूचना।

(ii) नीलामी तथा निविदा सूचना

(iii) न्यायालय में उपस्थित होने की सूचना

(iv) जेल से भागे अपराधियों या कैदियों तथा अभियुक्तों की गिरफ्तारी की सूचना।

प्रेस रिलीज का कानूनी पक्ष

प्रेस रिलीज जब प्रकाशित होता है तो वह अभिव्यक्ति का मुद्रित रूप बन जाता है और देश के कानून से उसी प्रकार परिचालित होता है जैसे देश के नागरिक। भारत के संविधान के अनुच्छेद 1991 में मुद्रित या लिखित सामग्री की स्वतंत्रता प्रदान की गई है, परन्तु इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि व्यक्ति कुछ भी कह या लिख सकता है। (19) (1) की स्वतंत्रता को 19 (2) में प्रतिबिंबित भी किया गया है। इस प्रकार प्रेस रिलीज जारी करते हुए न्यायालय की अवमानना व मानहानि, संसदीय विशेषाधिकार, राष्ट्रहित और गोपनीयता अधिनियम की रक्षा तथा कापी राइट नियम का ध्यान रखना पड़ता है। इसके ज्ञान के अभाव में प्रेस रिलीज का लेखक तथा उसे जारीकर्ता दोनों संकट में फँस सकते हैं।

3.6 संपादकीय विभाग और संपादन

समाचार पत्र में संपादक की सहायता के लिए जो व्यक्ति उसके सहयोगी के रूप में कार्य करते हैं, उसे संपादक मंडल या संपादकीय विभाग कहा जाता है। यह संपादकीय विभाग समाचार पत्र और पाठकों के मध्य एक सेना के रूप में कार्य करता है। पाठक समाचार पत्र के संपादक के नाम से तो परिचित होते हैं परंतु इस सेना से उनका परिचय नहीं होता। यह सेना है – उप–संपादकों और सहायक संपादकों की। इन्हें संपादकीय विभाग का मेरुदंड भी कहा जाता है। ये लोग अपने–अपने विषय पर लेख लिखते हैं। बाहर से आये लेखों का संपादन करते हैं। समाचारों की काट–छाँट कर उनके शीर्षक बनाते हैं। दूसरी भाषाओं के लेखों का अनुवाद करते हैं। समाचार पत्र को पठनीय बनाने के लिए परिश्रम करते हैं तथा रात भर जाग कर पाठकों के लिए प्रातःकालीन समाचार पत्र तैयार करते हैं। किसी भी दैनिक समाचार पत्र की संरचना में संपादकीय विभाग इस प्रकार होता है – प्रधान संपादक, सहायक संपादक, समाचार संपादक, मुख्य उप संपादक, वरिष्ठ उप संपादक तथा उप–संपादक। मुख्य प्रूफ संशोधक तथा उसके अन्य सहयोगी।

प्रधान संपादक

प्रधान संपादक समाचार पत्र के लिए प्रमुख रूप से उत्तरदायी होता है। समाचार पत्र का प्रारूप, उसका रूप विन्यास उत्कृष्ट हो, उसका मुद्रण आकर्षक और उत्तम हो तथा संपादकीय विभाग में परस्पर तालमेल हो। इसके अतिरिक्त समाचार प्रबंधन द्वारा निर्धारित नीतियों ओर आचार संहिता में बनाये गये कानूनों का समुचित पालन हो और समाचार पत्र अन्य समाचार पत्रों के मुकाबले अग्रणी हो – इन समस्त कार्यों को देखना और करना प्रधान संपादक का काम होता है।

समाचार संपादक

समाचार पत्र के कार्यालय में आने वाले समस्त समाचारों, को देखना समाचार संपादक का काम होता है। यह 'न्यूज डेस्क' का प्रमुख होता है। इसकी सहायता के लिए मुख्य उप–संपादक होते हैं जो सहयोगी भी होते हैं। समाचार संपादक, प्रधान संपादक से निर्देश प्राप्त कर 'न्यूज डेस्क' को सँभालता है तथा देश के कोने–कोने में बैठे हुए संवाददाताओं को दिशा–निर्देश भी देता है। वह अन्य समाचार पत्रों से अपने समाचार पत्र के समाचारों की तुलना भी करके देखता है कि कौन–सा महत्त्वपूर्ण समाचार पत्र में छपने से रह गया है। इस संबंध में यह संबद्ध संवाददाता से भी पूछताछ करता है। इनके अतिरिक्त वह मुख्य उप–संपादक और उप–संपादकों की ड्यूटियाँ भी निश्चित करता है। वह समाचार पष्ठों के गेटअप, समाचारों का चुनाव, उनके शीर्षक, उनके प्रारूप आदि की सुन्दरता को भी देखता है। समाचार पत्र में कई पालियों में काम होता है। प्रत्येक पाली में एक मुख्य उप–संपादक व कई उप–संपादक होते हैं। इन पालियों में समाचार पत्र के अलग–अलग संस्करण प्रकाशित होते हैं। दिन में डाक संस्करण तथा रात को नगर संस्करण तैयार किये जाते हैं। वास्तव में समाचार संपादक, समाचार विभाग का संचालन करता है तथा सभी समाचारों के लिए जिम्मेदार होता है। देश–विदेश तथा प्रदेशों की राजधानियों से संवाददाता समाचारों का संकलन करते हैं। समाचार एजेंसियाँ भी समाचार पत्र को समाचार प्रेषित करती हैं। इन सब से प्राप्त समाचारों का महत्त्व के अनुसार संपादन करने का कार्य समाचार विभाग का होता है।

व्यापार संपादक

समाचार पत्र में व्यापारिक समाचार भी होते हैं। इन्हें प्रकाशित करने का कार्य व्यापार संपादक का है। वित्त, व्यापार, शेयर बाजार, बाजार भाव, धातु बाजार आदि से संबद्ध समाचारों को प्रकाशित करना, उन पर टीका–टिप्पणी करना तथा उस पर अपने विचार व्यक्त करना इसका काम है। यह संपादक व्यापारिक संसार की गतिविधियों की सूचना अपने पाठकों को देता है।

साहित्य संपादक

साहित्य संपादक का स्थान समाचार पत्र में अत्यंत महत्त्वपूर्ण होता है। इसके क्षेत्राधिकार में साहित्यिक और सांस्कृतिक विषयों पर लेख, कहानियाँ, कविताएँ आदि आती हैं। यद्यपि साहित्यिक पष्ठ सप्ताह में एक दिन ही प्रकाशित होता है परंतु फिर भी इस पष्ठ की उपयोगिता के कारण इस का समाचार पत्र में विशिष्ट स्थान होता है।

चित्रों का चुनाव

समाचार पत्र में नियमित रूप से चित्र प्रकाशित होते हैं। इन चित्रों का चुनाव समाचार संपादक, मुख्य उप–संपादक तथा साहित्य संपादक आपसी सहयोगी से करते हैं। इस विषय में प्रधान संपादक से भी विचार–विमर्श करते हैं। यद्यपि चित्रों के लिए समाचार पत्र का अपना छाया विभाग होता है तो भी बहुत से चित्र संवाददाताओं द्वारा प्राइवेट छायाकारों की सहायता से भेजे जाते हैं। इनका चुनाव ये सभी मिलकर करते हैं।

कलाकार

कई समाचार पत्रों में अलग से एक कलाकार भी होता है जा चित्रों, विज्ञापनों, शीर्षकों के टाइपों, उनके स्थान आदि का निर्णय करने में सहयोग देता है। इसका काम चित्रों की काट–छाँट कर ऐसे ब्लाक बनवाना होता है कि घटना बोलती प्रतीत हो। यह कई बार समाचार पत्र की 'डमी' भी बना देता है।

उपर्युक्त के अतिरिक्त समाचार पत्रों में खेलकूद और फिल्म से जुड़े हुए संपादक भी होते हैं। खेलकूद संपादक के पास खेलों की जानकारी होती है। इन्हें चित्र के साथ यह प्रकाशित करता है। फिल्म, टी॰ वी॰ आदि से जुड़ी जानकारी को फिल्म संपादक प्रस्तुत करता है। इनके अतिरिक्त कार्टूनिस्ट भी हास्य से जटिल विषय को कार्टून के रूप में प्रस्तुत करता है।

संपादकीय लेखन

सभी समाचार पत्रों में एक प्रमुख पष्ठ होता है जिसे संपादकीय पष्ठ कहा जाता है। यह पष्ठ पत्र के स्वामियों के संकीर्ण हितों का संवर्द्धन ही नहीं होता, बल्कि संपादक की अवधारणाओं और समाज के हितों का संरक्षण भी होता है।

छोटे समाचार पत्रों या लघु पत्रिकाओं में संपादकीय–लेख प्रायः संपादकों के द्वारा ही लिखे जाते हैं। इसके विपरीत बड़े समाचार पत्रों में संपादकीय लेखन का कार्य सहायक संपादक सँभालता है। संपादकीय विषय को संपादक की सहमति से निश्चित किया जाता है। सहायक संवाहक द्वारा संपादकीय लेख लिखे जाने के बाद संपादक इसे एक बार पढ़ लेता है। संपादक इस लेख के लिए स्वयं जिम्मेवार होता है। जो समाचार पत्र प्रातःकालीन होते हैं, उनमें इस लेख का पर्याप्त महत्त्व होता है जबकि सायं को प्रकाशित होने वाले समाचार पत्रों में इसका महत्त्व अपेक्षाकृत कम होता है। इसका कारण यह है कि प्रातःकालीन समाचार पत्रों के संपादकीय लेख बुद्धिजीवी वर्ग पढ़ता है और इन के लेखों से अपनी धारणाओं और विचारों का विकास करता है। संपादक अपने संपादकीय को लिखने से पूर्व उस विषय का गहन और सूक्ष्म अध्ययन करता है जिसके उसे पुस्तकालय की सहायता लेनी पड़ती है। तथ्यों में किसी प्रकार की कोई त्रुटि न रह जाए – इस बात का उसे विशेष ध्यान रखना पड़ता है।

संपादकीय लिखते हुए संपादक और समाचार पत्र के स्वामियों की नीति और विचारधारा स्पष्ट रूप से झलकनी चाहिए। पाठक को इससे संपादक के दष्टिकोण एवं विचारधारा का पता चलता है। इससे उसकी लेखनी की मौलिकता और प्रखरता भी झलकती है। विषय का उसकी पूरी पष्ठभूमि में विवेचन एवं विश्लेषण करना आवश्यक होता है। इसके लिए अभिव्यक्ति में सबलता होनी चाहिए। विषय और अभिव्यक्ति को पढ़कर ही पाठक उस विषय में अपने विचार निश्चित करता है। जैसा कि ऊपर कहा गया है कि संपादकीय सामान्य जन के लिए कम और बुद्धिजीवी वर्ग के लिए अधिक महत्त्वपूर्ण होते हैं। इसके साथ यह भी कि संपादकीय सामान्य जन के अनुकूल और प्रतिकूल दोनों प्रकार के हो सकते हैं। इसके बावजूद संपादकीय–लेखन में सामान्य जन की रुचि को परिष्कृत करने की भावना सदैव विद्यमान रहती है।

संपादकीय लेखों में कभी तथ्यात्मक विवरण दिया जाता है। ऐसा उस स्थिति में होता है जब किसी घटना के बारे में समाचार की नीति स्पष्ट न हो या विषय अस्पष्ट हो या विषय व्याख्या की अपेक्षा तथ्य प्रस्तुत करने के ही अनुकूल हो। विषय का विश्लेषण करते हुए संपादक स्थिति–विशेष के महत्त्व को प्रस्तुत करता है। कभी–कभार वह महत्त्वहीन सी लगने वाली इधर–उधर बिखरी हुई घटना के सूत्रों को परस्पर जोड़ कर उनके सामूहिक महत्त्व को समझाता है। कभी–कभी संपादक कार्य –कारण के आधार पर भविष्य में होने वाले घटनाक्रम की संभावना या आशा व्यक्त करता है। ऐसी स्थिति में वह एक प्रोफेसर की भाँति भविष्य कथन कर समाज को जागरूक करने का प्रयत्न भी करता है। कई बार संपादक अपने लेखन से किसी स्थिति या घटना–विशेष का विश्लेषण करता है तो कभी कभी शिष्ट हास्य से पाठकों का मनोरंजन भी करता है। भारत में कई ऐसे समाचार पत्र भी प्रकाशित होते हैं जिनमें प्रतिदिन संपादकीय के अंतिम भाग में हास्य और व्यंग्य का पुट रहता है।

कभी ऐसा अवसर भी आ जाता है कि जनता बार–बार आंदोलन करती है परंतु नेता और प्रशासक सोये रहते हैं। वे आवश्यक कार्यवाही नहीं करते। ऐसे में जनता समस्त आंदोलनों के प्रति उदासीन हो जाती है और समय या अवसर आने पर भी उत्तेजित नहीं होती। जब कभी ऐसे अवसर आते हैं तो संपादक अपने लेखन द्वारा समुचित कारवाई की माँग कर सकता है और वह लोगों को नेतत्व प्रदान कर सकता है।

कभी–कभी संपादक जन–कल्याण की भावना से भी कुछ विषयों पर लेख लिखता है जिनसे संपूर्ण समाज को एक नयी दिशा या दष्टि मिलती है। इसके फलस्वरूप वे अनुकूल दिशा की ओर अग्रसर होकर अपना तथा समाज का परोपकार करते हैं। इस प्रकार भ्रष्टाचार–उन्मूलन, विशेष सुधार आदि भी संपादकीय–लेखन में संपादक के लेख का आधार बन जाते हैं।

जहाँ तक संपादकीय लेख के आकार का प्रश्न है, वह विषय पर निर्भर करता है। संपादकीय लेख का कोई निश्चित आकार या स्वरूप नहीं होता। संपादकीय–लेख प्रायः कुछ भागों में या पैरों में विभाजित होता है। पहले पैर में प्रतिपाद्य विषय का संक्षेप में परिचय होता है जबकि दूसरे अनुच्छेद में विषय का विश्लेषण, उसकी व्याख्या तथा मूल्यांकन एवं तर्क आदि प्रस्तुत किये जाते हैं। इसे संपादकीय लेख का प्राण भी कहा जा सकता है। कई बार संपादकीय में तीन अनुच्छेद भी होते हैं। इस खंड को उस स्थिति में रखा जाता है जब संपादक किसी महत्त्वपूर्ण विचार, परामर्श या उत्प्रेरणा को अपने पाठकों तक प्रेषित करना चाहता है।

आकार और स्वरूप के पश्चात् प्रश्न उठता है – संपादकीय लेखन की शैली का। यह संपादक की अपनी लेखन–शैली पर निर्भर है। क्योंकि वह व्यक्तिगत रुचि, प्रकृति और व्यक्तित्व पर निर्भर करती है। अतः संपादकों की लेखन–शैलियाँ विविधतापूर्ण हो सकती हैं और होती भी हैं। इसके लिए कोई निश्चित नियम नहीं है। यद्यपि संपादकीय लेख निर्वैयक्तिक रूप से लिखे जाते हैं तथा इनमें किसी प्रकार का कोई आक्षेप नहीं किया जाता और निश्चित दटिकोण का प्रतिपादन ही किया जाता है। फिर भी कठिन से कठिन विषयों पर भी संपादक को गंभीरता से मनन करते हुए उसे सहज और सरल बनाने का प्रयास करना चाहिए। यह तो सभी जानते हैं कि समाचार पत्र के पाठक सभी वर्गों के लोग होते हैं। इनमें शिक्षित, अल्पशिक्षित तथा साक्षर सभी सम्मिलित होते हैं अतः लेख इस प्रकार का होना चाहिए कि उसे सभी पाठक समझ सकें। सरल, सुबोध ओर स्पष्ट शैली में लिखा हुआ लेख श्रेष्ठ कहा जाता है। किसी बात को तर्कपूर्ण ढंग से जब कहा जाता है या किसी तथ्य को प्रमाणों के आधार पर प्रस्तुत किया जाता है तो उसका प्रभाव काफी पड़ता है। अपने समाचार की नीति और अपनी विचारधारा को स्पष्ट रूप में प्रस्तुत करने के लिए उसे उपयुक्त शब्दों का चुनाव करना चाहिए। यदि संपादक का चिंतन उलझा हुआ और अस्पष्ट है तो वह अपनी बात को ठीक ढंग से पाठकों के समक्ष प्रस्तुत नहीं कर सकेगा। संपादकीय लेखन में सहजता, सरलता, चिंतन की स्पष्टता का होना अत्यंत आवश्यक है।

भारतीय लोकतंत्रीय देश है जिसमें अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता है। इसका तात्पर्य है कि यहाँ प्रेस को स्वतंत्रता प्राप्त है। समाचार पत्रों में पाठक अपने विचार प्रस्तुत करते हैं जिसके कारण सामान्य जन के भावों और विचारों की अपेक्षा नहीं की जा सकती। दूसरे शब्दों में, समाचार पत्र सरकार पर अंकुश का काम भी करते हैं। इस प्रकार की स्थिति में संपादक का दायित्व न केवल सामान्य जन के प्रति ही है बल्कि सरकार के प्रति भी है। वस्तुतः वह इन दोनों के मध्य में एक कड़ी के रूप में होता है। वह सत्य का पक्ष भी लेता है और सामान्य जन का कल्याण भी करता है।

संपादक को विवेकवान और विचारवान तो होना ही चाहिए। इसके अतिरिक्त उसमें संवेदनशीलता भी होनी चाहिए। पाठक जिन बातों को समाज और व्यवस्था में अनुभव करता है या उनके बारे में अपना मत प्रकट करता है, यदि संपादक के विचार भी पाठकों के समान हों और वह अपने संपादकीय लेखों में व्यक्त करे तो पाठक के विचार सार्थक हो जाते हैं, उन्हें वाणी मिल जाती है। पाठक स्वयं को समाचार पत्र और संपादक के साथ जुड़ा हुआ अनुभव करता है। उसे अपनत्व अनुभव होता है।

संपादकीय लिखते समय संपादक या लेखक को कट्टरता, सांप्रदायिकता, उग्रता तथा व्यर्थता से बचना चाहिए। उचित सामग्री तथा तथ्यों के अभाव में किसी प्रकार का निष्कर्ष निकालना खतरे से खाली नहीं होता। जागरूक पाठक ऐसे बचकाने निष्कर्ष निकालने पर संपादक की खिल्ली उड़ाते हैं तथा समाचार पत्र से दूर हो जाते हैं। जब तक संपादक के पास विषय का पूर्ण ज्ञान नहीं है, तथ्यों और प्रमाणों का अभाव है तब तक उसे उस विषय पर लेखनी नहीं चलानी चाहिए।

संपादकीय लेखन करते हुए अंतिम पक्ष उभरता है – भाषा का। संपादकीय लेखन में भाषा न तो अत्यंत साहित्यिक होनी चाहिए कि पाठक समझ ही न सके। न ही इतनी असाहित्यिक ही होनी चाहिए कि वह फूहड़ और लचर लगे। भाषा ऐसी होनी चाहिए कि वह सभी वर्गों के पाठकों को समझ में आ जाये। संपादकीय में सुस्पष्ट चिंतन होना चाहिए तथा विचारों में तारतम्य हो। ऐसे चिंतन के लिए छोटे–छोटे वाक्यों का प्रयोग होना चाहिए। लंबे–लंबे वाक्य दुरूहता उत्पन्न करते हैं और संप्रेषणीयता में बाधा पहुँचाते हैं। इसके विपरीत सहज और सरल भाषा में लिखा गया संपादकीय पाठकों को आकर्षित करता है।

यह बात ठीक है कि संपादकीय लेख औसत पाठक को ध्यान में रखकर नहीं लिखा जाता क्योंकि आम पाठक उसमें रुचि कम लेते

हैं पाठकों की रुचि के अनुसार इस पष्ठ या इस पर प्रकाशित संपादकीय लेख या लेखों का स्थान अंतिम होता है। और इस तथ्य से संपादक भी भली प्रकार से परिचित होते हैं। वे अपने लेखों को जनमत को प्रभावित करने वाले शासकों–प्रशासकों के लिए लिखते हैं। इन लेखों को समाज के महत्त्वपूर्ण व्यक्ति – डॉक्टर, प्रोफेसर, उद्योगपति, वकील आदि पढ़ते हैं जो समाज की गतिविधियों में आगे होते हैं। इस प्रकार के लेख इन लोगों को प्रभावित करते हैं और इनकी विचारधारा का निर्माण करते हैं। संपादक यदि इन लोगों के अतिरिक्त औसत पाठक को ध्यान में रखकर संपादकीय लेखन करते हैं तो और भी अच्छा है। इससे उन्हें विशिष्ट पाठक वर्ग के अतिरिक्त अन्य वर्गों के पाठक भी मिल जाते हैं और उनके संप्रेषण–वत्त का विस्तार होता है।

अंत में हम कह सकते हैं कि संपादक सरल, सुबोध, सहज और स्पष्ट लेखन से व्यापक जनहित का साधन करता है। ये संपादकीय ही किसी समाचार के बिंब का निर्माण करते हैं। सभी समाचार पत्रों में समाचार तो एक जैसे ही होते हैं परंतु संपादकीय–लेखों में विविधता होती है। पाठक संपादकीय विचारों से अपनापन बनाये होता है अतः संपादकीय सरल, सरस, सुबोध और सहज होने चाहिए।

3.7 प्रूफ-पठन और व्यावहारिक प्रूफ संशोधन

उप संपादक द्वारा तैयार की गई 'प्रेस कापी' से संबंधित बातों की चर्चा हम गत अध्याय में विस्तार से कर चुके हैं। यह प्रेस कापी कंपोजिंग विभाग में कंपोजिटर के पास पहुँच चुकी है अतः हम कंपोजिंग विभाग के कार्यकलाप का अवलोकन करते हैं

कंपोजिटर – प्रेस–कापी प्राप्त होते ही कंपोजिटर का कार्य आरंभ होता है। वह कीलाक्षरों को शब्दों और वाक्यों में एकत्रित कर उन्हें छापने के योग्य बनाता है। एक निश्चित नियम के अनुसार टाइपों को विभिन्न 'केसों' में भर दिया जाता है। कोसों में खाने होते हैं और प्रत्येक टाइप का स्थान निश्चित होता है। कंपोजिटर हाथ से टाइपों को निकाल–निकाल कर धातु की बनी एक दस्ती में क्रम से लगाया जाता है। इस दस्ती को 'स्टिक' कहा जाता है। प्रत्येक शब्द के बाद उसमें 'स्पेस' डाली जाती है ताकि शब्द पथक्–पथक् रहें। दस्ती में पंक्ति की लंबाई के अनुसार अक्षर लगाए जाते हैं। जब दस्ती भर जाती है तो इसे सावधानी से उताकर पट्टी पर रख दिया जाता है। इस पट्टी को 'गेली' कहा जाता है। सामग्री (मैटर) कंपोज हो जाने के पश्चात् उस पर स्याही लगाकर प्रूफ–मशीन की सहायता से सादे कागज पर उसका प्रूफ उठाया जाता है और प्रूफ–संशोधक के पास शोधनार्थ भेज दिया जाता है। कंपोजिटर का कार्य यहीं पर ही समाप्त नहीं होता। सामग्री के मुद्रण के बाद टाइप को खोलना तथा उसे पूर्ववत् रूप में वितरण करना भी उसका कार्य है।

प्रूफ शोधन–कंपोज किए गए मैटर (सामग्री) को देखना कि सामग्री शुद्ध है अथवा नहीं और कंपोजिंग करते हुए उसमें कहाँ–कहाँ अशुद्धियाँ रह गई हैं तथा उसमें किस प्रकार की शुद्धि आवश्यक है, इसे प्रूफ संशोधन कहा जाता है।

प्रूफ के मेज पर आते ही प्रूफ–शोधक का कार्य आरंभ होता है। यह कार्य यद्यपि नीरस और शुष्क है, परंतु दायित्वपूर्ण है। समाचार पत्र का कार्य अत्यंत तेजी से चलता है अतः कई बार अनेक अशुद्धियाँ मुद्रित हो ही जाती हैं। इससे कई बार अर्थ का अनर्थ हो जाता है। प्रूफ शोधक लेखक और प्रेस के मध्य एक महत्त्वपूर्ण कड़ी के रूप में कार्य करता है। संपादकीय विभाग में 'प्रेस–कापी' अथवा पांडुलिपि प्राप्त होने से लेकर छपने तक संपूर्ण दायित्व उसका ही होता है। इसलिए उसे इन बातों का ध्यान रखना चाहिए –

प्रूफ शोधक के गुण

(i) प्रूफ–शोधक को प्रूफ की भाषा का अच्छा ज्ञान होना चाहिए।

(ii) प्रूफ–शोधक को व्याकरण, वर्ण–विन्यास तथा विराम चिह्नों की पूरी जानकारी होनी चाहिए।

(iii) उसे कंपोजिंग तथा छपाई की साधारण बातों का ज्ञान होना चाहिए।

(iv) वह जिस लेख के प्रूफ का शोधन करे, उसे समझ लेने को उसमें बौद्धिक क्षमता होनी चाहिए।

(v) प्रूफ–शोधक के पास छिद्रान्वेषिणी शक्ति, दष्टि की तीव्रता, धैर्य, सतर्कता और श्रमशीलता होनी चाहिए।

प्रूफ के प्रकार

प्रूफ के छः प्रकार माने जाते हैं परंतु प्रायः तीन प्रकारों का ही बहुधा प्रयोग होता है–

(i) गेली प्रूफ (Gally proof)

(ii) मेक–अप प्रूफ (Make up proof)

(iii) प्रथम प्रूफ या पेज प्रूफ (Ist proof or page proof)

(iv) दूसरा प्रूफ या मशीन प्रूफ (IInd proof)

(v) अंतिम प्रूफ या तीसरा प्रूफ (IIIrd proof)

(vi) प्रिंट आर्डर प्रूफ (Print order or Final proof)

(i) **गैली प्रूफ** – सामग्री कंपोज होने के बाद कंपोजिटर सबसे पहले जिस प्रूफ को उठाता है उसे गैली प्रूफ कहा जाता है। इसकी लंबाई तथा कालम अलग–अलग होते हैं। कंपोजिटर जितनी सामग्री कंपोज करता है, उसका प्रूफ निकाल कर भेजता रहता है। प्रूफ–संशोधक इसका संशोधन करके वापिस भेजता रहता है। इस प्रूफ–सामग्री को गैलियों में रखा जाता है, अतः इसे गैली–प्रूफ कहते हैं।

(ii) **पष्ठ-प्रूफ** – गैली प्रूफ के संशोधन के बाद सामग्री को पष्ठों के आकार का बना कर बांधा है। इसे पष्ठ प्रूफ या Page Proof कहा जाता है।

(iii) **मशीन प्रूफ** – पष्ठ प्रूफ के बाद आने वाले प्रूफ को तीसरा प्रूफ, क्लीन, प्रूफ आदि नाम दिए गए हैं।

यद्यपि प्रूफ–वाचन का कोई निश्चित नियम नहीं हैं फिर भी गैली प्रूफ को प्रूफ वाचक, पष्ठ–प्रूफ, संपादक तथा मशीन प्रूफ को दोनों ही संशोधित करते हैं।

कापी होल्डर – प्रायः देखा जाता है कि प्रूफ–शोधक मूल प्रति से प्रूफ को मिलाते जाते हैं। जहाँ कहीं समाचार या पाठ में कोई गड़बड़ी दिखाई देती है, वहाँ पर मूल प्रति को देख लेते हैं। इससे समय अधिक लगता है और अशुद्धि रह जाने की संभावना भी बनी रहती है। इसीलए प्रूफ–शोधक के पास एक सहायक रखा जाता है जिसे 'कापी होल्डर' कहते हैं। इसका कार्य है मूल प्रति को ऊँचे स्वर से पढ़ना ताकि प्रूफ–शोधक मिलान करके प्रूफ में सुधार करता जाए। प्रूफ–संशोधन करते हुए कुछ सावधानियाँ रखनी चाहिए–

प्रूफ-संशोधक के लिए सावधानियाँ

(i) प्रूफ स्वच्छ हो। यदि भद्दा या विकृत हो तो उसे पुनः मंगवाना चाहिए।

(ii) साधारणतः प्रूफ को तीन बार देखना चाहिए।

(iii) प्रूफ को पढ़ने से पूर्व तिथि, क्रम, पष्ठ संख्या, शीर्षक आदि देखने चाहिए।

(iv) सांकेतिक चिह्नों को मार्जिन के बाईं ओर बनाना चाहिए। प्रत्येक चिह्न के बाद एक खड़ी रेखा खींच कर अगले संकेत से उसे अलग देना चाहिए। बाईं ओर के मार्जिन के भर जाने के बाद दाईं ओर के मार्जिन का प्रयोग करना चाहिए।

(v) कंपोजिटर प्रायः मार्जिन में बने चिह्नों को ही देखता है अतः सांकेतिक चिह्नों को मार्जिन में ही बनना चाहिए।

(vi) शोधन के लिए पेंसिल का प्रयोग कभी नहीं करना चाहिए। इस कार्य के लिए लाल स्याही का प्रयोग करना चाहिए।

(vii) जिस शब्द, अक्षर या विराम को हटाना या बदलना होता है, उसे काटते हुए एक खड़ी रेखा खींच देनी चाहिए। जहाँ कुछ बढ़ाना हो वहाँ काक पद का चिह्न (H) बना देना चाहिए। नया पैरा आरंभ करने की स्थिति में बड़े कोष्ठ (NP) के चिह्न को बना देना चाहिए।

(viii) पहले कटे हुए वाक्य को यदि रखना अभीष्ट हो तोउ सके नीचे (.....) इस संकेत को बना देना चाहिए।

(ix) अस्पष्ट अक्षरों की इस चिह्न (x) से काट देना चाहिए।

(x) अवतरण, विराम तथा स्वर चिह्नों के संकेत मार्जिन में लिखने चाहिए। आकार का चिह्न (1) यह बनाएं न कि यह (।)। मात्रा के लिए (`), हलंत के लए (्), अवतरण चिह्न के लिए (‘) या (’), विराम के लिए (,)। उकार के लिए (ु) या (ु), अनुस्वार के लिए (ं) बनाना चाहिए।

(xi) पांडुलिपि में किसी प्रकार के परिवर्तन का अधिकार प्रूफ–शोधक को नहीं है। संदेह की स्थिति में उस स्थान पर एक संकेत (–) बना कर मार्जिन में तीन प्रश्न वाचक (???) बना देना चाहिए।

(xii) 'करेक्शन' होने के बाद जो प्रूफ दूसरी बार 'रिविजन' के लिए आता है, उसे भी पुनः देख लेना चाहिए क्योंकि कई बार टाईप भी बदल जाते हैं।

(xiii) प्रथम दो प्रूफों का संशोधन कर लेने के पश्चात् ही तीसरा प्रूफ संपादक के पास भेजना चाहिए।

(xiv) कई बार छपने में मात्राएँ टूट जाती हैं या अक्षर निक जाते हैं, प्रूफ–शोधक को इनका भी ध्यान रखना चाहिए।

(xv) पहला प्रूफ भेजते समय 'संशोधन करो' लिखकर नीचे हस्ताक्षर करने चाहिए। दूसरे 'प्रूफ' में 'संशोधन और मेक–अप' लिखना होता है तथा तीसरे प्रूफ में 'मशीन–प्रूफ' लिखना चाहिए।

(xvi) सामग्री में लेड़ ठीक ढंग से डाली गई है अथवा नहीं, इसे भी प्रूफ–शोधक को देख लेना चाहिए।

भारतीय मानक संस्था ने प्रूफ संशोधनों के चिह्नों को मानकीकृत किया है। इस मानक के अनुसार भारत सरकार द्वारा नियुक्त वैज्ञानिक और तकनीकी शब्दावली आयोग, ने इनका हिंदी में रूपांतरण किया है। अंग्रेजी–हिंदी के चिह्न इस प्रकार हैं–

प्रूफ संशोधन के चिह्न एवं व्याख्या

चिह्न	अर्थ
d	मिटा या हटा दीजिए
#	स्पेस डालें या स्थान करें
	उल्टा लगा है सीधा करें
=	एक पंक्ति में करें
L	दो शब्दों के बीच का स्थान कम करो।
LC	छोटे अक्षरों का प्रयोग करें
NP	नया पैरा बनाएं
stat	कटे अक्षरों की यथावत् छापें
tr	स्थानांतरित करें
x	टूटे अक्षर बदले
	शब्द ऊपर उठाएं
:–	चिह्न दें
	शब्द नीचे खिसकाएं
!	विस्मयादि बोधक लगाएं
?	प्रश्नवाचक लगाएँ
Ital	इटैलिक टाइप लगाएँ
Rom	रोमन टाइप लगाएँ
(	दो पंक्तियों के बीच का स्थान कम करें
(˙)	अनुस्वार
:	विसर्ग
w,f,	विजातीय टाइप बदलें
( )	लघु कोष्ठक लगाएँ
[ ]	बड़ा कोष्ठक लगाएँ
	बायीं ओर खिसकाएँ
	दायीं ओर खिसकाएँ
A	छूटे अक्षर जोड़ें
C	बड़ें अक्षरों का प्रयोग करें
DPr	अधिक काला अक्षर छापें
″ ″	उद्धरण चिह्न दें
-	योजक चिह्न लगाएँ
cm	एक बड़ा डैश लगाएँ
;	अर्द्ध विराम लगाएँ
cn	एक छोटा डेश लगाएँ
&	एंड का चिह्न दें
lek	अनुच्छेद आरंभ करें
d. I	लेड हटाएँ
*	तारांकित करें
? ? ?	क्वैरी उठाएँ
See copy	मूल प्रति देखें

प्रूफ–संशोधक को उपर्युक्त चिह्नों का प्रयोग करते हुए प्रूफ संशोधन करना चाहिए। ये चिह्न अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर अग्रेजी में और भारत में हिंदी के लिए स्वीकृत हैं। हिंदी के लिए कई नये चिह्न भी बने हैं जिनका प्रूफ शोधक को आवश्यकतानुसार प्रयोग करना चाहिए।

3.8 शीर्षक संरचना एवं उसका संपादन

शीर्षक, समाचार का प्रवेश द्वार माना जाता है। यहीं से कुछ आश्वासन अपने हृदय में संजोकर पाठक समाचार के प्रांगण में प्रवेश करता है, अतः शीर्षक का उपयुक्त, उचित और आकर्षक होना आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी है। समाचार–संपादक या उप–संपादक प्रायः उलटे पिरामिड की भाँति पहले पैराग्राफ को देखकर ही समाचार के लिए शीर्षक की संरचना करते हैं। संवाददाता यदि इस प्रकार से समाचार की संरचना करता है तो संपादक उसे तत्काल समाचार पत्र में स्थान दे देता है और समाचार प्रकाशित हो जाता है। इसके विपरीत यदि शीर्षक अत्यंत लंबा और अनुपयुक्त सा हो तो उस शीर्षक की काट–छाँट करके उसे पुनः बनाना पड़ता है। इसी को शीर्षक का संपादन कहते हैं। संपादक इस तथ्य से परिचित होता है कि पाठक लंबे–लंबे शीर्षक पढ़ना पसंद नहीं करते। संवाददाता अपने–अपने क्षेत्रों से जिन समाचारों को प्रेषित करते हैं, उनके शीर्षक प्रायः अत्यधिक लंबे होते हैं। इसका कारण है कि अनेक समाचार पत्रों में काम करने वाले संवाददाता पूर्णतः प्रशिक्षित नहीं होते। वे समाचार को भी लेख की भाँति लेते हैं और उपयुक्त–अनुपयुक्त कोई न कोई शीर्षक बनाकर उस पर बिठा देते हैं। संवाददाता द्वारा बिठाये गए ऐसे शीर्षकों को संपादन समाचार–संपादक या उप–संपादक को करना पड़ता है।

संवाददाता द्वारा प्रेषित किये गये समाचार को हम कच्चा माल कह सकते हैं। उसका अनुपयुक्त और अनाकर्षक शीर्षक भी इसी के अंतर्गत आता है। समाचार संपादक इस कच्चे माल को काटता–छाँटता है और उसे सजा–सँवार कर प्रकाशित होने के योग्य बनाता है। कटे–छँटे ओर सजे–सँवरे शीर्षकों से परिष्कृत होकर समाचार, समाचार–पत्र में स्थान बनाता है।

समाचार पत्र में स्थान पाने से पूर्व समाचार को उप–संपादकों के एक दल के आगे से गुजरना पड़ता है। उनकी पैनी पैंसिलों से बचकर कोई भी समाचार आगे नहीं जा सकता। केवल पैंसिलें ही उनके हाथ में नहीं होती, बल्कि उनके पास पैनी विचार शक्ति भी होती है। इन दोनों का समाना जब समाचार और उसका शीर्षक कर लेता है तो वह प्रकाशन के लिये अग्रसर होता है। शीर्षक को चुनने, काटने, छाँटने, परखने, सजाने और सँवारने की इस प्रक्रिया को ही शीर्षक का संपादन करते हैं।

सनसनीखेज समाचारों के संपादन में और उनके शीर्षक–निर्माण तथा संपादन में भी समाचार पत्र को इस प्रक्रिया में से गुजरना पड़ता है, क्योंकि ऐसे समाचारों में उलटे–सीधे पैरे और शीर्षक होते हैं। ऐसे समाचारों को पठनीय और रोचक बनाने तथा आकर्षक शीर्षक बिठाने के लिए भी संपादक की पैनी दष्टि और पैनी पैंसिल का प्रयोग करना पड़ता है।

3.9 साक्षात्कार

साक्षात्कार को अंगेजी में 'इंटरव्यू' कहते हैं। साक्षात्कार का अभिप्राय है किसी को देखना, उसके दर्शन करना। इसके विपरीत 'इंटरव्यू' का तात्पर्य है किसी व्यक्ति को सामने पाकर उससे बातचीत करना और उसके आंतरिक विचारों को जानना। प्रायः जब उम्मीदवारों को इस कार्य के लिए बुलाया जाता है तो विभिन्न प्रश्न करके उनके संबद्ध विषय पर आंतरिक विचारों को जानने का प्रयत्न किया जाता है। व्यक्ति क्योंकि सामने होता है, अतः इंटरव्यू करने वाले उसके बाहरी व्यक्तित्व, चाल–ढाल, उसके रंग–रूप आदि को भी एक दष्टि में देख लेते हैं। इस प्रकार दोनों भाषाओं में इसका समन्वित अर्थ है – किसी भी प्रत्याशी के बाहरी व्यक्तित्व के दर्शन और उसके आंतरिक विचारों को जानना साक्षात्कार अथवा इंटरव्यू कहलाता है।

इसमें विशेष प्रकार की बातचीत होती है और व्यक्तिगत स्पर्श दिया जाता है जिससे यह समाचार पत्र के लिए अत्यंत महत्त्वपूर्ण मानी जाती है। साक्षात्कार के बाद जिस समाचार को प्रस्तुत किया जाता है, उसमें उथली जानकारी न होकर गहरी जानकारी प्रस्तुत की जाती है। जब कोई पत्रकार किसी व्यक्ति से साक्षात्कार करने का निर्णय करता है तो सर्वप्रथम वह उससे उसकी और अपनी सुविधा के अनुसार समय निश्चित करता है। इसे वह पत्र व्यवहार, दूरभाष या व्यक्तिगत रूप से मिलकर निश्चित कर सकता है। अति विशिष्ट व्यक्ति साक्षात्कार के लिए उसके निजी सचिव या सहायक से मिलकर तिथि, समय और स्थान तय कर लिया जाता है। कई बार ऐसा प्रश्न भी किया जा सकता है कि वह साक्षात्कार किसलिये है या इसका क्या उद्देश्य है। साक्षात्कार का प्रयोजन यदि पहले ही बता दिया जाए तो वह दोनों के लिए सुविधाजनक होता है। ऐसा करने का एक लाभ यह है कि संबद्ध व्यक्ति जानकारी को उपलब्ध करके तैयार रख सकता है और समय आने पर उस पत्रकार को प्रदान कर सकता है। इस प्रकार जो जानकारी समाचार के लिए प्राप्त होगी, वह प्रामाणिक होगी, तथ्यपूर्ण होगी और पाठकों को पसंद आयेगी।

इंटरव्यू के लिए जाते हुए पत्रकार को समय का ध्यान रखना चाहिए। अति विशिष्ट व्यक्ति अत्यंत व्यस्त होते हैं। वे किसी पत्रकार के लिए रुकते नहीं। अतः पत्रकार या संवाददाता को सही समय पर उचित वेशभूषा में उपस्थित हो जाना चाहिए तथा उसका व्यवहार शिष्ट और शालीन होना चाहिए। जिस विशिष्ट या अति विशिष्ट व्यक्ति का साक्षात्कार करना हो, उसके बारे में उसके निकटस्थों

या मित्रों से यथासंभव जानकारी प्राप्त कर लेनी चाहिए। संबद्ध व्यक्ति के नाम का उच्चारण सही ढंग से होना चाहिए। किसी विदेशी व्यक्ति का इंटरव्यू करते हुए उच्चारण को उसी की भाषा के अनुसार कीजिए न कि अंगेजी भाषा के अनुसार। इसका कारण है कि अमेरिकन या अंग्रेज 'सड्डाम हुसैन' उच्चारण करेगा जबकि नाम है 'सद्दाम हुसैन'। गलत नाम उच्चारण से व्यक्ति को बुरा लग सकता है। इसके पश्चात् जिस विषय पर उस व्यक्ति के आप विचार जानना चाहते हैं, अधिकतम जानकारी प्राप्त करने का प्रयास करें। होना तो यह चाहिए कि जो प्रश्न आप उस व्यक्ति से पूछना चाहते हो उसकी एक प्रश्न तालिका आपके पास हो। इसका लाभ यह होगा कि आप अपने प्रश्नों को ठीक ढंग से कर सकेंगे और कोई भी प्रश्न छूट नहीं पायेगा।

पत्रकार को इस कार्य को करते हुए कम से कम बोलना चाहिए। प्रश्नों को इस ढंग से पूछना चाहिए कि यह उनमें रुचि ले और उनका निःसंकोच उत्तर दे। आप अत्यंत चतुरता से प्रश्न पूछें। पूरी कक्षा को संपूर्ण विवरण और घटनाओं के साथ जानने का प्रयत्न करे। इंटरव्यू की समाप्ति से पहले तथ्यों का सत्यापन कर लें ओर अधिक अच्छा होगा।

कुछ बातें, तथ्य या घटनाएँ आपके लिए महत्त्वपूर्ण और समाचार का महत्त्व रखने वाली हो सकती हैं जबकि संबद्ध व्यक्ति के लिए नहीं। जिन्हें वह महत्त्वहीन समझकर आपको बताता है, आप उनमें से समाचार को बड़ी चतुराई से निकाल सकते हैं। पत्रकार को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि साक्षात्कार ठीक ढंग से चले। इंटरव्यू की सफलता–असफलता व्यक्ति पर निर्भर नहीं करती, बल्कि पत्रकार पर आश्रित होती है। पत्रकार समाज के अनेक व्यक्तित्वों को साक्षात्कार करता है अतः उसे साक्षात्कार के ऐसे ढंग को अपनाना चाहिए जो सभी के लिए प्रिय और सहज हो। उसे पता होना चाहिए कि किस व्यक्ति से कितनी और कैसी बात करनी है एवं किस प्रकार बातचीत करनी है। व्यक्ति चाहे कैसे भी क्यों न हों, उनकी प्रकृति, स्वभाव चाहे कैसा भी हो, उनसे संवाद करने का ढंग तो अपनाना ही पड़ता है क्योंकि जिस प्रयोजन को लेकर पत्रकार उसके पास जाता है, उसे सफलतापूर्वक पूरा करके आना चाहिए। यह कहकर आप जिम्मेवारी से बच नहीं सकते कि उससे पूछना और उगलवाना संभव नहीं है। साक्षात्कार में अनेक प्रश्न किये जाते हैं ताकि उस व्यक्ति के हृदय में छुपी हुई बातों को बाहर निकाला जा सके। सामान्य पत्रकार अति विशिष्ट व्यक्ति के सामने अपने प्रश्नों को भूल जाता है जिससे इंटरव्यू का उद्देश्य अधूरा रह जाता है। व्यक्तित्व से अप्रभावित रह कर ही इस कार्य को करना होता है। इसके लिए अभ्यास की आवश्यकता होती है। इस अभ्यास को नगर के अधिकारियों, छोटे नेताओं, विषय के विद्वानों से आरंभ किया जा सकता है। धीरे–धीरे इस कला का अभ्यास हो जाता है। समय आने पर आप दिलीप कुमार या अटल बिहारी वाजपेयी का इंटरव्यू भी सफलतापूर्वक कर सकते हैं।

इंटरव्यू के लिए जिन लोगों के पास पत्रकार जाते हैं वे प्रायः तीन प्रकार के हो सकते हैं। बहुत बोलने वाले, कम बोलने वाले और मौन रहने वाले। बहुत बोलने वालों से मतलब की बात निकाल लेना पत्रकार की बुद्धि व सूझबूझ पर निर्भर करता है। दूसरे प्रकार के लोगों से चतुराई और व्यवहार कुशलता से काम निकालना होता है। मौन रहने वाले लोगों के स्वभाव का अनुमान कर, उनके अहं का अध्ययन कर या उनके प्रति सहानुभूति दिखकर या उनकी भावना को उत्तेजित करके काम पूरा किया जाता है। ये सभी बातें मनोविज्ञान के अध्ययन और अभ्यास से जुड़ती हैं।

इंटरव्यू में एक प्रकार का वार्तालाप होता है। यदि बातचीत की रिपोर्ट संबंद्ध व्यक्ति को दिखाकर या टेप रिकार्ड पर सुनाकर उसकी स्वीकृति ले ली जाये तो और भी अच्छा होता है। इसके अतिरिक्त साक्षात्कार करने वाले पत्रकार में लिखने की शक्ति तो होनी ही चाहिए। बिना भाषा के किसी भी बात को सही ढंग से प्रस्तुत करना कठिन है। शब्दों का उचित प्रयोग, भाषा का सहज और सरल रूप तथा अभिव्यक्ति की क्षमता पाठक को आकर्षित ही नहीं करती अपितु उसे प्रभावित भी करती है। इसके अतिरिक्त इंटरव्यू करने वाले संवाददाता या पत्रकार में व्यवहार कुशलता, विवेक, तीक्ष्ण बुद्धि, संयम तथा धैर्य भी होना चाहिए। यदि उसका ज्ञान अत्यंत व्यापक है तो वह अतिविशिष्ट व्यक्ति से प्रश्नों को पूछ कर पाठकों को उसके आंतरिक विचारों या 'इंटरव्यू' से अवगत करा सकेगा।

3.10 विज्ञापन लेखन

विज्ञापन शब्द वि+ज्ञापन के योग से बना है। 'वि' का अर्थ है – विशेष और 'ज्ञापन' से तात्पर्य है – जानकारी। इस प्रकार विज्ञापन विज्ञापन का अर्थ है – किसी व्यक्ति या वस्तु के बारे में विशेष जानकारी। अंग्रेजी में इसके लिए Advertisement शब्द है। यह शब्द लैटिन भाषा के Adverter शब्द से बना है जिसका अभिप्राय है – किसी की ओर मोड़ना। विज्ञापन के द्वारा पाठक, श्रोता या दर्शक को किसी वस्तु के बारे में विशेष जानकारी दी जाती है जिससे उसका मन, विचार या सेवा की ओर मुड़ते हैं। उपभोक्ता को अपने उत्पाद की ओर उन्मुख करना ही विज्ञापनदाता का मूल प्रयोजन होता है। इससे विक्रय बढ़ाने में सहायता मिलती है, ख्याति का निर्माण होता है तथा साख बढ़ती है।

इन उद्देश्यों की पूर्ति तभी हो सकती है जब विज्ञापन का लेखन इस ढंग से किया जाए कि यह उपभोक्ता को प्रभावित ही नहीं करे अपितु उसे वस्तु या सेवा को खरीदने के लिए अनुप्रेरित भी करे। विज्ञापन लेखक को समाचार पत्र, रेडियो, टेलीविजन आदि के लिए विज्ञापनों का लेखन करना पड़ता है और इन विधाओं की अलग–अलग माँग होती है जिसकी पूर्ति उसे करनी होती है। यहाँ पर हम उन बिंदुओं की चर्चा करेंगे जो विज्ञापन लेखक के लिए आवश्यक हैं।

1. **समाचार पत्र के लिए विज्ञापन** – समाचार पत्र के लिए लिखे जाने वाले विज्ञापनों में ध्यानाकर्षण की क्षमता, गतिशीलता, तथ्यों की तर्कपूर्ण प्रस्तुति, अभिनव साज–सज्जा, विज्ञापित वस्तु की प्रमुख विशेषताओं पर बल, स्मति को प्रभावित करने और उसमें बने रहने की क्षमता, लिखित शब्द, चित्र, ट्रेडमार्क और शीर्षक आदि का समन्वय आदि विशेषताएँ होनी चाहिएं।

2. **रेडियो विज्ञापन** – रेडियो विज्ञापन की वस्तु के विक्रय में सहायता पहुँचाता है। रेडियो कार्यक्रम को सुनते हुए विज्ञापन द्वारा श्रोताओं तक उत्पादक का संदेश पहुँचाया जाता है जिसका सकारात्मक परिणाम होता है। रेडियो विज्ञापन का समय के साथ संबंध है। अतः इसे ध्यान में रखकर विज्ञापन का लेखन किया जाता है।

श्रोताओं की रुचि का ध्यान, वस्तु के बारे में पूर्ण जानकारी, श्रोताओं की भागीदारी, वस्तु को खरीदने की प्रेरणा, दिशा–दर्शन आदि गुण रेडियो विज्ञापन में होने चाहिए।

3. **टेलीविजन विज्ञापन** – श्रव्य–दश्य गुणों से समन्वित होने के कारण टेलीविजन विज्ञापनों का आज महत्त्वपूर्ण स्थान है और दिन प्रतिदिन इनका प्रतिशत बढ़ता जा रहा है। आज प्रत्येक वस्तु और सेवा का विज्ञापन इसी के माध्यम से किया जाता है। श्रव्य–दश्य गुणों के साथ गतिशील फोटोग्राफी के कारण इसकी प्रभावोत्पादकता सर्वाधिक है। इन गुणों के कारण इसका प्रभाव मानस पट पर दीर्घ काल तक रहता है। अन्य माध्यमों में प्रस्तुत किये जाने वाले विज्ञापनों की अपेक्षा टेलीविजन के विज्ञापन बच्चों और स्त्रियों को अधिक प्रभावित करते हैं। ये कभी सीधी उद्घोषणा, कभी नाट्यकृत, कभी प्रदर्शन, कभी एनीमेटड और कभी संगीतात्मक रूप में प्रस्तुत किये जाते हैं।

विज्ञापन-प्रति

विज्ञापन की सफलता की पष्ठभूमि में कॉपी अर्थात् लेखन की प्रमुख भूमिका होती है। टेलीविजन के लिए कॉपी में शब्द तथा चित्र दोनों महत्त्वपूर्ण होते हैं। इसके लिए लेखक को दो बातों का ध्यान रखना चाहिए –

(i) उत्पाद तथा उपभोक्ता के बारे में ज्ञान तथा

(ii) उसके प्रस्तुतीकरण तथा तकनीक का पूरा ज्ञान।

गहन अध्ययन तथा शब्द भंडार भी लेखक की अतिरिक्त सहायता करते हैं। मनोविज्ञान का ज्ञान, विज्ञान की समझ भी लेखक की लेखन क्षमता को बढ़ा देते हैं। इन सभी के संयोग से उपभोक्ता की आवश्यकता को उभार कर उसे वस्तु खरीदने के लिए अनुप्रेरित किया जा सकता है।

विज्ञापन प्रक्रिया

विज्ञापन की एक विशेष प्रक्रिया है जिसका आरंभ निर्माता से होता है। निर्माता सर्वप्रथम विज्ञापन एजेंसी से संपर्क स्थापित करता है। वह कई बार अनेक एजेंसियों से संपर्क स्थापित कर विचार–विमर्श करता है और जिससे प्रभावित होता है, उसे अपने उत्पाद के लिए विज्ञापन बनाने का कार्य सौंप देता है। निर्माता की सहमति हाथ में आते ही एजेंसी का कार्य आरंभ हो जाता है। इसे ग्राहक सेवा कहा जाता है। विज्ञापन एजेंसी के कई विभाग होते हैं। पहला विभाग शोध से जुड़ा हुआ है जो उत्पाद विशेष से संबंधित बाज़ार, उसकी स्थिति तथा बाज़ार पर उसके प्रतिपूरक उत्पाद की स्थिति, उपभोक्ता की स्थिति का पता लगाता है ताकि उत्पादों की बिक्री के संबंध में अल्पकालीन या दीर्घकालीन कार्यक्रम और लक्ष्य निर्धारित करने में सुविधा हो। सर्वेक्षण से विज्ञापन व्यय आदि के बारे में निर्माता को परामर्श भी दिया जाता है।

दूसरे भाग में सजन आता है जिसे 'क्रिएटिव' कहा जाता है। इसके अधीन कापी लेखक और कला–निर्देशक आते हैं। विज्ञापन की माँग के अनुसार वस्तु को नये ढंग में मोहक और आकर्षक शब्दों में बाँधने का कार्य प्रति लेखक या कापी राइटर का होता है। उत्तम तकनीक से विज्ञापन को सजाने–सँवारने का काम कला विभाग करता है। कला विभाग के दो अंग होते हैं – मैकेनिकल और विजुअल किसी मीडिया से निकालने का कार्य मैकेनिकल का और दश्यकरण का भार विजुअल विभग को करना होता है।

एजेंसी का प्रोडक्शन विभाग विज्ञापन को आकार देता है। इसके बाद विज्ञापन को मीडिया विभाग में प्रेषित कर दिया जाता है। वहाँ पर प्लानिंग विभाग विज्ञापन के मीडिया को निर्धारित करता है और एडजीक्यूटिव विभाग उसका क्लास–निर्धारित करता है। लेखा विभाग इस प्रक्रिया में आने वाली लागत और खर्चों का लेखा–जोखा रखता है।

विज्ञापन तैयार करते हुए विज्ञापन संस्थान को इस बात का ध्यान रखना होता है कि इसमें समाज के किसी वर्ग, धर्म या संप्रदाय पर किसी प्रकार की कोई टिप्पणी न हो और न ही ऐसी भाषा का प्रयोग हो जिससे विद्वेष या घणा फैले। प्रत्येक विज्ञापन में संयत भाषा, संयत चित्रावली और संयत विन्यास के मार्ग का चुनाव करना आवश्यक होता है। ऐसा विज्ञापन उपभोक्ता की रुचियों को जाग्रत कर, उत्पाद के प्रति उसमें आकर्षण पैदा करता है और उपभोक्ता में उसे खरीदने की इच्छा उत्पन्न करता है। विज्ञापन संस्थान की सफलता विज्ञापन की मंतव्य सिद्धि में होती है।

विज्ञापन आलेखन

विज्ञापन–शीर्षक–विज्ञापन का शीर्षक सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण होता है कापी राइटर को विज्ञापन का प्रारूप तैयार करते हुए सर्वप्रथम यह बात ध्यान में रखनी होती है कि वह विज्ञापन के लिए जिस शीर्षक की रचना करे वह उपभोक्ता का ध्यान आकर्षित करे। डॉ॰ विजयकुल श्रेष्ठ के शब्दों में शोषक पूरे विज्ञापन का प्राणतत्त्व और तीन चौथाई प्रारूप की पूर्णता का प्रतीक होता है। शीर्षक विज्ञापन की केंद्रीय स्थिति में पूरे विज्ञापन की कथावस्तु का इस प्रकार निर्देश करता है कि वह पाठक, श्रोता या दर्शक का ध्यान आकर्षित करता है। विज्ञापन के पूरे कथ्य की समग्र व्यंजना शीर्षक में ही निहित होती है। शीर्षक लेखन में कुछ स्थितियाँ इस प्रकार प्रयुक्त होती हैं –

1. ध्यानाकर्षण – जब परिवार की सेहत का मामला हो तो मैं कभी समझौता नहीं करती।
2. स्मरण तत्त्व – विज्ञापन को स्मरण शक्ति को प्रभावित करना चाहिए –
   (क) आयोडेक्स मलिए, काम पे चलिए।
   (ख) लाइफबॉय है जहाँ, तन्दुरुस्ती है वहाँ।
3. विश्वास – ये हाथ जीवन बीमा के हैं।
   ये सुरक्षा के प्रतीक हैं।
4. सुझाव – ये बेचारा काम का मारा,
   इन्हें चाहिए हमदर्द का सिंकारा।
5. कौतूहल – यह तो मम्मी का तीस साल पुराना राज है।

विज्ञापन के उपशीर्षक – उपशीर्षक वस्तुतः प्रमुख या मूल शीर्षक के ऊपर किसी न किसी शीर्षक संदर्भ को लिए होता है।

विज्ञापन का विस्तार – कापी राइटर विज्ञापन में शीर्षक, उपशीर्षक के चुनाव के साथ विषयवस्तु का विस्तार से वर्णन या स्पष्टीकरण करता है। इसे शीर्षक और उपशीर्षक की सांकेतिकता का विस्तार और मूल कथ्य भी कहते हैं।

विज्ञापन का उपसंहार – उपसंहार में विज्ञापन – लेखक दर्शक/पाठक/श्रोता को उत्पाद को खरीदने की प्रेरणा देता है। उदाहरण देखें –

तुरन्त आराम पाइये – उपशीर्षक

100 नंबर घुमाइये – शीर्षक

जितनी जल्दी आप पुलिस को सूचित करेंगे उतनी ही जल्दी आपको सहायता मिलेगी – विस्तार

याद रखिए – अपनी तथा औरों की पूरी सुरक्षा कीजिए हरियाणा पुलिस – उपसंहार

दश्य प्रत्यक्षीकरण के क्षेत्र में कापी राइटर की भूमिका समाप्त होती है लेकिन वहाँ पर दश्य–निर्माता (विजुअलाजर) तथा विन्यासकार (ले–आउट कलाकार) की भूमिका का परिचय प्राप्त होता है। इसमें प्रथम स्तर पर निर्माता को विज्ञापक और उत्पाद के अनुरूप कल्पना करनी आवश्यक होती है। दश्य कल्पना पूर्ण होने पर विन्यासकार (Layout-Man) को उचित रंग और रंग–प्रभावों द्वारा संदेश और विषयवस्तु के अनुरूप रंग कल्पना का प्रयोग करना होता है। इसके लिए आवश्यक है कि दश्य निर्माता उपभोक्ता की इच्छा, अपेक्षा तथा खरीददारी की प्रेरणा का ध्यान रखे और कला–विन्यास के क्षेत्र में समुचित चित्र, माडल तथा विज्ञापन के लिए प्रयुक्त मुद्रण कला का उचित प्रयोग करे। ये सब ऐसे हों कि उपभोक्ता की स्मति में बस जाएँ।

विज्ञापन-लेखक या कापी राइट की विशेषताएँ

विज्ञापन–लेखक को विज्ञापन का लेखन करते हुए निम्नलिखित अनिवार्य बातों का ध्यान रखना चाहिए तभी उसका विज्ञापन आकर्षक, प्रभावोत्पादक तथा उपभोक्ता को वस्तु खरीदने की प्रेरणा देने वाला बन सकेगा –

(i) विज्ञापन से यह सूचना उपभोक्ता को मिल सके कि उत्पाद कहाँ मिलेगा।
(ii) विज्ञापन उसे आश्वासन दे कि उत्पाद उसके लिए लाभकारी होगा।
(iii) विज्ञापन उपभोक्ता को उसकी रुचियों और विचारों के अनुरूप लगे।
(iv) उत्पाद खरीद करने की इच्छा जगाए।
(v) विज्ञापन सहज और बोधगम्य हो।
(vi) विज्ञापन का प्रत्येक वाक्य और शब्द उपभोक्ता की रुचि के अनुकूल हो।
(vii) विज्ञापन की भाषा परिवेश से भिन्न न हो।
(viii) विज्ञापन का मूल कथ्य या वस्तु संतुष्टि की गारंटी देता हो।
(ix) विज्ञापन सांप्रदायिक सौमनस्य पर स्वाभाविक प्रभाव पैदा करे।
(x) भाषा, शब्द और वाक्यांश चित्रात्मक विन्यास में टाइपोग्राफिक आकार पाकर विज्ञापन को आकर्षक और लुभावना बनाएँ।

वस्तुतः विज्ञापन एक सर्जनात्मक व्यवसाय है जिसमें विज्ञापन–लेखक अपनी कल्पना को उत्पादक के लिए आलेखबद्ध कर दश्य का निर्माण करता है और रंग योजना के साथ उत्पाद संबंधी नारे या संदेश का सजन करता है।

अध्याय-4

मीडिया लेखन

4.1 जनसंचार : प्रौद्योगिकी एवं चुनौतियाँ

'जनसंचार' का अर्थ है – एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक संदेश या समाचार प्रेषित करना। वर्तमान समय में सूचना के आदान–प्रदान के आधार पर इसे सूचना–प्रौद्योगिकी भी नाम दिया गया है। सूचना प्रौद्योगिकी आज विश्व में एक विशाल शक्ति के रूप में उभर कर आई है। सूचना, युग और प्रौद्योगिकी का प्रतिफलन ही यह विशाल शक्ति है। इससे भविष्य में विकास के नए अवसर, नई चुनौतियाँ और प्रतिस्पर्धाएँ पैदा होंगी। इससे सूचनाओं को एकत्र करने और उनको प्रयोग में लाने में सहायता मिलेगी। मानव सभ्यता के इतिहास में विज्ञान के किसी भी शोध कार्य ने मानव विकास में इतना व्यापक प्रभाव नहीं डाला जितना सूचना प्रौद्योगिकी ने। निस्संदेह यह प्रौद्योगिकी इस शताब्दी की सबसे बड़ी उपलब्धि है और नई सहस्राब्दी के आने वाले दिनों इसकी भूमिका में अधिकाधिक मोड़ आएँगे। इस प्रौद्योगिकी से संचार व्यवस्था, व्यापार, उत्पादन, संवाएँ, संस्कृति, मनोरंजन, शिक्षा, अनुसंधान, राष्ट्रीय रक्षा और भूमंडलीय सुरक्षा आदि मानव जीवन के प्रत्येक पक्ष में परिवर्तन आ रहा है। सूचना प्रौद्योगिकी पुराने अवरोधों को तोड़ रही है और भूमंडल में नए अंतःसंबंधों को जोड़ रही है। साथ ही साथ विभिन्न राष्ट्रों, समुदायों तथा व्यक्तियों की प्रगति की मुख्य निर्धारक बन रही है। यह उल्लेखनीय है कि सूचना प्रौद्योगिकी का प्रयोग पहले सरकारी क्षेत्र में विशेषकर सैन्य क्षेत्र में अधिक होता था लेकिन आज सिविल और व्यापार क्षेत्र में भी इसका पदार्पण हुआ है। वाणिज्यिक माँग के कारण इसमें तीव्र गति से परितर्वन हो रहा है। वस्तुतः विश्व में कंप्यूटरीकरण के कारण साफ्टवेयर में वद्धि हुई है, इण्टरनेट का विकास हुआ कि 21 वीं शताब्दी में इसके विकास की संभावनाओं में व्यापकतर वद्धि होती जाएगी।

सूचना प्रौद्योगिकी से अभिप्रायः क्या है ? इस संबंध में अनेक परिभाषाएँ दी जा रही हैं। किन्तु आज के संदर्भ में सूचना प्रौद्योगिकी कंप्यूटर, संचार और इलेक्ट्रोनिकी (Computer Communication and electronics) का वह समन्वित रूप है जिसमें सूचना प्रणाली के विशिष्ट आयामों और उसकी प्रासंगिकता की खोज की जाती है। इसके व्यापक क्षेत्र में सूचना उत्पादन, विश्लेषण, भंडारण, संचरण आदि कई प्रकार्य हैं जिसके महत्त्वपूर्ण अंग हैं सूक्ष्म संसाधक, (Micro Processor), डेटा भंडारण तंत्र (Data Transmission Elements) हैं।

आज एशिया के प्रमुख औद्योगिक देशों में, विशेषकर भारत में तकनीकी रूप से कुशल मानव शक्ति प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है और भूमंडलीय सूचना प्रौद्योगिकी के विकास में कुशल मानव शक्ति का विशेष योगदान रहता है। कंप्यूटर, संचार और नियंत्रण से देश की अर्थव्यवस्था मजबूत हो सकती है और समूचे विकास कार्य को तीव्र गति मिल सकती है। इसलिए मात्र एक दशाब्दी में कंप्यूटर के क्षेत्र में जो संवर्धन हुआ है वह कदाचित पिछली पाँच दशाब्दियों से अधिक है। सूचना प्रौद्योगिकी भारत में तीव्र गति से विकसित होने वाला वह औद्योगिक रूप है जिसका प्रभाव गत कई वर्षों में प्रायः सभी क्षेत्रों में पड़ा है। इंटरनेट और वर्ल्ड वाइड वेब (w.w.w.) का अत्यधिक मात्रा में संवर्धन हो रहा है, उससे भारतीय जीवन और परस्पर संवादपरक व्यवहार में धीरे–धीरे परिवर्तन आ रहा है। इससे वर्तमान पद्धति में कुछ–न–कुछ मूलभूत परिवर्तन होने की संभावना दिखाई देती है। इस प्रकार सन् 1946 में जिस कंप्यूटर का जन्म हुआ और वह भी गणनात्मक कार्यों के लिए, आज उसी कंप्यूटर का कार्यक्षेत्र इतना व्यापक हो चुका है कि जीवन का कोई भी क्षेत्र इससे अछूता नहीं रहा।

परिवर्तनशील विश्व में भारत जैसा विकासशील देश सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में महाशक्ति के रूप में उभर रहा है। अतः सूचना प्रौद्योगिकी और सॉफ्टवेयर विकास पर मई 1998 में एक विशेष सूचना प्रौद्योगिकी कार्यदल का गठन किया। यह कार्यदल प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में होने वाली नवीनतम खोजों के साथ केन्द्रीय और राज्य स्तर पर कदम से कदम मिलाकर कार्य करेगा ताकि प्रौद्योगिकी संवर्धन में अगले दस वर्षों में होने वाले विकासों के संबंध में भारत भी अन्य विकसत देशों के समकक्ष हो जाए। सरकार ने सूचना राजमार्ग को अधिक उदार रूप देते हुए इंटरनेट का निजीकरण किया है और अंतर्राष्ट्रीय प्रवेश मार्ग पर उसका एकाधिकार तोड़ दिया है। अभी हाल ही में भारतीय भूमि पर विश्वस्तर पर सूचना प्रौद्योगिकी उद्यम के वातावरण का निर्माण करने के लिए भारत सरकार ने मुख्य रूप से दो प्रकार की पहल की है। पहली, केन्द्र सरकार में सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय की स्थापना और दूसरा, सॉफ्टवेयर और सूचना प्रौद्योगिकी उद्योग के लिए 100 करोड़ के राष्ट्रीय उद्यम निधि की व्यवस्था। यह अपेक्षा की जाती है कि भारत सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में महाशक्ति के रूप में उभरे। इसके लिए जरूरी है इस कार्य के साथ–साथ जन–सामान्य को सूचना प्रौद्योगिकी की अधिक–से–अधिक और तीव्र गति से जानकारी प्राप्त हों। सूचना प्रौद्योगिकी साक्षरता का प्रसार किया जाए और सरकार का अपना नेटवर्क स्थापित किया जाए। आर्थिक विकास के लिए इस प्रौद्योगिकी को आधार बनाए जाए और गाँव–गाँव

में इस प्रौद्योगिकी का प्रयोग किया जाए। सूचना प्रौद्योगिकी के दैनंदिन प्रयोग के लिए नागरिकों को प्रशिक्षण दिया जाए, जैसे दूर बैंकिंग, दूर–दस्तावेजों की स्थानांतरण और इलेक्ट्रानिक वाणिज्य। इसीलिए इस प्रौद्योगिकी के स्वतंत्र–व्यापार क्षेत्र, सॉफ्टवेयर प्रौद्योगिकी, पार्क योजना, सॉफ्टवेयर पर शून्य आयात शुल्क और सॉफ्टवेयर निर्यात आदि लाभों से सौ प्रतिशत शुल्क छूट दी गई है। डेटा संचार का निर्माण तीव्रगति से हो रहा है और आधारभूत सुविधाओं की व्यवस्था भी हो रही है। साथ ही इसे दफ्तरशाही से अधिक–से–अधिक मुक्त रखने के प्रयास हो रहे हैं। इस प्रकार भारत में सूचना प्रौद्योगिकी उद्योग का पुरजोर स्वागत हुआ है। भारतीय सॉफ्टवेयर निर्यात उद्योग के माध्यम से जो प्रयास किये जा रहे हैं और जो वातावरण बनाया जा रहा है, उससे भारत चुनौतियों का मुकाबला करने में समर्थ होगा। विश्व के सूचना प्रौद्योगिकी मानचित्र पर भारतीय प्रौद्योगिकी को बढ़ावा मिलेगा। इससे देश की अर्थ–व्यवस्था में सुधार होगा और विस्तार भी होगा। निस्संदेह 21वीं सदी के प्रथम दशक में ही भारत विजय पताका फहराने में सफल होगा।

सूचना प्रौद्योगिकी : नई क्रांति का उद्भव

सूचना और संचार के क्षेत्र में भारत में जो भी कार्य हुआ है वह अन्य प्रमुख एशियाई देशों की अपेक्षा अधिक आधुनिक है। इस क्रांति के दूरसंचार, संचार–माध्यम, कंप्यूटर, विषयक्षेत्र आदि प्रमुख क्षेत्रों का विकास 20वीं सदी के अंतिम दंशक में तीव्र गति से हुआ है। इन सब में अत्यंत महत्त्वपूर्ण उपलब्धि इंटरनेट का प्रवेश है। यह एक ऐसी प्रौद्योगिकी है जिसमें विश्वव्यापी नेटवर्क में सैंकड़ों कंप्यूटरों को एक कंप्यूटर के साथ जोड़ दिया गया है और विश्व अति लघु बन गया है। 1990 के दशक से भारत और संचार क्षेत्र में क्रांति जो आई है, उसमें सूचना के मुक्त प्रवाह के और ज्ञान क्षेत्र में भाग लेने के परिणामस्वरूप सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक क्षेत्रों में गुणात्मक परिवर्तन आया है।

नवीनतम सूचना और संचार प्रौद्योगिकियों से संसाधनों का नेटवर्क सामाजिक जानकारी और बुद्धि के सभी प्राप्य रूपों की वद्धि के लिए असीम सुअवसर पैदा हुए हैं। समद्धि और वित्तीय विनिमय के लिए तथा रोजगार उत्पन्न करने के लिए सूचना और संचार प्रौद्योगिकियों में पूरी क्षमता है। इससे न केवल जन समाज को प्रेरणा मिली है वरन् व्यापारियों, उद्योगपतियों, अर्थशास्त्रियों, अधिकारी वर्ग और यहाँ तक कि राजनीतिज्ञों का भी ध्यान आकर्षित हुआ है। ई–कॉमर्स (इलैक्ट्रिानिक वाणिज्य), ई गवर्नेस (ऑन लाइन सरकारी प्रचालन), ई–एजूकेशन (ऑन लाईन एजुकेशन एंड लर्निंग), ई–मेल (कंप्यूटर द्वारा डाक प्रक्रिया), ई–कम्युनिटीज (विकास और मानव अंतःवैयक्तिक संबंध), डाटा प्रबंधन, सूचना पुनः प्राप्ति आदि के माध्यम से इसने व्यापार क्षेत्र में भी बहुत बड़ा स्थान बना लिया है। सूचना प्रौद्योगिकी के विकास में भारत का जो योगदान है उससे हमारे मूल्यों, जीवन–स्तर, विचारों और दष्टिकोण में मूलभूत परिवर्तन होने की पूरी–पूरी संभावना है। इससे विकसित अर्थव्यवस्था को उच्च स्तर प्राप्त करने का मार्ग मिल रहा है। आज कुशल मानव शक्ति द्वारा संचालित हमारे सॉफ्टवेयर, सूचना प्रौद्योगिकी उद्योग राष्ट्रीय कार्यसूची में सबसे ऊपर हैं, क्योंकि सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में भी खर्च होगा वह उपयोगी होगा जिससे गुणवत्ता में वद्धि होगी और तुरंत परिणाम मिल सकेंगे। इसके अतिरिक्त सॉफ्टवेयर विकास के साथ–साथ देश के आर्थिक विकास में नैरंतर्य बना रहेगा और आधुनिकीकरण की प्रक्रिया चलती रहेगी। सूचना प्रौद्योगिकी से जो प्रगति होगी उसके संचित प्रभाव से भारत की शक्ति में बढ़ोत्तरी होगी। न केवल आर्थिक क्षेत्र में विकास होगा बल्कि सैनिक क्षेत्र और बाह्य संबंधों के क्षेत्र में भी आत्मविश्वास पैदा होगा। भारत के प्रधानमंत्री अटलबिहारी वाजपेयी के शब्दों में सूचना प्रौद्योगिकी वास्तव में भारत का भविष्य है।

पहले हमारे आंकड़े और सूचनाएँ कागजों में या अन्य साधनों के द्वारा सुरक्षित रहती थीं आज भी हैं। इससे स्थान और पुनः उत्पादकता की समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। साइबर मीडिया के आने से अब इन समस्याओं का समाधान हो गया है। इससे जगह और समय की सीमाएँ भी समाप्त हो गई हैं।

सूचना प्रौद्योगिकी : विश्वजनित संदर्भ में

वर्ष 1996-97 के आंकड़ों के अनुसार समूचे विश्व में सूचना प्रौद्योगिकी पर 1 लाख 30 हजार करोड़ का कुल खर्च हुआ। उसमें से 43 हजार करोड़ डालर मात्र सॉफ्टवेयर और सेवाओं पर खर्च हुआ जो सूचना प्रोद्योगिकी पर हुआ समूचे खर्च का 32% है। यह अनुमान है कि सन् 2008 तक समूचे विश्व में सूचना प्रौद्योगिकी उद्योग लगभग 2 लाख करोड़ डालर होगा। इसमें भारतीय सूचना प्रौद्योगिकी उद्योग, जिसके अंतर्गत सॉफ्टवेयर और अन्य सेवाएँ सम्मिलित हैं, का लक्ष्य उसी अवधि में पाँच हजार करोड़ डालर वार्षिक निर्यात का होगा। समूचे विश्व में टेलीफोन आधारित सेवा उद्योग का अनुमान बीस हजार करोड़ डालर है और इसमें 23% प्रतिवर्ष की दर से वद्धि हो रही है जबकि अन्य सूचना प्रौद्योगिकी से युक्त सेवाएँ 7 हजार पाँच सौ करोड़ डालर के उद्योग के रूप में उभरी हैं। इसके वार्षिक विकास की दर लगभग 20% हैं। उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार अमरीका सबसे बड़ा बाजार है। उसके बाद यूरोप और जापान का स्थान आता है। भारत पहले ही इस दौड़ में शामिल हो चुका है, और उसने सॉफ्टवेयर तथा दूरसंचार दोनों क्षेत्रों में अपना स्थान बना लिया है। भारतीय कंपनियों ने अमरीकी बाजार में अच्छा स्थान बना लिया है। यह स्थिति मुख्य रूप से अप्रवासी

भारतीय (एन॰ आर॰ आई॰) के कारण हुई है। इससे पता चलता है कि भविष्य में इस क्षेत्र में काफी वद्धि होने की संभावना है और सूचना प्रौद्योगिकी उद्योग अगली सहस्राब्दी में सबसे बड़ा क्षेत्र होगा। सूचना प्रौद्योगिकी सेवाओं के अंतर्गत उत्पाद संभरण, बाह्य स्रोत से उत्पादन प्रक्रिया का प्रारंभ, हार्डवेयर और सॉफ्टवेयर का रख–रखाव, शिक्षा और प्रशिक्षण, बाह्य स्रोतों से सूचना प्रौद्योगिकी प्रणाली का समाकलन, अनुप्रयोग और विकास तथा सूचना प्रौद्योगिकी से संबंधित परामर्श सेवाएँ आदि आती हैं। ये सूचनाएँ प्रौद्योगिकी उद्योग की प्रमुख अंग मानी जाती है। इन सेवाओं के अतिरिक्त लिप्यंतरण, लिप्यंकन, प्रकाशन, अंकीकरण तथा उससे संबंधित अन्य सेवाएँ हैं। भारत में प्रौद्योगिकी के बहुत–से बड़े–बड़े विशेषज्ञ हैं जिनसे उच्चस्तरीय सूचना प्रौद्योगिकी सेवा के विकास की संभावना है और इतनी अधिक मानव शक्ति है जिससे सूचना प्रौद्योगिकी सेवाओं को बाजार में लाया जा सकता है।

भारत में सॉफ्टवेयर उद्योग सूचना प्रौद्योगिकी की मेरुदंड है। बीसवीं शताब्दी के अंतिम दशक में सॉफ्टवेयर कंपनियों का जो विकास हुआ है वह अमरीका में सॉफ्टवेयर कंपनियों के विकास से लगभग दुगुना रहा है। सॉफ्टवेयर कंपनियों के विकास दर में जो सामंजस्य दिखाई दिया वह भारत के अतिरिक्त अन्य किसी भी देश में नहीं मिला। 1986 में इसकी शुरुआत प्रथम बार अमरीकी बहुराष्ट्रीय टेक्सास इंस्ट्रूमेंट्स ने बैंगलोर में अपनी एक निर्यात ईकाई स्थापित की है जो सॉफ्टवेयर की सप्लाई का काम करेगी। इस परियोजना से जो सफलता मिली उससे देशी और विदेशी उद्यम आकर्षित हुए हैं। इससे ये कंपनियाँ प्रारंभिक डाटा संसाधन से लेकर उच्च सॉफ्टवेयर प्रणालियों के विकास तक अधिकाधिक सॉफ्टवेयर सेवाएँ उपलब्ध कर सकेंगी। आगामी वर्षों में भारत के सम्पूर्ण निर्यात राजस्व का लगभग चौथाई अंश केवल सॉफ्टवेयर क्षेत्र से ही प्राप्त होगा। कंप्यूटर–कौशल, मुख्य निवेश, सुविचारित सरकारी नीति, सस्ते तथा निपुण कर्मचारियों के सुलभ होने से यह निश्चित है कि निकट भविष्य में भारत सूचना प्रौद्योगिकी क्षेत्र में व्यापक स्तर पर निर्यात कर लेगा।

वैज्ञानिक अंग्रेजी बोलने वालों में विश्व में भारत ाक स्थान अमेरिका के बाद आता है। इसके बाद 41 लाख अंग्रेजी बोलने वाले तकनीकी कार्यकर्ता हैं। ये तकनीशियन लगभग दो हजार शैक्षिक संस्थाओं और पॉलीटेकनिकों में एक लाख के करीब लोग हर साल कंप्यूटर सॉफ्टवेयर में प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त भारतीय विज्ञान संस्थान बंगलौर और बिरला प्रौद्योगिकी और विज्ञान संस्थान, पिलानी और टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ फंडामेंटल रिसर्च, मुंबई जैसे कई विश्वस्तरीय मान्यताप्राप्त विश्वविद्यालय और संस्थाएँ हैं। इलैक्ट्रानिकी विभा (संप्रति सूचना मंत्रालय) ने विश्व बैंक के वित्तीय सहयोग से जो सूचना प्रौद्योगिकी अध्ययन किया था, उससे यह पता चला है कि 1991 में विश्व बाजार में भारत की जो भागेदारी 11.9% थी, वह सन् 1998 में 18.5% हो गई। इस सर्वेक्षण से यह भी पता चला है कि भारत बाहरी स्रोतों से सॉफ्टवेयर सेवाएँ उपलब्ध कराने में विश्व में दूसरे स्थान पर हैं। हाल ही में हुए अन्य सर्वेक्षणों से ज्ञात हुआ है कि भारत बाह्यस्रोतीय सॉफ्टवेयर के लिए सर्वाधिक लक्ष्य प्राप्त करने वाले देश के रूप में उभर रहा है। वर्ष 1998-99 में फारट्यून (Fortune) के सर्वेक्षण के अंतर्गत आने वाली 100 से अधिक सॉफ्टवेयर कंपनियों ने अपनी सॉफ्टवेयर जरूरतें भारत को प्रेषित कर दी थीं। सन् 1999 में विश्व के सर्वोच्च परामर्शदाता मैक किंसेम ने भारत में नेसकाम (Nasscp) के माध्यम से जो अध्ययन किया उससे ज्ञात होता है कि सन् 2008 तक देश में सूचना प्रौद्योगिकी व्यवसाय का विस्तार होगा। भारत को इस के व्यापक क्षेत्र में कई लाख प्रतिस्पर्धी व्यवसायी सामने आएँगे और प्रौद्योगिकी के विविध उद्योगों में दस लाख भारतीयों को रोजगार मिलने की संभावना है।

नेसकाम के अध्यक्ष स्वर्गीय देवांग मेहता ने कहा था कि सूचना प्रौद्योगिकी साधित सेवा महत्त्वपूर्ण क्षेत्र है क्योंकि इसमें रोजगार उत्पन्न करने की पूरी–पूरी क्षमता है, न केवल महानगरों में बल्कि छोटे नगरों में भी। भारत में ई–कामर्स का भविष्य उज्ज्वल है। पहले से ही भारत ने सूचना प्रौद्योगिकी क्रांति के प्रारंभिक दशक को पार कर लिया है। वर्तमान दशक सरकार और सूचना प्रौद्योगिकी उद्योग दोनों के लिए सूचना राजमार्ग का विस्तार होगा जिससे क्रय प्रभावी और इंटरनेट सेवाएँ नागरिकों के लिए तो मुहैया की ही जा सकेंगी। साथ में, घरेलू क्षेत्र में भी यह समद्ध और विकसित होगा। इस प्रकार सन् 2010 तक भारत को सॉफ्टवेयर महाशक्ति बनाने का महत्त्वाकांक्षी लक्ष्य हमारे सामने है। विश्व भर में कंप्यूटरीकरण की जो प्रक्रिया प्रारंभ हुई है उससे सॉफ्टवेयर बढ़ा है। इंटरनेट का विकास हुआ है और साफ्टवेयर उद्योग को विशाल रूप देने की सूत्रबद्ध योजना भी बन चुकी है।

सूचना प्रौद्योगिकी बल का गठन

सूचना प्रौद्योगिकी के संवर्धन के लिए राष्ट्रीय कार्य बल का गठन हुआ है। इस कार्यबल ने सूचना प्रौद्योगिकी की जा कार्य योजना बनाई है वह सॉफ्टवेयर के विकास मार्ग में आने वाली अड़चनों को दूर करने में प्रमुख भूमिका निभाएगा। इस कार्यबल के दो प्रमुख कार्य हैं; पहला, भारत में सूचना प्रौद्योगिकी के विकास के मार्ग में आने वाली अड़चनों की पहचान करना और उनका निवारण करने के उपायों की संस्तुति करना। दूसरा कार्य, अगले दशक के भारत को इन्फ़ोटेक (Infotech) महाशक्ति के रूप में उभरने के योग्य बनाना। इस लक्ष्य के साथ–साथ राष्ट्रीय सूचना विज्ञान नीति के प्रारूप का प्रतिपादन करना भी है।

इस कार्ययोजना में 108 सुझाव दिए गए हैं। जब इन सुझावों को कार्यान्वित किया जाएगा तो अगले पाँच वर्षों में 10 लाख से अधिक पदों के सजन होने का अनुमान है। इस कार्ययोजना के कार्यान्वयन से इंटरनेट और कंप्यूटरों का राष्ट्रव्यापी प्रभाव भी सुनिश्चित

होगा जिसमें मुख्यतः शिक्षा तथा छोटे और मध्यम उद्यमों को लाभ होगा। इस योजना में उदारवादी नीति अपनाने पर दूरसंचार को प्रोत्साहन मिलेगा, अंतर्राष्ट्रीय प्रवेश द्वार पर विदेश संचार निगम लिमिटेड का एकाधिकार समाप्त होगा और केबल टी॰ वी॰ से इंटरनेट का प्रवेश होगा। सभी जिला मुख्यालयों में प्राधिकृत इंटरनेट सेवा प्रारंभ हो जाएगी और दूरसंचार विभाग द्वारा इंटरनेट प्रवेश खोले जाएंगे, स्थानीय काल दरों पर इंटरनेट की सेवा उपलब्ध होगी। एस॰ टी॰ डी॰/आई॰ एस॰ डी॰ बूथों के भीतर सूचना बूथों को बढ़ाया जाएगा जो ई–मेल, वाणी–मेल और इंटरनेट सेवा दे सकेंगी। सरकारी क्षेत्र में सूचना प्रौद्योगिकी के प्रयोग को उच्चतम सीमा तक बढ़ाने के लए प्रत्येक सरकारी विभाग में बजट का 1-3 प्रतिशत सूचना प्रौद्योगिकी का अलग से होगा। साथ ही, प्रत्येक विभाग पाँच वर्षीय सूचना प्रौद्योगिकी योजना तैयार करेगा और सभी सरकारी क्षेत्रों में भारी रोजगार के लिए सूचना प्रौद्योगिकी साक्षरता को अति आवश्यकता के रूप में रखना होगा।

देश में सूचना प्रौद्योगिकी साधित शिक्षा अभियान की रूपरेखा तैयार की गई है। इसमें शिक्षा क्षेत्र में पी॰ सी॰ की उपलब्धता बढ़ाने के लिए 'विद्यार्थी' कंप्यूटर योजना, शिक्षक कंप्यूटर योजना और स्कूल कंप्यूटर योजना को आरंभ करने का प्रस्ताव है, ताकि कंप्यूटर खरीदने के इच्छुक प्रत्येक विद्यार्थी, शिक्षक और विद्यालय आकर्षक वित्तीय पैकेजों के भीतर इन्हें खरीद सकें। निकट भविष्य में प्रत्येक विद्यालय, पॉलिटेक्निक, महाविद्यालय और विश्वविद्यालय को इंटरनेट सुलभ कराने के लिए भी प्रेरित किया गया है। 21वीं सदी में यह विश्व इलैक्ट्रॉनिक कामर्स द्वारा नियंत्रित होगा। इस संबंध में इलैक्ट्रॉनिक डाटा इंटरचेंज और इलैक्ट्रॉनिक निधि स्थानांतरण को सरल बनाने के लिए कार्यबल ने साईबर कानून को लागू करने का प्रस्ताव रखा है।

नई सहस्राब्दि की ओर

इसमें कोई संदेह नहीं है कि प्रत्येक समाज में प्रौद्योगिकी का विकास तीव्रतर गति से हुआ है और इसमें भारत अपवाद नहीं है। सूचना प्रौद्योगिकी की प्रगति में जो कमियाँ रही हैं उन पर विजय पाने का यह सुअवसर है। पिछले दशक में प्रौद्योगिकी क्षेत्र में सरकार की प्रगतिशील दष्टि और सामरिक क्षेत्रों में दूरदर्शिता के फलस्वरूप भारत ने बड़ी सफलता प्राप्त की है। इसने उद्योग और अर्थव्यवस्था की व्यापकता के साथ–साथ कंप्यूटर नीति (1984) इलैक्ट्रॉनिक नीति (1985) और सॉफ्टवेयर नीति (1986) के प्रतिपादन में सहायता की है। हाल ही में सरकार की बड़ी सफलताओं में से सबसे बड़ी उपलब्धि नई सहस्राब्दि के आरंभ होने के बहुत पहले ही देश से 'वाई 2 के' (Y2K) की समस्या का समाधान है।

सामाजिक विकास के लिए प्रौद्योगिकियों का समुचित प्रचार–प्रसार हो, सॉफ्टवेयर और हार्डवेयर दोनों का उपयुक्त विकास करने और उन पुनर्विचार करने का समय पहले ही आ गया है। वास्तव में सूचना प्रौद्योगिकी विश्व के आर्थिक और सामाजिक वातावरण में स्वस्थ प्रतियोगिता का एक प्रेरणा–स्रोत है। इसीलिए भारत सरकार ने राष्ट्रीय बजट में सूचना प्रौद्योगिकी उद्योग को काफी महत्त्व दिया है। कंप्यूटर हार्डवेयर पर जो कर लगाए गए थे उनमें कटौती की गई है और सॉफ्टवेयर पर आयात शुल्क नहीं रखा गया। इससे स्पष्ट है कि भारत में कंप्यूटरों की कीमतें कम होने की ओर उत्पादन में और अधिक वद्धि होने की पूरी–पूरी संभावना है। इसके अतिरिक्त इस क्षेत्र में विदेश सांस्थानिक निवेशक (एफ॰आई॰आई॰) की निवेश सीमा को 30 से 40 प्रतिशत तक बढ़ाकर भारतीय सॉफ्टवेयर क्षेत्र में अधिक विदेशी निवेशों को लाने की योजना है।

आंधप्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु, केरल, महाराष्ट्र, दिल्ली और गुजरात जैसे राज्यों ने सूचना प्रौद्योगिकी की प्रगति और अनुप्रयोग के लिए पहले ही प्रारंभिक कदम उठाए हैं। निर्बाध शासन, उच्चस्तरीय शिक्षा, समुचित स्वास्थ्य व्यवस्था और अन्य घरेलू क्षेत्रों के उद्देश्य को पूरा करने के लिए आवश्यक सूचना नेटवर्क संरचना योजना बनाई गई है। यह प्रौद्योगिकी प्रभावी परियोजना प्रबंध तथा सेवाओं की सुधारती गुणवत्ता में सहायता कर सकती है। इससे शक्ति, ऊर्जा, कोयला, परिवहन, शिक्षा, बंदरगाह, विमान प्रचालन आदि मुख्य परियोजनाएँ तुरंत और कम लागत किंतु अधिक लाभदायक सिद्ध हो सकती हैं। रोजगार के अवसर बढ़ेंगे और राष्ट्रीय आर्थिक विकास में सहायता मिलेगी।

स्वतंत्रता–प्राप्ति के बाद विदेशी प्रौद्योगिकियों पर निर्भर न होकर भारत अब आत्मनिर्भर और स्वतंत्र हो गया है। साइट (Satellite Instruction Television Experiment) से प्रारंभ कर पोखरन परमाणु विस्फोट तक और अंतरिक्ष में इनसेट (INSAT) प्रणाली को भेजने में भारत हमेशा देशी प्रौद्योगिकी पर बल देता रहा है। हम अपनी रक्षा संबंधी तैयारी, स्वास्थ्य लाभ कंप्यूटर प्रौद्योगिकी, खाद्य पदार्थ और अपने पड़ोसी देशों के साथ संबंध स्थापन में स्वावलम्बी हैं। सन् 2001 के प्रारंभ में विश्व के महान् कंप्यूटरविज्ञानी बिलगेट ने दिल्ली में आकर अपनी अमरीकी 'माइक्रोसॉफ्ट' कंपनी का बंगलौर स्थित भारतीय कंपनी ''इन्फोसिस' के साथ करार किया है जिसमें अंग्रेजी के साथ–साथ भारतीय भाषाओं और हिंदी में सॉफ्टवेयर तैयार करने की योजना है।

हिंदी में सूचना प्रौद्योगिकी

सूचना प्रौद्योगिकी की विश्व क्रांति में अब हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं में विभिन्न विधाएँ उपलब्ध हैं। हिंदी का प्रयोग आज

इंटरनेट और ई–मेल में संभव हो गया है तथा हिंदी में अनेक पोर्टल भी प्रारंभ हो गए हैं। पोर्टल के माध्यम से देश–विदेश की खबरें, वर्गीकृत विज्ञापन, कारोबार संबंधी सूचनाएँ, शेयर बाजार, शिक्षा मौसम, खेल–कूद, पर्यटन, साहित्य, संस्कृति, धर्म, दर्शन आदि के बारे में ताजा जानकारी प्राप्त की जा सकती है। पोर्टल में हिंदी ई–मेल की सुविधा भी उपलब्ध है। अनेक सरकारी और गैर–सरकारी संस्थाओं में हिंदी पोर्टल के अतिरिक्त द्विभाषी और बहुभाषी भी हैं। वेबसाइट का श्रीगणेश हो चुका है। यह सही है कि इस समय हिंदी सॉफ्टवेयर अंग्रेजी सॉफ्टवेयर की अपेक्षा बहुत कम हैं। तथापि, यह प्रयास जारी हैं कि हिंदी और भारतीय भाषाओं में सॉफ्टवेयर निर्मित किए जाएँ। कृत्रिम बुद्धि (Artificial Intelligence) सूचना प्रौद्योगिकी का आवश्यक गुण है। कुछ विद्वानों का कथन है कि कंप्यूटर की जो सोच है वह संस्कृत भाषा के बहुत निकट है और इसका उल्लेख भगवान शंकर के तांडव नत्य के साथ भी किया गया है। वास्तव में कंप्यूटर सब कुछ कर सकता है और जो हम उससे करवा सकते हैं। बस हमें उसकी स्मति–क्षमता ओर संसाधन क्षमता की जानकारी हो।

कंप्यूटर के विकास का प्रारंभ 1940 के दशक में हुआ था, किंतु उसकी प्रेरणा के बीज सन् 1935 के पास चार्ल्स बेबेज द्वारा बजाए गए 'नालिटिकल एंजिन' में मिलते हैं जिसकी कार्यप्रणाली बहुत कुछ आधुनिक कंप्यूटर जैसी ही थी। 1944 में हार्वर्ड विश्वविद्यालय द्वारा 'आई॰ बी॰ एम॰' और 'यू॰ एन॰ नेवी' के सहयोग से मार्क–1 नामक यंत्र का निर्माण हुआ। 1946 में कंप्यूटर युग का सूत्रपात हुआ और वह 1955 से 1965 तक गति और कार्यक्षमता की दष्टि से विकसित हुआ और उसमें नए आयाम भी सम्मिलित होते गए। 1971-72 ई॰ में भारतीय वैज्ञानिकों के प्रयास से एक सरल कुंजीपटल और उसकी प्रणाली का विकास हुआ। 1978 में सभी भारतीय भाषाओं में प्रयुक्त हो सकने वाला पहले 'फोटोटाइप टर्मिनल' तैयार हुआ जिससे कंप्यूटर या देवनागरी लिपि तथा अन्य भारतीय लिपियों के उपयोग में तेजी आई। अस्सी के दशक में शब्द संसाधन की दष्टि से हिंदी ओर अन्य भारतीय भाषाओं में मुद्रण के क्षेत्र में अभूतपूर्व क्रांति आई। आज सरकारी और गैर–सरकारी क्षेत्रों में अनेक संस्थाएँ हिंदी साफ्टवेयर के निर्माण में सक्रिय हैं। इलेक्ट्रानिकी विभाग (सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय) के सी–डेक पुणे ने 1988 में आई॰ आई॰ टी॰ कानपुर के सहयोग से बहुभाषी कंप्यूटिंग तथा इलेक्ट्रॉनिकी 'जिस्ट' (ग्राफिक्स एंड इंटैलिजैंस बेस्ट स्क्रिप्ट टैक्नॉलाजी) प्रणाली प्रदान की है। इसके माध्यम से अंग्रेजी के साथ हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं में डी बेस, लोटस, वर्डस्टार, कोबरल आदि में कार्य होने लगा। इसके बाद लीप, इज़्म, ट्रांसनेम, जिस्ट शैल, लिप्स, मल्टी पॉइंट आदि साफ़्टेक का अक्षर, देवेबेस, लेजर कंपोजर, हिंदी ट्रान का आलेख, राजभाषा विभाग का लीला हिंदी प्रबोध आदि उल्लेखनीय हैं।

भाषा शिक्षण की दिशा में भारत सरकार के राजभाषा विभाग ने सी–डेक, पुणे के सहयोग से 'लीला हिंदी प्रबोध' नामक सॉफ्टवेयर तैयार किया। इस सॉफ्टवेयर से पाठों में आए वाक्यों, शब्दों और वर्णों का मानक उच्चारण प्रशिक्षणार्थी सुन सकता है और बार–बार अभ्यास कर सकता है। लीला पैकेज (लर्न इंडियन लेंग्वेज थ्रू आर्टिफ़िशिलय इंटैलीजैंस) के द्वारा सभी भारतीय भाषाओं को देवनागरी के माध्यम से सीखने की सुविधा उपलब्ध है। हिंदी शिक्षण की दष्टि से मल्टीमीडिया सी डी–रोम 'गुरू' भी महत्त्वपूर्ण है।

इधर इंटरनेट ने सूचनाओं के विश्वव्यापी आदान–प्रदान को अपने तंत्रजाल में बांध लिया है। यह प्रणाली विश्व के विभिन्न देशों में करोड़ों लोगों द्वारा प्रयुक्त की जा रही है। अमेरिका और यूरोपीय देशों में इसका आविष्कार होने से अंग्रेजी और अन्य योरोपीय भाषाओं तथा रोमन लिपि का वर्चस्व रहा। हिंदी और भारतीय भाषाओं के लिए यह चुनौती रही है। लेकिन इंटरनेट के फलक पर बेब दुनिया कॉम (इंडिया) लि॰ ने हिंदी पोर्टल का विकास कर इस चुनौती को पूरा किया और 23 सितंबर 1999 को इंटरनेट पर हिंदी की क्षमता के दर्शन हुए। वेब दुनिया के इस कार्यक्रम में मेल, चैट, खोज आदि भी सम्मिलित हो रहे हैं। साफ्टवेयर कंपनी सुवि इन्फ़ार्मेशन सिस्टम, इन्दौर ने हिंदी में निःशुल्क ई–मेल सेवा का श्रीगणेश कर दिया है। इस पैकेज में लिप्यंतरण की सुविधा भी प्राप्त है। रोमन में टाइप पत्र दूसरे सिरे पर देवनागरी में प्राप्त हो सकता है।

सुपरटेक साफ्टवेयर एंड हार्डवेयर प्रा॰ लि॰ नई दिल्ली ने 'अनुवादक' जैसे साफ्टवेयर का निर्माण किया है जो कृत्रिम बुद्धि से युक्त अनुवार यंत्र है। यह साफ्टवेयर अंग्रेजी पाठ को हिंदी भाषा और व्याकरण के नियमों का पालन करते हुए हिंदी में अनुवाद करता है, और इसमें अंग्रेजी तथा हिंदी दोनों के लिए 'स्पेल चेकर' उपलब्ध हैं। इसके अतिरिक्त, अंग्रेजी मूल पाठ तथा उसके हिंदी रूपान्तरण दोनों को 'सेव' किया जा सकता है तथा रोजमर्रा के पत्रों का तीव्रगति से अनुवाद भी किया जा सकता है।

सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय और वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग ने संयुक्त रूप से हिंदी शब्दावली का इंटरनेट तैयार किया है जिसमें तकनीकी शब्दों के वैकल्पिक हिंदी पर्यायों का वेबसाइट पर शून्य संस्करण तैयार किया गया है। यह वास्तव में दस हजार तकनीकी शब्दों का कांपेटक डिस्क है।

मानव संसाधन विकास मंत्रालय तथा सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय ने केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा और भारतीय इलेक्ट्रानिकी अनुसंधन तथा विकास केंद्र, नोएडा को नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी द्वारा प्रकाशित हिंदी विश्वकोश को इंटरनेट पर प्रस्तुत करने का कार्य

सौंपा है। हिंदी विश्वकोश के बारह खंडों में से दस खंड लगभग तैयार हो चुके हैं। इसमें इंटरनेट की सुविधा के अनुसार विषयों का वर्गीकरण तथा सरल मार्गनिर्देशित अभिगम होगा जो मल्टीमीडिया की दष्टि से महत्त्वपूर्ण कार्य करेगा। इसी के साथ–साथ हिंदी कारपोरा (विपुल शब्द संग्रह), अंग्रेजी–हिंदी कोश को भी सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में लाने का प्रयास किया जा रहा है। इस प्रकार सूचना प्रौद्योगिकी की विशाल संभावनाएँ उभर कर आ रही हैं।

4.2 जनसंचार माध्यमों का स्वरूप : मुद्रण, श्रव्य, दश्य-श्रव्य, इंटरनेट

कोई भी व्यक्ति, समूह या समाज बातचीत या संवाद किये बिना जीवित नहीं रह सकता, मनुष्य अपने भावों, विचारों तथा अनुभवों को दूसरों के साथ बाँटना चाहता है और फिर उनसे लाभान्वित होना चाहता है। संचार के माध्यम से ये कार्य सरल हो जाते हैं। आज के युग में सूचना एक शक्तिशाली हथियार बन गया है। जिस व्यक्ति के जितनी अधिक सूचना है, वह उतना ही शक्तिशाली है और जिस राष्ट्र के सूचना माध्यम जितने उन्नत हैं, वह उतना ही विकसित माना जाता है।

संचार : अर्थ एवं परिभाषा

संचार शब्द का अभिप्राय है – सूचनाओं एवं विचारों को एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक पहुँचाना। इसे फैलाव या विस्तार भी कह सकते हैं। जन जन में भावों और विचारों का फैलाव ही संचार है। अंग्रेजी में संचार के लिए 'कम्यूनिकेशन' शब्द है जो लैटिन के 'कम्यूनिस' से बना है जिसका अर्थ है – समझ का साँझा आधार। इस प्रकार संचार एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें विचारों, तथ्यों, अनुभवों व दष्टिकोणों को समझ कर एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से सहभागिता करता है। संचार की कुछ परिभाषाएँ इस प्रकार है–

पीटीर लिटल – "संचार एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके माध्यम से सूचना व्यक्तियों या संगठनों के बीच संप्रेषित की जाती है ताकि समझ में वद्धि हो।"

जे॰ पाल लीगन्स – "संचार एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें दो या दो से अधिक व्यक्ति विचार, तथ्य, भावनाओं का विनिमय करते हैं ताकि दोनों की समझ बढ़े।"

इस प्रकार कहा जा सकता है कि यह एक प्रक्रिया है जिसके माध्यम से दो या अधिक व्यक्ति संकेत या भाषा के द्वारा अपनी सूचनाओं, भावनाओं, विचारों का विनिमय करते हैं।

इसकी प्रक्रिया का आरेख इस प्रकार है–

प्रेषक – संदेश – माध्यम – प्राप्तकर्ता

जनसंचार – संचार की भाँति विद्वानों ने जनसंचार को भी पारिभाषित करने का प्रयास किया है। उनके अनुसार जब किसी संदेश को यांत्रिक प्रणाली से कई गुणा बढ़ा दिया जाए और उसे बड़ी संख्या में जनसमुदाय तक पहुँचाया जाये तो उसे जनसंचार कहा जाता है। रेडियो, टेलीविजन, समाचार, पत्र, फिल्म, टेपरिकार्डर, वीडियो कैसेट आदि जनसंचार के विभिन्न माध्यम हैं। बहत् दष्टि से इनके तीन वर्ण बनाये गये हैं –

1. प्रिंट मीडिया।
2. इलेक्ट्रोनिक मीडिया।
3. फोटोग्राफिक मीडिया।

1. **मुद्रण** – मुद्रित शब्द, जनसंचार के महत्त्वपूर्ण माध्यम है और समाचार पत्र तथा पत्रिकाएँ इन मुद्रित शब्द के सुन्दर रूप हैं। समाचार पत्रों को शब्द ही सँवारते हैं और इसे जीवंत बनाते हैं। शब्द को भारत में सरस्वती का पर्याय माना जाता है। शब्द जब प्राणवान होते हैं तो अज्ञान और जड़ता का अंधकार छँटता है। शब्द अर्थ देने में समर्थ होते हैं तभी तो 'करो या मरो' के नारे को सुनाते ही देशवासियों में नयी चेतना का प्रकाश फैल गया। नेताजी सुभाषचन्द्र का 'जयहिंद' शब्द स्वाधीनता सेनानियों का प्रेरक बन गया। इसी शब्द को नई तकनीक और शैली के सहारे समाचार–पत्रों और पत्रिकाओं में स्थान मिला और इसका सम्यक् ज्ञान के साथ जनसंचार के उद्देश्य से प्रयोग होने लगा। प्रौद्योगिकी के विकास के साथ भारतीय समाचार–पत्रों में नयी–नयी तकनीकों का प्रचलन हुआ और समाचार पत्र को नया रूप देने के लिए रूप–सज्जा के क्षेत्र में अभूतपूर्व प्रगति हुई। आज के युग में समाचार–पत्र, सूचना संकलन का साधन मात्र ही नहीं है बल्कि नयी–नयी मशीनों तथा विभिन्न प्रकार की मुद्रण प्रक्रियाओं के प्रयोग से उसके विषय–वस्तु में भी सुधार हुआ है। आज समाचार–पत्र जहाँ लोगों के लिए सूचनाओं का मुख्य स्रोत है, वहाँ वह जनसाधारण के विचारों की अभिव्यक्ति का भी माध्यम है। एक भाषा और एक ही क्षेत्र के कई समाचार पत्रों के प्रकाशन ने भिन्न–भिन्न विचारों और दष्टिकोणों को प्रस्तुत करना संभव बनाया है। समाचार–पत्र न केवल घटनाओं की विस्तार से रिपोर्ट प्रस्तुत करते हैं बल्कि

प्रमुख घटनाओं के सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक पहलुओं का भी विश्लेषण करते हैं। जनसामान्य में राजनीतिक और सामाजिक जागरूकता लाने में समाचार पत्रों का प्रमुख हाथ है।

आधुनिक यांत्रिकी से तो समाचार पत्र प्रकाशन तकनीक में क्रांति आ गयी है। कंप्यूटर द्वारा टाइप सैट करके बहुरंगी चित्रों के साथ छपाई से समाचार पत्रों का रंग–रूप ही बदल गया है। उपग्रह के उपयोग से एक समाचार पत्र के कई संस्करण विभिन्न नगरों से प्रकाशित हो रहे हैं। इलेक्ट्रोनिक विधियों द्वारा विज्युल डिस्प्ले टर्मिनल पर संपादन, प्रूफ पठन, पष्ठ–निर्माण का कार्य एक ही व्यक्ति सम्पन्न कर रहा है। इस प्रकार मुद्रित शब्द जनसंचार का महत्त्वपूर्ण हथियार बन गया है तथा जनसेवा का भी।

2. **श्रव्य (आकाशवाणी)** – इस क्षेत्र में रेडियो एक बहुत बड़ी उपलब्धि है। यह एक क्रांतिकारी आविष्कार है जिसके माध्यम से दूर–दराज के जन समुदाय तक संदेश को पहुँचाया जा सकता है। रेडियो, ध्वनि तरंगों को विद्युत ऊर्जा शक्ति से एक से दूसरे स्थान पर भेजता है। इसका संदेश जिस स्टेशन से चलता है, उसे सैंकड़ों मील दूर बैठा हुआ व्यक्ति सुन सकता है। ट्रांजिस्टर के आगमन से विद्युत ऊर्जा की अनिवार्यता भी समाप्त हो गई है। इस प्रकार यह माध्यम अधिक जनसुलभ हो गया है। इसका मूल्य इतना कम है कि गरीब व्यक्ति भी इसे खरीद कर लाभ उठा सकता है। इस प्रकार रेडियो ट्रांजिस्टर सुलभ जन संचार माध्यम है।

रेडियो के कारण संचार के क्षेत्र में गुणात्मक परिवर्तन आ गया है। पूर्व के शासक किसी सूचना को जनता तक पहुँचाने के लिए ढिंढोरचियों की सेवाएँ लेते थे जो कि मंद गति का माध्यम था। रेडियो समय की दष्टि से तत्काल सूचनाएँ पहुँचाने वाला माध्यम है जिसके परिणामस्वरूप लोगों के सोचने–समझने में बदलाव आया है। रेडियो ने जन समुदाय के लिए ज्ञान और मनोरंजन के क्षेत्र को विस्तत कर दिया है। संगीत–गायन की जो शैलियाँ अभिजात्य वर्ग तक सीमित थीं, अब उनका रसास्वादन सामान्य जन भी करने लगे हैं। ज्ञान–विज्ञान से सम्बद्ध लेखों, वार्ताओं को सुनकर वह भी अपना ज्ञान बढ़ाने लगा है तथा इन क्षेत्रों में कार्य करने के लिए द्वार भी उसके लिए खुल गये हैं। स्थानीय प्रतिभाएँ जो कुंठित हो रही थीं, उन्हें भी अपनी प्रतिभा को प्रस्तुत करने के लिए मंच सुलभ हुआ है।

3. **दश्य-श्रव्य (दूरदर्शन)** – टेलीविजन तरंगों के माध्यम से एक साथ दश्य और श्रव्य दोनों को दूसरे स्थान पर उसी गति से भेजता है जिस गति से रेडियो, ध्वनि तरंगों को प्रेषित करता है। संचार के संसार में यह गुणात्मक परिवर्तन है। इसके आगमन से लोगों की आवाज के साथ दश्य भी देखने को मिलने लगे। रेडियो पूर्णतः आवाज पर निर्भर था जबकि समाचार–पत्र मुद्रित शब्दों पर। टेलीविजन द्वारा दश्यों को आवाज के साथ दिखाये जाने से कथित सत्य अत्यन्त प्रबल रूप में स्थापित होने लगा। यद्यपि यह माध्यम रेडियो की तुलना में अधिक महंगा है परंतु अपनी प्रभाव क्षमता के कारण यह अन्य किसी माध्यम की अपेक्षा अधिक ध्यान आकर्षित करता है। पहले यह नगरों के मध्यवर्ग तक ही सीमित था परन्तु धीरे–धीरे यह गाँवों तक भी पहुँच चुका है। सभी देशों में इसका नियंत्रण सरकार के हाथ में या सरकार नियंत्रित निगम के हाथ में है। संचार के क्षेत्र में उपग्रह के प्रवेश के बाद तो संचार के लगभग सभी माध्यमों में तेजी से परिवर्तन आया है। इसने विश्व की दूरियों को मिटा दिया है। इसने जनता के लिए सूचना, शिक्षा तथा मनोरंजन के अनगिनत द्वार खोल दिये हैं जिसके परिणामस्वरूप लोगों के खान–पान, रहन–सहन में आया बदलाव स्पष्ट परिलक्षित होता है।

4. **अन्य दश्य-श्रव्य माध्यम** – इलेक्ट्रोनिक मीडिया के अन्तर्गत केबल टी॰ वी॰ वीडियो कैसेट को लिया जा सकता है। ये दोनों दश्य–श्रव्य का समन्वित रूप है। इसका स्वरूप और विशेषताएँ टेलीविजन जैसी ही हैं। ये भी ज्ञान, मनोरंजन आदि के सीमित, छोटे और महंगे साधन हैं। केबल टी॰ वी॰ का विस्तार अभी तक नगरों तक ही सीमित है। इस कनैक्शन लगवाने वाले ग्राहक को दो सौ से पाँच सौ रुपये प्रति मास फीस देनी पड़ती है। इतनी राशि अधिकतर लोगों के लिए संभव नहीं है। वीडियो कैसेट भी इसी प्रकार का साधन है। कैसेट को चलाने के लिए वी॰ सी॰ आर॰ या वी॰ सी॰ पी॰ की आवश्यकता पड़ती है जो पाँच हजार से दस हजार तक का होता है। इसके साथ टेलीविजन भी चाहिए। रंगीन टी॰ वी॰ के बिना वीडियो फिल्में सुन्दर नहीं लगतीं अतः यह माध्यम और भी महंगा है तथा कुछ लोगों तक ही सीमित है।

5. **फोटोग्राफिक मीडिया** – फिल्म एक फोटोग्राफिक मीडिया है जिसमें कैमरे का प्रयोग होता है। कैमरे के प्रयोग से रीलें तैयार की जाती हैं और इन रीलों को सिनेमाघरों में लगी हुई विशेष मशीनों पर चलाया जाता है। वस्तुतः सिनेमा गतिशील चित्रों का क्रमबद्ध संयोजन है जिन्हें एक विशेष मशीन द्वारा सफेद पर्दे पर प्रस्तुत किया जाता है। सिनेमा में चित्र एक मिनट में 90 फीट की गति से दौड़ते हुए हमारे सामने उभरते हैं जिससे कि संपूर्ण दश्य हमारी आँखों के सामने घटित होता हुआ दिखाई और सुनाई देता है। यह माध्यम भी इसीलिए श्रव्य और दश्य माध्यम है। प्रारंभ में सिनेमा अवाक् था परंतु बाद में सवाक् हो गया। सवाक् होने से यह अधिक सजीव, आकर्षक और शक्तिशाली माध्यम के रूप में उभरा। संचार के लिए इसका उपयोग रेडियो की भांति संभव नहीं था क्योंकि घटनाओं को फिल्माने से लेकर सिनेमा में दिखाने तक फिल्म को अनेक प्रक्रियाओं में से गुजरना पड़ता था जो काफी समय ले लेती थी। इसलिए इसका उपयोग रेडियो की भाँति नहीं हो सका।

सिनेमा का प्रयोग वत्तचित्रों (Docimentries) के निर्माण के लिए तो हुआ परंतु समाचारों और सूचनाओं के सीधे प्रसारण के लिए नहीं। सिनेमा मनोरंजन के सर्वाधिक प्रभावशाली माध्यम के रूप में उभरा। सिने–निर्देशकों ने समाज की अनेकानेक समस्याओं को फिल्मों का विषय बनाकर समाज को जागरूक बनाया तथा उनके उन्मूलन में अपना योगदान दिया।

सिनेमा काफी समय तक न्यूज रीलों के रूप में सूचना और ज्ञान के प्रचार–प्रसार का माध्यम रहा। टेलीविजन के आगमन तक यह भारतीय समाज के मध्य वर्ग और निम्न वर्ग के मनोरंजन का लोकप्रिय और सस्ता साधन था। निम्न वर्ग का तो यह आज भी मनोरंजन करता है परंतु कुछ महँगा अवश्य हो गया।

6. **इंटरनेट** – टी॰ वी॰ को कुछ विद्वानों ने बुद्धू बक्सा कहा था और इसे एक नशा माना था। पत्रकार मनोहर पुरी का कहना है – इंटरनेट उससे कहीं अधिक मादक है। इसके नशेड़ियों की संख्या में निरंतर वद्धि हो रही है। यह बात सत्य है कि इंटरनेट ज्ञान का विशाल भंडार है जिसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। इसके साथ यह भी उल्लेखनीय है कि इसके माध्यम से अवांछित और अश्लील सामग्री भी प्रेषित की जा रही है। यदि इस पक्ष को दष्टि विगत कर दिया जाए तो यह निश्चय ही उपयोगी माध्यम है।

इसका आरंभ नब्बे के दशक में अमेरिका में हुआ परंतु भारत में इसे 15 अगस्त 1995 को विदेश संचार निगम ने 703 ग्राहकों की संख्या से शुरू किया। उस समय निगम के पास 74 लाइनें और एक इंटरनेट बिन्दु था। आज एक लाख पच्चीस हजार ग्राहकों और छः लाख उपभोक्ताओं को जोड़ने के लिए निगम के पास चालीस बिन्दुओं पर बारह हजार लाइनें उपलब्ध हैं। एक वेब पष्ठ पर लगभग 500 शब्द होते हैं। अनुमान है कि इस समय पाँच करोड़ वेब पष्ठ उपलब्ध हैं।

वस्तुतः इंटरनेट नेटवर्कों का नेटवर्क है। यह सूचना तंत्र का एक ऐसा जाल है जिसमें समस्त जालों को जोड़ने की क्षमता है। इसे संक्षेप में इस प्रकार कहा जा सकता है कि जब एक से अधिक कंप्यूटरों को परस्पर जोड़ दिया जाता है तो इसे नेटवर्क कहा जाता है। इंटरनेट ऐसे अनेक नेटवर्कों को आपस में जोड़ने वाला नेटवर्क है। इस समय इसका उपयोग करने वालों की संख्या 50 करोड़ को पार कर चुकी है। इंटरनेट पर पूरे विश्व में इस समय दस लाख वेबसाइट हैं और प्रत्येक वेबसाइट अपने आप में एक नेटवर्क है। ये वेब सेट किसी न किसी माध्यम से परस्पर जुड़े हुए हैं। इनमें परस्पर सामंजस्य स्थापित करने के प्रयत्न किये जा रहे हैं और अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर मानस संचार नियम बनाने के प्रयास जारी हैं। इन्हें ट्रांसमिशन कंट्रोल प्रोटोकोल कहा जा रहा है। आज कोई भी देश अपने आपको इससे अलग नहीं रख सकता है।

इंटरनेट का प्रमुख कार्य है – सूचनाओं का आदान–प्रदान। यह सूचनाओं का अगाध भंडार है। ब्रह्माण्ड के लगभग समस्त विषयों का ज्ञान इसके पास है। कोई भी व्यक्ति इसके द्वारा ज्ञान के सागर में गोता लगाकर मनचाही सूचनाओं को प्राप्त कर सकता है। इस पर सूचनाओं का आदान–प्रदान लगातार चलता रहता है। इस कार्य को क्लाइंट (ग्राहक) और सर्वर (सेवक) करते है। इंटरनेट पर जो सूचनाएँ प्राप्त होती हैं, वे किसी न किसी कंप्यूटर पर उपलब्ध होती है। जिसे 'सर्वर' कहते हैं, सर्व क्लाइंट, जोकि एक कंप्यूटर कार्यक्रम है, द्वारा मांगी गई सूचनाओं का संग्रह करता है। क्लाइंट इस बात को जानता है कि किस सर्वर पर कौन सी सूचना उपलब्ध है और उसे किस प्रकार प्राप्त किया जाए। इस प्रकार स्पष्ट है कि इंटरनेट क्लाइंट और सर्वर के बीच में संचार माध्यम का कार्य करता है। इसकी कोई समय सीमा नहीं है। इसमें सूचनाएँ निरंतर आती रहती है। संभवतः यही कारण है कि इंटरनेट से जुड़े लोगों को सूचनाओं का पता समाचार पत्र आने से पहले ही लग जाता है। इंटरनेट हमें उन आंकड़ों को उपलब्ध करा देता है जो संसार के लोग निरन्तर डाटा बैंक में जोड़ते रहते हैं।

इंटरनेट किस प्रकार सूचनाओं का प्रेषण करता है ? इस प्रशन के उत्तर में कहा जा सकता है कि इंटरनेट पर कोई भी सूचना छोटे–छोटे टुकड़ों में विभाजित होकर गतिशील होती है। सर्वर सूचना को एक निश्चित आकार में विभाजित कर क्लाइंट के पास ले जाता है। जब सभी टुकड़े क्लाइंट के कंप्यूटर के पास पहुँच जाते हैं तो वह उन्हें एकत्र करके एक स्थान पर प्रस्तुत कर देता है।

इस प्रकार इंटरनेट एक शक्तिशाली संचार माध्यम के रूप में उभरा है। पत्रकारिता के क्षेत्र में इसका प्रयोग दिन–प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। इसे अनेक प्रकार से प्रयुक्त किया जा सकता है। सूचनाएँ तो आप प्राप्त करते ही हैं, इसके अतिरिक्त समाचार पत्रों में प्रकाशित नवीनतम समाचार आप पढ़ सकते हैं। आजकल अधिकतर समाचारपत्र अपने–अपने वेबसाइट बना रहे हैं। समाचार एजेंसियाँ संवाददाताओं पर अपनी निर्भरता कम करके इंटरनेट से सूचनाएँ ले–दे रही हैं। इसके माध्यम से ही एक ही समाचार पत्र के विभिन्न केंद्रों से प्रकाशित होने वाले संस्करणों को जोड़कर सामग्री प्रेषित की जा रही है।

इंटरनेट ने मनुष्य जीवन को सुखमय बनाने की दिशा में भी योगदान दिया है। लोग इन दिनों घर पर बैठे हुए इंटरनेट से खरीदारी कर सकते हैं, दूरवर्ती स्थानों पर रहने वाले मित्रों, संबंधियों से विचार–विमर्श कर सकते हैं। व्यवसाय कर सकते हैं। ई–मेल की भाँति ई–कामर्स भी धीरे–धीरे लोकप्रिय हो रहा है। आशा है कि निकट भविष्य में समस्त व्यवसाय इसी के माध्यम से होने लगेगा।

ए॰ टी॰ एम॰ के माध्यम से कुछ स्थानों पर आज भी ग्राहक को बैंक से पैसा निकालने की सुविधा भारत में उपलब्ध हो गई है। क्रेडिट कार्ड इसका माध्यम है। ये सब कार्य इंटरनेट के माध्यम से हो रहे हैं। अब तो इंटरनेट कंप्यूटर के संगम से जो इनफोटेक क्रांति फैल रही है, उसका माध्यम व्यक्तिगत कंप्यूटर न होकर टी॰ वी॰ सेट बनाये जाने के प्रयास किये जा रहे हैं ताकि निजी वीडियो रिकार्डर उपकरण टी॰ वी॰ को इंटरएक्टिव टी॰ वी॰ में बदल दे और इंटरनेट को टी॰ वी॰ माध्यम से घर–घर पहुँचाया जा सके।

इसका मनुष्य के व्यक्तिगत जीवन में भी हस्तक्षेप प्रारंभ हो गया है। इंटरनेट के माध्यम से हमारे जीवन में सूचनाएँ तो आ रही हैं, हमारी जीवन–शैली पर भी प्रभाव पड़ रहा है। वर–वधू ढूँढना, विवाह या अन्य समारोह का आयोजन करना इंटरनेट के माध्यम से हो रहा है। विवाह को यादगार बनाने के ढंग, विवाह का बजट, समाज–सामान की खरीददारी सभी में यह सहायता कर रहा है। इसके माध्यम से बिलों का भुगतान किया या लिया जा सकता है। अब इंटरनेट तो फैक्स का स्थान भी ले रहा है। देश के केबल ऑपरेटर आने वाले समय में इंटरनेट सेवा प्रदान करेंगे। ऐसी आशा है। एक केबल आपरेटर 300 मैगाहर्टस अथवा 90 मोडस के समतुल्य बैंड विड्थ प्रदान करने की क्षमता रखता है। फाइबर आप्टिक केबल की क्षमता इससे भी कई गुणा होती है। इस विशाल क्षमता का प्रयोग इंटरनेट में हो सकता है। उससे संदेश भेजने की गति में तेजी से वद्धि होगी। इस प्रकार स्पष्ट है कि इंटरनेट के आगमन से जो क्रांतिकारी परिवर्तन आ रहे हैं, वे वर्षों तक हर पक्ष को किसी न किसी रूप में प्रभावित करते रहेंगे।

4.3 श्रव्य माध्यम (आकाशवाणी)

संचार के क्षेत्र में रेडियो एक क्रांतिकारी आविष्कार है। एक ऐसा आविष्कार जिसके माध्यम से व्यापक जनसमुदाय तक संदेश को एक साथ पहुँचाया जा सकता है। इस आविष्कार ने मानव को अनेक क्षेत्र में सहयोग दिया है। अफ्रीका के घने जंगल हों या सहारा के रेगिस्तान, अंटार्कटिका का निर्जन स्थान हो या हिमालय की बर्फ से झकी चोटियाँ – मनुष्य ने रेडियो की सहायता से सभ्यताओं को स्वयं से जोड़े रखा है। यह ऐसा सरल तथा सुगम साधन है जिसके द्वारा दूर–दूर तक फैले श्रोताओं को पल भर में संदेश प्रसारित किया जा सकता है। इस प्रकार श्रोताओं को सूचना, शिक्षा तथा मनांरेजन प्रदान कर व्यापक उद्देश्यों को पूरा किया जा सकता है।

आकाशवाणी ने देश में अपने प्रसारणों के माध्यम से नागरिकों को अपने राष्ट्र, संस्कृति, गौरवमय अतीत, महान् मूल्यों तथा परंपराओं के प्रति जाग्रत करने की दिशा में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी है। इसके अतिरिक्त राष्ट्रीय एकता को बढ़ाने, उन्मत्त और प्रगतिशील विचारों को बल प्रदान करने तथा सामाजिक–आर्थिक लक्ष्यों की प्राप्ति में भी इसने उल्लेखनीय कार्य किया है। आकाशवाणी का 'बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय' लक्ष्य श्इसके विविध आयामी होने का संकेत देता है।

देश में रेडियो के प्रसारण का आरंभ सन् 1927 में हुआ। 1930 में एक प्राइवेट ट्रांसमीटर को अपने हाथ में लेकर सरकार ने 'इंडियन ब्राडकास्टिंग सर्विस' के नाम से इसे प्रारंभ किया। 1936 में इसका नाम बदलकर 'आल इंडिया रेडियो' कर दिया गया। भारत–विभाजन के बाद छः केंद्र भारत में रह गये और तीन पाकिस्तान चले गये। भारत में ये केंद्र मुम्बई, कोलकाता, दिल्ली, मद्रास, लखनऊ तथा तिरुचिलापल्ली में थे। 1957 में इस प्रसारण तंत्र का नाम बदलकर आकाशवाणी कर दिया गया। इस समय देश में आकाशवाणी के 185 केंद्र कार्य कर रहे हैं। इनमें से 105 क्षेत्रीय केंद्र हैं तथा 72 स्थानीय केंद्र हैं। विविधभारती के तीन प्रसारण केंद्र हैं। इस समय 148 मीडियम वेव, 51 शार्ट वेव तथा 84 एफ॰ एम॰ ट्रांसमीटर काम कर रहे हैं तथा इनके कार्यक्रमों का देश के 90% भाग में विस्तार है। इस विस्तार से देश की 97-3% जनता सूचना, शिक्षा तथा मनोरंजन प्राप्त कर रही है।

समूचे भारत में रहने वाले भारतीयों तक एक साथ एक ही केंद्र से प्रसारण द्वारा संदेश को पहुंचाने के लए आकाशवाणी ने राष्ट्रीय प्रसारण सेवा मई, 1988 में आरंभ की जिसकी देशके 64% भू–भाग तथा 76% जनसंख्या तक पहुँच है। सायं 6-50 से प्रातः 6-10 तक चलने वाले प्रसारणों में विविध कार्यक्रम होते हैं तथा एक घंटे के पश्चात् समाचार बुलेटिन भी आता है। राष्ट्रीय प्रसारण के कार्यक्रमों में नाटक, वत्तचित्र, हिन्दूस्तानी और कर्नाटक शैली का संगीत, सुगम संगीत, भजन, वत्तचित्र आदि होते हैं।

रेडियो में विद्युत ऊर्जा की शक्ति के द्वारा रेडियो ध्वनि–तरंगों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर संप्रेषित करता है। इसे प्रेषित करने की अवधि इतनी कम होती है कि इसे कालबोध की दष्टि से शून्य कह सकते हैं। दूसरे शब्दों में, रेडियो स्टेशन से जिस समय संदेश प्रसारित होता है, उसी समय सैंकड़ों मील दूर बैठा श्रोता उसे रेडियो के द्वारा सुन सकता है। यह सब कुछ पहले बिजली से सम्पन्न होता था। टॉजिस्टर के आविष्कार ने बिजली ऊर्जा की अनिवार्यता को भी समाप्त कर दिया है। इस प्रकार रेडियो बिजली के बिना सैल पर भी चलने लगा है। साधारण ट्रांजिस्टर का मूल्य इतना कम है कि गरीब व्यक्ति भी उसे खरीद कर सूचना, शिक्षा और मनोरंजन प्राप्त कर सकता है। ट्रांजिस्टर का आकार इतना छोटा है कि इसे कहीं भी रेल, बस, पहाड़, नदी किनारे, मरुस्थल आदि में ले जाया और बजाया जा सकता है। इसके आगमन से संचार के क्षेत्र में गुणात्मक परिवर्तन आ गया है। शासक इसके माध्यम से संदेश को कहीं भी और कभी भी पहुँचा सकते हैं। सूचना और संदेश के पहुँचने से लोगों की सोच और विचारों में परिवर्तन हुए हैं। वह अब

कुएँ के मेंढक नहीं रहे। उनके विचारों का वत्त प्रसरित हो गया है। अब उनकी रुचि न केवल देश की समस्याओं से ही है बल्कि विश्व की समस्याओं में भी हो चली है। इराक का युद्ध हो या फिलिस्तीन–इजराइल का; इथोपिया का अकाल हो या जापान का भूकंप – इन सभी की सूचना उसे पल भर में मिल जाती है और वह अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करता है।

इस प्रकार आकाशवाणी अथवा रेडियो ने जनसमुदाय के लिए ज्ञान और मनोरंजन के द्वार खोल दिये हैं। संगीत और गायन की वे शैलियां जिन्हें केवल अभिजात्य वर्ग ही सुनता था, उसे आज सामान्य व्यक्ति भी सुन सकता है ओर उसका रसास्वादन कर सकता है। ज्ञान–विज्ञान से जुड़ी हुई रेडियो–वार्ताओं, फीचर कार्यक्रमों, रूपकों, साक्षात्कारों आदि विविध कार्यक्रमों के माध्यम से सामान्यजन के ज्ञान में अत्यन्त वद्धि हुई है। इस ज्ञान के उपयोग से उसने अपने लिए नये द्वार खोले हैं। उसे नये क्षेत्र में काम करने की प्रेरणा मिली है। रेडियो से स्थानीय प्रतिभाएँ भी राष्ट्रीय स्तर पर उभर कर सामने आयी हैं और उन्हें ख्याति प्राप्त हुई है।

4.4 मौखिक भाषा की प्रकृति

रंगमंच, फिल्म और रेडियो के लिए लिखे गये नाटकों में काफी अंतर होता है क्योंकि जो सुविधाएँ रंगमंच और फिल्म के नाटकों को उपलब्ध हैं, वे रेडियो–नाटक के पास नहीं होती। रेडियो–नाटकों में दश्य–त त्त्व नहीं होते। उन्हें काम के लिए लिखा जाता है। दश्य–तत्त्वों के अभाव को उसे श्रव्य साधनों से पूरा करना पड़ता है। श्रव्य साधन केवल तीन ही हैं – भाषा, संगीत और ध्वनि प्रभाव। इन तीनों का आधार ध्वनि है और यह अभिव्यक्ति का सशक्त और सबल साधन है। ध्वनि की अभिव्यंजना शक्ति इस बात पर निर्भर होती है कि किसी ध्वनि को कितने जोर से और कितने अन्तर से पैदा होती है। उसकी गति तथा लय कितनी और किस मात्रा में है। ध्वनि के ये गुण सभी श्रव्य कलाओं के सजनात्मक साधन हैं। सामान्य जीवन में भी देखने में आता है कि ध्वनि परिवर्तन के कारण शब्द के अर्थ में परिवत्रन हो जाता है। एक ही शब्द के उच्चारण का ढंग बदल जाने से या शब्द की आवत्ति से अनेक भावों को अभिव्यक्त किया जा सकता है। यह बात संगीत और ध्वनि प्रभावों पर भी लागू होती है। यहाँ हम रेडियो की भाषा पर विचार करेंगे।

भाषा को रेडियो का प्राण कहा जाता है। नाटक या रूपक या अन्य किसी रेडियो कार्यक्रम का ढाँचा इसी के आधार पर खड़ा होता है। रेडियो लेखक दश्य–तत्त्वों की कमी की पूर्ति शब्दों की सहायता से करता है। यहाँ पर शब्दों के लिखित रूप की अपेक्षा श्रव्य स्वरूप पर ही ध्यान दिया जाता है। लेखक को यहाँ पर इस बात को अपनी स्मति में स्थायी रूप से रखना होता है कि शब्द अक्षरों का समूह न होकर ध्वनि है। बोलने पर शब्दों की जिस ध्वनि का हम श्रवण करते हैं, वही रेडियो–लेखक का साधन है। भाषा का जन्म शब्दों की श्रव्य ध्वनियों से हुआ है। मुद्रण के आविष्कार के बाद शब्दों के लिखित रूप का प्रचलन और महत्त्व बढ़ गया है, परंतु रेडियो–कार्यक्रमों में इसका कोई मूल्य नहीं है। रेडियो के लिए लेखन कार्य करने वाले व्यक्ति के लिए आवश्यक है कि वह सुने गए शब्दों की शक्ति को पहचाने। उसे इस बात का ज्ञान होना चाहिए कि किन शब्दों और वाक्यों का प्रभाव श्रोता पर कैसा पड़ेगा। एक उदाहरण देखें– "कहीं अजीब देश में पहुँच गयी हूँ, जहाँ चारों ओर फूल ही फूल हैं जिन्हें हम गूलर–पाकड़–पीपल कहते हैं। उसमें भी फूल लगे हैं – चंपा के, गुलाब के, पारिजात के।"

इसी का परिवर्तित रूप देखें–

"कितना सुंदर देश है यह ! फूलों का देश ! राशि–राशि के फूल ! चारों ओर फूल ही फूल – चंपा के, गुलाब के, पारिजात कें!

दोनों उद्धरणों को यदि बोलकर पढ़ें तो स्पष्ट हो जाएगा कि किसे सुगमता के साथ पढ़ा जा सकता है। प्रथम उद्धरण लिखित रूप में है और दूसरा श्रव्य या मौखिक रूप में। पहले में प्रवाह और गति नहीं है जबकि दूसरे में वे दोनों विशेषताएँ हैं। रेडियो नाटकों या कार्यक्रमों की भाषा की प्रकृति दूसरे उदाहरण जैसी होनी चाहिए। रेडियो में श्रोता एक शब्द को दोबारा सुन नहीं सकता। रेडियो पर बोलने वाला उसे इतना अवकाश नहीं देता कि श्रोता वाक्य या वाक्यांश का अर्थ पूर्णतः समझ ले। श्रोता को यहाँ वाचक पर निर्भर रहना पड़ता है।

इस प्रकार रेडियो में भाषा की प्रकृति मौखिकता को लिए होती है। इसमें उन शब्दों और वाक्यों का अधिक मूल्य और महत्त्व होता है; जिन्हें सरलता से बोला जा सकता है क्योंकि श्रोता उन्हें सुनकर तत्काल अर्थ को ग्रहण कर लेता है। रेडियो के लिए कोई भी कार्यक्रम लिखने वाले के पास शब्दों का अच्छा भंडारण होना चाहिए। उसे एक ही शब्द का बार–बार प्रयोग न कर शब्द के पर्याय का प्रयोग करना चाहिए। इस प्रकार स्पष्ट है कि रेडियो पर मौखिक रूप से प्रयुक्त होने वाली भाषा का प्रयोग किया जाता है और इसकी प्रकृति सरलता, सहजता और स्वाभाविकता को लिए होती है।

4.5 रेडिया नाटक : उद्घोषणा लेखन, फीचर

(क) रेडियो नाटक

रेडियो के लिए लिखे जाने वाले नाटक को रेडियो नाटक कहा जाता है। यह नाटक रंगमंचीय नाटकों से सर्वथा भिन्न होता है क्योंकि

दोनों को लिखने की प्रणाली भिन्न है। रंगमंच के लिए लिखे जाने वाले नाटक दश्य और श्रव्य दोनों होते हैं। परिस्थितियों और वातावरण को सूचित करने वाले दश्यों का उल्लेख होता है। रंगमंच पर काम में आने वाली वस्तुओं का निर्देश होता है। सिद्धनाथ कुमार लिखते हैं– पात्रों की रूपरेखा, अवस्था, शारीरिक गठन, वस्त्र–विन्यास, अस्त्र–शस्त्र, अलंकार आदि द्वारा उनके देश, काल और व्यक्तित्व का परिचय मिलता है। पात्रों के घूमने–फिरने, उठने–बैठने आदि कार्य एवं भाव–भंगिमा, मुद्रा आदि भी घटनाओं एवं भावनाओं को प्रकट करने के बहुत बड़े साधन हैं। रेडियो नाटकों में इन सभी साधनों का अभाव होता है। इन सब की पूर्ति रेडियो नाटक में श्रव्य साधनों से करनी पड़ती है। रंगमंचीय नाटकों की नीरसता को भी दर्शक सहन कर लेते हैं क्योंकि उन्हें देखने वे स्वेच्छा से जाते हैं। रेडियो नाटक में नीरसता का जरा सा आभास होने पर वे रेडियो का बटन बंद कर देते हैं। इस प्रकार रेडियो नाटक लिखना और उसे प्रस्तुत करना अत्यन्त कठिन कार्य है।

रेडियो नाटक के पास उपकरण सीमित हैं। श्रव्य साधनों से ही नाटककार अपने नाटक का निर्माण करता है। नाटककार दश्यों को श्रव्य साधनों से प्रस्तुत करता है। दूसरी बात यह है कि नाटक की अवधि सीमित होती है। यह लगभग तीस मिनट तक की होती है। इस सीमित अवधि में ही नाटक की सभी अवस्थाओं को नाटककार को प्रस्तुत करना होता है। इन सीमाओं के होते हुए भी रेडियो नाटक में किसी भी दश्य, स्थान एवं पात्र की कल्पना सरलता से हो जाती है। विशाल व्यक्तित्वों वाले पात्र की कल्पना भी कर सकते हैं। आज का कोई भी कलाकार महाभारत के भीम या रामायण के राम या रावण से बातें करता हुआ सुना जा सकता है। पशु–पक्षियों के रूप में मानव का बदलता रूप सुना जा सकता है। दूसरे महायुद्ध में बचे हुए व्यक्तियों की व्यथा–कथा को सुन सकते हैं।

रेडियो नाटक में प्रतीकात्मक पात्रों को सरलता से प्रस्तुत किया जा सकता है जो कि बिलकुल अस्वाभाविक नहीं प्रतीत होते। रेडियो नाटकों में जड़ पदार्थों का मानवीकरण अत्यंत स्वाभाविक लगता है। इन नाटकों में पात्रों के समवेत स्वर को भी दिया जा सकता है।

मनोवैज्ञानिक चित्रण की अपार सुविधाएँ भी इन नाटकों में प्राप्त हो जाती हैं। किसी पात्र के अन्तर्द्वन्द्व को चित्रित करना हो तो उसके विरोध में उसके मन को खड़ा करके संवाद कराया जा सकता है। विक्षिप्तावस्था को भी इन नाटकों में प्रस्तुत किया जा सकता है। इसी प्रकार स्वप्न दश्यों को यहाँ बड़ी आसानी से उपस्थित किया जा सकता है। इन दश्यों में संगीत महत्त्वपूर्ण कार्य करता है। इसी प्रकार समय के बीतने की व्यंजना बड़ी सरलता से यहाँ की जा सकती है। इस प्रकार के दश्यों में संगीत का महत्त्वपूर्ण योगदान रहता है।

रेडियो नाटक के काल और स्थान का भी कोई बंधन नहीं है। अतीत और भविष्य, पर्वत–नदी, रेगिस्तान–समुद्र आदि को सरलता से प्रस्तुत किया जा सकता है। इन नाटकों में संकलनत्रय का भी कोई बंधन नहीं होता। रंगमंच के नाटकों की घटनाएँ आगे की ओर बढ़ती है जबकि यहाँ पर आवश्यकता पड़ने पर पीछे मुड़कर अतीत को भी देखा जा सकता है।

इसके अतिरिक्त रेडियो नाटकों में किसी भी स्थान के दश्य को प्रस्तुत किया जा सकता है। स्वर्ग–नरक, युद्ध, रेल, बस आदि को चित्रित किया जा सकता है। इन नाटकों में धीमी आवाज़ में बात को प्रस्तुत किया जा सकता है। जबकि रंगमंचीय नाटकों में कलाकारों को ऊँची आवाज में बोलना पड़ता है जोकि अस्वाभाविक लगता है। स्वगत कथन इस विधा में अत्यंत स्वाभाविक लगते हैं। इस प्रकार स्पष्ट है कि रेडियो नाटक अनेक संभावनाओं को अपने में सँजोए हुए हैं।

रेडियो नाटक के उपकरण

रेडियो नाटकों में दश्य तत्त्वों की कमी को श्रव्य साधनों से पूरा किया जाता है। ये श्रव्य साधन तीन हैं – भाषा, ध्वनि प्रभाव तथा संगीत। इन तीनों का आधार ध्वनि है। ध्वनि अभिव्यक्ति का सशक्त साधन है। इसकी अभिव्यंजना शक्ति इस पर निर्भर है कि किसी ध्वनि को कितने जोर से और कितने अन्तर से उत्पन्न किया जाता है। उसकी गति क्या है ? ध्वनि के वे गुण ही सभी श्रव्य कलाओं के सजनात्मक साधन हैं। हम अपने प्रतिदिन के जीवन में भी ध्वनि परिवर्तन के साथ ही अर्थ में परिवर्तन कर देते हैं। एक ही शब्द भिन्न–भिन्न ढंग से उच्चरित कर, उसकी आवत्ति कर अनेक भावनाओं को अभिव्यक्त कर देता है। यह बात संगीत और ध्वनि प्रभावों पर भी घटित होती है। रेडियो नाटक के तीन उपकरणों को हम विस्तत रूप से इस प्रकार देख सकते हैं–

1. **भाषा** – भाषा रेडियों नाटकों की जान है। इसके अभाव में नाटक की कल्पना ही नहीं की जा सकती। रेडियो नाटक का प्रासाद शब्दों पर ही खड़ा होता है। दश्य तत्त्वों की कमी शब्दों द्वारा पूरी की जाती है। यह शब्द श्रव्य रूप में होते हैं। शब्द ध्वनि रूप होते हैं। इन्हीं की सहायता से वह अपनी कृति का निर्माण करता है। रेडियो नाटककार उन शब्दों और वाक्यों को प्रयुक्त करता है जिसका श्रोता पर प्रभाव पड़ता है। दूसरे शब्दों में, रेडियो में बोले जाने वाले शब्दों का मूल्य है जिसे श्रोता तत्काल ग्रहण कर लेता है। रेडियो–लेखक के पास पर्याप्त शब्द–भंडार होना चाहिए। लिखा हुआ शब्द तो बार–बार चल सकता है परंतु रेडियो पर खटकता है अतः आवत्ति के स्थान पर शब्द के पर्याय का प्रयोग करना चाहिए। इस प्रकार भाषा प्रमुख श्रव्य साधन है जो रेडियो नाटक में कथोपकथन के रूप में और वक्ता के कथन के रूप में प्रयुक्त होते हैं। सरलता से बोले जाने वाले कथोपकथन सफल

माने जाते हैं। प्रवाह और गति उन्हें प्रभावशाली बना देते हैं। इनमें स्वाभाविकता, लयपूर्णता आदि के गुण होने चाहिए। वक्ता के कथन को नैरेशन कहा जाता है। इसके द्वारा पात्र वातावरण का निर्माण करता, घटनाओं की श्रंखला जोड़ता तथा घटनाओं की आलोचना करता है। ये भी दो प्रकार के होते हैं – कथा के पात्र व कथा से तटस्थ रूप में। इनकी भाषा भी सरल और सहज होनी चाहिए।

2. **ध्वनि प्रभाव** – इसका अर्थ है – वर्षा, बिजली, बाढ़, टेलीफोन, रेल, ट्रक, बंदूक आदि की ध्वनियाँ, जिनका प्रयोग रेडियो नाटक को प्रसारित करते समय किया जाता है। इन ध्वनि प्रभावों के रिकार्ड स्टूडियो में रखे जाते हैं। कुछ प्रभावों को प्रसारण के समय पैदा किया जाता है। नाटक–लेखक का इन प्रभावों से कोई संबंध नहीं होता, उसे तो उचित स्थान पर उचित ध्वनि प्रभाव का निर्देशन करना होता है।

इन प्रभावों का वातावरण–निर्माण में अत्यन्त महत्त्व है। रेडियो नाटकों में ध्वनियों और शब्दों द्वारा ही मानस चित्र बनाये जाते हैं। इस चित्र–निर्माण में लेखक के चित्र प्रधान शब्द और ध्वनि–योजना काम करती है। श्रोता को भी कल्पना शक्ति का प्रयोग करना पड़ता है। कई बार ध्वनि प्रभाव स्पष्ट नहीं हो पाते। अतः इसका व्यवहार कम ही करना चाहिए। इनका उतना ही उपयोग करना चाहिए जितने प्रभाव की आवश्यकता हो। इसी बात को लुई मैकनीस ने इदस प्रकार कहा है– "In general, a radio writer should be only ask for effects when they are (a) practicable (b) an asset to his story. They must not be overused . . . ."

3. **संगीत** – संगीत प्राचीन काल से नाटक का प्रमुख अंग रहा है। नाटक में इससे तात्पर्य है वाद्य–संगीत। रेडियो नाटक दो प्रकारका प्रयोग करता है – (1) स्वतंत्र रूप से तथा (2) संलाप की पष्ठभूमि के रूप में। रेडियो नाटक में संगीत का स्वतंत्र रूप में प्रयोग नाटक के आरंभ और अंत में किया जाता है। प्रारंभ में प्रस्तुत किया जाने वाला संगीत भावात्मक विषयवस्तु का प्रतिनिधित्व करता है तथा आगे प्रस्तुत होने वाली घटनाओं के लिए वातावरण का निर्माण करता है। आरंभ का संगीत श्रोताओं में उत्सुकता जाग्रत करता है जबकि अंत का संगीत नाटक की समाप्ति की सूचना देता है। संगीत के प्रयोग से दश्य–परिवर्तन किया जाता है। दश्य परिवर्तन के लिए रेडियो में एक ओर उपकरण है, वह है शान्ति। दो दश्यों के बीच में कुछ पलों का विराम दश्य–परिवर्तन को सूचित करता है।

घटनाओं की कड़ियों को जोड़ने तथा उनकी गति को सूचित करने के लिए भी संगीत का व्यवहार होता है। दश्यों में शीघ्र होते परिवर्तन इसी से सूचित किये जाते हैं। दश्य परिवर्तन का संगीत संक्षिप्त होता है ताकि नाटक की गति में बाधा उत्पन्न न हो। नाटकों में अनेक स्थानों पर प्रतीकात्मक संगीत का भी उपयोग होता है। इसके द्वारा किसी विशेष भावना, विशेष व्यक्ति या विशेष स्थान को सूचित किया जाता है।

पष्ठभूमि के लिए प्रयुक्त किये गये संगीत से अनेक उद्देश्यों की पूर्ति की जाती है। कथोपकथनों या संलाप की पष्ठभूमि में संगीत की योजना करके उसके प्रभाव को तीव्र बनाया जाता है। यह तभी संभव है जब उचित स्थान पर उचित संगीत का उपयोग किया जाए। शोक अवसर पर करुणा व्यंजक संगीत ही उचित और प्रभावोत्पादक होगा। भावोद्दीपन के अतिरिक्त भाव–परिवर्तन में भी संगीत का आश्रय लिया जाता है। पात्रों के ह्रदय में यदि तेजी से भाव–परिवर्तित हो रहे हों, तो संगीत के प्रकार में परिवर्तन करके इसे व्यंजित किया जा सकता है। पात्र के मन में चल रहे अर्न्द्वन्द्व को भी संगीत द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता है। इसी प्रकार उल्लास और आनंद से पूर्ण दश्य को या प्राकृतिक सौंदर्य को प्रस्तुत करने के लिए पष्ठभूमि संगीत का प्रयोग कर उचित वातावरण का निर्माण किया जा सकता है। कई बार नीरस प्रसंगों को भी संगीत के सहयोग से सरस बनाया जाता है।

इसी प्रकार संगीत के प्रयोग से भावावेश के प्रसंगों को भी प्रस्तुत किया जाता है। उदाहरण के लिए दौड़ना, हाँफना, रुकना, पुनः चलना आदि सभी क्रियाओं को संगीत के द्वारा उपस्थित किया जा सकता है। इसी तरह युद्ध अथवा आँधी–तूफान, वर्षा आदि के ध्वनि प्रभावों के साथ संगीत का भी मेल कराया जाता है।

काल–परिवर्तन या ऐतिहासिक काल में परिवर्तन को प्रस्तुत करने के लिए भी रेडियो नाटकों में संगीत का उपयोग किया जाता है। प्रत्येक युग का अपना एक संगीत होता है। प्राचीन युद्धों में तलवार, भाले चलते थे जबकि आज कल गोलियों, बमों की आवाज़ें आती हैं। इस भिन्नता को ध्वनि प्रभाव के सहयोग से संगीत प्रकट कर सकता है।

संगीत की योजना का कार्य तो प्रस्तुतकर्ता करते हैं परंतु लेखक को केवल संगीत का निर्देश देना होता है। इस प्रकार संगीत रेडियो नाटक का अत्यन्त प्रमुख और महत्त्वपूर्ण साधन है परंतु इसका प्रयोग उचित स्थान पर सोच–समझकर करना चाहिए। लुई मैकनीस के शब्दों में – जहाँ तक संगीत नाटक के प्रयोजन को सिद्ध कर सके, वहीं तक उसका उपयोग होना चाहिए। कहीं ऐसा न हो कि वही प्रधान हो जाए और नाटक को संगीत सम्मेलन स्थल में बदल दे।

(ख) उद्घोषणा लेखन

विज्ञापन आज के युग में एक ऐसी प्रविधि सम्पन्न विद्या है जिसका मुख्य उद्देश्य ग्राहक, उपभोक्ता या अन्य लोगों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर जनसमुदाय को वस्तु खरीदने के लिए अनुप्रेरित करना है। इसके लिए विज्ञान व्यवस्थापक अपने नियोजक या अनुबन्धकर्ता से निर्धारित शुल्क पर विज्ञापन प्राप्त कर किसी साधन का उपयोग कर प्रकाशित या प्रसारित करता है। पश्चिमी विद्वान् नायस्ट्रोम का इस संबंध में कथन है' "विज्ञापन का माध्यम वह साधन या वाहन है जिससे विज्ञापन या विज्ञापित संदेश किसी व्यक्ति या समुदाय तक उन्हें प्रभावित करने की आशा से पहुँचाया जाता है।" संप्रेषण माध्यमों में यह एक ऐसा माध्यम है जो प्रचारित संदेश या उत्पाद वस्तु को अधिकाधिक पाठकों या दर्शकों तक पहुँचाता है। यह माध्यम जनता की मनोवत्ति, उनके रुझान आदि का अध्ययन कर उसके आधार पर ऐसे उपकरणों का संयोजन करता है जो राष्ट्रीय, प्रांतीय या स्थानीय आवश्यकताओं के अनुसार प्रस्तुत किये जा सकें। जब यह इलेक्ट्रोनिक माध्यमों का चुनाव करता है जो निश्चय ही करोड़ों उपभोक्ताओं तक पहुँचता है। तथा वस्तु, विचार अथवा उत्पाद के संबंध में जनमत का निर्माण कर जनसमर्थन जुटाने का और प्रतिष्ठान की छवि को बनाने का कार्य कर उसकी विश्वसनीयता में वद्धि करता है।

टेलीविजन पर विज्ञापन दो रूपों में प्रस्तुत किया जाता है। अपने पहले रूप में यह प्रायोजित होता है। प्रायोजक किसी कार्यक्रम को खरीद कर अपने विज्ञापन को प्रसारित करता है। प्रायः ये कार्यक्रम प्रायोजित कार्यक्रम कहलाते हैं और अधिकाधिक लोकप्रिय होते हैं। बाज़ार के अध्ययन–सर्वेक्षण को, दर्शकों की अधिकाधिक संख्या को ध्यान में रखकर ऐसे कार्यक्रम खरीदे जाते हैं और वस्तु या उत्पाद को कार्यक्रम के आरंभ, मध्य और अंत में विज्ञापित किया जाता है तथा संदेश को जनसमुदाय तक पहुँचाया जाता है। विज्ञापन का दूसरा रूप 'स्पॉट' विज्ञापन है। यह साधारण विज्ञापन होता है। इसे किसी कार्यक्रम के आरंभ, मध्य या अंत में प्रसारित किया जाता है। इन दोनों रूपों में अंतर केवल इतना है कि प्रायोजित कार्यक्रम के अंतर्गत विज्ञापन तीन बार प्रसारित होता है जबकि साधारण में एक बार।

टेलीविजन पर प्रसारित विज्ञापनों के कुछ प्रकारों में – नाट्यीकरण (Dramatized Form), प्रदर्शन (Demonstration) स्लाइड (Slides), विश्वसनीय (Reliance), एनीमेटड (Animated), संगीात्मक तथा सीधी उद्घोषणा (Straight Announcement) आते हैं। नाट्यीकरण में वस्तु को कहानी के माध्यम से अभिनय द्वारा, प्रदर्शन में वस्तु की उपयोगिता के प्रदर्शन द्वारा, स्लाइड में वस्तुओं के स्थिर स्लाइड्स तथा पीछे से उद्घोषणा द्वारा, विश्वसनीय में आश्वस्त व्यक्ति की वस्तु की चर्चा के द्वारा, एनीमेटड में कार्टून द्वारा तथा संगीतात्मक गीत–संगीत के द्वारा विज्ञापन प्रस्तुत किये जाते हैं। सीधी उद्घोषणा वाले विज्ञापन में अभिनेता या अभिनेत्री वस्तुविशेष पर बातचीत करते हुए दिखाये जाते हैं जैसे विस्पर का विज्ञापन प्रदर्शित किया जाता है।

किसी भी सफल और आकर्षक विज्ञापन में उसकी कॉपी अर्थात् लेखन की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। टेलीविजन के लिए लिखे जाने वाले विज्ञापनों में शब्द तथा चित्र दोनों महत्त्वपूर्ण होते हैं। इसके लिए कॉपी लेखक को उत्पाद और उपभोक्ता से संबंधित जानकारी तथा उसके प्रस्तुतीकरण और तकनीक का ज्ञान – इन दोनों को दष्टिपथ में रखना होता है। इसके अतिरिक्त गहन अध्ययन, विशाल शब्द भंडार, ग्राहक के मनोविज्ञान का ज्ञान आदि बातें उसे सफल कॉपी लेखक बनाने में सहायता करती हैं। इन्हीं बातों के बल पर वह उपभोक्ताओं को आकर्षित कर, उनकी आवश्यकताओं को प्रकट कर उन्हें वस्तु या उत्पाद को खरीदने के लिए अनुप्रेरित करता है।

यद्यपि विज्ञापन संबंधी उपर्युक्त बातों में उद्घोषणा लेखन की चर्चा स्वयमेव हो गई है फिर भी हम यहाँ पर इस विषय–विशेष पर संक्षेप में चर्चा करेंगे। उद्घोषणा विज्ञापन का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। रेडियो, टी॰ वी॰ आदि पर समाचार या किसी कार्यक्रम के प्रचारित–प्रसारित होने से पूर्व आने वाले कार्यक्रम विशेष के बारे में उद्घोषक जो संकेत देते हैं, उसी को उद्घोषणा कहा जाता है। इस उद्घोषणा में एक उद्घोषक भी अगले कार्यक्रम का संकेत दे सकता है और कोई अभिनेता या अभिनेत्री भी इसके बारे में बता सकते हैं। इसे समाचार या आगे प्रस्तुत किये जाने वाले कार्यक्रम की भूमिका भी कहा जा सकता है।

अब प्रश्न उठता है कि उद्घोषणा को लेखन कैसे किया जाता है, उसमें कौन–कौन सी बातें होनी चाहिएं, किस बात या तथ्य का संकेत होना चाहिए। इस प्रकार के अनेक प्रश्न हैं जिनकी उद्घोषणा लेखन करते हुए लेखक को ध्यान रखना पड़ता है। पहली बात विषयवस्तु से जुड़ी हुई है। जिस कार्यक्रम या नाटक, धारावाहिक, चित्रहार, गीतमाला आदि को उस प्रस्तुत किया जाना है, लेखक को उसका पूर्णतः ज्ञान होना चाहिए। यदि लेखक को इस बात की जानकारी है कि 8.00 बजे इस कार्यक्रम ने प्रसारित होना है तो वह उसके संबंध में उद्घोषणा का लेखन करेगा। ज्ञान और जानकारी के अभाव में यह लेखक कार्य नहीं कर सकता। वह इस बात को जानता है कि रेडियो को लाखों श्रोता सुन रहे हैं और टी॰ वी॰ को करोड़ों दर्शक देख रहे हैं, अतः उसे उद्घोषणा लेखन से पूर्व उद्घोषित होने वाले कार्यक्रमों और समय की जानकारी प्राप्त कर लेनी चाहिए।

विषयवस्तु के बाद दूसरा पक्ष आता है – कला पक्ष जिसके अंतर्गत भाषा और शैली को रखा जा सकता है। जब उद्घोषणा लेखक के पास कार्यक्रमों की सूची आ जाती है और उनके प्रसारित होने का समय आ जाता है तब वह उद्घोषणा–लेखन के कार्य की ओर अग्रसर होता है। लेखन के साथ भाषा का गहरा संबंध है। बिना भाषा के लेखन नहीं हो सकता। अपने शब्द भंडार में से वह ऐसे शब्द चुनता है जो पाठक या दर्शक के ध्यान को आकर्षित करें। आकर्षक ओर 'मोहक शब्दों का चुनाव उद्घोषणा लेखन को प्रभावशाली और शक्तिशाली बना देता है। उद्घोषणाएँ प्रायः एक वाक्य की होती है। इस एक वाक्य में आकर्षक, मोहक, सरस, सरल, संक्षिप्त शब्दों का वह चुनाव करता है ताकि एक ही वाक्य से वह कुर्सी से उठ रहे श्रोता–दर्शक को बाँध कर फिर से बिठा सके। भाषा में उत्सुकता और जिज्ञासा का भाव भी तो उद्घोषणा और प्रभावोत्पादक बन जाती है। सफल उद्घोषणा लेखक को इन बातों का ध्यान रखना चाहिए।

(ग) **फीचर**

फीचर आधुनिक युग की एक नयी विधा है जो पत्रकारिता के खेत्र में पल्लवित और पुष्पित हुई है। यह विधा निबंध और लखे से मिलती–जुलती है तो भी यह इन दोनों से भिन्न रूप में विकसित हुई है। आजकल प्रकाशित होने वाले समाचार–पत्रों में मुख्य रूप से चार अंग – समाचार, लेख, चित्र और फीचर होते हैं। पहले तीन अंग सभी समाचार–पत्रों में थोड़े–बहुत अंतर से एक समान होते हैं। परन्तु फीचर एकदम अलग होते हैं। इसका कारण है कि फीचर का अपना एक पथक् व्यक्तित्व तथा पहचान होती है। उसकी अपनी विशेषताएँ होती हैं। किसी समाचार पत्र या पत्रिका की प्रसार संख्या बढ़ाने में तथा उसकी लोकप्रियता को चार चाँद लगाने में इसकी बड़ी भारत भूमिका होती है। जो समाचार पत्र या पत्रिकाएँ जितने आकर्षक और ज्ञानवर्द्धक फीचर प्रकाशित करते हैं, पाठक उसी की ओर अधिकाधिक आकर्षित होते हैं।

फीचर किसे कहते हैं ? इसकी परिभाषा क्या है ? इन प्रश्नों का उत्तर देते हुए डेनियल आर॰ विलियमसन लिखते हैं कि फीचार ऐसा रचनात्मक तथा कुछ–कुछ स्वानुभूतिमूलक लेख है, जिसका गठन किसी घटना, स्थिति अथवा जीवन के किसी पक्ष के संबंध में पाठक का मूलतः मनोरंजन करने एवं सूचना देने का उद्देश्य से किया गया हो। वस्तुतः यह एक ऐसी विधा है जिसमें ज्ञान, कल्पना, यथार्थ, घटनाओं, कौतूहल, चमत्कार आदि को गद्य में प्रस्तुत किया जाता है। इसे ऐसी शैली में प्रस्तुत किया जाता है कि पाठक के सम्मुख उस स्थान, वातावरण और घटना का चित्र साकार हो जाता है।

फीचर में कौन–कौन से गुण होने चाहिएं? इसके क्या लक्षण हैं? इन प्रश्नों पर विचार करते हुए श्री प्रेमनाथ चतुर्वेदी का कथन है– फीचर स्थिति का विहंगावलोकन ही नहीं करता, वह प्रश्नों का उत्तर भी देता है और अज्ञात का ज्ञान भी कराता है। फीचर मानो किसी घटना की दूरबीन से जाँच करता है। अच्छे फीचर के गुणों की जब हम बात करते हैं, तो उसके मूल चार आधारों पर हमारा ध्यान जाना आवश्यक है। ये हैं – जिज्ञासा, सत्यता, योग्यता और विश्वास। डॉ॰ हरिमोहन ने केवल दो आधारों – जिज्ञासा और सत्यता को ही स्वीकार किया है। उन्होंने इन दो के साथ मानवीय भावना, चित्रात्मकता और स्पष्ट विश्लेषण को भी जोड़ा है। उनके अनुसार स्पश्ट विश्लेषण के अभाव में फीचर दुरूह, विचार प्रधान निबंध बन जाता है। इसी प्रकार चित्रात्मक और रोचकता के न होने पर वह रिपोर्ताज बनकर रह जाता है। फीचर का उद्देश्य सत्य को आकर्षक, जिज्ञासामूलक और ज्ञानवर्द्धक ढंग से उजागर करना होता है। इसलिए फीचर में तथ्यों के प्रभाव और महत्त्व पर विशेष बल दिया जाता है।

फीचर में कल्पना का होना उसके प्रभाव में वद्धि करता है। फीचर में क्योंकि किसी विशेष और विचित्र सत्य का विश्लेषण होता है। कल्पना, पाठक की जिज्ञासा को बढ़ाती व शान्त करती है तथा उसे नये सत्यलोक में ले जाती है। एलमो स्काट वाटसन का कहना है कि फीचर किसी भावना के इर्द–गिर्द चक्कर काटता है। समाचार को इस प्रकार का रूप दिया जाता है कि वह आकर्षक बने और आम पाठक की भावनाओं का स्पर्श करे। पाठक जितना मानवीय भावनाओं से आन्दोलित होता है, उतना समाचार के महत्त्व से नहीं। फीचर को पढ़ने से पाठक को एक प्रकार का संतोष प्राप्त होता है जो मनोरंजन, शिक्षा या जानकारी किसी भी रूप में हो सकता है।

साधारण समाचार की अपेक्षा फीचर में लेखक का अनुभव, उसकी संवेदना तथा उसकी ललित शैली समाचार को पिरोये होती है। समाचार बड़ी बासी हो जाता है परन्तु फीचर उसी समाचार का आधार लेकर भी सदा ताज़गी से भरा रहता है। उसमें बासीपन नहीं आ पाता। डॉ॰ विवेकीराय के शब्दों में– "फीचर समाचारों अथवा सूचनाओं का वैचारिक कोण से स्वस्थ स्पर्श है। वह पत्रकार द्वारा सम्पन्न ऐसा शुद्ध साहित्यिक कार्य है, जो सजनात्मक मूल्यों से जुड़ा होता है। फीचर में सूचनात्मकता को भावात्मकता और कल्पनात्मकता का पुट देकर ऐसे प्रस्तुत किया जाता है कि मुख्य तथ्य की विश्वसनीयता और पुष्ट होती चलती है।"

फीचर के प्रकार

फीचर का क्षेत्र अत्यंत विस्तत है। इसे राई से लेकर पहाड़ तक किसी भी विषय और घटना को केंद्र में रखकर लिखा जा सकता

है। दूसरे शब्दों में, वह व्यक्ति प्रधान विधा न होकर विषय प्रधान विधा है। इसलिए इसके वर्गीकरण का आधार भी विषय–वस्तु ही अधिक उपयुक्त है। विस्तत क्षेत्र में फैला होने के कारण इसके प्रकारों को निर्धारित करना अत्यंत कठिन है। विषय की विविधता और विस्तार की दष्टि से इसके निम्नलिखित वर्ग और प्रकार बनाये जा सकते हैं–

(1) विशिष्ट घटना (शुद्ध, अकाल, दंगा आधारित)।

(2) राजनीतिक घटनाओं पर आधारित।

(3) सामाजिक समस्याओं को उभारने वाले।

(4) वाद–विचार संबंधी चिन्तनात्मक फीचर।

(5) स्थानिक या आंचलिक फीचर।

(6) व्यक्ति विशेष की उपलब्धियों पर।

(7) समाचार आधारित फीचर।

(8) मेला, उत्सव, मनोरंजन आदि पर आधारित सांस्कृतिक फीचर।

(9) महत्त्वपूर्ण साहित्यिक प्रकाशन पर फीचर।

(10) सोद्देश्य फीचर।

डॉ॰ विवेकीराय के उपर्युक्त वर्गीकरण में अंतिम फीचर अस्पष्ट है। सभी फीचर किसी न किस उद्देश्य से लिखे जाते हैं तब अलग से वर्ग का कोई अर्थ नहीं है। दूसरा वर्गीकरण प्रकृति के आधार पर डॉ॰ हरिमोहन ने किया है–

(1) समाचारी फीचर अथवा तात्कालिक फीचर।

(2) विशिष्ट फीचर।

तात्कालिक फीचर समाचार आधारित होता है जिसमें किसी दैनिक समाचार को मनोरंजक ढंग से प्रस्तुत किया जाता है। इसमें तथ्यात्मकता अधिक और कल्पनाशीलता कम होती है। विशिष्ट फीचर में सामग्री की संग्रह करना पड़ता है। पुरानी सामग्री को भी काम में लाया जा सकता है। पुरानी स्मतियों को पुनर्जीवित भी किया जा सकता है। उत्सवों, ऋतुओं, पर्यटन स्थलों, ऐतिहासिक स्थानों, महापुरुषों, चिरस्मरणीय घटनाओं तथा जीवन के शाश्वत प्रश्नों पर लिखे गये फीचर विशिष्ट फीचर कहे जाते हैं। इन्हें पाठक सदैव पसंद करते हैं और ये कभी बासी नहीं होते।

प्रेमनाथ चतुर्वेदी ने फीचर के इस प्रकार भेद किये हैं–

(1) वर्णनात्मक

(2) चित्रात्मक

(3) व्याख्यात्मक

ये वर्ग भी उचित नहीं लगते क्योंकि प्रत्येक फीचर में दो या सभी पद्धतियों का प्रयोग होता है। अतः इन्हें पथक् वर्गों में रखना उचित नहीं है।

फीचर की रचना-प्रक्रिया

फीचर–लेखन की प्रक्रिया त्रिआयामी है। अपने पहले आयाम में यह सर्जनात्मक साहित्य की भाँति घटनाओं और स्थितियों की संवदना को उभारती है, विचारों और भावों से नया संसार रचती है, उद्वेलित और आंदोलित करती है, सूचनात्मक साहित्य के अनुरूप ज्ञान में वद्धि करती है। दूसरी ओर यह समाचार संसार से समाचार तत्त्वों को ग्रहण करती है। इसे लिखने के लिए घर से बाहर आना पड़ता है, स्थितियों का सामना करना पड़ता है तभी इस विधा का निर्माण होता है। इसके लिए लेखक में गहन निरीक्षण, मानवीय दष्टिकोण, घटनाओं को भेद कर देखने की क्षमता, मार्मिक प्रसंगों की पहचान तथा उन्हें कलात्मक ढंग से प्रस्तुत करने की क्षमता होनी चाहिए। अनुभव की गहनता, अध्ययन की गहराई तथा विषय–ज्ञान की व्यापकता इसे और आकर्षक बना देती है।

इस लेखन प्रक्रिया पर पहला बिंदु है – विषय का चुनाव। फीचर के लिए ऐसे विषय को चुनना चाहिए जो लोकरुचि का हो। मानव के हृदय का स्पर्श करे। पाठक के मन में उत्सुकता जाग्रत करे और उसे नयी जानकारी प्रदान करे। यद्यपि विषय तो कोई भी चुना जा सकता है परन्तु पाठक के लिए उसकी उपयोगिता और समसामयिकता को ध्यान में रखना भी आवश्यक है। लेखक को इस बात का ध्यान भी रखना चाहिए कि वह फीचर किस पत्र या पत्रिका के लिए लिख रहा है और उसके पाठक किस वर्ग या रुचि के हैं?

दूसरे बिंदु के अंतर्गत सामग्री संकलन को लिया जताा है। इस कार्य के लिए लेखक को घटना स्थल, पर्यटन स्थल, मेला–स्थल, रीति–रिवाज, वस्त्राभूषण आदि के लिए उन स्थलों पर जाना पड़ता है जहाँ से सम्बद्ध विषय में सामग्री उपलब्ध हो सकती है। लेखक अपनी समस्त सामग्री–लेखनी, नोट बुग, कैमरा, टेपरिकार्डर आदि साथ लेकर जाता है। केवल निरीक्षण से ही काम नहीं चलता, उसे वहाँ पर रहने वाले लोगों से मिलकर, बातचीत करके घटनाओं की सत्यता की परख करनी पड़ती है। घटना या स्थान को प्रत्येक कोण से देखकर सामग्री को इकट्ठा करना पड़ता है। उसे आँख, कान को खुला रखकर तथा बुद्धि को सजग करके सामग्री संकलित करनी पड़ती है। निरीक्षण शक्ति की प्रखरता, तर्क–शक्ति की अकाट्यता दष्टि की रचनात्मकता उसे लेखन की आकर्षक और प्रभावशाली बनाती है।

सामग्री संकलन के पश्चात् उसकी अभिव्यक्ति का बिन्दु उभरता है। सामग्री संकलन के बाद उसका लेखन कार्य आरंभ होता है। इसके लिए कोई निश्चित नियम नहीं है क्योंकि लेखन की प्रक्रिया लेखक की निजी होती है। फिर भी उसे एक पैरे में 'इण्ट्रो' या आमुख बनाना चाहिए जिसमें विषय की संक्षेप में जानकारी हो। या आमुख रोचक और आकर्षक हो। पाठक की उत्सुकता को जाग्रत करे। कम से कम शब्दों का, सरल वाक्यों का प्रयोग करते हुए पहला अनुच्छेद बनाना चाहिए। इसमें काव्यात्मक पंक्तियों, उद्धरणों, रेखाचित्रों, प्राकृतिक दश्यों की झाँकी को प्रस्तुत किया जा सकता है।

मध्य भाग में विषय से सम्बद्ध घटनाओं का विस्तार, स्थितियों, क्रियाओं को जोड़ कर आगे बढ़ा जा सकता है, परंतु पाठक के साथ पाठक की जिज्ञासा को बढ़ाते जाना कुशल लेखक का काम है। यह भाग संतुलित, विवेचित और विश्लेषित होना चाहिए। इसमें ललित निबंध, व्यंग्य, रेखाचित्र, लघुकथा आदि साहित्यिक विधाओं की सहायता ली जा सकती है। इसे लिखते हुए लेखक का व्यक्तित्व हावी नहीं होना चाहिए। विषय और वातावरण प्रमुख रहें।

अंतिम भाग सारांश के रूप में ही होता है। वह इस भाग में प्रश्नचिह्न लगा सकता है, सुझाव दे सकता है, पाठक को सोचने के लिए बाध्य कर सकता है। अंतिम पैरे के माध्यम से लेखक का दष्टिकोण या उसका संदेश पाठक को प्रेषित होना चाहिए। फीचर का शीर्षक उसका प्राण होता है। इसका सोच–विचार करके चुनाव करना चाहए। यदि शीर्षक नाटकीय, काव्यात्मक, सनसनीखेज, अनुप्रासी, आश्चर्यबोधक, प्रश्नसूचक है तो निश्चय ही इससे फीचर का आकर्षण बढ़ेगा। सामान्य शीर्षक कभी सफल नहीं माने जाते अतः शीर्षक इस प्रकार का होना चाहिए कि पाठक उसके आकर्षण में बँधकर उसे पढ़ने को उत्सुक हो जाये।

छायांकन

फीचर लेखन में केवल शब्द ही नहीं होते बल्कि छायाकारी भी उसे आकर्षक और प्रभावशाली बनाती है। फीचर की प्रवत्ति क्योंकि दश्यमूलक अधिक है अतः वह छायाकारी में अधिक मुखर होती है। कई बार छायाकारी शब्दों की कमी को पूरा कर देती है। फीचर के लिए प्रयुक्त किये जाने वाले चित्र किस प्रकार के होने चाहिए, उसके लिए निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए–

(1) छायाचित्र सुंदर, सुस्पष्ट और मुद्रण की दष्टि से अच्छे हों।

(2) विषयवस्तु से सम्बद्ध चित्र ही प्रयुक्त किये जाने चाहिए।

(3) छायाचित्र विषयवस्तु को साकार करने वाले, उसका विस्तार करने वाले तथा उसे सवाक् बनाने वाले होने चाहिए।

(4) श्वेत–श्याम चित्र गहन, स्पष्ट और अच्छे कागज़ पर मुद्रित होने चाहिए। यदि रंगीन हों तो रंग गहरे, स्पष्ट तथा चमकदार होने चाहिए।

फीचर में पारदर्शियों (Transperencies) का प्रयोग भी किया जाता है। इनके माध्यम से एक–एक रेखा उभर कर सामने आ जाती है। इनके संयोजन में भी सुविधा रहती है।

4.6 दश्य-श्रव्य माध्यम (चलचित्र, दूरदर्शन, वीडियो)

जनसंचार माध्यमों के विकास का इतिहास पूंजीवादी विकास से जुड़ा हुआ है। आज से पूर्व संचार के जो साधन विद्यमान थे, उनसे पूंजीवादी विकास से जुड़ा हुआ है। आज से पूर्व संचार के जो साधन विद्यमान थे, उनसे पूंजीवादी विकास से जुड़ी आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं हो सकती थी। पूंजीवादी वर्ग बाजार पर नियंत्रण रख सके, इसके लिए आवश्यक था कि संचार के साधनों का विकास हो। तार के आविष्कार ने इसमें प्रमुख रूप से योगदान किया। इसके बाद तो संचार के क्षेत्र में क्रांति ही आ गई। नये–नये आविष्कार नये आयामों को और नयी दिशाओं को उद्घाटित कर रहे हैं। टेलीफोन, रेडियो, सिनेमा, टेलीविजन तथा कंप्यूटर के आविष्कार ने तो संचार के साधनों में क्रांतिकारी परिवर्तन ला दिया है। पत्र–पत्रिकाएँ, रेडियो, ट्रांजिस्टर, सिनेमा और टी॰ वी॰ आज विराट् रूप धारण कर चुके हैं। यहाँ पर हम फिल्म, टेलीविजन एवं वीडियो जैसे दश्य–श्रव्य माध्यमों तक अपनी बात को सीमित रखेंगे।

चलचित्र

लगभग सौ वर्ष पूर्व मूवी कैमरे का आविष्कार हुआ। इसके परिणामस्वरूप सिनेमा सामने आया और इसने कुछ ही वर्षों में सारे संसार को जकड़ लिया। प्रारंभ में यह मूक था। इसमें चलते फिरते चित्रों को देखा जा सकता था लेकिन तीस वर्ष के बाद वह सवाक् हो गया। अब चलते फिरते चित्रों के साथ आवाज भी आने लगी। प्रारंभ में यह श्वेत–श्याम था परंतु गत शताब्दी के मध्य तक यह रंगीन भी हो गया।

सिनेमा प्रमुख रूप से मनोरंजन का साधन था परंतु वत्तचित्रों और न्यूज रीलों के द्वारा वह सूचना और ज्ञान के प्रचार–प्रसार का माध्यम ही बना। टेलीविजन के आगमन से पूर्व तक यह मध्य वर्ग और निम्न वर्ग के मनोरंजन का लोकप्रिय और सस्ता साधन था। केबल टी॰ वी॰, वीडियो और टी॰ वी॰ से इसे कुछ चोट अवश्य पहुँची है फिर भी यह आज भी दर्शकों को आकर्षित करता है। भारत में 800 के लगभग फिल्में प्रतिवर्ष बनती हैं।

नाटक की भाँति फिल्म एक कलापूर्ण माध्यम है। इसमें परम्परागत कलाओं के साथ आधुनिक कलाओं का भी संगम होता है। कहानी, संवाद, अभिनय, छायाकारी, संगीत, नत्य आदि विभिन्न विधाओं की अभिव्यक्ति इस माध्यम में होती है। सिनेमा के माध्यम से एक पूरी कहानी दिखा सकने की क्षमता के कारण इसका उपयोग फीचर फिल्में बनाने में होने लगा परंतु फिल्म बनाना कहानी या नाटक लेखन की भाँति यह एक व्यक्ति का कार्य नहीं है। वस्तुतः फिल्म एक सामूहिक कला है जिसे बनाने में एक बड़े बजट की आवश्यकता पड़ती है। फिल्म के निर्माण के बाद उसके प्रदर्शन का पक्ष उभरता है। यदि उसे दर्शकों ने पसंद किया तो फिल्म हिट हो जाती है नहीं तो 'फ्लाप'। इस स्थिति में लागत भी वापस नहीं आती। इस प्रकार फिल्म–निर्माण में एक बहुत बड़ा जोखिम पड़ता है। फिल्म को वित्तीय ऋण देने वाले ब्याज सहित पैसा चाहते हैं। ऐसी स्थिति में निर्माता–निर्देशक इस प्रकार का मसाला प्रयुक्त करते हैं कि फिल्म चले और उनका पैसा लाभ–सहित वापस आए।

फिल्मों के इस अर्थशास्त्र ने अच्छी फिल्मों के निर्माण को केवल भारत में ही नहीं अपितु विश्व में भी हतोत्साहित किया है। इसलिए मनोरंजन के नाम पर हिंसा, सेक्स, बलात्कार, चोरी, ठगी आदि को दर्शकों के सामने परोसा जाता है। इन फिल्मों से किसी प्रकार का शुभ संदेश संप्रेषित नहीं होता बल्कि ये दर्शकों को भोगवादी व निष्क्रिय बनाती हैं। जीवन के उच्च मूल्यों के प्रचार के स्थान पर ये अपराध, हिंसा और भोगवाद के आनंद को ही प्रदर्शित करती हैं।

इस प्रकार जन–संचार के इस सशक्त माध्यम को ज्ञान के प्रसार, शिक्षा के फैलाव तथा अज्ञान के नाश के स्थान पर अपराध, हिंसा को प्रदर्शित करने वाले तथा भोगवादी संस्कृति का प्रचार–प्रसार करने वाले माध्यम के रूप में दबल दिया गया है।

दूरदर्शन

जिस गति से रेडियो द्वारा ध्वनि तरंगें भेजी जाती हैं, उसी गति से टेलीविजन तरंगों के माध्यम से एक साथ दश्य और आवाज को दूसरे स्थान पर भेजा जाता है। संचार के क्षेत्र में यह एक क्रांतिकारी परिवर्तन है। टेलीविजन द्वारा दश्यों को आवाज के साथ दिखाये जाने से कथित सत्य की स्थापना को एक सुदढ़ आधार मिला है। यद्यपि यह एक महँगा माध्यम है फिर भी अपनी प्रभाव क्षमता के कारण यह अधिकाधिक लोगों को आकर्षित करता है। टेलीविजन के प्रवेश ने सभी क्षेत्रों में परिवर्तन ला दिया है। गत दस–पन्द्रह वर्षों में इसने देश के परिदश्य को ही बदल कर रख दिया है। दैनिक जीवन में हुई इसकी घुसपैठ ने जीवन के सभी क्षेत्रों को प्रभावित किया है। इस माध्यम से हमारे जीवन में सूचनाओं का अंबार लग गया है जिसके परिणामस्वरूप जीवन–शैली ही बदल रही है। इस पर प्रदर्शित किये जाने वाले विज्ञापनों ने तो दर्शक को उपभोक्ता बना दिया है। इतने तेल, शैंपू,ण साबुन, वाहनों के विज्ञापन इस पर दिखाये जाते हैं कि कई बार तो ऐसे लगता है कि इनके बिना हमारा जीवन बेकार है।

शिक्षा की दष्टि से यह एक अत्यंत उपयोगी और आकर्षक दश्य–श्रव्य माध्यम है। इसका विकसित और विकासशील देशों में ज्ञान के प्रसार के लिए बड़े पैमाने पर प्रयोग हो रहा है। देश में यद्यपि यह रेडियो की भाँति सस्ता नहीं है, फिर भी उपग्रह संचार, सूक्ष्म संगणक आधारित संरचनाओं और दूरदर्शन के सेटों के घटते मूल्यों को देखते हुए कल्पना की जा सकती है कि यह माध्यम शीघ्र ही अधिकाधिक जनसमुदाय को सुलभ हो जायेगा। इस माध्यम का उपयोग प्रयोगशाला परीक्षणों के प्रदर्शन, कक्षाओं में विशेषज्ञ प्राध्यापकों के व्याख्यान आदि को सहजतापूर्वक सुलभ कराने के लिए किया जा सकता है। कुछ देश तो केबल टी॰ वी॰, इलेक्ट्रोनिक श्याम पट्ट, इलेक्ट्रोनिक पुस्तक आदि सुविधाओं का दूरदर्शन शिक्षा के लिए सफलतापूर्वक उपयोग कर भी रहे हैं। आधुनिक युग में शिक्षा के क्षेत्र में यह एक अत्यंत शक्तिशाली शिक्षण युक्ति सिद्ध हो रहा है। दोपहर के राष्ट्रीय प्रसारण में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के शैक्षिक कार्यक्रम, जी॰ टी॰ वी॰ पर प्रसारित होने वाले जी एजुकेशन, कंप्यूटर–शिक्षण आदि शैक्षणिक कार्यक्रम लोकप्रिय हो रहे हैं।

शैक्षणिक कार्यक्रमों के प्रभाव को भी हम अपनी जीवन–शैली में आ रहे परिवत्रन से अनुभव कर सकते हैं। अब टी॰ वी॰ नगरों के मध्य वर्ग की सीमा से निकलकर देश के कोने–कोने में और गाँव–गाँव में पहुँच रहा है। यह सामाजिक परिवर्तन में एक उत्प्रेरक का काम कर रहा है जिसका लाभ देश की 70 प्रतिशत से ऊपर आबादी को मिल रहा है। उपग्रह टी॰ वी॰ और अन्य संचार माध्यमों के इस विशाल जालक्रमों के सहयोग से शिक्षा और ज्ञान के क्षेत्र का फैलाव हो रहा है। इतना सब होने परभी इस माध्यम पर पूंजीवादी देशों का शासन है। यूरोप और अमेरिका के अधिकतर टी॰वी॰ कार्यक्रमों की खपत तीसरी दुनिया के देशों में होती है क्योंकि टी॰ वी॰ कार्यक्रम बनाने के लिए काफी पैसा खर्च करना पड़ता है जबकि उनके कार्यक्रम तीसरी दुनिया के देशों को सस्ते पड़ते हैं। इसके फलस्वरूप पश्चिम की सभ्यता और संस्कृति का प्रभाव दिन प्रतिदिन बढ़ रहा है।

इंगलैंड में हुए एक सर्वेक्षण के अनुसार बाल अपराधों के मूल में टी॰ वी॰ द्वारा प्रदर्शित अपराध दश्य हैं। ब्राजील के पत्रकारों ने एक सर्वे में पाया कि एक शाम को छः टी॰ वी॰ केंद्रों ने अपने प्रसारित कार्यक्रमों में 64 हत्याएँ, 38 गोली चलाने की घटनाएँ, 22 लड़ाइयाँ, तीन डकैतियाँ, नौ कार दुर्घटनाएँ दिखाईं।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि टी॰ वी॰ एक सशक्त दश्य–श्रव्य माध्यम है जिसका उपयोग यदि रचनात्मक रूप में किया जाए तो यह करोड़ों दर्शकों के अज्ञान अधकार को दूर कर उनमें एक नयी चेतना, ज्ञन का प्रसार तथा शिक्षा का फैलाव कर सकता है और मनोरंजन के द्वारा उनकी क्लान्ति को दूर कर सकता है। आवश्यकता इस बात की है कि इसे राष्ट्र की प्रगति और सामाजिक उत्थान में लगा कर इसका उचित उपयोग किया जाये।

वीडियो

दश्य–श्रव्य संसाधनों में हो रही वर्तमान क्रांति संचार–व्यवस्था को पूर्णतः प्रभावित कर रही है। सूचनाओं के संप्रेषण के लिए नई ने नई प्रणालियाँ विकसित हो रही हैं। फिल्मों, स्लाइडों, ओवर हैड प्रोजेक्टरों ने आज तक अनेक क्षेत्रों में जन समुदाय की सेवा की है परंतु अब वर्तमान युक्तियों में वीडियों और ध्वनियुक्त स्लाइड प्रोजैक्टरों का उपयोग हो रहा है। वीडियो मनोरंजन के साथ शिक्षा के क्षेत्र में भी अपनी उपयोगिता को बना रहा है। व्याख्यानों की रिकार्डिंग हो रही है और वीडियो कैसेटों की उपलब्धता दिन प्रतिदिन बढ़ रही है। इन कैसेटों का कक्षाओं, पुस्तकालयों आदि में उपयोग हो रहा है। वीडियो पर तैयार किये गये कार्यक्रमों का महत्त्व दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। इनके द्वारा कुछ समस्याओं का पर्याप्त सीमा तक समाधान किया जा रहा है। अमेरिका में तो क्लास रूम वीडियो शिक्षण कार्यक्रम तेजी से चल रहे हैं। भारत में कुछ महत्त्वपूर्ण संस्थानों में इस प्रणाली का प्रयोग हो रहा है।

इसी कारण से आज वीडियो पत्र–पत्रिकाएँ धूम मचा रही हैं। 'मूवी वीडियो', 'इन साइट' न्यूज ट्रैक अंग्रेजी पत्रिकाओं केउ बाद हिंदी में 'कालचक्र' जैसी पत्रिकाएँ हलचल मचा रही हैं। मद्रास की 'गणभूमि विजन' आध्यात्मिक संदेशों को प्रस्तुत कर रही है। समाचार–पत्र पढ़े जाते हैं। रेडियो सुना जाता है परंतु टी॰ वी॰, वीडियो श्रव्य, दश्य तथा पठनीय तीनों हो जाते हैं। इन तीन गुणों के कारण आजकल वीडियो की धूम मची हुई है।

वीडियो अपने तीन गुणों के कारण निरंतर प्रगति की ओर अग्रसर है। यह माध्यम टी॰ वी॰ माध्यम से भी महँगा है क्योंकि टी॰ वी॰ के साथ साथ वी॰ सी॰ पी॰ या वी॰ सी॰ आर॰ मशीन को भी खरीदना पड़ता है जिस पर ये कैसेट्स चलाई जाती हैं। एक अच्छा वी॰ सी॰ आर॰ कम से कम दस–बारह हजार में और वी॰ सी॰ पी॰ सात–आठ हजार का आता है। इसके बाद कैसेट को इनमें से किसी एक मशीन पर चलाया जाता है। महँगा माध्यम होने के कारण अभी तो इसका उपयोग उच्च मध्यवर्गीय परिवारों में मनोरंजन के लिए और बड़े–बड़े शिक्षा संस्थाओं तथा विश्वविद्यालयों में शिक्षा के प्रचार–प्रसार के लिए किया जाता है। लेकिन वह दिन भी दूर नहीं जब वह त्रिगुण सम्पन्न माध्यम साधारण मध्यवर्ग की पहुँच में आ जायेगा।

4.7 दश्य माध्यमों की भाषा की प्रकृति

मनुष्य अपने जन्म से लेकर मत्यु तक समाज पर निर्भर रहता है। समाज में रहते हुए उसके विभिन्न कार्यकलाप तथा विचार विनिमय भाषा के माध्यम से होते है।। चेहरे के भावों तथा संकेतों से भी विचारों का संप्रेषण किया जाता है परंतु यह सीमित मात्रा में दश्य विधाओं में होता है। मुँह से उच्चरित शब्द या वाक्य तत्काल आकाश में विलीन हो जाते हैं। अपने विचारों तथा अनुभवों को बहुत देर तक सुरक्षित रखने के लिए मनुष्य ने लिपि तथा अन्य आधुनिक उपकरणों का आविष्कार कर लिया है। लिपि, रिकार्ड, फिल्म, टेप आदि की सहायता से शब्द, वाक्य देशकाल की सीमा को पार कर जाते हैं और स्थायित्व ग्रहण कर लेते हैं। इस प्रकार भाषा के दो प्रमुख अंग होते हैं– (1) कथ्य और (2) अभिव्यक्ति।

कथ्य के अंतर्गत मनुष्य के मन मस्तिष्क में उठे हुए सम्बद्ध या असम्बद्ध विचार आते हैं और अभिव्यक्ति में कथ्य प्रकट होता है। अभिव्यक्ति दो रूपों में होती है– (1) मौखिक और (2) लिखित रूप में।

इन दोनों रूपों के आधार पर भाषा के दो रूप हो जाते हैं– (1) मौखिक भाषा और (2) लिखित भाषा

मौखिक या कथित रूप मुख द्वारा उच्चरित ध्वनियों पर आधारित होता है जबकि लिखित रूप मुख से उच्चरित ध्वनियों के लिए समाज स्वीकृत वर्ण होते हैं। कथित भाषा के उच्चारण तथा श्रवण और लिखित भाषा के लेखन तथा वाचन दो–दो पक्ष माने जाते हैं। दश्य माध्यमों में इन्हीं का प्रयोग किया जाता है।

मुख से निःसत ध्वनि को स्थायित्व प्रदान करने में ग्रामोफोन, रिकार्ड, टेपरिकार्ड, फिल्म, टेलीविजन, लिपि का महत्त्वपूर्ण स्थान है। मुख्य रूप से आजकल टेलीविजन, सिनेमा, वीडियो, नाटक आदि दश्य माध्यम हैं। इन सभी माध्यमों में भाषा का प्रयोग होता है। सभी माध्यम कथा आधारित हैं। कथा को संवाद आगे बढ़ाते हैं। संवाद भाषा पर आधारित होते हैं। इस प्रकार सभी माध्यमों में भाषा का महत्त्वपूर्ण स्थान है।

भाषा के सहज गुण–धर्म को भाषा की प्रकृति कहा जााता है। इसे भाषा की विशेषता भी कह सकते हैं। भाषा की प्रकृति को दो भागों में बाँटा जा सकता है। भाषा की प्रथम प्रकृति सभी भाषाओं के लिए मान्य होती है। इसे भाषा की सर्वमान्य प्रकृति कहा जा सकता है। दूसरी प्रकृति वह है जो विशिष्ट भाषाओं में पायी जाती है। इससे एक भाषा का दूसरी भाषा से वैभिन्य स्पष्ट होता है। इसे विशिष्ट भाषागत प्रकृति कहा जा सकता है। भाषा के बारे में भाषा वैज्ञानिक दष्टि से विचार कर लेने के बाद हम देखेंगे कि दश्य माध्यमों में भाषा की प्रकृति किस प्रकार की है।

रेडियो और टेलीविजन–सिनेमा आदि भिन्नता लिए हुए माध्यम हैं। रेडियो का प्राण तत्त्व ध्वनि है जबकि टेलीविजन, सिनेमा, वीडियो का प्राण तत्त्व चित्रात्मकता है। कहा जाता है कि एक चित्र हजार शब्दों के बराबर होता है। जिस भाव, स्थिति या विचार की अभिव्यक्ति हजारों शब्दों में नहीं हो सकती। उसे एक चित्र द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है। इन दश्य माध्यमों में आवश्यकता इस बात की होती है कि प्रत्येक चित्र के अनुसार शब्दों का चयन किया जाए और उन्हें क्रमबद्ध कर प्रस्तुत किया जाए। इसीलिए टेलीविजन के लिए लिखते हुए सदैव पष्ठ के दो भागों में लिखा जाता है – दश्य तथा श्रव्य रूप में। टेलीविजन के लिए लिखते हुए लेखक चार स्तरों से गुजरता है – प्रारूप आलेख, संशोधित आलेख, अंतिम आलेख तथा कैमरा आलेख है। इन चार आलेखों का लेखन तभी संभव होता है जब उसके पास भाषा हो। भाषा के बिना आलेख की कल्पना ही नहीं की जा सकती।

पहले आलेख जिसे प्रारूप आलेख या ड्राफ्ट आलेख कहा जाता है। इसमें कार्यक्रम का संपूर्ण आलेखन तैयार किया जाता है। इस आलेख को इस प्रकार बनाया जाता है कि इसे बोला जा सके अर्थात् आलेख लिखित रूप में होता है परन्तु इसमें लिखित भाषा को ऐसा लिखा जाता है जिसके बोलने में कोई कठिनाई न हो अर्थात् सरल भाषा हो। संशोधित में कुछ संशोधन किये गए होते हैं। इसे इसीलिए Reevised आलेख कहा जाता है। टेलीविजन से संबंध रखने वाले कर्मियों के विचारों को जोड़कर मूल आलेख में परिवर्तन किये जाते हैं। फाइनल या अंतिम आलेख में तकनीकी निर्देश जोड़े जाते हैं। इसी से अभिनेता रिहर्सल करते हैं। चौथा आलेख कैमरा आलेख है जिसमें अभिनय या तकनीक से सम्बद्ध निर्देश होते हैं। इसी के अनुसार कार्यक्रम की रिकार्डिंग की जाती है।

इस प्रकार टेलीविजन के लिए लिखते हुए चित्रात्मकता का ध्यान रखा जाता है और उसी के अनुसार शब्दों का चुनाव किया जाता है।

सिनेमा के द्वारा भी मानवीय भावनाओं को सशक्त ढंग से प्रकट किया जाता है। इसमें लेखन, कल्पना रूप–विन्यास नत्यकला के साथ प्रकाश व्यवस्था तथा ध्वनि पद्धति का प्रयोग भी किया जाता है। सिनेमा भी एक उद्योग है जिसमें लाखों लोग काम करते हैं। कलाकार, तकनीशियन, संगीतकार, गीतकार, थियेटर लेबोरेट्रीज में काम करने वाले लाखों लोगों की रोजी–रोटी इसी से चलती है। इस माध्यम में भी आरंभ कहानी से होता है। कहानी में एक आइडिया विचार का समस्या होती है जिसे पटकथा लेखक दश्य–विभाजन और घटनाओं के क्रम में विस्तार देता है। यह विस्तार तभी तो पाता है जब उसके पास समर्थ भाषा हो। भाषा भी ऐसी जिसमें फिल्म में प्रदर्शित किये जाने वाले प्रत्येक भाव, विचार, मुद्रा को अभिव्यक्त करने वाले शब्द हों। संवादों में उपयुक्त शब्द का चयन, भावाभिव्यक्ति क्षम भाषा का प्रयोग किया जाता है। दर्शकों की कई फिल्मों के संवाद याद हो जाते हैं। इसका कारण उसकी भाषा होती है। लेखक ऐसी शब्दावली का प्रयोग करता है जो तत्काल दर्शक की जुबान पर चढ़ जाती है। संवाद ऐसा क्षिप्र होता है कि उसके मस्तिष्क में घर कर जाता है और उसे याद हो जाता है। 'मुगले आजम' और 'शोले' के संवाद आज भी लोगों को याद हैं तो इसका कारण उनकी भाषा है।

तीसरा माध्यम वीडियो है जो आधुनिक युग में निरन्तर फैल रहा है। वीडियो के लिए अनेक प्रकार की फिल्में बनती हैं। कुछ ज्ञान और शिक्षा के प्रसार के लिए होती हैं। इन टेपों में सम्बद्ध विषय से जुड़ी शब्दावली का अधिक प्रयोग होता है। इसके अतिरिक्त पारिभाषिक शब्दों का भी इस्तेमाल किया जाता है। विज्ञान, स्वास्थ्य, अनुसंधान आधारित वीडियो फिल्मों की भाषा में चित्रात्मकता के अतिरिक्त विषय से सम्बद्ध पारिभाषिक शब्दों का और विषय के अनुकूल भाषा का प्रयोग किया जाता है। फिल्म को नीरसता

से बचाने के लिए सरल और रोचक भाषा भी प्रयुक्त की जाती है। मनोरंजन वाली वीडियो फिल्मों में आम भाषा का सरल, सरस और रोचक ढंग से प्रयोग होता है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि दश्य माध्यमों की भाषा की प्रकृति संयोग से वियोग की ओर है। समास प्रधान भाषा के स्थान पर व्यास प्रधान भाषा का ही अधिक प्रयोग होता है। कुल मिलाकर दश्य माध्यमों की भाषा की प्रवत्ति आम बोलचाल की भाषा की ओर अधिक है जिसमें सरलता, सरसता, रोचकता, सहजता, स्वाभाविकता, नाटकीयता, चित्रात्मकता के गुण विद्यमान हैं।

4.8 दश्य एवं श्रव्य साम्रगी का सामंजस्य

उच्चतर की तकनीकी शिक्षा में आधुनिक युग में अनेक नये तकनीकी उपकरणों तथा यंत्रों का प्रयोग किया जा रहा है। शताब्दियों से शिक्षा के प्रचार–प्रसार के लिए मुद्रण माध्यम प्रयुक्त होते रहे हैं परन्तु आज इलेक्ट्रानिक और कंप्यूटर के युग में दश्य–श्रव्य संसाधनों के समन्वित रूप का बड़े स्तर पर प्रयोग हो रहा है। मुद्रित सामग्री के माध्यम से शिक्षा और ज्ञान को ग्रहण करने करने में कानों के स्थान पर नेत्रों का प्रयोग करना पड़ता था। बिना परामर्श और पथ–प्रदर्शन के अनेक संकल्पनाओं को समझना एकलव्यीय कार्य होता था परन्तु आज ऐसा कुछ नहीं है। आज दश्य और श्रव्य माध्यमों से सूचनाएँ कान और आँख दोनों से प्राप्त हो जाती हैं। संकल्पनाएँ और जटिल प्रश्न बेहतर ढंग से समझे और समझाए जा सकते हैं। इन दिनों दश्य–श्रव्य साधन, जो उच्च स्तर के ज्ञान को संप्रेषित करते हैं, इस प्रकार हैं–

1. **रेडियो** – रेडियो का उपयोग व्यापक स्तर पर हो रहा है। इसका प्रमुख कारण दूर–दराज के क्षेत्रों तक इसकी पहुँच तथा सस्ता होना है। यद्यपि इसके माध्यम से एक तरफा संचार होता है तथापि कई देशों ने उनके शिक्षण संस्थानों ने इसका उपयोग अपनी शिक्षा को अधिक सुदढ़ बनाने के लिए करना आरंभ कर दिया है। रेडियो के कार्यक्रम विशेषज्ञ व्याख्यान, सामूहिक चर्चा, शैक्षिक पहेली, रेडियो नाटक, रूपक आदि के संबंध में नये से नये विषयों की ताजा और नवीन जानकारी श्रोताओं और विद्यार्थियों को दी जाती है। इस प्रकार के कार्यक्रमों को आकर्षक और रोचक बनाने में विद्यार्थियों और अध्यापकों की सहभागिता एक महत्त्वपूर्ण कदम सिद्ध हो सकती है।

2. **दूरदर्शन** – शिक्षा और मनोरंजन की दष्टि से यह एक अत्यंत उपयोगी श्रव्य–दश्य माध्यम है। इस माध्यम का उपयोग बड़े पैमाने पर विकसित तथा विकासशील देशों में हो रहा है। देश में यह माध्यम रेडियो के समान सस्ता और सुलभ नहीं है, फिर भी उपग्रह संचार, सूक्ष्म संगणक आधारित उपकरणों और दूरदर्शन सेटों के घटते मूल्यों का दष्टिपथ में रखकर कह सकते हैं कि यह आने वाले वर्षों में अधिक से अधिक लोगों को उपलब्ध हो जायेगा। इस माध्यम का प्रयोग प्रयोगशाला परीक्षणों के प्रदर्शन, कक्षाओं में विशेषज्ञ अध्यापकों के व्याख्यान आदि में किया जा सकता है। कुछ देश तो शिक्षा के क्षेत्र में केबल टी॰ वी॰, इलेक्ट्रानिक श्याम पट्ट, इलेक्ट्रानिक पुस्तक आदि का प्रयोग दूरवर्ती शिक्षा के लिए कर भी रहे हैं। यह एक अत्यंत शक्तिशाली युक्ति के रूप में प्रयुक्त हो रहा है। वीडियो टेप, वीडियो चक्रिका आदि ने सुविधानुसार दूरदर्शन कार्यक्रमों को देखने की सुविधा भी प्रदान कर दी है।

वर्तमान समय में दूरदर्शन के मनोरंजन कार्यक्रमों के अतिरिक्त विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के शैक्षिक कार्यक्रम जी॰ टी॰ वी॰ के जी एजुकेशन, कंप्यूटर, शिक्षण आदि कार्यक्रम लोकप्रिय हो रहे हैं। इनसैट उपग्रहों ने देश की संचार–व्यवस्था को बढ़ाने में पर्याप्त योगदान दिया है जिसके परिणामस्वरूप देश की 70 प्रतिशत जनता इससे लाभान्वित हो रही है। उपग्रह टी॰ वी॰ और संचार माध्यमों के फैलाव में वद्धि से शिक्षा का क्षेत्र अत्यंत विस्तत हो रहा है। देश में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा संचालित राष्ट्रव्यापी कक्षाएँ भी आरंभ हो गयी हैं जो निश्चय ही शिक्षा के स्तर को उठाने में सहायता करेंगी।

रेडियो में केवल श्रव्य सामग्री का उपयोग होता है जबकि दूरदर्शन माध्यम में दश्य और श्रव्य दोनों सामग्रियों का सामंजस्य होता है। रेडियो एक तरफा संचार है परंतु दूरदर्शन में दोनों प्रकार की सामग्री होती है। चित्रों के उपयोग से दूरदर्शन इसीलिए प्रभावशाली माध्यम बनता जा रहा है और रेडियो को पीछे छोड़ रहा है। इसी प्रकार मनोरंजन के क्षेत्र में भी रेडियो पीछे रह गया है क्योंकि वहाँ आवाज, ध्वनिप्रभाव और भाषा का उपयोग होता है परंतु व्यक्ति सामने नहीं होता। श्रोता को पात्रों की कल्पना करनी पड़ती है जबकि दूरदर्शन या सिनेमा में प्रत्येक पात्र, उसके हावभाव, उसकी मुखमुद्राएँ दर्शक के सामने होती हैं। दर्शक उसे देखता है तथा उसके संवादों को सुनता है। देखे हुए व्यक्ति का प्रभाव सुने हुए व्यक्ति से अधिक पड़ता है। दूरदर्शन ने न केवल मनोरंजन के क्षेत्र में बल्कि शिक्षा के क्षेत्र में भी दश्य और श्रव्य दोनों ही सामग्रियों का उपयोग किया है। दश्य–श्रव्य सामग्रियों के उचित उपयोग के कारण ही आज सिनेमा और दूरदर्शन सर्वाधिक लोकप्रिय और प्रभावशील माध्यम बनते जा रहे हैं।

3. **ओपेक प्रोजेक्टर** – इस यंत्र की सहायता से पारदर्शी पष्ठों पर चित्रों, मानचित्रों, सारणियों या अन्य प्रकार के मुद्रित या हस्तलिखित पाठ्यसामग्रियों को कक्षाओं या संगोष्ठियों में प्रकाश लेंस की सहायता से पर्दे पर बड़े आकार में दिखाया जाता है।

आज के युग में विषयवस्तु को प्रस्तुत करने का यह एक प्रमुख साधन है। इसमें दश्य सामग्री का ही अधिक प्रयोग होता है। कई बार प्रोजेक्टर मास्टर बीच बीच में श्रव्य सामग्री का प्रयोग भी चित्र को अधिक स्पष्ट करने के लिए करता है। इस प्रकार इस माध्यम में दश्य, चित्र तथा कभी–कभी श्रव्य सामग्री का भी समन्वय किया जताा है।

4 **स्टीरियोग्राफ और स्टीरियो स्कोप** – यह एक ऐसा चित्र है जिसमें त्रिआयामी प्रभाव उत्पन्न होता है। इस पर दो लेंस वाले कैमरे ये चित्र को दिखाया जाता है। इसी प्रकार स्टीरियोस्कोप भी एक प्रकाशीय यंत्र है जिसमें दो लेंस प्रयुक्त होते हैं। इसके उपयोग से त्रिआयामी चित्र प्रस्तुत किये जा सकते हैं जिससे कथावस्तु को स्वाभाविक ढंग से समझने में सहायता मिलती है।

5. **स्लाइड प्रोजेक्टर** – सम्बद्ध विषय के प्रस्तुतीकरण हेतु स्लाइडें बनाकर स्लाइड प्रोजेक्टर के माध्यम से उन्हें प्रदर्शित किया जाता है। इसमें विभिन्न प्रकार की स्लाइडों को तैयार कर कम से कम समय में प्रदर्शित किया जाता है तथा विषय को ठीक प्रकार से समझाया जा सकता है। विज्ञान, प्रौद्योगिकी अभियांत्रिकी शिक्षण में तथा सिनेमा में विज्ञापन हेतु इनका प्रयोग होता है।

6. **फिल्म पट्टियाँ और माइक्रो फिल्में** – यह स्थिर चित्रों को प्रेक्षपित करके दिखाने का एक ढंग है जिसमें एक चित्र अथवा संकल्पना आलेख को 35mm की फिल्म पर क्रमबद्ध ढंग से मुद्रित किया जाता है। एक विषय के विभिन्न पक्षों को एक ही फिल्म पट्टी पर क्रमबद्ध ढंग से फिल्म प्रोजेक्टर की सहायता से प्रदर्शित किया जा सकता है। विषय–वस्तु को प्रस्तुत करने का यह भी एक अच्छा प्रकार है। इसी प्रकार माइक्रो फिल्मों का प्रयोग होता है, जिसमें बड़े पष्ठों की सामग्री को सूक्ष्म छायाकारी से 16mm या 35mm की फिल्मों पर प्रिंट किया जाता है और उन्हें छोटा बड़ा कर दिखाया जाता है। इनका उपयोग पुस्तकों, पत्र–पत्रिकाओं के प्रिंट तैयार करने के लिए होता है।

7. **वी॰ सी॰ आर॰/वी॰ सी॰ पी॰** – वर्तमान युक्तियों में वीडियो, ध्वनियुक्त स्लाइड प्रोजेक्टरों का प्रयोग अधिक हो रहा है। मनोरंजन के साथ–साथ शिक्षा के क्षेत्र में भी यह उपयोगी सिद्ध हो रहा है। व्याख्यानों की रिकार्डिंग और कैसेटों का निर्माण हो रहा है जिनका कक्षाओं, पुस्तकालयों पर अच्छा उपयोग हो रहा है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी संस्थानों के पास यह सुविधा उपलब्ध है।

इस प्रकार उपर्युक्त अध्ययन और विवेचन–विश्लेषण से स्पष्ट है कि आज कल विभिन्न संचार माध्यमों में दश्य और श्रव्य सामग्री का सामंजस्य हो रहा है और उसके बेहतर परिणाम भी हमारे सामने आ रहे हैं। शिक्षा का व्यापक स्तर पर प्रचार–प्रसार हो रहा है। साक्षरों की संख्या में वद्धि हो रही है। दूरदराज के वे क्षेत्र जो कभी ज्ञान और शिक्षा के उन तक पहुँचने की कल्पना ही नहीं कर सकते थे, उन लोगों तक शब्द मुद्रित माध्यमों से, रेडियो जैसे श्रव्य और सस्ते लोकप्रिय माध्यम से तथा दश्य, श्रव्य के समन्वित माध्यमों सिनेमा, टी॰ वी॰, वीडियो कैसेट आदि के द्वारा उन तक पहुँच रहे हैं। उन्हें जागरूक नागरिक बनाकर अंधविश्वासों और कुरीतियों को नष्ट कर रहे हैं। ये दश्य–श्रव्य माध्यमों का समन्वित रूप शिक्षा के प्रसार के अतिरिक्त उनका भरपूर मनोरंजन भी कर रहा है। नये–नये रेडियो टी॰ वी॰ नाटक, धारावाहिक ज्ञानप्रद फीचर, डाकमेंटरी फिल्में, शब्द, ध्वनि और चित्रों के सामंजस्य से उनमें अपनी संस्कृति तथा मूल्यों के प्रति जागरूकता बढ़ा रहे हैं। विदेशी कार्यक्रम पश्चिमी संस्कृति के प्रभाव को भी बढ़ा रहे हैं। इस दोष का यदि सतर्कता से निराकरण कर दिया जाए तो निश्चय ही भारत जैसे विकासशील देश के लिए दश्य और श्रव्य सामग्री का यह सामंजस्य कल्याणकारी सिद्ध होगा।

4.9 पार्श्ववाचन (वायस ओवर)

पार्श्व वाचन – सिनेमा में या दूरदर्शन में दर्शकों को जैसा दिखाई देता या सुनाई देता है, आवश्यक नहीं है कि वास्तव में वैसा ही हो। अभिनेता या अभिनेत्रियाँ पर्दे पर जिस रूप में आते हैं, उसमें बहुत कुछ कृत्रिम होता है। फिल्म के कलाकार रूप–रंग, नयन–नक्श, शरीर के आकार–प्रकार तथा सौन्दर्य में आकर्षक होते हैं, नत्य तथा अभिनय कला की उन्हें पूरी जानकारी होती है। वे फिल्म के चरित्र की भूमिका को सजीव और प्रभावशाली रूप में निभा देते हैं। वे अंग–संचालन द्वारा आंगिक अभिनय को, परिधान के प्रयोग से आहार्य अभिनय को तथा चेहरे की मुख–मुद्राएँ बनाकर बदलकर सात्विक अभिनय को भी जीवंत और स्मरणीय बना देते हैं परन्तु यदि उनकी आवाज़ ठीक न हो तो सारी फिल्म गुड़–गोबर एक जैसी हो जाती है। जब तक वाचिक अभिनय न हो तब तक फिल्म सजीव, आकर्षक और प्रभावशाली बन ही नहीं सकती।

सभी अभिनेता या अभिनेत्रियों की आवाज़ में दोष नहीं होता। फिल्म में उनकी अपनी आवाज़ होती है और फिल्म के प्रभाव के अनुरूप होती है। इसके साथ यह भी सत्य है कि बहुत से कलाकार उनके गुणसम्पन्न होने पर भी आकर्षक, श्रुतिमधुर और पर्दे के अनुकूल आवाज़ नहीं रखते। आवाज के बिना अभिनय की क्रिया सफल नहीं होती और कई बार तो फिल्म को ही डुबो देती है। फिल्म निर्माता–निर्देशक इस तथ्य से भली–भांति परिचित होते हैं। इस समस्या के समाधान के लिए वे पार्श्व वाचन का सहारा लेते हैं।

पार्श्व वाचन अर्थात् पीछे से बोलना या आवाज़ को उधार देना। जिन अभिनेताओं का गला ठीक नहीं होता, कंठ में कोई अवरोध

होता है, आवाज़ फटे हुए बाँस की भाँति होती है। या फिल्म के संवादों के अनुकूल नहीं होती या सुनने वाले को वह अच्छी और सुरीली नहीं लगती, उनके लिए निर्माता–निर्देशक पार्श्व वाचन का आश्रय लेते हैं। पर्दे पर ओंठ अभिनेताओं या अभिनेत्रियों के हिलते हैं, दर्शकों को प्रतीत होता है कि वे अपनी आवाज़ में बोल रहे हैं परंतु होता इसके विपरीत है। आवाज़ पीछे से किसी ऐस कलाकार की आ रही होती है जो कभी सामने नहीं आता। यहाँ तक कि कई बार उसका नाम भी 'कास्ट' में नहीं होता। वह फिल्म के लिए अज्ञात और अनाम योद्धा की भाँति काम करता है और फिल्म को अपनी आवाज़ में सफलता की ओर ले जाता है। मुकेश बहुत अच्छे पार्श्व गायक थे और राजकपूर सदैव उनकी आवाज़ को ही पार्श्व गायन के लिए लिया करते थे। मुकेश की मत्यु पर शोक संतप्त राजकपूर ने कहा था। 'आज मेरी आवाज़ चली गई।' दोनों आवाज़ में अभिन्नता थी बल्कि वे एक–दूसरे के इस मामले में पर्याय बन गये थे। इस प्रकार फिल्म या टेलीविजन में आवाज़ को भी एक वस्तु के रूप में खरीदकर उसका दर्शकों–श्रोताओं के लिए उपयोग किया जाता है तथा फिल्म को अभिनेता–अभिनेत्रियों के आवाज़ दोष से बचाने का प्रयास किया जाता है।

पार्श्व गायन में फिल्म–गायक केवल गीत गाते हैं जबकि पार्श्व वाचन में आवाज़ उधार देने वाले या पीछे से संवाद बोलने वाले कलाकारों के प्रत्येक शब्द को स्वयं बोलते हैं और फिल्म को आवाज़ की दष्टि से सफल बनाने में अपना योगदान देते हैं।

4.10 विज्ञापन की भाषा

संचार माध्यमों में से विज्ञापन माध्यम को जबसे व्यावसायिक रूप में स्वीकृति मिली है, उसने अपने लिए एक विशिष्ट भाषा का विकास कर लिया है जो अपने लक्ष्य अर्थात् उपभोक्ता वर्ग तक बड़ी सहजता से पहुँच रही है। विज्ञापनदाता जब भी अपने विज्ञापन के लिए अनुबंध करता है तो उसे इस बात का ध्यान रखना होता है कि उसका विज्ञापन किस वर्ग के पाठक, दर्शक अथवा श्रोता तक पहुँचना है। उसके उत्पाद के प्रचार के लिए ऐसी भाषा का प्रयोग किया जाए जो सभी वर्गों के अनुकूल हो। भाषा क्योंकि अभिव्यक्ति का एक सशक्त और प्रभावशाली माध्यम है, अतः यह भाषा साहित्यिक न होकर व्यावहारिक होती है ताकि उत्पादक विज्ञापन की भाषा के माध्यम से अपने संदेश को उपभोक्ता तक प्रभावी ढंग से संप्रेषित कर सके। वह अपने उत्पाद के प्रति जनरुचि जाग्रत कर सके, उपभोक्ता के मन में खरीदने की इच्छा का सजन कर सके, माँग में वद्धि कर सके तथा वस्तु की खरीद के लिए ग्राहक को तैयार कर सके। विज्ञापनदाता की इच्छा क पूर्ति के लिए विज्ञापन बनाने वाली संस्थान को एक ऐसी भाषा का प्रयोग करना आवश्यक होता है जो सुझावपूर्ण हो, जीवन्त हो तथा उसे तत्काल प्रभावित कर सके। यह भाषा सामान्य न होकर विशिष्ट होती है तथा उसकी विशिष्टता व्याकरण के नियमों से मुक्त होती है। वह अपने भाव या विचार का प्रभावशाली बनाने के लिए अभिधात्मक न रहकर व्यंजनात्मक हो जाती है। ऐसी स्थिति में विज्ञापन की भाषा की विशेषताएँ अलग प्रकार की होती हैं। विज्ञापन के संदेश को संप्रेषित करने के लिए भाषा के तीन रूप प्रयुक्त होते हैं– 1. लिखित रूप, 2. वाचिक रूप, 3. मौखिक–लिखित रूप।

विज्ञापन की भाषा का सर्वाधिक प्रचारित रूप लिखित होता है और माध्यम प्रेस होता है। भाषा का सौन्दर्य उचित शब्दों के साभिप्राय प्रयोग में अभिव्यक्त होता है। जब वह भाषा विज्ञापन में लिखित रूप में प्रयोग की जाती है तब इसका उद्देश्य विज्ञापन के स्मरणीय विक्रयशील वर्द्धक, आकर्षक और प्रभावशाली बनाना होता है।

भाषा का दूसरा रूप है वाचिक (Spoken) जो लिखित नहीं होता। इस प्रकार की भाषा का प्रयोग आकाशवाणी पर प्रचारित विज्ञापनों में होता है। यह भाषा का श्रव्य रूप है। वाचिक भाषा के रूप में विज्ञापन की मात्रा में शब्दों को ध्वनि का उतार–चढ़ाव, पात्रानुकूलता, संगीतमयता, नाटकीयता आदि का समन्वय किया जाता है। इससे वह कर्णप्रिय, मधुर और आकर्षक लगती है।

विज्ञापन की भाषा का तीसरा रूप उक्त दोनों भाषाओं का समन्वित रूप है। इसका प्रयोग दूरदर्शन पर संचारित विज्ञापनों में होता है। यहाँ पर विज्ञापन सचित्र होते हैं। अतः दोनों रूपों का प्रयोग किया जाता है। चित्र प्रस्तुति के साथ संदेश आता है। कभी विशिष्ट भाषा अंश को लिखित रूप में पर्दे पर भी दिखाया जाता है। चलचित्रों में भी इसी प्रकार की भाषा का प्रयोग होता है। इसे बड़े पर्दे के विज्ञापनों की भाषा कहा जा सकता है। विज्ञापन की लम्बाई के अनुसार शब्द आड़े–तिरछे, छोटे–बड़े, गोल–लग्बे रूप में आते हैं और आकृतियाँ साथ उभरती हैं।

वस्तुतः विज्ञापन की भाषा विशिष्ट भावों और विचारों को व्यक्त करती है। व्याकरण के नियमों से मुक्त होकर काव्यात्मक भाषा होती है।

विज्ञापन की भाषा की संरचना

विज्ञापन की विषयवस्तु को तैयार करते समय ही कापी–लेखक उस विज्ञापन के अनुरूप भाषा का निर्माण कर लेता है। इसमे प्रयुक्त होने वाली शब्दावली का चुनाव कल्पना के आधार पर विज्ञापन के आयामों – क्षेत्र, प्रकार तथा शैली को ध्यान में रखकर किया जाता है। क्षेत्र से अर्थ विज्ञापन का किस वर्ग में जाने से है अर्थात् विज्ञान या संचार के क्षेत्र में जाना है या सामान्य क्षेत्र में। क्षेत्र के अनुसार भाषा भी परिवर्तित हो जाती है।

प्रकार से तात्पर्य है – समाचार–पत्र में जाना है या रेडियो में या टी॰ वी॰ में। समाचार–पत्र में लिखित भाषा की विशेषता होगी,

रेडियो में शब्दों पर विशेष बल होगा तथा टी॰ वी॰ की भाषा में मिश्रित भाषा होगी।

शैली से अभिप्राय है – अभिधात्मक, लक्षणात्मक या व्यंजनात्मक शैली। अभिधात्मक में सीधी, सपाट और वस्तुगत शैली होती है – तो आप भी पसंद करते हैं पान मसाला। लक्षणात्मक में लक्षणायुक्त भाषा का प्रयोग किया जाता है – देवों की भूमि। हिमालय। व्यंजनात्मक शैली में व्यंजना का प्रयोग किया जाता है – "मर्जी है आपकी। आखिर सिर है आपका।" लिखित में भाषा की अर्थवत्ता पर, वाचिक में भाषा के उतार–चढ़ाव पर तथा व्यंजनात्मक में श्रव्य–दश्य माध्यमों के अतिरिक्त व्यंजनार्थक पर बल दिया जाता है। विज्ञापन की भाषा में औपचारिक शैली का प्रयोग नहीं होता। इसमें आलंकारिक शैली ही पाठक/दर्शक/श्रोता को आकर्षित करती है।

विज्ञापन-भाषा की विशेषताएँ

विज्ञापन में सामान्य भाषा न होकर विशिष्ट भाषा का प्रयोग किया जाता है। विशिष्ट भाषा के प्रयोग से अर्थ–विशेष प्रकट करने की क्षमता विकसित हो जाती है। विज्ञापन की भाषा में ये विशेषताएँ होनी चाहिएं–

1. **आकर्षण क्षमता** – इसका विज्ञापन में प्रमुख स्थान है। यदि विज्ञापन का संदेश पाठक या दर्शक का ध्यान आकर्षित नहीं करता तो विज्ञापन निरर्थक है। दर्शक या पाठक पहले विज्ञापन की भाषा की ओर आकर्षित होता है बाद में वस्तु की ओर। इसके लिए विज्ञापनकर्ता काव्यात्मक, सूत्रात्मक व तुकात्मक शब्दों का चयन करता है; यथा–

(क) आयोडैक्स मलिए। काम पे चलिए।

(ख) सबका सपना। घर हो अपना।

(ग) जिधर से गुजरे। पीछा करें नजरें।।

(घ) सौदा एक। फायदे अनेक।

(ङ) सबसे बढ़कर। सबसे बेहतर।

2. **स्मरणीयता** – दूसरी महत्त्वपूर्ण विशेषता–विज्ञापन का स्मरण होना है। इसके लिए विशेष पदरचना या वाक्यांश बनाये जाते हैं जो सामान्य से अलग होते हैं। इसके लिए विशेष भाषा, शैली और शब्दों का चुनाव किया जाता है। यथा–

(क) सावधानी हटी। दुर्घटना घटी।

(ख) आह से आहा तक।

(ग) सवारी अपने सामान की खुद जिम्मेवार।

(घ) रुकावट के लिए खेद है।

(ङ) देगी मिर्च का तड़का। अंग–अंग फड़का।

3. **पठनीयता** – यह विज्ञापन भाषा की तीसरी विशेषता है। भाषा ऐसी होनी चाहिए जो प्रत्येक वर्ग के पाठक, दर्शक या उपभोक्ता की समझ में आ जाये। जब तक विज्ञापन की भाषा की सहज रूप में पढ़कर पाठक सही अर्थ तक न पहुँचे, तब तक वह अर्थहीन होती है। विज्ञापन–लेखक का शब्द–चयन, वर्ग, आर्थिक स्तर, जीवन–स्तर के अनुरूप होना चाहिए। इसके लिए उसे विभिन्न स्रोतों से शब्दों का चुनाव करना पड़ता है। उदाहरण देखें–

(क) प्यार की मीठी भेंट . . . . . .

(ख) ये बेचारा, काम का मारा। इन्हें चाहिए सिंकारा।

4. **प्रभावोत्पादकता** – विज्ञापित उत्पाद का प्रभाव तभी उपभोक्ता पर पड़ता है जब भाषा में प्रभावोत्पादकता की क्षमता की क्षमता हो। वस्तु की गुणवत्ता तथा विशेषताओं को उभारने के लिए ऐसी शब्दावली, वाक्य रचना, पदबन्ध, मुहावरे, लोकोक्ति का प्रयोग करना चाहिए जिसका पाठक। दर्शक। श्रोता पर गहरा प्रभाव पड़े–

(क) जान है तो जहान है।

(ख) अब आयेगा असली मजा।

5. **विक्रयशीलता** – उपभोक्ता को क्रय के लिए तत्पर करना विक्रयशीलता है। ऐसी भाषा का यदि प्रयोग किया जाए तो विज्ञापन लेखक का श्रम सफल हो जाता है। बाजार में उपलब्ध उत्पादों की तुलना में विज्ञापित वस्तु की गुणवत्ता और उत्तमता सिद्ध करने वाली भाषा का प्रयोग वस्तु की बिक्री को बढ़ा देता है। इसके लिए वह आज्ञार्थक प्रश्नात्मक, व्याख्यामूलक, गुणवत्ताबोधक

वाक्यांशों का प्रयोग कर खरीददार को वस्तु खरीदने के लिए प्रेरित करता है; यथा–

(क) धूम मचा दे रंग जमा दे।

(ख) क्या आपने इस्तेमाल किया ?

(ग) आज ही ले आइए, अपने घर।

6. **विश्वसनीयता** – विज्ञापन के लिए सामग्री तैयार करने समय विज्ञापित की जाने वाली वस्तु के वास्तविक गुणों का उल्लेख उसकी विश्वसनीयता को बढ़ा देता है। उदाहरण देखें–

(क) मोर का वादा, दाम कम, काम ज्यादा।

(ख) इनके मजबूत दाँतों का राज है एम॰ डी॰ एच॰ दंतमंजन।

7. **अतिप्रयोजनपरकता** – आधुनिक युग में अतिप्रयोजनपरकता के बिना काम नहीं चलता। अतः ऐसी भाषा का प्रयोग किया जाता है जिससे उत्पाद के विशिष्ट प्रयोजन का संकेत दिया जाता है; यथा–

(क) दाँतों का डॉक्टर ही इससे बेहतर देखभाल कर सकता है।

(ख) कम दाम हवा ज्यादा। जोल्टा का वादा।

8. **स्वच्छंदता** – कई बार विज्ञापन–लेखक वस्तु के सभी गुणों की व्याख्या के लिए और अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए सर्वथा मुक्त रह कर स्वच्छंद भाषा का प्रयोग करता है। वह भाषागत नियमों, वाक्य–विन्यास तथा रूप–विन्यास के प्रयोग में भी स्वच्छंता ले आता है – मेरे सौन्दर्य का पर्याय लक्स साबुन।

इन विशेषताओं के अतिरिक्त कई विज्ञापनों में परंपरामुक्ति के उदाहरण भी मिलते हैं; जैसे–

खुजली सताए तो खुजलाइए मत।

यही समय है, पीजिए।

विज्ञापन भाषा का संरचनात्मक रूप – विज्ञापन–निर्माणकर्ता विज्ञापन की रचना करते समय सचित्र आलेखन के साथ संदेश लेखन के लिए विशिष्ट भाषा का प्रयोग करता है। वह तभी उत्तम परिणाम प्राप्त कर सकता है जब प्रयुक्त भाषा तथा वाक्य–संरचना का कौशल प्रदर्शित किया जाए। इसके लिए विज्ञापन की भाषा में वाक्य संरचना का रूप इस प्रकार रहता है– (1) साधारण वाक्य, (2) मिश्र वाक्य, (3) संयुक्त वाक्य, (4) उपवाक्य, (5) विशेषण उपवाक्य, (6) क्रिया विशेषण वाक्य।

1. **साधारण वाक्य** – विज्ञापित वस्तु में साधारण वाक्य वैयाकरणिक दष्टि से एक उद्देश्य लिये होता है। विज्ञापन–निर्माणकर्ता ऐसे वाक्यों की संरचना से विज्ञापन के कलेवर, शीर्षक पंक्ति, उपशीर्षक तथा संकेतीय पंक्ति (सिग्नेचर लाइन) के निर्धारण में प्रयोग करता है; यथा–

(क) चलने में हल्की और भरोसेमंद है।

(ख) कपड़ों में धूप सी सफेदी लाए।

2. **मिश्र वाक्य** – विज्ञापनकर्ता संदेश–लेखन के लिए कुछ ऐसे वाक्य प्रयुक्त करता है जिसमें मुख्य उद्देश्य और विधेय के अतिरिक्त एकाधिक क्रियाएँ प्रयोग में लायी जाती हैं। इसमें एक वाक्य प्रमुख और दूसरा उसका आश्रित उपवाक्य होता है। उदारहण देखें–

(क) बच्चों की पढ़ाई या सेहत का मामला हो तो, मैं कोई समझौता कभी नहीं करती।

(ख) मसूढ़ों को संकुचित करे, दाँतों की सड़न रोके।

3. **संयुक्त वाक्य** – साधारण और मिश्र वाक्यों का व्याकरणिक दष्टि से प्रयोग संयुक्त वाक्य कहलाता है जिसका प्रयोग विज्ञापनकर्ता विज्ञापन की विषयवस्तु के आलेखन में विस्तार के लिए करता है। उदाहरण प्रस्तुत है–

प्राकृतिक कोमलता से गोरा बनाये . . . ऐसा कि सभी को नजर आये . . . . फेयर एण्ड लवली . . . .

गोरेपन की क्रीम।

4. **उपवाक्य** – विज्ञापित वस्तु के उल्लेख और विस्तार के लिए विज्ञापनकर्ता मिश्र वाक्य का प्रयोग करते समय उपवाक्य का भी उपांग रूप में प्रयोग करता है; यथा–

. . . . सरदर्द हटाये, मुस्कान जगाए

क्योंकि सिर्फ एस्प्रो ही माइक्रोफाइण्ड है।

5. **विशेषण उपवाक्य** – विज्ञापित वस्तु की विशेषता या गुणों की व्याख्या के लिए विशेषण उपवाक्य का प्रयोग किया जाता है। ये विशेषण उपवाक्य 'जो', 'जिसमें', 'जिसके–, 'जैसे' संबंधवाचक प्रयुक्त होते हैं और व्याख्या बोधक व गुण निर्देशक होते हैं। उदाहरण प्रस्तुत हैं–

(क) एक ऐसा पारिवारिक साबुन है जो त्वचा के कीटाणुओं को नष्ट करता है।

(ख) एकमात्र टूथपेस्ट जिसमें सदियों से आजमाया हुआ लौंग तेल है।

6. **क्रिया विशेषण उपवाक्य** –विज्ञापित वस्तु का कार्यकाल तथा उसकी उपयोगिता और प्रयोग का कारण बताने के लिए क्रिया–विशेषण उपवाक्य का प्रयोग किया जाता है जो मुख्य उपवाक्य की क्रिया की विशेषता बताते हैं; जैसे– जब भी खरीदें सर्वोत्तम ही खरीदें।

यहाँ पर कालवाचक क्रिया विशेषण के रूप में 'जब' का प्रयोग है। कारणवाचक क्रिया विशेषण में 'क्योंकि' का प्रयोग किया जाता है–

निरमा टिकिया ज्यादा चलती है क्योंकि कम गलती है।

क्रियाविहीन वाक्य संरचना

विज्ञापनों में वाक्य संरचना की दष्टि से अधिकतर क्रियाविहीन वाक्यों का प्रयोग बहुलता से होता है। तकनीकी दष्टि से विज्ञापन में शीर्षक प्रायः क्रियाविहीन रहता है। संज्ञा–विशेषण पदबंधों की प्रचुरता होने के कारण विज्ञापन में क्रिया–प्रयोग न्यूनतम हो जाता है। लिखित विज्ञापनों में यह क्रियाविहीनता इसलिए होती है क्योंकि विशेषणों की बहुलता होती है। क्रियाविहीनता से वाक्य संक्षिप्त और क्षिद्र हो जाते हैं। उदाहरण देखें–

1. भव्य साड़ियों की सेल
2. बी॰ पी॰ एल॰ : सॉलिड स्टेट टी॰ वी॰
3. वी॰ आई॰ ब्रीफकेस
4. सर्दी में गर्मी का अहसास
5. बिल्कुल सोने जैसा खरा
6. शेर दिल इन्सानों के लिए कड़क चाय
7. कीमती ही सही झंडू स्पेशन च्यवनप्राश
8. केल्विनेटर – इसकी ठंडक बेमिसाल।

इस प्रकार विज्ञापनकर्ता वाक्य–संरचना के विविध रूपों के माध्यम से उपभोक्ता या पाठक या श्रोता का ध्यान आकर्षित कर वस्तु की आवश्यकता निर्मित करके उसे खरीदने के लिए उत्प्रेरित करता है।

4.11 इंटरनेट : परिचय एवं सामग्री-सजन

वर्तमान युग सूचना प्रौद्योगिकी का युग है। सूचना के महत्त्व तथा कंप्यूटर के द्वारा उसके संसाधन से हम सब भली–भाँति परिचित हैं। आज सूचना हमारे दैनिक जीवन की एक आधारभूत आवश्यकता बन चुकी है। आज से लगभग दो दशक पहले तक अनेक प्रकार की सूचनाओं को प्राप्त करना सहज नहीं था। सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में इंटरनेट का आविष्कार मानव के लिए अनुपम उपहार है। इंटरनेट के कारण आज हर प्रकार की सूचना का संचार संभव हो गया है। कण–कण में बसे असीम शक्तिशाली ईश्वर की सत्ता की भाँति इंटरनेट भी आज एक सर्वव्यापी सत्ता बन गया है। इंटरनेट को हम वर्तमान सभ्यता के कृष्ण का विराट विश्व रूप मान सकते हैं। प्रकाश के समान तीव्र गति से समस्त संसार में सूचनाओं का संचार करने में सक्षम इंटरनेट, इलैक्ट्रॉनिक संचार युग का अद्‌भुत उपादान है। इसके आगमन से संपूर्ण विश्व में एक हलचल–सी हो गई है।

इंटरनेट सूचनाओं का एक विशाल सागर है जिसका प्रमुख कार्य है सूचनाओं का आदान–प्रदान। सूचनाओं के इस अनंत असीम आकाश में ब्रह्मांड की समस्त जानकारी सिमटी हुई है। संचार माध्यमों के क्षेत्र में इतने अभूतपूर्व क्रांति ला दी है। समाचार–पत्रों का प्रचार–प्रसार इससे प्रभावित अवश्य हुआ है, परंतु उसके महत्त्व को इंटरनेट तनिक भी कम नहीं कर पाया है। अपितु पत्रकारिता

और इंटरनेट आज एक–दूसरे के पूरक बन गए हैं। इंटरनेट ने पत्रकारिता को तीव्र गति प्रदान की है। यही कारण है कि आज पत्रकारों को वह सामग्री भी उपलब्ध हो रही है जिसकी उन्होंने कल्पना तक नहीं की थी। समय की बचत, बहुभाषीय ऑनलाइन वार्ता, सुपरटैक सॉफ्टवेयर आदि के निर्मित होने से आज अनेक कार्य सहजता और सरलता से होने लगे है।। इंटरनेट आज विचारों की अभिव्यक्ति का सर्वाधिक प्रभावी माध्यम बन गया है। समय के साथ घर–घर में घर कर गया है यह इंटरनेट।

इंटरनेट से जुड़ते ही विश्व के अलग–अलग स्थानों पर स्थित इंटरनेट से जुड़े लाखों कंप्यूटरों से क्षण भर में ही हमारा संपर्क स्थापित हो जाता है। विभिन्न प्रकार की जानकारियाँ, सूचनाएँ और आँकड़ों के विशाल सागर में हम डूबने–उतराने लगते हैं। इंटरनेट के माध्यम से कुछ खरीदना तो एक मामूली–सी सुविधा है। हम चाहें तो भौतिक जगत में किए जाने वाले समस्त कार्य इंटरनेट पर कर सकते हैं। समाचार–पत्र, पत्रिकाएँ और पुस्तकें हमारे लिए इंटरनेट पर उपलब्ध हैं। ई–मेल से हम संदेश भेज सकते हैं। संदेश प्राप्त कर सकते हैं। चैटिंग अर्थात् हजारों किलोमीटर दूर बैठे लोगों से गप–शप कर सकते हैं। यहाँ तक कि कैमरे के द्वारा उन्हें अपने कंप्यूटर के स्क्रीन पर देख भी सकते हैं। पलक झपकते ही हम समाचार–पत्र, पत्रिकाएँ, सिनेमा,खेल, पुस्तकालय, उद्योग, मौसम, शिक्षा, विश्वविद्यालय आदि किसी भी क्षेत्र से संबंधित नवीनतम सूचनाएँ इंटरनेट पर उपलब्ध उपयोगी वेबसाइट से प्राप्त कर सकते हैं।

आखिर यह इंटरनेट है क्या बला ? विश्व में अलग–अलग स्थनों पर स्थित अनेक कंप्यूटरों को एक नेटवर्क के द्वारा आपस में जोड़ा जाता है। इस नेटवर्क के माध्यम से सूचना के संचार के लिए बनाई गई एक विशेष प्रकारकी प्रणाली ही इंटरनेट कहलाती है। किसी भी कार्यालय में टेलीफोन लाइनों से जुड़े मात्र दो कंप्यूटर भी नेटवर्क कहे जा सकते हैं। इंटरनेट तो नेटवर्कों का भी नेटवर्क है। इंटरनेट बिना किसी भेदभाव के संपूर्ण विश्व को एक साथ, एक समान रूप से एक अनोखे रिश्ते में बाँध देता है। अमेरिका के 'डिफेंस एडवांस्ड रिसर्च प्रोजेक्ट एजेंसी' (Defence Advanced Research Project Agency) ने अर्पानेट (Arpanet) के माध्यम से सन् 1969 में मात्र चार कंप्यूटरों को आपस में जोड़ा था। इनमें से तीन कंप्यूटर केलिफोर्निया में तथा एक यूटा में था। यह नेटवर्क सफलतापूर्वक काम करने लगा। विश्वविद्यालय तथा अनुसंधान केंद्रों ने भी ऐसे अनेक नेटवर्क स्थापित कर लिए। ये सभी नेटवर्क आपस में एक अटूट रिश्ते बँधते चले गए। देखते ही देखते 'वसुधैव कुटुंबकम्' की कल्पना को साकार करते हुए एक विशाल नेटवर्क इंटरनेट के रूप में विश्व स्तर पर स्थापित हो गया।

कंप्यूटर का आरंभ और विकास ऐसे देशों में हुआ जिनकी भाषा अंग्रेजी अथवा रोमन लिपि पर आधारित कोई यूरोपीय भाषा थी। इसीलिए अन्य लिपियों में कंप्यूटर पर कार्य देरी से प्रारंभ हुआ। रोमन लिपि अथवा अंग्रेजी की कंप्यूटर के लिए एक आदर्श भाषा मानने में कोई तकनीकी कारण निहित नहीं है। कंप्यूटर का कार्य तो दो संकेतों की एक स्वतंत्र गणितीय भाषा पर आधारित है। इसी आधार पर वह हमारी भाषा को स्वीकार कर अपने सब कार्य करता है। अतः स्पष्ट है कि किसी भाषा को अपनाने में कंप्यूटर के लिए कोई तकनीकी बाधा नहीं है। यह सच है कि रैखिकीय (Linear) लिपि होने के कारण यांत्रिक कारणों से रोमन लिपि निश्चय ही देवनागरी की अपेक्षा सरल है। गहराई से खोज की जाए तो पता चलता है कि रोमन की अपेक्षा अन्य सभी लिपियों में इतनी अधिक जटिलता और विविधता है कि उन्हें एक ही कुंजीपटल (Key-board) पर लाना दुष्कर कार्य है। ब्राह्मी लिपि से विकसित होने के कारण भारतीय लिपियाँ अपने मूल रूप में अक्षरात्मक है, परंतु लेखन की भिन्नता के कारण इनके बाह्य स्वरूप में बहुत अंतर आ गया है। अनेकता में एकता की बात भारतीय संस्कृति पर ही नहीं, अपितु भारतीय भाषाओं और उनकी लिपियों पर भी खरी उतरती है। भारतीय भाषाओं और उनकी लिपियों में अंतर्निहित इसी समानता के आधार पर 'इस्की' (ISCII) {Indian Standard code for information interchange) नाम से एक कोड प्रणाली (Code system) का निर्माण किया गया है। इस कोड प्रणाली में भारतीय तथा दक्षिण पूर्व एशिया की लिपियों, भाषाओं के साथ–साथ रोमन लिपि पर आधारित समस्त यूरोपीय भाषाओं को भी सम्मिलित किया गया है। इस मानक कोडिंग प्रणाली के निर्माण से भारत की सभी भाषाओं के लिए प्रौद्योगिकी के पल–पल परिवर्तित हो रहे क्षेत्र में एक नई राह खुल गई है।

भारत के सर्वप्रथम सुपर कंप्यूटर के निर्माता पुणे स्थित 'सी–डैक' नामक सरकारी संस्था ने 'इस्की' के आधार पर ही 'आई॰ आई॰ टी॰' कानपुर की सहायता से 'जिस्ट' (Graphics and Script Technology) नामक भाषा तकनीक का विकास किया। इसका प्रदर्शन सन् 1984 में नई दिल्ली में आयोजित 'विश्व हिंदी सम्मेलन' में किया गया था। इसी तकनीक के कारण आज कंप्यूटर से संबंधित सभी प्रकार के कार्य हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में किए जा सकते हैं। 'डॉस', 'विंडोज' और 'यूनिक्स' के अंतर्गत संपन्न होने वाले कार्य इस तकनीक के द्वारा भारत की सभी भाषाओं में शब्द–संसाधन (Word-processing) तथा डाटा संसाधन (Data-Processing) का कार्य संभव है। इनमें हिंदी में स्पैल–चैकर, ऑनलाइन शब्दकोश, ई–मेल तथा वेब प्रकाशन की सुविधा भी उपलब्ध है। इंटरनेट में ई–मेल और वेबसाइट की प्रमुख भूमिका रहती है।

इलैक्ट्रॉनिक मेल (Electronic Mail)

ई–मेल एक इलैक्ट्रानिक डाक प्रणाली है। इसके माध्यम से कंप्यूटर का कोई भी उपयोगकर्ता किसी अन्य कंप्यूटर उपयोगकर्ता तक अपने संदेशों का आदान–प्रदान कर सकता है। एक ही संदेश अनेक व्यक्तियों के पास एक साथ भेजा जा सकता है। इसके लिए सर्वप्रथम आवश्यकता है उस व्यक्ति या संस्था के ई–मेल पते की, जिसे ई–मेल भेजी जानी है, यथा– pranavapathak8@hotmail.com. इसके बाद हम पहले से तय स्थलों पर पता, विषय, पाठ, संदेश आदि कंप्यूटर से टंकित करते हैं और आवश्यक कमांड देकर ई–मेल भेज देते हैं। यह मेल जिसे भेजी गई है उसके मेल–बॉक्स में पहुँच जाती है और भेजने वाले के मेल–बॉक्स में भी संग्रहीत हो जाती है।

ई–मेल संचार का अत्यंत तीव्रगामी और बहुत ही सस्ता माध्यम है। इसे गोपनीय रखने के लिए पासवर्ड दिया जाता है। इसकी विश्वसनीयता प्रामाणिक है क्योंकि इसके माध्यम से कुछ खरीद तथा बेचा भी जा सकता है। ई–मेल की विशेषता है कि पत्र भेजने वाले और पाने वाले दोनों के पास एक ही वेबसाइट का होना ज़रूरी नहीं है। 'याहू', 'हॉटमेल', 'रैडिफ़मेल', 'इंडियाटाइम्स' आदि कुछ प्रमुख वेबसाइटें हैं जो यह सुविधा मुफ्त प्रदान करती हैं। 'सी–डैक' संस्था तथा निर्मित 'इज़्म' सॉफ्टवेयर पर ग्यारह भारतीय भाषाओं में यह सुविधा उपलब्ध हैं। यदि आप हिंदी में ई–मेल भेज रहे हैं तो पीने वाले के कंप्यूटर में भी हिंदी फॉण्ट का होना आवश्यक है। 'सी–डैक' संस्था ने 'हॉटमेल' के समान हिंदी और मराठी में 'मल्टीमेल' की सुविधा भी प्रदान की है।

विश्वव्यापी वेब (World Wide Web)

इसे डब्ल्यू डब्ल्यू डब्ल्यू' के नाम से भी जाना जाता है। सूचनाओं से भरपूर यह एक विश्वव्यापी डेटाबेस है। इंटरनेट के प्रयोग में इसने मानव की कल्पना को सर्वाधिक प्रभावित किया है। इंटरनेट को इतनी लोकप्रियता इस विश्वव्यापी वेब ने ही दिखाई है। इंटरनेट विश्वभर की समस्त जानकारियों से भरपूर एक पुस्तक है। वेबसाइट को हम इसका एक अध्याय मान सकते हैं। यदि हमें किसी क्षेत्र–विशेष के बारे में जानना है तो उससे संबंधित साइट का नाम कंप्यूटर पर टाईप करना होगा। पलक झपकते ही इच्छित जानकारी हमारे कंप्यूटर के मॉनीटर पर उपलब्ध होगी। वेबसाइट के पते के अंतिम तीन अक्षर अति महत्त्वपूर्ण होते हैं। इन्हीं से पता चलता है कि खोला गया साईट किस प्रकार का है। अंतिम तीन अक्षर यदि edu हैं तो यह किसी शैक्षणिक संस्थान की साइट है। यदि ये अक्षर com हैं तो यह कॉमर्शियल आर्गेनाइजेशन है। जिनके अंत में मात्र दो अक्षर हैं वे किसी देश–विशेष की वेबसाइट को दर्शाते हैं। यथा– भारत के लिए in, ब्रिटेन के लिए uk और आस्ट्रेलिया के लिए au हैं। अक्षरों द्वारा खोला गया पता आँकड़ों का रूप लेकर 'हाइपर टैक्स्ट प्रोटोकॉल' (http) के माध्यम से वांछित साइट खोलता है। यदि किसी व्यक्ति को यह पता नहीं है कि उसे जो जानकारी चाहिए, वह कहीं मिलेगी तो किसी सर्च इंजन की सहायता से वह मनचाही जानकारी पा सकता है। सर्च इंजन लाखों वेबसाइटों में से उसके मतलब की वेबसाइट बता देगा। 'इंफोसीक', 'अल्टाविस्टा', 'आर्ची', 'गोफर', 'वैरानिका' तथा 'डब्ल्यू॰ ए॰ आई॰ एस॰' आदि कुछ लोकप्रिय सर्च इंजन हैं। 'याहू' विश्व का सबसे बड़ा सर्च इंजन है।

आजकल देव इंटरनेट पर प्रचार का महत्त्वपूर्ण माध्यम बन गया है। वेब के पते समाचार पत्र, पत्रिकाओं और टेलीविजन पर भी प्रसारित किए जा रहे हैं। आज देव प्रकाशन कॉरपोरेट संप्रेषण का महत्त्वपूर्ण भाग हो गया है। वेब आलेख एक उद्योग के हिस्से के रूप में विकसित हो रहे हैं। किसी भी सूचना के विषय के अंतर्गत हम विभिन्न प्रकार के वेब पेज देख सकते हैं। पहले वेब पर केवल लिखित सामग्री ही उपलब्ध होती थी, परंतु अब मल्टीमीडिया के विकास से चित्र, ध्वनि और संगीत आदि भी वेब पर संभव हो गए हैं। इसे हाइपर मीडिया भी कहा जाता है। वस्तुतः यह हाइपर टैक्स्ट और मल्टीमीडिया का ही मिश्रित स्वरूप है। किसी ब्राउज़र द्वारा ही इस वेब को इंटरनेट पर देखा जा सकता है। नेटस्केप नेवीगेटर आजकल विशेष रूप से लोकप्रिय है। माइक्रोसॉफ्ट का इंटरनेट एक्सप्लोरर भी इसकी प्रतिस्पर्धा में तेज़ी से उभर रहा है।

संचार के क्षेत्र में एक अन्य महत्त्वपूर्ण प्रणाली है – ब्रॉडबैंड वीडियो नेटवर्किंग। मनोरंजन की दुनिया में इसने एक क्रांति उपस्थित कर दी है। यह एक ऐसा नेटवर्क है जिसके माध्यम से अतितीव्र गति से आँकड़े भेजे और प्राप्त किए जा सकते हैं। भविष्य में इस प्रणाली में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि होगी वीडियो ऑन डिमांड।

अनेक न्यूज़ नेटवर्क यूज़नेट कहलाता है। न्यूज़ रीडर की सहायता से हम यूज़नेट की सूचनाएँ प्राप्त कर सकते हैं। यूज़नेट पर हम अपने विचार भेज सकते हैं, प्रश्न पूछ सकते हैं। इसके लिए नेटीक्वेटी (Netiquette) नियमों का पालन आवश्यक है। कुछ भी पूछने से पहले एफ॰ ए॰ क्यू॰ (F.A.Q.) फाइल को पढ़ लेना चाहिए क्योंकि पूछे जाने वाले अधिकांश प्रश्नों के उत्तर इसमें पहले से ही विद्यमान रहते हैं।

एफ॰ टी॰ पी॰ (File Transfer Protocal)

फाइल ट्रांसफर प्रोटोकॉल द्वारा इंटरनेट के अंतर्गत किसी भी दूरस्थ कंप्यूटर में कॉपी किया जा सकता है। इस कार्यक्रम के द्वारा

अन्य किसी भी कंप्यूटर से संपर्क स्थापित कर उसमें उपलब्ध फाइलों को देखकर उनमें से मनचाही सामग्री को अपने कंप्यूटर में स्थानांतरित किया जा सकता है। इसी तरह अपने कंप्यूटर में संग्रहीत किसी फाइल को भी इंटरनेट से जुड़े अन्य किसी भी कंप्यूटर में भेज सकते हैं।

टेलनेट (Telnet)

टेलनेट सेवा के माध्यम से हम अपने कंप्यूटर को इंटरनेट से जुड़े किसी कंप्यूटर का टर्मिनल बना लेते हैं। इस सेवा के माध्यम से हम दूरस्थ कंप्यूटर के उपयोगकर्ता बन जाते हैं। इस सुविधा को 'रिमोट लॉग इन' भी कहते हैं। फाइल ट्रांसफर प्रोटोकॉल की सहायता से टेलनेट द्वारा नेटवर्क के एक कंप्यूटर से दूसरे कंप्यूटर पर आवश्यक नई तथा उपयोगी सूचनाओं को डाउनलोड किया जा सकता है।

टेलिकॉन्फ्रेंस (Tele-Conference)

संचार–साधनों के द्वारा दो या दो से अधिक स्थानों पर तीन या तीन से अधिक व्यक्तियों द्वारा परस्पर विचार–विमर्श करना टेलि–कॉन्फ्रेंस कहलाता है। ऑडियो कॉन्फ्रेंस में भाग लेने वाले व्यक्ति परस्पर बातचीत तो कर सकते हैं, परंतु एक–दूसरे को देख नहीं सकते। ऐसी कॉन्फ्रेंस टेलिफोन से संभव है। वीडियो–कॉन्फ्रेंस में लोग एक–दूसरे को देख भी सकते हैं और आपस में विचार–विमर्श भी कर सकते हैं। कंप्यूटर कॉन्फ्रेंस में अलग–अलग स्थानों पर बैठे लोग कंप्यूटर के माध्यम से सूचनाओं का आदान–प्रदान कर सकते हैं। इंटरनेट के माध्यम से होने वाली कॉन्फ्रेंस में अनेक व्यक्तियों से बातचीत भी की जा सकती है और उन्हें कंप्यूटर के मॉनीटर पर देखा जा सकता है।

चैटिंग (Chatting)

चैटिंग ने हजारों–लाखों किलोमीटर की दूरियों को समाप्त कर दिया है। इंटरनेट के सहारे व्यक्ति स्थानीय कॉल की दर से अमेरिका या इंगलैंड में किसी से भी बात कर सकता है। इंटरनेट पर टेलिफोन के द्वारा केवल एक स्थानीय कॉल के खर्च पर विश्व में कहीं भी कितनी भी देर बात की जा सकती है। यह सेवा विश्व–भर में अत्यंत तेज़ी से लोकप्रिय हो रही है। वैसे तो यह चैटिंग सामान्य तौर पर लिखित में होती है, परंतु आजकल वॉयस (Voice) चैटिंग अधिक लोकप्रिय हो रही है, जिसमें इंटरनेट और टेलिफोन के माध्यम से व्यक्ति की आवाज़ हज़ारों मील दूर बैठे साथी के पास पहुँच जाती है। यदि कंप्यूटर में कैमकॉर्डर अर्थात् कंप्यूटर कैमरा ला हो तो जिस व्यक्ति से आप चैटिंग कर रहे हैं, वह अपने कंप्यूटर के मॉनीटर पर आपको देख भी सकता है।

इंट्रानेट (Intranet)

इंट्रानेट सुविधा की पहुँच बहुत कम लोगों तक होती है। बड़ी–बड़ी कंपनियाँ अपने मुख्यालय तथा अन्य शाखाओं का आपस में संपर्क बनाए रखने के लिए इस सुविधा का प्रयोग करती है। इसकी पहुँच केवल उन्हीं लोगों तक होती है, जो कंपनी के कर्मचारी या सदस्य हों और जिनके पास वेबसाइट तक पहुँचने का अधिकार हो। इंट्रानेट के दो रूप हैं– लोकल एरिया नेटवर्क (लैन), तथा वाइड ऐरिया नेटवर्क (वैन)। इससे स्टेशनरी तथा धन की बचत होती है। जानकारी के तीव्र आदान–प्रदान से कंपनी की उत्पादकता और क्षमता में विस्तार होता है।

ई-कॉमर्स (E-Commerce)

ई–कॉमर्स ने समस्त संसार को एक विशाल मंडी में परिवर्तित कर दिया है। इस मंडी में आप छोटी–से–छोटी और बड़ी–से–बड़ी वस्तु को खरीद और बेच सकते है। ई–कॉमर्स की किसी भी वेबसाइट को खोलकर और उसे ऑर्डर देकर घर बैठे ही अपनी मनपसंद वस्तु प्राप्त की जा सकती है। इंटरनेट पर खरीदारी करने का सबसे सुलभ माध्यम क्रेडिट कार्ड है।

इंटरनेट का उपलब्ध इन सभी सुविधाओं में हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं का प्रयोग संभव है और बहुत लोगों द्वारा यह प्रयोग किया भी जा रहा है। परंतु इसमें सबसे अधिक आवश्यक है कि जिससे आप संपर्क साध रहे हैं, उसके कंप्यूटर में भी उस भाषा का फॉण्ट या सुविधा उपलब्ध हो, जिसका प्रयोग आप कर रहे हैं। हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में कंप्यूटर पर कार्य करने के लिए सॉफ्टवेयर तैयार करने में पुणे स्थित सरकारी संस्था 'सी–डैक' का योगदान अद्वितीय है। सामान्य व्यक्ति 'विंडोज़' से सर्वाधिक परिचत है। 'विंडोज' के अंतर्गत कार्य करने के लिए भारतीय भाषाओं में विभिन्न प्रकार के 'इंटरफेस' विकसित हो गए हैं। यहाँ प्रमुखता 'सी–डैक' द्वारा विकसित 'लीप–ऑफिस' और 'इज़्म ऑफिस' की ही है। 'इस्की' (ISCII) के आधार पर भारत की सभी भाषाओं की लिपियों के लिए (उर्दू को छोड़कर) 'इंन्स्क्रिप्ट' (Inscript-Indian Lanugage Script) नामक समान कुंजी पटल का विकास किया गया है। अंग्रेज़ी के क्वर्टी (Querty) कुंजी पटल पर आधारित 'इन्स्क्रिप्ट' के द्वारा टंकण कार्य अंग्रेजी के साथ–साथ भारतीय भाषाओं की लिपियों में भी किया जा सकता है। इसके अंतर्गत भाषाओं में परस्पर 'लिप्यंतरण' (Transliteraton) की सुविधा भी उपलब्ध है।

वर्तमान समय में विंडोज का अद्यतन विकास –'विंडोज़ 2000' और 'विंडोज़ एक्स॰ पी॰' के रूप में नज़र आता है। इसी के अनुरूप माइक्रोसॉफ्ट संस्था ने एम॰ एम॰ ऑफिस के अंतर्गत 'ऑफिस 2000' जारी किया है जिसमें विश्व की कठिन और जटिलतम लिपियों को सम्मिलित किया गया है। विंडोज के अद्यतन एवं विकसित रूपों के आने से स्थानीय भाषाओं में भी 'इंटरफेस' की सुविधा हो गई है। आज हम देवनागरी लिपि में संदेशों का आदान–प्रदान कर सकते हैं। कंप्यूटर पर पाठों का टंकण देवनागरी में कर सकते हैं। आर॰ के॰ कंप्यूटर के सहयोग से आई॰ बी॰ एम॰ टाटा कंपनी ने 'हिंदी डॉस' के रूप में एक ऐसी परिचालन प्रणाली (Operating System) का विकास किया है जिसके अंतर्गत 'कमांड' और 'मेन्यू' भी हिंदी में दिए गए हैं। फाइल का नाम भी हिंदी में दिया जा सकता है। 'सी–डैक'ने व्यक्तिगत स्तर पर लेखकों के लिए कुंजीपटल को सरल बनाने के लिए 'आई–लीप' (I-Leap) नामक 'इंटरफेस' का विकास किया है। इसके द्वारा लेखक अपनी पांडुलिपि स्वयं टंकित कर सकता है और 'बहुभाषी स्पैल चैकर' की सहायता से उसमें प्रूफ संशोधन कर सकता है। सूचना–प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में 'सी–डैक' संस्था के क्रांतिकारी कार्यों ने हिंदी भाषा और देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता को प्रमाणित कर दिखाया है।

भारतीय भाषाओं में कंप्यूटर तकनीक के क्षेत्र में हो रहे तीव्रगामी विकास के कारण आज कठिन से कठिन और जटिल से जटिल कंप्यूटर संबंधी कार्यों से हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं का व्यापक प्रयोग हो रहा है। भारतीय रेल की आरक्षण–व्यवस्था की सुविधा आज आम आदमी को हिंदी में भी सुलभ है। देश में हो रहे आम चुनावों में करोड़ों मतदाताओं की सूचियाँ कंप्यूटर के माध्यम से हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में तैयार की गई हैं। भारतीय भाषाओं के साहित्य में उपलब्ध कालजयी गौरवपूर्ण कृतियाँ इंटरनेट पर और सी॰ डी॰ के रूप में उपलब्ध हैं। सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हो रहे तीव्रतम विकास के कारण इंटरनेट के क्षेत्र में आज भी हमारे सम्मुख अनेक चुनौतियाँ उभर रही हैं। इन चुनौतियों का सामना करने के लिए हमें और अधिक परिश्रम करना होगा। भविष्य में वही भाषा और लिपि लोकप्रिय होगी जो पूर्णतः वैज्ञानिक होगी। प्रत्येक दष्टि से समद्ध हिंदी भाषा आज किसी से कम नहीं है। इसे और अधिक समद्ध बनाने के लिए कंप्यूटरविज्ञ तथा भाषाविज्ञ दोनों को एक साथ मिलकर निरंतर कार्य करना होगा। निश्चय ही हिंदी एक दिन विश्व की भाषाओं में प्रथम स्थान पर आएगी।

अध्याय-5

अनुवादः सिद्धांत एवं व्यवहार

5.1 अनुवाद : परिभाषा एवं स्वरूप, क्षेत्र और प्रक्रिया

संस्कृत में 'अनुवाद' शब्द का उपयोग शिष्य द्वारा गुरु की बात के दुहराए जाने, पुनः कथन, समर्थन के लिए प्रयुक्त कथन, आवत्ति जैसे कई संदर्भों में किया गया है। संस्कृत के 'वद्' धातु से 'अनुवाद' शब्द का निर्माण हुआ है। 'वद्' का अर्थ है बोलना। 'वद्' धातु में 'अ' प्रत्यय जोड़ देने पर भाववाचक संज्ञा में इसका परिवर्तित रूप है 'वाद' जिसका अर्थ है कहने की क्रिया या कही हुई बात। 'वाद' में 'अनु' उपसर्ग उपसर्ग जोड़कर 'अनुवाद' शब्द बना है, जिसका अर्थ है, प्राप्त कथन को पुनः कहना। पहली बार मोनियर विलियम्स ने अपने अँग्रेजी शब्द ट्रांसलेशन TRANSLATION पर्याय स्वरूप किया। इसके बाद ही 'अनुवाद' शब्द का प्रयोग एक भाषा में किसी के द्वारा प्रस्तुत की गई सामग्री की दूसरी भाषा में पुनः प्रस्तुति के संदर्भ में किया गया। वास्तव में अनुवाद भाषा के इन्द्रधनुषी रूप की पहचान का समर्थतम मार्ग है। अनुवाद की अनिवार्यता को किसी भाषा की समद्धि का शोर मचा कर टाला नहीं जा सकता और न अनुवाद की बहुकोणीय उपयोगिता से इन्कार किया जा सकता है। TRANSLATION के पर्यायस्वरूप 'अनुवाद' शब्द का स्वीकृत अर्थ है, एक भाषा की विचार सामग्री को दूसरी भाषा में पहुँचना। अनुवाद के लिए हिंदी में 'उल्था' का प्रचलन भी है। उर्दू में इसे 'तर्जुमा' कहते हैं। अँग्रेजी में TRANSLATION के साथ ही TRANSCRIPTION का प्रचलन भी है, जिसे हिंदी में 'लिप्यंतरण' कहा जाता है। अनुवाद और लिप्यंतरण का अंतर इस उदाहरण से स्पष्ट है–

उसके सपने सच हुए।

HIS DREAMS BECAME TRUE - TRANSLATION

USKEY SAPNE SACH HUEY - TRANSCRIPTION

इससे स्पष्ट है कि 'अनुवाद' में हिंदी वाक्य को अँग्रेजी में प्रस्तुत किया गया है। जबकि लिप्यंतरण में नागरी लिपि में कही गई बात को मात्र रोमन लिपि में रख दिया गया है।

अनुवाद के लिए भाषांतर और रूपांतर का प्रयोग भी किया जाता रहा है। लेकिन अब इन दोनों ही शब्दों के नए अर्थ और उपयोग प्रचलित हैं। 'भाषांतर' और 'रूपांतर' का प्रयोग अँग्रेजी के INTERPRETATION शब्द के पर्याय–स्वरूप होता है, जिसका अर्थ है दो व्यक्तियों के बीच भाषिक संपर्क स्थापित करना। कन्नड़भाषी व्यक्ति और असमियाभाषी व्यक्ति के बीच की भाषिक दूरी को भाषांतरण के द्वारा ही दूर किया जाता है। 'रूपांतर' शब्द इन दिनों प्रायः किसी एक विधा की रचना की अन्य विधा में प्रस्तुति के लिए प्रयुक्त है। जैसे, प्रेमचंद के उपन्यास 'गोदान' का रूपांतरण 'होरी' नाटक के रूप में किया गया है।

किसी भाषा में अभिव्यक्त विचारों को दूसरी भाषा में यथावत् प्रस्तुत करना अनुवाद है। इस विशेष अर्थ में ही 'अनुवाद' शब्द का अभिप्राय सुनिश्चित है। जिस भाषा से अनुवाद किया जाता है, वह मूलभाषा या स्रोतभाषा है। उससे जिस नई भाषा में अनुवाद करना है, वह प्रस्तुत भाषा या लक्ष्य भाषा है। इस तरह, स्रोत भाषा में प्रस्तुत भाव या विचार को बिना किसी परिवर्तन के लक्ष्यभाषा में प्रस्तुत करना ही अनुवाद है।

(अ) परिभाषा

अनुवाद को परिभाषित करने के अनेक प्रयास हुए हैं और हर प्रयास में यही विचार–सामग्री को अपनी भाषा में यथासंभव मूल रूप में उपस्थित करना है। अनुवाद की इन परिभाषाओं से अनुवाद की प्रकृति, अनुवादक के लक्ष्य और अनुवाद की प्रक्रिया के विभिन्न उपकरण इंगित होते हैं–

"एक भाषा में व्यक्त विचारों को यथासंभव समान और सहज अभिव्यक्ति द्वारा भाषा में व्यक्त करने का प्रयास अनुवाद है।" – **डॉ॰ भोलानाथ तिवारी**

"विचारों को एक भाषा से दूसरी भाषा में रूपांतरित करना अनुवाद है।" – **डॉ॰ देवेन्द्रनाथ शर्मा**

"अनुवाद स्रोतभाषा में अभिव्यक्त विचार अथवा वक्तव्य अथवा रचना अथवा सूचना साहित्य को यथासंभव मूल भावना के सामानांतर बोध एवं संप्रेषण के धरातल पर लक्ष्यभाषा में अभिव्यक्त करने की प्रक्रिया है। – **डॉ॰ विनोद गोदरे**

"स्रोतभाषा में प्रस्तुत रचना और लक्ष्यभाषा में प्रस्तावित रचना के मध्य निकटतम सहज, समतुल्यता की स्थापना ही अनुवाद है।" – **डॉ॰ दंगल झाल्टे**

"स्रोतभाषा में व्यक्त प्रतीक व्यवस्था को लक्ष्यभाषा की सहज प्रतीक व्यवस्था में रूपांतरित करने का कार्य अनुवाद है।" – **डॉ॰ रीतारानी पालीवाल**

अनुवाद की परिकल्पना एक ऐसे संयंत्र के रूप में की गई है, जिससे होकर स्रोतभाषा की सामग्री लक्ष्यभाषा में बदलती है। इसीलिए अनुवाद को परिभाषित करने के तमाम प्रयासों में प्रधानतः अनुवाद–प्रक्रिया का ही ब्योरा है। इस दष्टि से अनुवाद को इन शब्दों में परिभाषित किया जा सकता है– "अनुवाद एक भाषा समुदाय के विचार और अनुभव सामग्री को दूसरे भाषा समुदाय की शब्दावली में लगभग यथावत् संप्रेषित करने की सोद्देश्य परिवर्तन–प्रक्रिया है।"

इस परिभाषा से इंगित होता है कि अनुवाद एक भाषा–समुदाय के विचारों और अनुभवों को किसी दूसरे भाषा–समुदाय के पास संप्रेषित करता है। संप्रेषण के इस प्रयास में अनुवादक यत्न करता है कि संप्रेषण लगभग यथावत् हो। लेकिन इस क्रम में अनुवाद स्रोतभाषा में उपलब्ध विचारों और अनुभवों की शब्दावली को लक्ष्यभाषा की शब्दावली में परिवर्तित करता है। यह सारी प्रक्रिया निश्चित तौर पर सोद्देश्य होती है। अनुवाद की सह परिभाषा एक साथ अनुवाद के उद्देश्य, कार्य और प्रक्रिया की ओर इशारा करती है।

(आ) अनुवाद : स्वरूप वैविध्य

अनुवाद को कला और विज्ञान दोनों ही रूपों में स्वीकारने की मानसिकता इसी कारण पल्लवित हुई है कि संसारभर की भाषाओं के पारस्परिक अनुवादक की कोशिश अनुवाद की अनेक शैलियों और प्रविधियों की ओर इशारा करती हैं। अनुवाद की एक भंगिमा तो यही है कि किसी रचना का साहित्यिक–विधा के आधार पर अनुवाद उपस्थित किया जाए। यदि किसी नाटक का नाटक के रूप में ही अनुवाद किया जाए तो ऐसे अनुवादों में अनुवादक की अपनी सजनात्मक प्रतिभा का वैशिष्ट्य भी अपेक्षित होता है। अनुवाद का एक आधार अनुवाद के गद्यात्मक अथवा पद्यात्मक होने पर भी आश्रित है। ऐसा पाया जाता है कि अधिकांशतः गद्य का अनुवाद गद्य में अथवा पद्य में ही उपस्थित हो, लेकिन कभी–कभी यह क्रम बदला हुआ नजर आता है। कई गद्य कृतियों के पद्यानुवाद मिलते हैं, तो कई काव्यकृतियों के गद्यानुवाद भी उपलब्ध हैं। अनुवादों को विषय के आधार पर भी वर्गीकृत किया जाता है और कई स्तरों पर अनुवाद की प्रकृति के अनुरूप उसे मूल–केंद्रित और मूलमुक्त दो वर्गों में भी बाँटा गया है। अनुवाद के जिन सार्थक और प्रचलित प्रभेदों का उल्लेख अनुवाद विज्ञानियों ने किया है, उनके बीच शब्दानुवाद, भावानुवाद, छायानुवाद, सारानुवाद, व्याख्यानुवाद, आशुअनुवाद और रूपांतरण को सर्वाधिक स्वीकृति मिली है–

1. **शब्दानुवाद**

स्रोतभाषा के प्रत्येक शब्द का लक्ष्यभाषा के प्रत्येक शब्द में यथावत् अनुवादन को शब्दानुवाद कहते हैं। 'मक्षिका स्थाने मक्षिका' पर आधारित शब्दानुवाद वास्तव में अनुवाद की सबसे निकृष्ट कोटि का परिचायक होता है। प्रत्येक भाषा की प्रकृति अन्य भाषा से भिन्न होती है और हर भाषा में शब्द के अनेकानेक अर्थ विद्यमान रहते हैं। इसीलिए मूल भाषा की हर शब्दाभिव्यक्ति को यथावत् लक्ष्यभाषा में नहीं अनुवादित किया जा सकता। कई बार ऐसे शब्दानुवादों के कारण बड़ी हास्यास्पद स्थिति उत्पन्न हो जाती है। संस्कृत से हिंदी में किये गये अनुवाद को कई बार प्रकृति की साम्यता के कारण सह्य होते हैं, लेकिन यूरोपीय परिवार की भाषाओं से किये गए अनुवाद में अर्थ और पदक्रम के दोष सामान्यतः नजर आते हैं। वास्तव में यदि स्रोत और लक्ष्यभाषा में अर्थ, प्रयोग, वाक्य–विन्यास और शैली की समानता हो, तभी शब्दानुवाद सही होता है, अन्यथा यंत्रवत् किये गए शब्दानुवाद अबोधगम्य, हास्यास्पद एवं कृत्रिम हो जाते हैं।

2. **भावानुवाद**

ऐसे अनुवादकों में स्रोत–भाषा के शब्द, पदक्रम और वाक्य–विन्यास पर ध्यान न देकर अनुवाद मूलभाषा की विचार–सामग्री या भावधारा पर अपने आपको केंद्रित करता है। ऐसे अनुवादों में स्रोतभाषा की भाव–सामग्री को उपस्थित करना ही अनुवादक का लक्ष्य होता है। भावानुवाद की प्रक्रिया में कभी–कभी मूल रचना जैसा मौलिक वैभव आ जाता है, लेकिन कई बार पाठकों को यह शिकायत होती है कि अनुवादक ने मूलभाषा की भावधारा को समझे बिना, लक्ष्य–भाषा की प्रकृति के अनुरूप भाव सामग्री प्रस्तुत कर दी है। जब पाठक किसी रचना को रचनाकार के अभिव्यक्ति–कौशल की दष्टि से पढ़ना चाहता है, तो भावानुवाद उसकी लक्ष्यसिद्धि में सहायक नहीं होता।

3. **छायानुवाद**

संस्कृत नाटकों में लगातार ऐसे प्रयोग मिलते हैं कि उनकी स्त्री–पात्र तथा सेवक, दासी आदि जिस प्राकृत भाषा का प्रयोग करते हैं, उसकी संस्कृत छाया भी नाटक में विद्यमान रहती है। ऐसे ही प्रयोगों से छायानुवाद का उद्‌भव हुआ है। अनुवाद की प्रविधि के अंतर्गत अनुवादक न शब्दानुवाद की तरह केवल मूल शब्दों का अनुसरण करता है और न सिर्फ भावों का ही परिपालन करता है, बल्कि मूलभाषा से पूरी तरह बंधा हुआ उसकी छाया में लक्ष्यभाषा में वर्ण्य–विषय की प्रस्तुति करता है।

4. **सारानुवाद**

इस अनुवाद में मूलभाषा की सामग्री का संक्षिप्त और अतिसंक्षिप्त अनुवाद लक्ष्यभाषा में किया जाता है। लंबे भाषणों और वाद–विवादों के अनुवाद प्रस्तुत करने में यह विधि सहायक होती है।

5. **व्याख्यानुवाद**

ऐसे अनुवादों में मूलभाषा की सामग्री का लक्ष्यभाषा में व्याख्या सहित अनुवाद उपस्थित किया जाता है। इसमें अनुवादक अपने अध्ययन और दष्टिकोण के अनुरूप मूल भाषा की सामग्री की व्याख्या अपेक्षित प्रमाणों और उदाहरणों आदि के साथ करता है। लोकमान्य तिलक ने 'गीता' का अनुवाद इस शैली में किया है। संस्कृत के बहुत सारे भाष्यकारों और हिंदी के टीकाकारों ने व्याख्यानुवाद की शैली का ही अनुगमन किया है। स्वभावतः व्याख्यानुवाद अथवा भाष्यानुवाद मूल से बहुत बड़ा हो जाता है और कई स्तरों पर तो एकदम मौलिक बन जाता है।

6. **आशुअनुवाद**

जहाँ अनुवाद दुभाषिये की भूमिका में काम करता है, वहाँ वह केवल आशुअनुवाद कर पाता है। दो दूरस्थ देशों के भिन्न भाषा–भाषी जब आपस में बातें करते हैं, तो उनके बीच दुभाषिया संवाद का माध्यम बनता है। ऐसे अवसरों पर वे अनुवाद शब्द और भाव की सीमाओं को तोड़कर अनुवादक की सत्वर अनुवाद क्षमता पर आधारित हो जाता है। उसके पास इतना समय नहीं होता है कि शब्द के सही भाषायी पर्याय के बारे में सोचे अथवा कोशों की सहायता ले सके। कई बार ऐसे दुभाषिये के आशुअनुवाद के कारण दो देशों में तनाव की स्थिति भी बन जाती है। आशुअनुवाद ही अब भाषांतरण के रूप में चर्चित है।

7. **रूपांतरण**

अनुवाद के इस प्रभेद में अनुवादक मूलभाषा से लक्ष्यभाषा में केवल शब्द और भाव का अनुवादन नहीं करता, अपितु अपनी प्रतिभा और सुविधा के अनुसार मूल रचना का पूरी तरह रूपांतरण कर डालता है। विलियम शेक्सपीयर के प्रसिद्ध नाटक 'मर्चेंट ऑफ वेनिस' का अनुवाद भारतेंदु हरिश्चंद्र ने 'दुर्लभ बंधु' अर्थात् 'वंशपुर का महाजन' नाम से किया है जो रूपांतरण के अनुवाद का अन्यतम उदाहरण है। मूल नाटक के एंटोनियो, बैसोलियो, पोर्शिया, शाइलॉक जैसे नामों को भारतेंदु ने क्रमशः अनंत, बसंत, पुरश्री, शैलाक्ष जैसे रूपांतर प्रदान किये हैं। ऐसे रूपांतरण में अनुवाद की मौलिकता सबसे अधिक उभरकर सामने आती है।

अनुवादक के इन प्रभेदों से ज्ञापित होता है कि संसार भर की भाषाओं में अनुवाद की कई शैलियाँ और प्रविधियाँ अपनाई गई हैं, लेकिन यदि अनुवादक सावधानीपूर्वक शब्द और भाव की आत्मा का स्पर्श करते हुए मूलभाषा की प्रकृति के अनुरूप लक्ष्यभाषा में अनुवाद उपस्थित करे तो यही आदर्श अनुवाद होगा। इसीलिए श्रेष्ठ अनुवादक को ऐसा कुशल चिकित्सक कहा जाता है, जो बोतल में रखी दवा को अपनी सिरिंज के द्वारा रोगी के शरीर में यथावत पहुँचा देता है।

(इ) अनुवाद के क्षेत्र

अनुवाद एक भाषा में कही गयी बात का दूसरी भाषा में अंतरण है। इस प्रक्रिया को भावगत अंतरण, शब्दगत अंतरण, कलात्मक परीक्षण अथवा अर्थ का तात्त्विक संप्रेषण आदि कितने ही नामों अथवा वर्गों में रखकर देखते और समझते हैं। अनुवाद करते समय उनमें से कौन–सा पक्ष कितना संप्रेष्य है, यदि बात को छोड़ दिया जाए तो सभी प्रकार के संप्रेषण में एक सामान्य बात यह प्रभावी रहती है कि प्रत्येक स्थिति में अनुवादक को स्रोत भाषा से लक्ष्यभाषा में विभिन्न विषयों के संदर्भ में, विभिन्न स्तरों पर यह संप्रेषण करना होता है। मनुष्य के व्यवहार, चिंतन अथवा बाह्य आकार–प्रकार में अनेक समानताएँ हैं, किंतु दो भिन्न भाषाओं में यह समानता यथास्थिति एवं विषयानुसार कम–अधिक होती है। दोनों भाषाएँ शब्द–सामर्थ्य की दष्टि से कम या अधिक समद्ध हो सकती हैं। दोनों भाषाओं का व्याकरण भिन्न हो सकता है। दोनों की प्रकृति–प्रवत्ति भिन्न हो सकती है। दोनों का शिल्पगत विशिष्टताएँ भिन्न हो सकती हैं। अतः विभिन्न क्षेत्रों से संबंधित सामग्री का अनुवाद करते समय दोनों भाषाओं के संदर्भ में अनेक प्रकार की विषयगत एवं प्रकृतिगत समस्याएँ निहित रहती हैं।

यों तो अनुवाद के कई क्षेत्र हो सकते हैं, किंतु इसे निम्नलिखित प्रमुख श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है–

(क) साहित्यिक विषयों का क्षेत्र।

(ख) साहित्येतर विषयों का क्षेत्र।

इसे निम्न चित्र द्वारा दर्शाया जा सकता है–

अनुवाद के क्षेत्र

	साहित्यिक विषय		**साहित्येतर विषय**
1.	कविता	1.	प्रशासन एवं कार्यालय
2.	उपन्यास	2.	वाणिज्य एवं बैंक
3.	कहानी	3.	विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी

4.	नाटक	4.	जनसंचार माध्यम
5.	निबंध	5.	विधि
6.	आत्मकथा	6.	कंप्यूटर
7.	आलोचना	7.	समाजशास्त्र
8.	संस्मरण	8.	राजनीतिशास्त्र
		9.	मनोविज्ञान
		10.	कृषि
		11.	पर्यटन

साहित्यिक अनुवाद का क्षेत्र

सजनात्मक साहित्य अनुवाद का एक महत्त्वपूर्ण क्षेत्र है। जिस प्रकार सजनात्मक साहित्य का लेखन अन्य प्रकार के लेखन से भिन्न होता है, उसी प्रकार इसके अनुवाद का स्वरूप भी अन्य प्रकार के विषयों के अनुवाद से नितांत होता है। डॉ॰ सुरेश सिंहल के अनुसार– "साहित्यिक सामग्री का अनुवाद जहाँ पाठक को आनंदित करता है, वहीं यह उसे रसात्मक अनुभूति भी प्रदान करता है। साहित्यिक अनुवाद अपनी मूल प्रकृति में शैली प्रधान, भावात्मक, सौंदर्यपरक, अभिव्यंजनामूलक एवं संश्लिष्ट होता है। इस प्रकार का अनुवाद सिर्फ एक भाषा से दूसरी भाषा में शब्दों का प्रतिस्थापन मात्र नहीं होता। इसमें यथासंभव समतुल्य एवं सहज अभिव्यक्ति द्वारा स्रोत भाषा के मूल कथ्य को लक्ष्यभाषा में पुनःसजित एवं संप्रेषित किया जाता है।" साहित्यिक अनुवाद में मूल रचना के संपूर्ण कलेवर को आत्मसात् करते हुए उसे सजनात्मक ढंग से संप्रेषित करना होता है। निःसंदेह यह एक श्रमसाध्य एवं जटिल कार्य है। मूल लेखक की अनुभूति तथा भाषा शैली की काव्यात्मकता को ईमानदारी से एक भाषा से दूसरी भाषा में सुरक्षित रखना पड़ता है। सजनात्मक साहित्य के अनुवादक को सही अनुपात में मूल रचना की विभिन्न प्रकार की सूक्ष्मताओं को दूसरी भाषा में संप्रेषित करने का महत्त्वपूर्ण दायित्व निभाना पड़ता है। इस प्रक्रिया के दौरान समतुल्यता की खोज अनुवादक के लिए सबसे बड़ी चुनौती के रूप में उभरकर सामने आती है, क्योंकि दोनों भाषाएँ अपने स्वभाव में कई स्तरों पर एक दूसरे से भिन्न होती हैं। भाषाओं की यह भिन्नता जितनी अधिक होगी, अनुवाद भी उतना ही कठिन हो जाएगा। सजनात्मक साहित्य के अनुवाद को कलात्मक स्वरूप प्रदान करने के लिए बिंबों, प्रतीकों, अलंकारों, मुहावरों, लोकोक्तियों, सांस्कृतिक संदर्भों आदि की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। साहित्यिक अनुवाद के क्षेत्र के अंतर्गत कविता, कथा साहित्य, नाटक, निबंध व अन्य गद्य विधाएँ आती हैं।

कविता का अनुवाद

गद्य और पद्य के अनुवाद में एक मूलभूत अंतर यह है कि गद्य की भाषा जहाँ प्राय अभिधामूलक होती है, वहीं पद्य की भाषा लाक्षणिक एवं व्यंजनाप्रधान होती है। इसलिए कविता का अनुवाद करते समय मूल अर्थ में कुछ न कुछ परिवर्तन अवश्य आ जाता है। इसलिए काव्य भाषा की इन्हीं जटिलताओं के कारण ही अनुवाद प्रायः असंभव–सा लगने लगता है। फिर भी समान प्रकृति की भाषाओं में तो परस्पर अनुवाद संभव होता भी है, किंतु असमान प्रकृति की भाषाओं जैसे अंग्रेजी और हिंदी में कविता का अनुवाद प्रायः दुष्कर हो जाता है। और फिर कविता अन्य साहित्यिक विधाओं से भिन्न होती है क्योंकि इसमें कुछ ऐसे तत्त्व होते हैं जो अन्य विधाओं में नहीं होते और जिन्हें अनुवाद के लिए अनुवाद की भाषा में सुरक्षित रख पाना कठिन होता है। काव्यानुवाद में अलंकार, प्रतीक, बिंब, सांस्कृतिक शब्दावली, रस–योजना, छंद योजना आदि से संबंधित समस्याएँ अनुवादक के समक्ष प्रस्तुत होती हैं। इन्हीं कारणों से अनेक विद्वानों ने कविता के अनुवाद को असंभव घोषित किया है।

किंतु इस सबका अर्थ यह कदापि नहीं है कि कविता का अनुवाद किया ही नहीं जा सकता। डॉ॰ सुरेश सिंहल के अनुसार, "वस्तुतः कविता का अनुवाद कठिन तो है किंतु असंभव नहीं है। कितने ही सफल काव्यानुवाद आज हमारे सामने हैं। हरिवंशराय बच्चन ने अंग्रेजी के रोमांटिक कवियों तथा डब्ल्यू॰ बी॰ कीट्स की रचनाओं के, उमर खैयाम की रूबाइयों के ओर शेक्सपीयर के प्रसिद्ध काव्य–नाटक 'हैमलेट' के जो अनुवाद प्रस्तुत किये हैं वे मौलिक सजन से किसी भी प्रकार कम नहीं है।"

कथा साहित्य का अनुवाद

इस विधा के अंतर्गत उपन्यास एवं कहानी का अनुवाद आता है। प्रायः यह समझा जाता है कि कविता की तुलना में उपन्यास एवं कहानी का अनुवाद सरल एवं आसान है। किंतु ऐसा है नहीं क्योंकि मूलतः साहित्यिक अनुवाद अपने आप में एक सजनात्मक प्रक्रिया है। यहाँ डॉ॰ सुरेश सिंहल के विचार महत्त्वपूर्ण हैं– "कथा साहित्य के अनुवाद में किसी भी प्रकार से अनुवादक सजनशीलता के कर्त्तव्य से बच नहीं सकता। यह कलात्मक दायित्व निभाना अनुवादक की सजनात्मक प्रतिभा एवं उपयोग की क्षमता पर निर्भर करता है। कविता के अनुवाद में मूल लेखक की अनुभूति की अभिव्यक्ति अमूर्त एवं सूक्ष्म होती है, जबकि कथा साहित्य के अनुवाद में मूर्त

एवं स्थूल होती है। संरचना के आधार पर कथा साहित्य एक संश्लिष्ट साहित्यिक विधा होती है जिसमें अन्य विधाओं के गुण भी घुले–मिले रहते हैं। ऐसा बिलकुल नहीं है कि उपन्यास तथा कहानी के अनुवाद में सपाटबयानी ही होती है। काव्यात्मकता का पुट भी इसमें सदैव विद्यमान रहता है।"

कथा साहित्य के अनुवाद की विशिष्टता उसके कथ्य और शैली पर निर्भर करती है। इसमें भाव–भंगिमाओं, शैली की सूक्ष्मताओं, अर्थछवियों, लक्ष्यार्थ एवं व्यंग्यार्थ अभिव्यक्तियों तथा अन्य काव्यात्मक प्रयोगों आदि के रूप में अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इस प्रकार के अनुवाद में अनुवादक के लिए दोनों भाषाओं की सामाजिक एवं सांस्कृतिक पष्ठभूमि का पर्याप्त ज्ञान तथा दोनों भाषाओं की पूरी पकड़ होना अति आवश्यक होता है।

नाटक का अनुवाद

नाटक का अनुवाद करना उतना ही कठिन है जितना कि नाटक के लेखन का काम। दरअसल नाटक के अनुवाद के लिए रंगमंच का व्यावहारिक ज्ञान अपेक्षित है और इसी कारण प्रत्येक व्यक्ति इसका अनुवाद करने में सक्षम नहीं होता। डॉ॰ सुरेश सिहल के शब्दों में– "नाटक के अनुवाद में अनेक ऐसी तकनीकी बातें होती है। जिन्हें अनुवादक के लिए जानना जरूरी हो जाता है, अन्यथा वह अनुवाद नहीं कर सकेगा। नाटक में भी रंगमंच, दूरदर्शन, आकाशवाणी आदि के लिए अनुवाद अलग–अलग प्रकार से किया जाता है। इन सबकी तकनीकी जरूरतें अलग–अलग होने के कारण नाटक की अनुवाद प्रक्रिया भी अलग हो जाती है। अन्य प्रकार की विधाओं और नाटक के अनुवाद की प्रक्रिया में अन्तर इसलिए होता है क्योंकि नाटक तो देखा जाता है और अन्य विधाएँ पढ़ी जाती हैं। नाटक के अनुवाद में मूल नाटक के बिंब को दूसरी भाषा में उसी तरह अथवा नजदीकी बिंब द्वारा उकेरा जाता है। एक प्रकार से मूल नाटक की संपूर्ण अर्थवत्ता की विभिन्न विशिष्टताओं को अनुवाद की भाषा में उतारा जाता है। मूलतः नाटकानुवाद में अभिनय–पक्ष और संवाद–पक्ष की ओर अत्यधिक ध्यान दिया जाता है जबकि अन्य विधाओं में ऐसा नहीं होता। साथ ही मूल नाटक के सांस्कृतिक परिवेश की भी अहम भूमिका रहती है। इस दष्टि से दोनों भाषाओं में सामंजस्य का होना आवश्यक होता है।"

नाटक के अनुवाद में कुछ समस्याएँ रूपांतरण के स्तर पर भी होती है। कुल मिलाकर इसमें भाषायी एवं नाटकीय तत्त्वों के संप्रेषण की समस्या आती है।

अन्य गद्य विधाओं का अनुवाद

इन गद्य विधाओं के अंतर्गत निबंध, आत्मकथा, संस्मरण, आलोचना आदि का अनुवाद आता है। यह धारणा नितांत भ्रामक है कि इन गद्य विधाओं का अनुवाद अन्य साहित्यिक विधाओं की तुलना में आसान होता है। डॉ॰ सुरेश सिंहल के मतानुसार– "वस्तुस्थिति यह है कि ये गद्य विधाएँ भी साहित्यिक अनुवाद के ही महत्त्वपूर्ण आयाम हैं। इनका अनुवाद न तो अन्य विधाओं से भिन्न है और न ही इनके अनुवाद की समस्याएँ भी कम हैं। गद्य–विधाओं में विचार एवं अनुभूति की गहनता और सूक्ष्मता की प्रामाणिकता को सुरक्षित रखते हुए अनुवाद करना होता है। इन विधाओं में एक ओर विचारों की तथ्यपरकता और दूसरी ओर अनुभूति की कलात्मकता विद्यमान होती है और इन दोनों के समन्वित रूप को लक्ष्य भाषा में उतारना अनुवादक की सफलता की कसौटी होती है।" इन विधाओं के अनुवाद को भावपक्ष की अपेक्षा कलापक्ष की भिन्नता ही आसान या कठिन बनाती है। अतः इनमें कलापक्ष को नजरअंदाज करते हुए भावपक्ष के अनुवाद पर ही बल देना सफलता का सूचक नहीं होता है। वास्तविक चुनौती तो इन विधाओं के कलापक्ष में ही निहित है और यही कलापक्ष संबंधी समस्याएँ अनुवादक से सजनात्मक प्रतिभा की माँग करती हैं। इसीलिए इन विधाओं के अनुवाद के संबंध में यह कहना समीचीन प्रतीत होता है कि इनका कलापक्ष जितना सशक्त होगा, अनुवाद भी उतना ही कठिन हो जाएगा।

साहित्येतर विषयों के अनुवाद का क्षेत्र

अनुवाद का क्षेत्र साहित्यिक विधाओं तक ही सीमित नहीं है। अनुवाद का क्षेत्र आज इतना व्यापक हो गया है कि इसके अन्तर्गत अनेक विषय सामने आ रहे हैं। इस संदर्भ में कुछ महत्त्वपूर्ण विषयों के अनुवाद की चर्चा निम्नलिखित की जा रही है–

प्रशासन/कार्यालय का क्षेत्र

प्रशासनिक अथवा कार्यालयी अनुवाद के क्षेत्र के अंतर्गत समस्त सरकारी गतिविधियों का ही समावेश हो जाता है। सरकारी अभिलेखों में एक ओर जहाँ सामान्य पत्राचार, टिप्पण और मसौदा–लेखन आता है तो दूसरी ओर उनमें भारतीय राजपत्र में प्रकाशित होने वाले संकल्प तथा अधिसूचनाएँ, सामान्य सूचना के लिए प्रचारित प्रेस विज्ञप्तियों तथा प्रेस नोट, तकनीकी और गैर–तकनीकी पत्राचार, संसदीय–प्रश्न, पत्र–पत्रिकाएँ तथा संसद के समक्ष प्रस्तुत अन्य प्रशासनिक रिपोर्ट आती है। बजट आदि प्राविधिक और सांख्यिकीय अभिलेख भी इन्हीं के अन्तर्गत आते हैं।

सरकारी साहित्य के अनुवाद की एक अपनी विशिष्ट समस्या होती है। इसमें प्रयुक्त भाषा शैली, मूल अभीष्ट और संबंधित अन्य बातें विभिन्न सरकारी अभिलेखों के साथ बदलते चलते हैं। इसीलिए उनके अनुवाद के लिए एक सामान्य नियम निर्धारित कर देना संभव नहीं है। कार्यालयी अथवा प्रशासनिक अनुवाद की भाषा की सबसे बड़ी विशेषता यह होती है कि वह अपनी संपूर्ण नैसर्गिकता को

सुरक्षित रखने वाली हिंदी हो, उसमें अनुवाद की गंध न रहे। यों सुबोधता या दुर्बोधता का प्रश्न अनूदित विषय सापेक्ष होता है, फिर भी एक ऐसे विषय के अनुवाद में जिसमें पारिभाषिक शब्दों की भरमार हो, स्वभावतः कठिन शब्दों का बाहुल्य होगा। किसी भी अनुवाद की सफलता की कसौटी यह नहीं मानी जानी चाहिए कि राह चलता आदमी उसे समझ पाए। राह चलता आदमी अपने सीमित ज्ञान के कारण गूढ़ विषयों को समझने की शक्ति ही नहीं रखता। फिर प्राविधिक विषयों की अंग्रेजी भी सरल विषयों को अंग्रेजी जैसी नहीं होती। एक ओर चतुर्थ श्रेणी के कर्मचारियों को वर्दी देने के विषय में ज्ञापन की अंग्रेजी देखिए और दूसरी ओर संसद के सामने प्रस्तुत किये गए किसी विधेयक की अंग्रेजी। इसी प्रकार दोनों तरह के उद्धरणों के अनुवादों में भी यह अंतर रहना स्वाभाविक है। यदि अनुवाद कठिन लगता है तो इसका कारण है विषय तथा भाषा का अपूर्ण ज्ञान। हाँ, इस संबंध में इतना ध्यान अवश्य रखना चाहिए कि भाषा को शब्दाडंबर से बचाया जाए और अंग्रेजी वाक्य–विन्यास को हिंदी में ज्यों–का–त्यों न उतारा जाए। क्योंकि इससे अनुवाद की भाषा की सहजता प्रभावित हो सकती है।

वाणिज्यिक अनुवाद का क्षेत्र

आज के प्रतिस्पर्धा के युग में वाणिज्य एवं बैंक अनुवाद एक महत्त्वपूर्ण क्षेत्र के रूप में उभरकर सामने आ रहा है। आज का सुख–सुविधा सम्पन्न व्यक्ति वाणिज्य, बैंक एवं विज्ञापन पर अत्यधिक निर्भर हो गया है। इसलिए इस क्षेत्र से संबंधित सामग्री को इस तक पहुँचाने का महत्त्वपूर्ण कार्य अनुवाद के माध्यम से ही किया जाता है। यह क्षेत्र आज के संदर्भ में अत्यंत व्यापक हो चला है। इसके अंतर्गत व्यापार, बैंकों का काम, विज्ञापन–कला, पर्यटन आदि अनेक व्यवसाय आ गए हैं। इसलिए इन क्षेत्रों से संबंधित सामग्री के अनुवाद का महत्त्व भी स्वतः ही बढ़ जाता है। व्यापार संबंधी अनेक दस्तावेजों का अनुवाद आज की प्रमुख आवश्यकता बन गया है। इनमें विभिन्न प्रकार के व्यापारिक पत्र, निविदाएँ, सूचनाएँ, नियमावली, निर्देश आदि सभी प्रकार की सामग्री सम्मिलित है। बैंकों के राष्ट्रीयकरण के बाद से बैंक संबंधी सामग्री के अनुवाद का महत्त्व और भी बढ़ गया है क्योंकि मूलतः यह सामग्री अंग्रेजी में ही उपलब्ध होती रही है। अतः आज इन अंग्रेजी दस्तावेजों के हिंदी में अनुवाद की आवश्यकता निर्विवाद है।

इस प्रकार के अनुवाद की भाषा में जनभाषा का प्रयोग, अर्थ की स्पष्टता एवं असंदिग्धार्थकता, भाषा की बोधगम्यता एवं सहजता, यथासंभव शब्दानुवाद और भावानुवाद का सम्मिश्रण, विषय की प्रधानता, भाषा की सूचनाशक्ति आदि विशेषताओं का होना आवश्यक होता है।

वैज्ञानिक एवं तकनीकी अनुवाद का क्षेत्र

आज के युग में विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में जिस प्रकार राष्ट्रीय एवं अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर परस्पर संपर्क एवं सहयोग बढ़ता जा रहा है, वह इस क्षेत्र में अनुवाद की प्रासंगिकता तथा अनिवार्यता को ही दर्शाता है। साहित्यिक अनुवाद में जहाँ मूल लेखक के भावों–विचारों तथा विषय–वस्तु की ओर अधिक ध्यान दिया जाता है, वहीं वैज्ञानिक एवं तकनीकी विषयों के अनुवाद में विषय–वस्तु में वर्णित तथ्यों एवं शब्दों के रूप एवं पर्याय पर अधिक ध्यान दिया जाता है। यहाँ डॉ॰ सुरेश सिंहल का कथन प्रासंगिक है– "इस प्रकार के अनुवाद में अनुवादक के लिए स्रोत भाषा एवं लक्ष्यभाषा के साथ–साथ विज्ञान की मूलभूत जानकारी होनी आवश्यक है। अनुवाद करते समय तथ्यों की स्पष्टता महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। हिंदी शब्दावली के अध्ययन–मनन के बिना अनुवाद में सदैव अर्थ का अनर्थ होने की संभावना बनी रहती है। मात्र शब्दावली से समानार्थी शब्दों का चयन एवं उनका दूसरी भाषा में प्रतिस्थापन अनुवाद को सार्थक एवं सजीव बनाने में पर्याप्त नहीं होता है।" वैज्ञानिक एवं तकनीकी अनुवाद में पारिभाषिक शब्दावली की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। चूँकि यह शब्दावली अपने आप में बहुत स्पष्ट होती है, अतः उसके अनुवाद में भी स्पष्टता का यह गुण विद्यमान होना अनिवार्य हो जाता है। वैज्ञानिक एवं पारिभाषिक शब्दों के अर्थ सुनिश्चित होने पर भी अनुवाद सफल कहलाता है। साथ ही यह भी आवश्यक है कि अनुवादक पाठक के स्तर को भी ध्यान में रखे। इस प्रकार के अनुवाद में शत–प्रतिशत शब्दानुवाद से भी काम नहीं चलता। अनुवाद की भाषा में मूल की आत्मा के दर्शन होने ही चाहिएं, अन्यथा अनुवाद निरर्थक एवं हास्यास्पद होकर रह जाएगा। इस स्थिति से बचने के लिए हिंदी के शब्दों का अर्थ–गांभीर्य समझना जरूरी हो जाता है।

जनसंचार माध्यमों के अनुवाद का क्षेत्र

जनसंचार माध्यमों का क्षेत्र अनुवाद की दष्टि से एक महत्त्वपूर्ण क्षेत्र है। इसके अन्तर्गत प्रिंट मीडिया एवं इलेक्ट्रानिक मीडिया से संबंधित सामग्री का अनुवाद आता है। पिंट मीडिया में प्रमुखतया समाचार पत्र–पत्रिकाएँ तथा इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में दूरदर्शन एवं आकाशवाणी से संबंधित सामग्री का अनुवाद सम्मिलित है। डॉ॰ सुरेश सिंहल के अनुसार– "जनसंचार माध्यमों से संबंधित सामग्री पर प्रायः अंग्रेजी का अत्यधिक प्रभाव होता है जिसके परिणामस्वरूप अनुवाद की भाषा में कृत्रिमता एवं नीरसता आ जाती है। इसका एक कारण इस सामग्री का शब्दानुवाद करना है। वास्तव में, जनसंचार के माध्यमों की सामग्री का अनुवाद आम आदमी से संबंध रखता है। इस कारण इसकी भाषा सरल, स्पष्ट और सहज ही होनी चाहिए। अटपटी, निरर्थक और बेजान अभिव्यक्तियों के लिए इस प्रकार के अनुवाद का कोई स्थान नहीं होता।" पत्रकारों और संपादकों को मीडिया के अनुवाद में समाचार और भाषा

दोनों में संतुलन बनाए रखने का महत्त्वपूर्ण दायित्व का निर्वाह करना होता है। इसकी भाषा पाठक एवं दर्शकों का ध्यान आकर्षित करने वाली तथा उन्हें प्रभावित करने वाली होती है। जनसंचार माध्यमों में विज्ञापन का उल्लेखनीय स्थान होता है। विज्ञापन की भाषा के अपने अलग ही तेवर होते हैं। विज्ञापन के अनुवाद की भाषा में चुटीलापन, पैनापन, आकर्षण, आदि गुणों का होना आवश्यक होता है।

विधि अनुवाद का क्षेत्र

अनुवाद के क्षेत्र में विधि साहित्य से संबंधित सामग्री प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है और इसके अनुवाद की अनेक संभावनाएँ विद्यमान हैं। इस क्षेत्र के अंतर्गत भारतीय संविधान, कानून की नियमावली, कोर्ट–कचहरी के मुकद्दमे, संविधान की संशोधित धाराएँ विविध प्रकार के नियमों–अधिनियमों की पुस्तकें, कानूनी संहिताएँ, शासकीय अधिसूचनाएँ आदि सामग्री आती है। ये सभी विषय विधि अनुवाद के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण हैं। भारत जैसे बड़े देश में केंद्र तथा राज्य सरकार और न्याय व्यवस्था में संबंधित सामग्री विधि–साहित्य के अनुवाद की स्रोत सामग्री के रूप में उपलब्ध है। विधि अनुवाद की भाषा अन्य प्रकार के विषयों से भिन्न होती है। हमारे यहाँ विधि–साहित्य चूँकि अंग्रेजी में ही है, इसलिए इसका अनुवाद अंग्रेजी से हिंदी में किया जाता है। यह सर्वविदित है कि इन दोनों भाषाओं में काफी अंतर है। वाक्य–रचना में तो इतना अंतर है कि दोनों भाषाओं का अच्छा ज्ञाता ही उन्हें समझ–परख सकता है। अंग्रेजी की प्रकृति लंबे जटिल वाक्यों की है, जबकि हिंदी की प्रकृति छोटे और सरल वाक्यों की। इसके अतिरिक्त अर्थ की स्पष्टता, अर्थ को पूर्णतया लक्ष्य भाषा में सुरक्षित रखना, अर्थ की सुनिश्चितता, भाषा की सरलता एवं सहजता, पारिभाषिक शब्दों के प्रयोग में एकरूपता, मूल प्रारूपण की जटिलता आदि की दष्टि से विधि साहित्य का अनुवाद करने पर ही सफलता प्राप्त की जा सकती है।

कंप्यूटर अनुवाद का क्षेत्र

कंप्यूटर का क्षेत्र आज अनुवाद के नवीनतम क्षेत्र के रूप में उभर रहा है। एक ओर कुछ लोगों की धारणा रही है कि कंप्यूटर अनुवाद करने में सक्षम नहीं है तो दूसरी ओर कुछ लोग इसे एक संभव कार्य मानते हैं। यहाँ डॉ॰ सुरेश सिंहल का मत विचारणीय है– "वस्तुस्थिति यह है कि आज भी कंप्यूटर केवल साहित्येतर विषयों का अनुवाद करने में ही सक्षम हो पाया है, सजनात्मक साहित्य का नहीं। कारण स्पष्ट है कि साहित्य में सूक्ष्म, संश्लिष्ट एवं संवेदनात्मक भाव विचार होते हैं जिनका अनुवाद कंप्यूटर नहीं कर सकता। मशीन भला मानवीय अनुभूतियों को कैसे समझ सकती है। इसलिए कंप्यूटर अनुवाद की यह एक महत्त्वपूर्ण सीमा कही जा सकती है।" जहाँ तक सूचना प्रधान, ज्ञान–प्रधान, वैज्ञानिक एवं तकनीकी विषयों का संबंध है, इस प्रकार की सामग्री का अनुवाद कंप्यूटर अवश्य ही कर सकता है। आज कंप्यूटर अनुवाद की अनेक पद्धतियाँ प्रचलित हैं। पहली पद्धति के अनुसार दो भाषाओं के अनुवाद में उन्हें सीधे जोड़ने का प्रयास किया जाता है। किंतु यदि उन दो भाषाओं से भिन्न भाषाओं के बीच में अनुवाद करने की आवश्यकता होती है तो तंत्र को उस रूप में परिवर्तित कर दिया जाता है। दूसरी पद्धति के अनुसार स्रोत भाषा के पाठ या वाक्य को पहले माध्यम भाषा से जोड़ा जाता है अर्थात् उसका विश्लेषण करके माध्यम भाषा में प्रस्तुत किया जाता है। भाषा सर्जक माध्यम भाषा के प्रस्तुतीकरण को लक्ष्य भाषा के पाठ में परिवर्तित कर दिया जाता है।

कंप्यूटर अनुवाद में सही पर्याय चयन, विभिन्न भाषाओं के व्याकरण, सांस्कृतिक शब्दावली, उच्चारण वर्तनी, संक्षिप्तियों आदि से संबंधित समस्याएँ अनुवादक के सामने प्रस्तुत होती हैं जिनका सर्वमान्य समाधान अभी दष्टिगोचर नहीं हो रहा है।

अन्य क्षेत्र इसी समाजशास्त्र, इतिहास, राजनीति शास्त्र, मनोविज्ञान, पर्यटन, कृषि आद अनुवाद के अनेक महत्त्वपूर्ण क्षेत्र हैं।

अनुवाद-प्रक्रिया

विक्टर ह्यूगो ने अनुवाद के विचार मात्र को असाध्य माना था, लेकिन अनुवाद की समस्याओं के दुर्गम इलाके को पार कर अनुवादक संसार भर में सक्रिय रहे हैं। अनुवाद कार्य एक लंबी रेतीली यात्रा है और इस यात्रा के पड़ाव भी हमेशा थकान दूर नहीं करते हैं। स्रोतभाषा और लक्ष्यभाषा के बीच शब्दावली, वाक्यविन्यास, संस्कार, अर्थसंपदा और परिवेश की दूरियों को तय करते हुए अनुवादक को यह सुनिश्चित करना है कि अनुवाद पढ़ते समय कोई यह न अनुभव करे कि वह कोई अनुवाद पढ़ रहा है। अनुवाद में मूलभाषा का सौंदर्य और सुख मिले, यही अनुवाद की सफलता है।

अनुवाद में निरंतर अभ्यास से निखार आया है। अच्छे अनुवाद की प्रस्तुति सहज नहीं होती। एक इतालवी उक्ति के अनुसार, अनुवाद ऐसी सुंदरी के समान है जो रूपवती होगी तो विश्वसनीय नहीं और विश्वसनीय होगी तो रूपवती नहीं। इसलिए अनुवादक से कई सावधानियों की अपेक्षा की जाती है–

1. **भाषा-ज्ञान**

अनुवादक से उम्मीद की जाती है कि यह स्रोतभाषा और लक्ष्यभाषा का समान ज्ञाता होगा। किसी संस्कृत महाकाव्य को हिंदी में

अनुवाद करने वाले की यह प्राथमिक विशेषता होनी चाहिए कि वह संस्कृत में जितना प्रवीण हो, उतनी ही दक्षता उसे हिंदी में भी प्राप्त हो। उभयभाषा ज्ञान के समानांतर अनुवादक को विषय की अंतरंग पैठ के बिना अनुवाद स्रोतभाषा की सामग्री का लक्ष्यभाषा में सही अनुवाद नहीं कर सकता। सच तो यह है कि अनुवाद कार्य के तीव्र उपयोग ने इस क्षेत्र की सावधानी को अधिकाधिक पैना बनाया।

2. **शैली का निर्धारण**

स्रोतभाषा का विचार सामग्री को लक्ष्यभाषा में अनुवादित करते समय अनुवादक को अनुवाद की संरचना और शैली का निर्धारण भी करना होता है। भाषा की संरचनात्मक विशेषताओं और शैली की विविधताओं की जानकारी के बिना प्रभावशाली अनुवाद नहीं हो सकता है। तभी अनुवाद उस बेदाग शीशे की तरह अपनी पारदर्शिता व्यक्त कर सकता है, जिसके माध्यम से दर्शक उस पार की दश्यावली का आनंद लें और शीशे के अस्तित्व से अनभिज्ञ भी रहे।

3. **विषय-ज्ञान**

जिस विषय का अनुवाद किया जा रहा है, उस विषय का सम्यक् ज्ञान अनुवादक को होना ही चाहिए। रसायनशास्त्र की जानकारी के बिना केवल स्रोतभाषा और लक्ष्यभाषा में पारंगत होकर सही अनुवाद नहीं किया जा सकता। आदर्श अनुवाद के लिए अपरिहार्य है कि अनुवाद के अर्थात् विषय की नवीनतम जानकारी से समद्ध हो। अन्यथा अनुवाद में अर्थ के अनर्थ की पूरी संभावना रहती है।

अच्छे अनुवादक में भाषा–शैली और विषय की जानकारी के साथ ही साथ संप्रेषण की अपनी क्षमता और कलाकारी भी अपेक्षित है। तभी अनुवाद की अपनी पहचान स्थिर होती है। अनुवाद के उद्देश्य के संदर्भ में उसके मूल्यांकन के कई मानदण्ड निर्धारित किए जाते हैं–

1. अनुवाद मूलपाठ के शब्दों का होना चाहिए।
2. अनुवाद में मूलपाठ के विचार आने चाहिए।
3. अनुवाद का पाठ मूल के समान होना चाहिए।
4. अनुवाद को अनुवाद जैसा लगना चाहिए।
5. अनुवाद से मूल की शैली प्रतिबिंबित होनी चाहिए।
6. अनुवाद में अनुवादक की शैली व्यक्त होनी चाहिए।
7. अनुवाद का पाठ मूल का समसामयिक लगना चाहिए।
8. अनुवाद अनुवादक का समकालीन लगना चाहिए।

अनुवाद के उद्देश्य भिन्न–भिन्न होते हैं, तो अनुवाद की प्रक्रिया भी भिन्न–भिन्न होती है। कविता के अनुवाद की प्रक्रिया वही नहीं होगी, जो तकनीकी ग्रंथ के अनुवाद की प्रणाली हो सकती है। व्यावसायिक और प्रशासनिक कार्यों के लिए संपन्न अनुवाद की प्रक्रिया भिन्न–भिन्न होगी। अनुवाद की गुणवत्ता उद्देश्य और प्रक्रिया पर आधारित होती है। लेकिन, सामान्यतः प्रक्रिया पाँच चरणों में समाप्त होती है–

1. **पठन**

अनुवाद के लिए प्रस्तुत स्रोतभाषा की सामग्री का सावधनी से अध्ययन और अर्थबोध अनुवादक का प्राथमिक कार्य है। पठन करते समय ही अनुवादक स्रोतपाठ का विश्लेषण भी करता है। स्रोतभाषा की भाषा, शैली, विषय, सामाजिक आधार, कालखंड और माध्यम का विश्लेषण पठन के क्रम में वह संपन्नकर लेता है।

2. **विखंडन**

स्रोतपाठ के हर वाक्य को अलग–अलग कर उन्हें विखंडित किए बिना अनुवाद की प्रक्रिया का सरलीकरण नहीं हो सकता है। वाक्य और शब्द को कर्त्ता, कर्म, क्रिया आदि व्याकरणिक कोटियों के अनुसार अलग–अलग कर लेने से स्रोतपाठ की सही जानकारी प्राप्त होती है। इससे अनुवाद से स्रोतपाठ के किसी अंश के छूटने का खतरा भी नहीं रहता।

3. **चयन**

स्रोतपाठ के शब्दों से सही विकल्प की तलाश लक्ष्यभाषा के शब्द भंडार में करते हुए उपयुक्त शब्दों का चयन अनुवाद–प्रक्रिया का अलग चरण है। अनुवादक से अपेक्षा की जाती है कि वह संदर्भ के अनुसार पर्याय चुने और कोश की सहायता से अनुवाद के उद्देश्य को प्राप्त करें। चयन–प्रक्रिया तो अंतरण या ट्रांसफर भी कहा जाता है। पठन और विखंडन के बाद अनुवाद स्रोतभाषा का अंतरण लक्ष्यभाषा में करता है। ऐसा शब्द चयन के बिना संभव नहीं।

4. **संयोजन**

स्रोतपाठ के शब्दों और वाक्यों की जगह लक्ष्यभाषा के चुने गए शब्दों और वाक्यों को इस प्रकार प्रस्तुत करना संयोजन है कि मूल अनुच्छेद की जगह एक नया अनूदित अनुच्छेद सजकर सामने आ जाए। यह संयोजन संरचना और अर्थ दोनों दष्टियों से ठीक होना

चाहिए। संयोजित पाठ में इतनी क्षमता तो होनी चाहिए कि वह स्रोतपाठ को अनूदित पाठ के रूप में वांछित अर्थ और सौंदर्य दे।

5. **पुनरीक्षण**

अनुवाद प्रक्रिया के अंतिम चरण में अनुवादक से अपेक्षा की जाती है कि वह अनूदित पाठ के संयोजन के बाद संपूर्ण सामग्री का पुनरीक्षण अथवा संशोधन कर ले। इस बहाने मूल और अनुवाद की पारस्परिक तुलना हो जाती है और अनूदित पाठ की कमियाँ दष्टिपथ में आ जाती हैं। विषय और अभिव्यक्ति दोनों दष्टियों से किया गया पुनरीक्षण ही अनुवाद को आदर्श पुनर्गठन प्रदान करता है। इसीलिए कई बार अनुवाद का पुनरीक्षण अनुवादक किसी अन्य से भी कराता है। अनुवाद की इस प्रक्रिया को इस आरेख के माध्यम से समझा जा सकता है।

स्रोतभाषा लक्ष्यभाषा

पठन/बोधन अभिव्यक्ति

विखंडन पुनरीक्षण

चयन संयोजन

स्रोतभाषा में पर्याप्त सामग्री के पठन और बोधन से जिस अनुवाद–प्रक्रिया का प्रारंभ होता है, वह विखंडन, चयन, संयोजन और पुनरीक्षण के चरणों से गुजरती हुई लक्ष्यभाषा में अभिव्यक्ति तक पहुँचती है।

5.2 हिंदी की प्रयोजनशीलता में अनुवाद की भूमिका

हिंदी भाषा के लिए विशेष रूप से प्रयुक्त नाना शब्दों को देखने पर जो तात्पर्य निकलता है वह यही है कि हिंदी के दो प्रमुख रूप या कार्य–क्षेत्र अस्तित्व में है। वे क्रमशः हैं – जनता की बोलचाल की सामाजिक व्यवहार की भाषा; और विशिष्ट 'प्रयोग' या प्रयोजन की भाषा 'प्रयोग' को भाषा विज्ञापन की भाषा में अंग्रेजी में Application तथा भाषा–निर्माण के कार्यों का अध्ययन करने वाली शाखा को Applied Linguistics कहते हैं। 'अप्लाइड लिंग्विस्टिक्स' द्वारा भाषा को शासकीय–विधि, विज्ञान–तंत्र, ज्ञान जैसे विशिष्ट क्षेत्रों में भाषा–प्रयोग में संपुष्ट होने वाली भाषा–ध्वनियों के साथ जोड़ा जाता है। डॉ॰ वी ललिताम्बा के शब्दों में– "दैनंदिन सामाजिक व्यवहार तथा साहित्य की रचना में भाषा का एक सहज प्रवाह होता है या कहें भाषा चलनशील होती है। मानव–मस्तिष्क की कई दिशाओं के लिए यह मूलाधार भाषा सीढ़ियाँ तैयार करती है। इसे भाषा वैज्ञानिक 'व्यावहारिक भाषा' कहते हैं, जो अपनी आरंभिक अवस्था में लोक–व्यवहार के लिए समाज रचना में संप्रेषण की भूमिका तैयार करती है। इस स्थिति में यह भी कहा जा सकता है कि यह भाषा एक ध्वनि समुच्चय होती है जिसे संप्रेषित होने के लिए एक जमा एक की न्यूनतम भागीदारी अपेक्षित होती है। इसी प्रकार दैनंदिन लोक–व्यवहार की भाषा इससे थोड़ा आगे बढ़कर भी वैयक्तिक स्वाधीनता और प्रवाह को निरन्तर बनाए रखती है। इसे जीवन्त भाषा भी कह सकते हैं।"

वस्तुतः 'प्रयोजन' एक विशिष्ट उद्देश्य के अर्थ का पूरक है और भारत के संदर्भ में अंग्रेजी में इसी को 'Functional Language' कहा जाता है। अंग्रेजी इस अर्थ में कई देशों में उसे बोलने वालों की मूलतः उपनिवेशवादी प्रवत्ति के कारण Functional Language का कार्य कर रही है। अंग्रेजी भाषा के संदर्भ में यह 'Functional' विदेशियों का अन्य देशों पर हावी होने का प्रतीक है और इससे वहाँ अपनी साम्राज्यवादी प्रवत्ति का विस्तार करते हुए 'मानव जीव' की मुग्धता और विश्वास के साथ विश्वासघात करने की विनाशकारी प्रवत्ति ध्वनित होती है। वहीं "Functional' या 'व्यावहारिक' हिंदी भारत के लिए एक सुखद संदेश का वाहक बनकर प्रकट होती है। प्रयोजनमूलक हिंदी आज कई नामों से जानी–पहचानी जाती है, जैसे 'व्यावसायिक', 'अनुप्रयोगात्मक', 'व्यावहारिक', 'कामकाजी' आदि किंतु अब इसके लिए 'प्रयोजनमूलक' शब्द रूढ़ हो गया है। इसका अर्थ है वह रोजगारपरक भाषा जो जीविकोपार्जन में सहायता होती है। इसे स्थूलतः सात वर्गों में विभाजित किया जा सकता है–

1. प्रशासनिक।
2. वाणिज्यिक।
3. साहित्यिक।
4. तकनीकी।
5. मीडिया।

6. स्फुट।
7. विधि।

प्रशासनिक वर्ग में राजभाषा हिंदी का समावेश किया जा सकता है। इसके अंतर्गत आलेखन, टिप्पण, अनुवाद, पारिभाषिक शब्दावली, संक्षेपण, पत्र–लेखन, विस्तारण आदि का प्रशिक्षण देय होता है। हिंदी भाषी और हिंदीतर कर्मचारी दोनों के लए प्रशिक्षण कई प्रकार से सहायक है। प्रशासनिक सेवा प्रतियोगिता में इन विषयों से मुक्त हिंदी भाषा का जो पाठ्यक्रम निर्धारित है, उसका प्रशिक्षण हर वर्ग के लिए उपयोगी है। अब तो सैंकड़ों विश्वविद्यालयों में भी राजभाषा प्रशिक्षण का प्रमाण–पत्र या डिप्लोमा पाठ्यक्रम लागू हो गया है। प्रयोजनमूलक हिंदी का विभिन्न क्षेत्रों से संबंधित प्रशिक्षण का भविष्य निस्संदेह अनेक संभावनाओं से युक्त है। प्रशासनिक स्तर पर यदि हिंदी को समुचित प्रतिष्ठा प्राप्त हो गई तो उसका राष्ट्रभाषा रूप यथासमय स्वतः सुस्थिर हो जाएगा।

वाणिज्यिक भाषा के रूप में हिंदी टंकण, आशुलेखन, वाणिज्यिक पत्राचार और नयी आर्थिक शब्दावली से आपूरित करना है ताकि हिंदी आर्थिक पत्रकारिता का माध्यम बन सके और औद्योगिक प्रतिष्ठानों में प्रवेश पा सके। इस दशक में बैंकों ने तेजी से हिंदीकरण किया है, इसलिए कि वे अपना व्यवसाय सुदूर गाँव तक फैलाना चाहते हैं। इसकी प्रगति हमें आश्वस्त करती है। आवश्यकता यह है कि हिंदी प्रशिक्षण को अधिकाधिक बढ़ावा दिया जाए।

प्रौद्योगिक क्षेत्र से संबंधित हिंदी आज हमारी सबसे बड़ी चुनौती है। इसके अंतर्गत कंप्यूटर प्रोग्रैमिंग, हिंदी टेलेक्स और टेलीपिंटर की व्यवस्था करनी होगी। इसके बिना हम अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर नहीं ठहर पायेंगे और अगली शताब्दी तक हमारी भाषा कालातीत हो जायेगी। देश की अधिकतर प्रादेशिक भाषाएँ इस स्पर्धा में पिछड़ गई हैं। इस शताब्दी में देश का बौद्धिक नेतत्व करने वाली बंगला भाषा इस रूप को नहीं ग्रहण कर पा रही है। तमिल, तेलगु आदि भी जड़ मोह से युक्त नहीं हो रही है, इसलिए उनकी सार्थकता कम होती जा रही है। हिंदी दिनोंदिन अंग्रेजी के समानांतर अपना स्वरूप बदलती जा रही है। अतएव उसका भविष्य सुनिश्चित है। सजनात्मक साहित्य के क्षेत्र में हिंदी की प्रयोजनमूलकता के संदर्भ में अनेक संभावनाएँ विद्यमान हैं। पत्रकारिता एवं अनुवाद के क्षेत्र में रोजगार के पर्याप्त अवसर आज हमारे लिए उपलब्ध हैं।

आज के युग में एक महत्त्वपूर्ण उद्योग का दर्जा प्राप्त कर चुकी है। इसलिए स्तंभ लेखकों, फीचर, भेंटवार्ता, पुस्तक–समीक्षा आदि लेखकों की अच्छी मांग होने लगी है। अभी तक हमारा आदर्शवादी मन बाजार के लिए किये गए ऐसे कार्यों को घटिया कार्य मानता था, किंतु अब उपभोक्तावादी भौतिक सभ्यता में अभ्यस्त हो जाने के बाद अर्थोपाज्रन के ऐसे सारे कार्य महत्त्वपूर्ण बन गए हैं। पत्रकारिता स्वयं अब साहित्य सेवा न होकर लाभप्रद धंधा बन गई है। अनुवाद के क्षेत्र में भी यही स्थिति है। इसके अंतर्गत सर्जनात्मक लेखन, रंगमंच, रंग आलेख, पटकथा लेखन, संवाद लेखन, डबिंग, संभाषण कला, कमेंट्री कला, समाचार–वाचन, विज्ञापन, प्रचार साहित्य लेखन (नारा स्लोगन) तथा सूक्ति–लेखन आदि की अनेक संभावनाएँ हैं। अनुवाद की सहायता से नाटक की जगह फीचर फिल्म, टैली ड्रामा, डाक्यूड्रामा, कार्टून फिल्म, ग्राफिक्स, आपेरा, बेले आदि के श्रव्य, दश्य प्रयोग होने लगे हैं। कहानी और उपन्यासों की परिणति दूरदर्शन धारावाहिकों में होती जा रही है। इसके अतिरिक्त रेडियो वार्ता, परिचर्चा, भेंटवार्ता, फीचर, संस्मरण, पुस्तक समीक्षा आदि नयी विधाएं विकसित हुई हैं। रेडियो, दूरदर्शन, पत्रकारिता का जो अपना विशेष स्थान ही है। कहने का तात्पर्य है कि इन सभी क्षेत्रों से संबंधित साहित्यिक विधाओं का श्रव्य–दश्य बंधीकरण और उसके लिए सजनात्मक हिंदी अथवा मीडिया लेखन का प्रशिक्षण अनिवार्य है। अब माना जाने लगा है कि लेखक एक कला है जो प्रयोजनमूलक हिंदी का तकाजा है कि रंगमंच, काव्यमंच प्रस्तुतीकरण आदि कलाओं का सावधि प्रशिक्षण दिया जाये। साहित्यिक हिंदी की वह प्रयोजनमूलक परिणति बड़ी आशाप्रद है। आवश्यकता यह है कि 'व्यावसायिक लेखन' का शास्त्र (टेक्नीक) निर्मित करके फिर प्रशिक्षण शिविरों द्वारा उसका परिविस्तार किया जाये। केंद्रीय हिंदी निदेशालय इस दिशा में सक्रिय है किंतु मुख्यतः भविष्य की दष्टि से, न कि राजगार के उद्देश्य से। इसी में हिंदी भाषा की सार्थकता निहित है।

हिंदी की प्रयोजनीयता के संदर्भ में अनुवाद की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। डॉ॰ पूरनचन्द टंडन के मतानुसार प्राचीन युग में अनुवाद को दूसरे दर्जे का कार्य कहा जाता था। अनुवाद को 'पाप' या 'छल' भी कहा जाता था किंतु आज पूरे विश्व की दष्टि अनुवाद के प्रति बदल रही है। 'भाषा–प्रौद्योगिकी' के इस युग ने भाषाओं के सदुपयोग तथा उनके कार्यान्वयन के नए एवं विविध आयाम उजागर किए हैं। विभिन्न भाषाओं एवं बोलियों के इस देश में न जाने क्यों हमने भाषाओं को अपनी ताकत नहीं बनाया। इन तमाम भाषाओं की ताकत को हमने पहचाना भी नहीं। बल्कि इन भाषाओं को अपनी कमजोरी बना कर हम भाषायी–संघर्ष में डूबे रहे। विदेशियों ने जब हमारे ही देश में अपने व्यवसाय को जमाने के लिए, हमारे बाजारों पर कब्जा करने के लिए हमारी ही भाषाओं का सदुपयोग किया तो हमें भी लगा कि हम अनुवाद की ताकत को पहचाने। वास्तव में 'अनुवाद' इस नए युग और नई शताब्दी का सर्वाधिक क्रांतिकारी आयाम बनेगा। आज अनुवादक का महत्त्व मूल लेखक से अधिक भले ही न हो, पर उससे कम भी नहीं है। एक समय

था जब अनुवादक को महत्त्व दिया ही नहीं जाता था। उसका नाम, उसका मानदेय, उसका योगदान नगण्य या गौण समझा जाता था और यह धारणा थी कि असफल साहित्यकार 'अनुवादक' बन जाता है। किंतु आज स्थितियाँ इससे ठीक विपरीत हैं। अनुवादकों के वेतनमान भी अब पहले की तुलना में सम्मानजनक हुए हैं। अनुवादकों को नाम भी मिलने लगा है। मानदेय की राशि भी अधिकांशतः अच्छी हो गई है। अनुवादकों का सामाजिक, राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय महत्त्व भी बढ़ा है।

डॉ॰ हरीश सेठी के मतानुसार भाषाओं में स्नातक एवं स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम करने वाले युवाओं के लिए 'अनुवाद' एक नई आशा बनकर उभरा है। न केवल भाषाओं के अध्येता–युवा, अपितु दूसरे विषयों और अनुशासनों में कार्य करने वाले युवा भी इस रोजगारोन्मुख क्षेत्र की ओर आकृष्ट हो रहे हैं। अनुवाद अब केवल माध्यम नहीं रहा। 'अनुवाद' आज एक स्वतंत्र विषय भी बन गया है। पहले अनुवाद 'लोकहित' या 'जनहित' के लिए किया जाता था, किंतु उसका प्रसार बहुत कम था। आज अनुवाद की भूमिका 'विश्व कुटुंबकम' की भारतीय अवधारणा को साकार करने की तो है ही, साथ ही रोजी–रोटी के लिए, रोजगार और व्यवसाय के लिए, कलात्मकता तथा निपुणता की पुष्टि के लिए तथा सामाजिक एवं राष्ट्रीय निर्माण के लिए भी उल्लेखनीय बन गई है।

डॉ॰ सुरेश सिंहल का मानना है कि हमारे जो युवा विज्ञान, तकनीक एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में अपना 'कैरियर' नहीं चुनते या नहीं चुन पाते, आज अत्यन्त आवश्यक है कि उनके सामने भी रोजी–रोटी के पर्याप्त अवसर हों तथा वे अवसर सम्मानजनक एवं संतोषजनक भी हों। हिंदी, अंग्रेजी, संस्कृत, पंजाबी, उर्दू, मराठी, गुजराती, बंगला या अन्य भारतीय भाषाओं को तथा इनके साहित्य को, औपचारिक स्तर पर अथवा उपाधि हेतु पढ़ने वाले अधिकांश विद्यार्थियों के लिए तो रोजगार की दष्टि से आज के समाज में निराशा ही हाथ लगती है, जबकि भाषा और साहित्य आदर्श व्यक्तित्व का निर्माण करने वाले सबसे अधिक सशक्त उपकरण एवं माध्यम माने जाते हैं। यह हमारे लिए दुर्भाग्य की स्थिति ही रही है। लेकिन केवल भाषा और साहित्य के अध्येताओं की निराशा का ही प्रश्न नहीं, आज तो कंप्यूटर और सूचना प्रौद्योगिकी के इस युग में राजनीतिशास्त्र, इतिहास, दर्शन, मनोविज्ञान तथा बौद्ध–अध्ययन जैसे विषयों के अध्येताओं के सामने भी रोजी–रोटी जुटाने की चुनौती खड़ी हो गई है।

भारतीय भाषा विभाग हो या योरोपियन भाषाओं का विभाग, अरेबिक और पर्शियन भाषाओं के विभाग हों या जापानी, चीनी, जर्मनी, रूसी, स्पैनिश, अफ्रीकी आदि अन्य अनेक भाषाओं को लिखाने वाली संस्थाएँ – सभी के समक्ष भाषाओं को प्रौद्योगिकी में बदलने तथा उनके अनुप्रयोग को प्रोन्नत करने की चुनौती खड़ी हो गई है। अब तो विज्ञान के विभिन्न पाठ्यक्रम भी प्रयोग और अनुप्रयोग की तरफ उन्मुख हो रहे हैं। वित्त, वाणिज्य, पत्रकारिता, कंप्यूटर, व्यवस्थापन, फार्मेसी, शिक्षा–शास्त्र, पुस्तकालय–विज्ञान, अर्थशास्त्र, चिकित्साशास्त्र, इंजीनियर, इलेक्ट्रॉनिक्स तथा बिजनेस स्टडीज आदि में रोजगार की कुछ संभावनाएँ अभी शेष हैं। विधि, गणित, ऑप्रेशन रिसर्च, संगीत, कला, समाज–कार्य आदि क्षेत्रों में भी अब रोजगार की संभावनाएँ क्षीण–सी हो गई हैं। अनुवाद इन सभी विषयों से प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में जुड़ा है। अनुवादक यदि ईमानदार, एकनिष्ठ तथा संकल्प–जीवी हो तो नौकरी में रहकर भी और नौकरी में रहे बिना भी खूब पैसा कमा सकता है। आज बैंकों में, रेलवे में, पत्रकारिता में, मीडिया के सभी क्षेत्रों में, संसद में, राजदूतावासों में, विज्ञापन–लोक में, शिक्षा क्षेत्र में, वित्त, वाणिज्य और विज्ञान के क्षेत्रों में, तकनीक एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्रों में, बीमा, कार्यालय, प्रशिक्षण संस्थान, पाकशास्त्र, सज्जा–शास्त्र, सौंदर्य–शास्त्र, पर्यटन, विधि, कंप्यूटर, राजनीति, व्यवसाय, पर्यावरण तथा इसी तरह के अन्य अनेक क्षेत्रों में अनुवाद का बोलबाला है। यही नहीं आज किसी भी क्षेत्र और किसी भी नौकरी या व्यवसाय में जायें, जितनी अधिक भाषाएँ जानते होंगे उतने ही अधिक सफल हा सकेंगे। इसका भी सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण उपाय अनुवाद ही है।

अनुवाद वास्तव में आज के युग और आज के दौर की प्राण–शक्ति है। अनुवाद में 'एकवर्षीय स्नातकोत्तर डिप्लोमा', 'एकवर्षीय निष्णातोत्तर डिप्लोमा' तथा 'एक वर्षीय एडवांस डिप्लोमा' जैसे महत्त्वपूर्ण पाठ्यक्रम तो चल ही रहे हैं साथ ही कुछ संस्थान अथवा विश्वविद्यालय तो अब अनुवाद में एम॰ ए॰, एम॰ फिल॰, पीएच॰ डी॰ की उपाधि भी प्रदान कर रहे हैं। स्पष्ट है कि आज अनुवाद एक स्वतंत्र 'अनुशासन' एवं एक महत्त्वपूर्ण विषय बन गया है।

दिल्ली में बी॰ ए॰ की उपाधि प्राप्त कर चुके किसी भी विद्यार्थी के लिए अनुवाद–डिप्लोमा प्राप्त करने के अनेक अवसर हैं। अंग्रेजी–हिंदी–अंग्रेजी में भारत सरकार से मान्यता प्राप्त एकवर्षीय अनुवाद डिप्लोमा के लिए प्रशिक्षण देने वाली लगभग चालीस वर्ष पुरानी तथा अत्यंत प्रतिष्ठित संस्था है भारतीय अनुवाद परिषद्। बंगाली मार्किट नई दिल्ली के पास 24, स्कूल लेन में स्थापित भारतीय अनुवाद परिषद् पिछले बारह वर्ष से यह डिप्लोमा पाठ्यक्रम चला रही है। परिषद् न केवल पी॰ जी॰ डिप्लोमा, बल्कि अनुवाद का पी॰ जी॰ डिप्लोमा कर चुके प्रशिक्षुओं को एकवर्षीय 'एडवांस डिप्लोमा इन ट्रांसलेशन' भी कराती है। 'अनुवाद' पत्रिका परिषद् की विश्व–प्रसिद्ध पत्रिका है और अनुवादकों को एक मंच प्रदान करने वाली इस संस्था की शैक्षिक, तकनीकी एवं राष्ट्र–हितकारी दष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

दिल्ली विश्वविद्यालय के 'हिंदी–विभाग' से एक वर्षीय अंग्रेजी–हिंदी अनुवाद डिप्लोमा पाठ्यक्रम चलाया जाता है। यह पाठ्यक्रम लगभग तीस वर्ष से चलाया जा रहा है। स्नातक उपाधि प्राप्त क्षेत्रों को यहाँ प्रवेश–परीक्षा में उत्तीर्ण होने तथा साक्षात्कार में उत्तीर्ण

होने के पश्चात् वरीयता के आधार पर प्रवेश दिया जाता है। जबकि भारतीय अनुवाद परिषद् केवल साक्षात्कार के आधार पर ही पाठ्यक्रम में प्रवेश प्रदान करती है।

इसी प्रकार भारतीय विद्या भवन में स्थापित 'डॉ॰ नगेन्द्र सांध्यकालीन हिंदी संस्थान' भी लगभग बीस वर्षों से अंग्रेजी–हिंदी अनुवाद डिप्लोमा पाठ्यक्रम चला रहा है। यह पाठ्यक्रम भी स्नातक–उपाधि प्राप्त क्षेत्रों के लिए है। केंद्रीय हिंदी संस्थान, दिल्ली से भी अनुवाद का एक डिप्लोमा पाठ्यक्रम चलाया जाता है। एकवर्षीय यह डिप्लोमा केवल न क्षेत्रों के लिए है जो किसी भी विषय में एम॰ ए॰ कर चुके हैं। बी॰ ए॰ में उत्तीर्ण क्षेत्रों के लिए यह पाठ्यक्रम नहीं है। इसी प्रकार जामिया मिलिया इस्लामिया का हिंदी विभाग भी अनुवाद–डिप्लोमा का एकवर्षीय पाठ्यक्रम चला रहा है। विगत दो वर्षों से इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय ने भी अंग्रेजी–हिंदी अनुवाद का एकवर्षीय डिप्लोमा प्रारंभ किया है। यह पाठ्यक्रम दूरस्थ शिक्षा पद्धति के माध्यम से दिया जाता है। जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय में भी अनुवाद का एक स्वतंत्र विभाग है। दिल्ली से बाहर तो अनेक ऐसे विश्वविद्यालय तथा संस्थान हैं जो अंग्रेजी–हिंदी अनुवाद के ऐसे व्यावहारिक तथा उपयोगी डिप्लोमा पाठ्यक्रम चला रहे हैं। भारतीय अनुवाद परिषद् जो अपने इस डिप्लोमा पाठ्यक्रम को त्रिवेन्द्रम कालंदी एटिंगल तथा गुवाहाटी में भी चला रही है। परिषद् की योजना है कि देश के अन्य क्षेत्रों में भी इस पाठ्यक्रम को विस्तार दिया जाए। परिषद् आने वाले दिनों में एक 'अनुवाद–अकादमी' की स्थापना के प्रयास भी कर रही है।

आज भारत के अधिकांश विश्वविद्यालयों में अनुवाद को हर स्तर पर पाठ्यक्रमों का अनिवार्य हिस्सा बनाया जा रहा है और अनुवाद को स्वतंत्र विषय के रूप में अधिक से अधिक प्रोत्साहन दिया जा रहा है। दिल्ली विश्वविद्यालय के हिंदी–विभाग ने इस दिशा में उल्लेखनीय पहल की है। बी॰ ए॰ तथा एम॰ ए॰ के लगभग सभी पाठ्यक्रमों में अनुवाद को शामिल किया गया है। अब प्रयोजनमूलक या आजीविका–साधक पाठ्यक्रमों को ही लोक–स्वीकृति है। जिन पाठ्यक्रमों में यह क्षमता और शक्ति नहीं है, वे अपनी मौत स्वयं मर रहे हैं। अनुवाद विषय में शोध के आयाम भी तेजी से खुल रहे हैं। सरकारी तथा गैर–सरकारी स्तर पर अनुवादकों को पुरस्कार तथा सम्मान भी बहुत बड़े स्तर पर दिए जा रहे हैं। एम॰ ए॰, एम॰ फिल॰, पीएच॰ डी॰ और डी॰ लिट् की उपाधि के लिए भी अनुवाद विषय की स्वीकृति तेजी से हो रही है। अनूदित पुस्तकों पर भी पीएच॰ डी॰ दिए जाने की दिशा में सोच प्रारंभ हो गई है। हमारे युवाओं को इस दिशा में आगे आना चाहिए क्योंकि निश्चित ही यह एक ज्वलंत तथा उपयोगी क्षेत्र है। अनुवाद तो यों भी संवाद की भाषा है। पूरे विश्व को एक इकाई के रूप में देखने का स्वप्न भी अनुवाद से ही पूरा हो सकता है। अनुवाद एक 'सूते' है जो हर तरह से जोड़ता है। आवागमन और आदान–प्रदान के मार्ग प्रशस्त करता है। विभिन्न भाषाओं से ज्ञान के आगार उपलब्ध कराने वाला यह क्षेत्र बड़ी तेजी से लोकप्रिय एवं उपयोगी सिद्ध हो रहा है।

यही समय है जब हमें भारतीय भाषाओं के रास्ते में आने वाले विविध खतरों के प्रति तो सचेत होना ही है, साथ ही अपनी संस्कृति की भाषा में गतिशील सभ्यता की भाषिक क्षमता एवं शक्ति को भी समाविष्ट करना है। हिंदी को विश्वभाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने तथा संस्कृति की मानसिकता की प्रक्रिया को सही रूप में गतिमान एवं सशक्त बनाने का यही एक उपाय भी है। भारत के परिप्रेक्ष्य में फिलहाल, हिंदी ही एक ऐसी भाषा है जो हमें विश्व भर के समक्ष विकास कार्यों से सम्बद्ध रख सकती है, उसकी समग्र जानकारी रखने एवं बाँटने का तथा ज्ञान–विज्ञान के विकास को मूल्यांकित करने का सर्वाधिक उपयोगी माध्यम भी बन सकती है। अतः 'अनुवाद' तथा पत्रकारिता के साथ–साथ कामकाजी हिंदी के संक्षेपण, पल्लवन, प्रारूपण, टिप्पण, रिपोर्ट लेखन, प्रतिवेदन लेखन, कार्यालयी प्रचार, समाचार लेखन एवं संपादन, अपठित लेखन, अशुद्धि विश्लेषण, मानक हिंदी की परख, देवनागरी लिपि का स्वरूप एवं उसकी पहचान, उसकी वैज्ञानिकता एवं महत्ता, भाषिक संरचना, मुहावरे–लोकोक्तियों का विवेचन, उनका प्रयोग, अशुद्धियों के कारण तथा प्रकार, हिंदी का क्षेत्र, उसकी बोलियाँ तथा शैलियाँ, राष्ट्रभाषा तथा राजभाषा हिंदी, बैंकों, विधि कार्यालयों आदि में हिंदी का स्वरूप, पारिभाषिक शब्दावली का स्वरूप तथा निर्माण, व्यवसाय की शब्दावली तथा व्यावसायिक पत्राचार जैसे कितने ही पक्ष हैं जिनका अपना विशिष्ट महत्त्व है और हिंदी के व्यवहारमूलक बोध हेतु इनसे भिन्न होना ही नहीं, इनमें नैपुण्य हासिल करना भी अत्यंत आवश्यक है। इन सभी के गहन एवं व्यावहारिक ज्ञान से ही भाषा की अधुनातन आवश्यकता पूरी कर सकते हैं।

निष्कर्षतः डॉ॰ पूरनचंद टंडन के शब्दों में कहा जा सकता है कि "हमें हिंदी के प्रयोगमूलक समस्य आयामों का, उसकी नई व्यवहारमूलक दिशाओं का, उसके काम–काजी रूपों का द्वार खोलना होगा। अपने साहित्यिक किंतु संकीर्ण दष्टिकोण को एक नया कोण प्रदान करना होगा। समय को, स्थिति को तथा आवश्यकता की नाजुकता की गंभीरता से समझना होगा। अब लकीर पीटने से हम हिंदी को जीवित नहीं रख सकते। दूरसंचार माध्यमों ने भी साहित्य के पठन–पाठन पर आक्रमण किया है। अतः सभी को हिंदी की राजभाषा एवं राष्ट्रभाषा वाली गरिमा को सुरक्षित रखते हुए उसे सदैव जीवत, गतिमय एवं प्रकार्यात्मक बनाने का संकल्प लेना होगा। जब तक हम 'अर्थ–प्रयोजन' से हट कर 'धर्म और मोक्ष प्रयोजन' को केंद्र में नहीं करेंगे, तब तक हिंदी की प्रयोजनमूलक दिशाओं का, व्यवहारमूलक क्षेत्रों में प्रविष्ट होने का प्रयोजन पूरा नहीं होगा। अतः प्रयोजनमूलक हिंदी के 'प्रयोजन' विशेष के प्रति कटिबद्ध होने और युद्ध–स्तर पर कार्यरत होने का यही उपयुक्त समय है।"

5.3 .कार्यालयी हिंदी और अनुवाद

भारत में करोड़ों लोगों की लोकप्रिय भाषा हिंदी को राजभाषा का दर्जा देने के उद्देश्य से संविधान के 351 वें अनुच्छेद में यह कहा गया है कि हिंदी का विकास कुछ इस प्रकार किया जाए कि उसमें हिन्दुस्तानी और संविधान की आठवीं अनुसूची में उल्लिखित अन्य भारतीय भाषाओं के रूप, शब्दावलियों आदि का समावेश हो। आवश्यकता होने पर अन्य भारतीय भाषाओं के शब्दों को भी उसमें ले लिया जाए। संविधान की इस परिकल्पना के अनुसार राजभाषा के रूप में हिंदी का प्रयोग धीमी गति से किए जाने की बात थी, क्योंकि संविधान लागू होने के बाद शुरू के पन्द्रह वर्ष तक प्रायः अंग्रेजी भाषा का ही प्रयोग किया जाता था और हिंदी अंग्रेजी के अतिरिक्त हिंदी का प्रयोग केवल उन्हीं कार्यों के लिए किया जाना था, जिनके लिए राष्ट्रपति निर्देश देते थे। इसके साथ–साथ यह भी व्यवस्था की गई कि संसद विधि द्वारा पन्द्रह वर्ष की अवधि के बाद भी ऐसे प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा के प्रयोग को उपवंचित कर सकेगी जिनका उस विधि में उल्लेख किया जाए। इस व्यवस्था के लिए 1963 में संसद में राजभाषा अधिनियम पारित किया गया। इस सबका परिणाम यह हुआ कि इससे अनिश्चित काल तक के लिए केंद्रीय सरकार के कार्यालयों में द्विभाषिकता के बीज बो दिए गए। न नौ मन तेल होगा, न राधा नाचेगी, अर्थात् न अंग्रेजी का प्रयोग समाप्त करने के लिए संकल्प पारित किए जाएंगे, न हिंदी सही मायने में राजभाषा के रूप में स्थापित होगी। कहने का भाव यह कि अंग्रेजी और हिंदी के कारण उत्पन्न द्विभाषिकता की स्थिति लंबे समय तक यूं ही बनी रहेगी। परिणामस्वरूप कार्यालयी अनुवाद का महत्त्व भी बना हुआ है और सरकारी कार्यालयों में एक अलग विधा के रूप में कार्यालयी अनुवाद का कार्य एक नए विषय के रूप में सामने आ चुका है। आज सरकारी स्तर पर हिंदी में किए जाने वाले कार्य में अंग्रेजी से हिंदी में अनुवाद करना एक अनिवार्यता बन चुका है।

केंद्रीय कार्यालयों में हिंदी के प्रयोग के संबंध में 1963 में पारित संशोधित राजभाषा अधिनियम का अत्यधिक महत्त्व है। इसके अनुसार यदि कोई हिंदी भाषी राज्य किसी अहिंदी भाषी राज्य को हिंदी में पत्र भेजेगा तो उसके साथ उसका अंग्रेजी अनुवाद भेजना भी अनिवार्य होगा। इसके अतिरिक्त केंद्रीय सरकार के विभिन्न कार्यालयों में परस्पर पत्राचार करते समय दस्तावेजों का अंग्रेजी एवं हिंदी में परस्पर अनुवाद तब तक प्रस्तुत करते रहना होगा जब तक संबंधित कार्यालय में काम करने वाले हिंदी का पर्याप्त ज्ञान प्राप्त नहीं कर लेते। राजभाषा अधिनियम, 1976 के अनुसार प्रत्येक सरकारी कर्मचारी को अपना सारा काम हिंदी में करने की छूट दी गयी है। किंतु यदि अन्य कार्यालयों में कार्यरत कर्मचारियों के हिंदी में काम करने में कोई समस्या आ रही है तो कार्यालय को उस सामग्री के अनुवाद की व्यवस्था करनी होगी। यहाँ यह उल्लेख करना प्रासंगिक होगा कि आज की कार्यालयी हिंदी की वर्तमान स्थिति यह है कि कार्यालयों में बहुत–सी मूल सामग्री अंग्रेजी में ही उपलब्ध है, इसीलिए इसके बिना गुजारा नहीं है। अतः इसका हिंदी में अनुवाद करना भी आवश्यक हो जाता है। कहना न होगा कि आज सरकारी कार्यालयों में अधिकतर काम–काज अनुवाद के माध्यम से ही किया जा रहा है। डॉ॰ हरीश सेठी का कहना है कि "कार्यालयी साहित्य की इस निर्धारित परिपाटी ने कार्यालयी साहित्य के अनुवाद को भी प्रभावित किया है। आज स्थिति यह हो चुकी है कि कार्यालयों में मौलिक लेखन या चिंतन तो अंग्रेजी में होता है और द्विभाषिकता के नियम का अनुपालन करते हुए अंग्रेजी पाठ का हिंदी अनुवाद कराया जाता है। इसलिए अंग्रेजी से हिंदी अनुवाद की स्थापित हो चुकी तथाकथित प्रथा के कारण हिंदी अनुवाद की भाषा बनकर रह गई है। परिणामस्वरूप कार्यालयी साहित्य में हिंदी अप्राकृतिक, निरर्थक एवं दुर्बोध हिंदी का रूप धारण करती जा रही है; जबकि हिंदी के इस स्वरूप को स्वतंत्र रूप में विकसित होना अपेक्षित था। सरकार की हिंदी के कार्यान्वयन से संबंधित नीति में कथनी और करनी के बीच बहुत बड़ा अंतर है।"

हिंदी को राजभाषा का दर्जा दिए जाने से इसके प्रचार–प्रसार में वद्धि तो हुई है, किंतु साथ ही इसे कई प्रकार के विरोधों का सामना भी करना पड़ा है। कार्यालयी साहित्य में अंग्रेजी के वर्चस्व और अंग्रेजी से हिंदी में अनुवाद की लगातार बढ़ती हुई प्रवत्ति के कारण यह धारणा पुष्ट होती जा रही है कि कार्यालयों का काम–काज हिंदी में भली–भाँति नहीं चल पाता। इसके परिणामस्वरूप हिंदी के प्रयोग में शब्द–चयन, भाषा की दुर्बोधता, शब्दावली की अनेकार्थकता, सटीक प्रयुक्तियों का अभाव जैसी समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं। हिंदी के लिए यह कोई बढ़िया बात नहीं है कि कार्यालयी हिंदी का जो स्वरूप आज सामने आ रहा है, वह अनुवाद की भाषा का स्वरूप है। भाषा की सहजता वहाँ कम ही दिखाई देती है। प्रायः देखने में आता है कि कार्यालयों के कामकाज में हिंदी के प्रयोग के संदर्भ में कार्यालयी साहित्य से संबंधित सामग्री की कठिनाई की समस्या को बढ़–चढ़कर बातें की जाती हैं, किंतु उसके समाधान के संबंध में कोई ठोस प्रयास होते दिखाई नहीं देते हैं।

कार्यालयी अनुवाद की समस्याएँ

साहित्येतर विषयों के अनुवाद के क्षेत्र में कार्यालयी अनुवाद का महत्त्वपूर्ण स्थान है। कार्यालयी साहित्य का अनुवाद साहित्यिक अनुवाद से नितान्त भिन्न होता है। चूँकि दोनों प्रकार के अनुवाद की सामग्री की प्रकृति में काफी अंतर होता है। इसलिए इन दोनों प्रकार के अनुवाद की समस्याओं में भी अंतर होना स्वाभाविक ही है। साहित्यिक अनुवाद की समस्याएँ पुनः सजन के स्तर पर प्रस्तुत

होती हैं; जबकि कार्यालयी अनुवाद की समस्याएँ प्रतिस्थापन के स्तर पर अनुवादक के सामने आती हैं। दोनों प्रकार के अनुवाद में भाषा का स्वरूप भी बदल जाता है। साहित्यिक अनुवाद में भाषा की प्रयुक्तियाँ सजनात्मक, सांस्कृतिक, व्यंजनात्मक आदि हुआ करती हैं; जबकि कार्यालयी अनुवाद में भाषा की प्रयुक्तियाँ मुख्यतः पारिभाषिक, अभिधामूलक एवं सुनिश्चित अर्थ रखने वाली होती हैं। कार्यालयी अनुवाद के संदर्भ में आने वाली समस्याओं की निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत चर्चा की जा रही है–

1. **शब्द-चयन की समस्या** – कार्यालयी अनुवाद में सर्वप्रथम समस्या शब्द–चयन की समस्या है। प्रायः अनुवादक के सामने अंग्रेजी के एक ही शब्द के लिए कई–कई पर्याय उपलब्ध होते हैं। इससे सही शब्द का चुनाव करने में समस्या आती है। यदि उपयुक्त शब्द के लिए उपयुक्त शब्द का चयन नहीं किया जाएगा तो उसके कारण वांछित अर्थ संप्रेषित नहीं हो पाएगा। शब्द–चयन की समस्या का मूल कारण यह होता है कि किन्हीं दो भाषाओं की सूचना संप्रेषित करने की क्षमता एक जैसी नहीं होती। एक भाषा में जो संदेश जितनी सूक्ष्मता के साथ संप्रेषित किया जा सकता है, संभवतः दूसरी भाषा में वही संदेश उतनी सूक्ष्मता के साथ संप्रेषित नहीं किया जा सकता। कभी–कभी ऐसा भी होता है कि दो भाषाओं में एक अर्थ को ध्वनित करने के लिए उपलब्ध शब्दों की संख्या कम या ज्यादा हो सकती है। अनुवाद की भाषा में वांछित शब्दों की यह अनुपलब्धता ही अनुवादक के लिए समस्या खड़ी करती है। एक सिद्धहस्त अनुवादक की पहचान यही होती है कि क्या वह मूलभाव को व्यक्त करने के लिए सही पर्याय ढूँढ पाता है अथवा नहीं। अतः शब्दों का चयन मूल भाषा के कथ्य और प्रयुक्ति के संदर्भानुसार विषय के क्षेत्रानुरूप ही किया जाना चाहिए। और साथ ही अनुवाद की भाषा की प्रकृति का भी विशेष ध्यान रखना चाहिए। मान लीजिए अंग्रेजी के वाक्य– "In this situation you should consult the dictionary" का अनुवाद– "ऐसी स्थिति में आपको कोश से परामर्श करना चाहिए।" कर दिया जाए तो यह उपर्युक्त दष्टि से सही नहीं होगा, क्योंकि 'कोश' और 'परामर्श' में कोई संगति नहीं है। होना चाहिए– "ऐसी स्थिति में आपको कोश देख लेना चाहिए।" इस संदर्भ में कुछ और उदाहरण निम्नलिखित हैं–

मूल वाक्य :

1. Books shall not be issued on Sunday.
2. An explanation letter has been issued to him.
3. This is the latest issue of this magazine.
4. You should not make it your prestige issue.
5. Only important issues should be discussed in the meeting.
6. Maruti Suzuki is going to release its public issue very soon.
7. The note issue department has sent necessary directions in this refund.
8. He has no issue so far.

हिंदी अनुवाद :

1. रविवार को पुस्तकें नहीं दी जायेंगी।
2. उसे स्पष्टीकरण पत्र दिया गया है।
3. यह इस पत्रिका का नवीनतम अंक है।
4. तुम्हें इसे अपनी प्रतिष्ठा का प्रश्न नहीं बनाना चाहिए।
5. मीटिंग में केवल महत्त्वपूर्ण मुद्दों पर ही विचार किया जाएगा।
6. मारुती सुजुकी शीघ्र ही बाजार में अपना पब्लिक इशु ला रही है।
7. नोट जारी करने वाले प्रभाग ने इस संबंध में आवश्यक निर्देश दे दिए हैं।
8. उसकी अभी तक संतान नहीं है।

2. **शब्द प्रयुक्ति की समस्या** – कार्यालयी अनुवाद के संदर्भ में दूसरी समस्या शब्द–प्रयुक्तियों से संबंधित है। प्रायः देखने में आया है कि कार्यालयी अनुवाद में शब्द–प्रयुक्तियों की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता। इसका परिणाम यह होता है कि अनुवाद में भाषा–प्रयोग संबंधी अनेक त्रुटियाँ रह जाती हैं और उपेक्षित अर्थ को क्षति पहुँचती है। प्रत्येक शब्द–प्रयुक्तियों की अपनी विशिष्टताएँ होती हैं और उनकी अर्थ–दष्टियों में सूक्ष्म अर्थभेद निहित होता है। अनुवाद को इस अर्थभेद को भली–भाँति समझते हुए ही अनुवाद करना चाएि ताकि पाठक के लिए यह बोधगम्य बन सके। कार्यालयी अनुवाद में अर्थ की सुनिश्चितता एवं सुस्पष्टता का अत्यधिक महत्त्व होता है। अतः अनुवादक के लिए यह आवश्यक है कि वह कार्यालयी अनुवाद के संदर्भ में अनुप्रयुक्त स्तर पर शब्दों की प्रवत्ति, प्रकृति एवं संस्कृति से संबंधित समस्याओं को अच्छी तरह समझ लें। इस संदर्भ में निम्नलिखित उदाहरण देखिए–

मूल वाक्य

1. He has been **dismissed** from service.
2. He has been **removed** from service.
3. He has been **terminated** from service.
4. He has been **discharged** from service.
5. He has been **suspended** from service.

इन वाक्यों में यदि अनुवाद विभिन्न शब्द–प्रयुक्तियों के सूक्ष्म अर्थ–भेद को समझे बिना अनुवाद करता है तो वह उचित नहीं होगा। निश्चित रूप से इन सभी वाक्यों में प्रयुक्त शब्दों का अर्थ एक जैसा नहीं है, यद्यपि उनका संबंध नौकरी से ही है। विभिन्न स्थितियों एवं संदर्भों को पहचान कर ही हिंदी–पर्यायों का प्रयोग किया जाना चाहिए।

3. **भाषा की प्रकृति** – कार्यालयी सामग्री प्रायः अंग्रेजी भाषा में उपलब्ध होती है और उसका हिंदी में अनुवाद किया जाता है। इन दोनों भाषाओं की प्रकृति में मूलभूत अन्तर होता है। अंग्रेजी के वाक्यों की संरचना हिंदी में वाक्यों की संरचना की तुलना में कुछ कठिन होती है। अंग्रेजी के वाक्यों का शब्द–क्रम हिंदी के वाक्यों के शब्द–क्रम से अलग होता है। उदाहरण के लिए, अंग्रेजी के वाक्यों में कर्ता–क्रिया–कर्म होता है, जबकि हिंदी में यह क्रम कर्ता–कर्म–क्रिया हो जाता है। अंग्रेजी में वाक्य लंबे होते हैं, जबकि हिंदी में छोटे। अंग्रेजी से हिंदी में अनुवाद करते समय अंग्रेजी का प्रभाव हिंदी की वाक्य–संरचना पर प्रायः देखा जाता है। इसके परिणामस्वरूप अनुवाद की भाषा में कृत्रिमता का दोष उत्पन्न हो जाता है। उदाहरण के लिए निम्नलिखित वाक्य देखे जा सकते हैं–

अंग्रेजी के वाक्य :

1. The subject-matter is being attended to by our Head Office.
2. Your account with us shows a credit balance of Rs.Ten Thousand as on 31.03.2003.
3. With reference to your letter No. 465. We enclose herewith cheque No. 364525 dated 15.9.2002 for Rs. Four Thousand only in settlement of the excess payment.
4. Please send the cheque to us for onward transmission to the party.
5. Your tour programme for the above mentioned period has not been received here so far.

अनुवाद में अंग्रेजी की छाया :

1. इस मामले पर हमारे मुख्य कार्यालय द्वारा ध्यान दिया जा रहा है।
2. हमारे यहाँ आपका खाता दिनांक 31-3-2003 को दस हजार रुपए की शेष जमा दर्शाता है।
3. आपके पत्र संख्या 465 के संदर्भ में हम इसके साथ चैक नंबर 36452 दिनांक 1-9-2002 को चार हजार रुपए का आपके अतिरिक्त भुगतान के निपटारे में संलग्न कर रहे हैं।
4. आप कृपया हमें संबंधित पक्ष को अग्र संचरण के लिए चैक भेज दें।
5. आपका उपर्यवधि का पर्यटन कार्यक्रम हमें अब तक नहीं मिला है।

हिंदी की प्रकृति के अनुसार अनुवाद :

1. हमारा मुख्य कार्यालय उक्त माले पर ध्यान दे रहा है।
2. हमारे यहाँ आपके खाते में दिनांक 31-3-2003 को दस हजार रुपए की राशि आपके नाम में जमा थी।
3. आपके पत्र संख्या 465 के संदर्भ में फालतू अदायगी की राशि के निपटारे के रूप में तीन हजार रुपये का चैक नं॰ 36452 दिनांक 15-9-2002 के इस पत्र के साथ संलग्न है।
4. कृपया चैक भेज दें ताकि उसे पार्टी को भिजवाया जा सके।
5. ऊपर लिखी अवधि के लिए आपके दौरे का कार्यक्रम हमें अभी तक नहीं मिला है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि कार्यालयी अनुवाद में प्रायः अंग्रेजी का प्रभाव देखने को मिलता है जिससे अनुवाद स्वाभाविक नहीं रह पाता। इसलिए अनुवादक को यह प्रयास करना चाहिए कि वह हिंदी की प्रकृति के अनुसार ही अनुवाद करे। इसके अतिरिक्त कभी–कभी अंग्रेजी के प्रभाव के कारण हिंदी अनुवाद में भी निवेशित उपवाक्य एवं परिशिष्टात्मक वाक्य देखने को मिलते हैं।

उदाहरण के लिए निम्नलिखित वाक्य देखें –

मूल वाक्य

1. A copy of the report, which you have sent to the Head Office, is required in this office immediately.

2. Sunday and holiday to be suffixed or prefixed, if any.

सामान्य अनुवाद :

1. रिपोर्ट, जिसे आपने मुख्यालय भेजा है, उसकी एक प्रति इस कार्यालय को तुरंत भेजें।
2. छुट्टी के पहले और बाद में जोड़े जाने वाले रविवार और सार्वजनिक अवकाश के दिन, यदि हों।

इन वाक्यों में अंग्रेजी का स्पष्ट प्रभाव दष्टिगोचर होता है। इससे अनुवाद की भाषा में अस्वाभाविकता आ जाती है और पाठक के लिए उसका अर्थ ग्रहण करना भी कठिन हो जाता है। उपर्युक्त वाक्यों का हिंदी की प्रकृति के अनुरूप अनुवाद इस प्रकार किया जा सकता है–

प्रस्तावित अनुवाद :

1. आपने जो रिपोर्ट मुख्यालय को भेजी है, उसकी एक प्रति तुरंत इस कार्यालय को भेजें।
2. छुट्टी के पहले और बाद में यदि कोई रविवार और सार्वजनिक अवकाश जोड़े जाने हों तो उल्लेख करें।

इस प्रकार वाक्य–रचना में हिंदी की प्रकृति के अनुसार परिवर्तन करके भाषा को सहज बनाया जा सकता है।

4. **भाषा की क्लिष्टता की समस्या** – कार्यालयी अनुवाद में अगली महत्त्वपूर्ण समस्या भाषा की क्लिष्टता के संदर्भ में आती है। अनुवाद की भाषा अंग्रेजी के कारण छाया कलुषित हो जाती है और वह अपनी स्वाभाविकता खो बैठती है। इससे पाठक के लिए भाषा बोधगम्य नहीं रह जाती। इसके लिए अनुवादक को हिंदी की प्रकृति से पूर्णतया परिचित होना चाहिए और सदैव सतर्क रहना चाहिए। ऐसा करने पर ही कार्यालयी अनुवाद को भाषा सहज स्वरूप प्राप्त कर सकेगी। अंग्रेजी वाक्य–रचना का यांत्रिक अनुकरण करने से परहेज करना चाहिए। वाक्य छोटे–छोटे होने चाहिएं। उदाहरण के लिए कुछ अभिव्यक्तियाँ प्रस्तुत हैं –

मूल अभिव्यक्ति :

1. Non-transferable
2. Matching grants
3. Committed expenditure
4. Strenthening of machinery
5. At the discretion of beneficiary
6. Computation of changes.

सामान्य अनुवाद :

1. अहस्तांतरणीय
2. समनुरूपयोजी अनुदान
3. आश्वासित/प्रतिबद्ध व्यय
4. तंत्र को सुदढ़ करना
5. लाभानुभोगी के विवेकाधिकार से
6. प्रभारों का परिकलन/अभिकलन

प्रस्तुत अभिव्यक्तियों में एक ओर तो नए शब्दों का प्रयोग किया गया है और दूसरी ओर सहज शैली अपनाने के बजाय कृत्रिम शैली अपनाई गई है। परिणामस्वरूप अनुवाद की भाषा अटपटी और क्लिष्ट बन गई है।

प्रस्तावित अनुवाद :

1. दूसरे को नहीं दिया जा सकता
2. बराबर–बराबर अनुदान
3. जिस खर्च के लिए आश्वासन दिया गया हो
4. व्यवस्था को चुस्त–दुरस्त बनाना
5. लाभ लेने वाले चाहें तो
6. खर्च का हिसाब

निश्चय ही ये वाक्य सहज भाषा के अच्छे नमूने कहे जा सकते हैं। अनुवादक को शब्दानुवाद की पद्धति से थोड़ा हटकर अपनी भौतिक प्रतिभा और सूझबूझ का प्रयोग करते हुए अनुवाद की भाषा को यथासंभव सहज और बोधगम्य बनाने का प्रयास करना चाहिए।

5. **अनुवाद में अर्थ के अनर्थ की समस्या** – कार्यालयी अनुवाद के संदर्भ में प्रायः ऐसी स्थिति भी सामने आती है जब अर्थ का अनर्थ हो जाता है और अनुवाद अपना सही भाव खो बैठता है। ऐसी स्थिति निश्चित रूप से हास्यास्पद हो जाती है। इस संदर्भ में निम्नलिखित उदाहरण प्रस्तुत हैं–

मूल वाक्य :

1. This is a case of **sticky** loan.
2. There is housing **boom** these days.
3. Inform the **nature** of limit, please
4. There will be no **room** for such complaint in future.
5. This is in order.
6. Please see the **note** portion.
7. Relevant orders are **flagged**.

सामान्य अनुवाद :

1. यह चिपचिपे ऋण का मामला है।
2. आजकल गह–निर्माण में धूम–धड़ाका है।
3. कृपया सीमा के स्वभाव की सूचना दें।
4. भविष्य में आपको इस प्रकार की शिकायत के लिए कमरा नहीं मिलेगा।
5. यह आदेशाधीन है।
6. कृपया नोट के भाग को देखो।
7. संबंधित आदेशों पर झंडियाँ लगा दी गई हैं।

प्रस्तावित अनुवाद :

1. यह अवरुद्ध ऋण का मामला है।
2. आजकल गह–निर्माण में तेजी है।
3. कृपया सीमा के स्वरूप की सूचना दें।
4. भविष्य में इस तरह की शिकायत करने का अवसर आपको नहीं मिलेगा;
5. यह ठीक/नियमानुसार है।
6. कृपया टिप्पणी वाले भाग को देखें।
7. संगत आदेशों पर पर्ची लगा दी है।

6. **पारिभाषिक शब्दावली की समस्या** – कार्यालयी साहित्य के अनुवाद की एक समस्या या विशेषता पारिभाषिक शब्दों के समुचित प्रयोग की है। डॉ॰ राजमणि तिवारी का कहना है– "संविधान द्वारा जब हिंदी को राजभाषा बनाया गया तो सबसे पहले यह प्रश्न उपस्थित हुआ कि यदि हिंदी में सरकारी कार्य किया जाता है तो उन सभी पारिभाषिक शब्दों के हिंदी पर्याय सुलभ होने चाहिएं जो सामान्यतया कार्यालयी प्रयोग में आते हैं। यद्यपि हिंदी में पर्यायों का अभाव नहीं था फिर भी अर्थ की सूक्ष्मता की दष्टि से और अनेकार्थता के भ्रम से बचने के लिए अंग्रेजी शब्दों के हिंदी पर्यायों को निर्धारित करना था। तथा जहाँ वे उपलब्ध नहीं थे, वहाँ उनका नव–निर्माण करना अत्यावश्यक था। भारत सरकार ने इसके लिए पहले केंद्रीय निदेशालय और बाद में वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग की स्थापना की। इन दोनों संस्थाओं ने जो कभी अलग–अलग और कभी एक संस्था के रूप में कार्य करती है पिछले 30-35 वर्षों में लगभग 4 लाख अंग्रेजी शब्दों के हिंदी पर्याय निर्धारित अथवा निर्मित किए हैं। ऐसा करने में उपलब्ध शब्दावली के सभी स्रोतों का पूर्णतया उपयोग किया गया है।" अतः स्वीकृत शब्दावली में संस्कृत, हिंदी उर्दू, अंग्रेजी, फारसी, अरबी तथा अन्य भारतीय भाषाओं के मूल अथवा संकर शब्दों को अपनाने का प्रयास किया गया है। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं :

1.	Complaint Inspector	–	शिकायत निरीक्षक
2.	Complain Report	–	शिकायत रिपोर्ट
3.	Concession of Rates	–	रियायती दर

4. Consillation Officer – सलाह अधिकारी

5. Conditions of Contract – ठेके की शर्तें

7. **अनुवादक से विषयगत ज्ञान की माँग** – सफल कार्यालयी अनुवाद हेतु उसके प्रतिपाद्य के स्वरूप, अभिव्यक्तियों के स्तर आदि की यथार्थ पहचान और परख बहुत जरूरी है। कार्यालयी स्तर पर प्रतिपाद्य अर्थात् काव्य की विशेष संदर्भगत विशेषताएँ होती हैं जो सामान्य व्यवहारिक परिवेश से भिन्न होने के कारण विषयगत ज्ञान की माँग करती हैं; यथा– 'Call rate' के लिए 'माँग' या 'बुलावा दर' न होकर 'शीघ्रावधि ब्याज दर', 'Sensitive Commodity' के लिए 'संवेदनशील वस्तु' के बजाय 'दुर्लभ या महत्त्वपूर्ण वस्तु' आदि का प्रयोग किया जाना आवश्यक हो जाता है। इस संदर्भ में डॉ॰ दंगल झाल्टे का कहना है कि– "सरकारी कार्यालयों के प्रशासन एवं परिचालन के अति व्यापक क्षेत्र के कारण अनुवादक को उसके विषय एवं संदर्भ संबंधी पूरी जानकारी का होना अनिवार्य शर्त है जिसके अभाव में अनुवाद के अव्यावहारिक, असंगत और हास्यास्पद होने का पूरा खतरा रहता है। प्रतिपाद्य के स्तर के बदलाव और कार्यालयी बारीकियों को विशेष रूप से दष्टिगत रखना चाहिए। अधिकारी से वरिष्ठ अधिकारी, वरिष्ठ अधिकारी से प्राधिकारी के बढ़ते क्रम अथवा इसके विपरीत उतरते क्रम के संबंधों, मंडल कार्यालय से क्षेत्रीय कार्यालय, क्षेत्रीय कार्यालय से प्रधान कार्यालय या इसके विपरीत से स्तर के संबंधों का कार्यालय से जनता या सरकारों आदि के संबंधों के अनेकविध संदर्भगत पहलुओं को समझ लेने पर शब्द–चयन तथा वाक्य–विन्यास में सहजता आ सकती है।"

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि कार्यालयी अनुवाद की अनुप्रयुक्तता के संदर्भ में ध्वनिस्तर, लिपिस्तर, शब्द–रचना–स्तर, रूप–स्तर, अर्थ–स्तर, शैली–स्तर, प्रयुक्ति–स्तर आदि महत्त्वपूर्ण भाषा–स्तरों का समुचित ध्यान रखा जाना बहुत आवश्यक है। वस्तुतः ये ही वे आवश्यक तत्त्व हैं जिनके कारण कार्यालयी अनुवाद में अनुवादक को सफलता मिल सकती है और इसका महत्त्व एक स्वतंत्र विधा के रूप में स्थापित हो सकता है। निस्संदेह अच्छे अनुवाद से ही कार्यालयी हिंदी के स्वरूप में निखार आ सकता है। डॉ॰ हरीश सेठी के शब्दों में, "द्विभाषिकता की स्थिति के कारण राजभाषा हिंदी का विकास और विस्तार हुआ है। इसके पीछे अनुवाद की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। परंतु, सरकारी कार्यालयों में अनुवाद की दिनोंदिन बढ़ती हुई प्रवत्ति को नियंत्रित करना अब पंडोरा पेटी को नियंत्रित करना हो गया है। . . . . जब तक मानसिक रूप से तैयार होकर, राष्ट्रीयता की भावना से हम हिंदी में काम–काज शुरू नहीं करेंगे, तब तक हिंदी के भविष्य पर इसी प्रकार के संगत–असंगत आक्षेप लगते रहेंगे। . . . . कार्यालयी अनुवाद में व्यावहारिक और प्रचलित हिंदी को प्रयुक्त करने से ही हिंदी का प्रचार–प्रसार बढ़ सकता है।"

5.4 साहित्यिक अनुवाद : सिद्धांत और व्यवहार

आज विश्व के सभी देशों के लोगों के बीच अन्तःसंप्रेषण की प्रक्रिया के रूप में सजनात्मक साहित्य के अनुवाद का महत्त्व निर्विवाद है। भारत जैसे बहुभाषी राष्ट्र में विभिन्न भाषाओं के परस्पर अनुवाद की तो आवश्यकता है ही, विश्व–भाषाओं से भी अनुवाद की अनिवार्यता है। आज संप्रेषण के साधनों के आविष्कारों के कारण दुनिया इतनी सिकुड़ गयी है कि एक देश के लोग अन्य देशों के साहित्य एवं संस्कृति के बारे में जानने के लिए उत्सुक हैं। उदारीकरण एवं वैश्वीकरण के इस दौर में एक–दूसरे के साहित्य एवं संस्कृति को जानना–समझना आज हमारी विवशता बन गई है। डॉ॰ सुरेश सिंहल के अनुसार– "अनुवाद आज एक सांस्कृतिक सेतु के रूप में उभरकर सामने आया है। आज की मानव संस्कृति में अनुवाद की भूमिका बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। दो भाषाओं के परस्पर अनुवाद में सांस्कृतिक आदान–प्रदान तो होता ही है, हमें एक–दूसरे के नजदीक आने का अवसर भी मिलता है। अनुवाद मानव की मूलभूत एकता का, व्यक्ति चेतना एवं विश्व चेतना के अद्वैत का प्रत्यक्ष प्रमाण है। अतः अनुवाद एक अन्तःसंप्रेषण की प्रक्रिया के रूप में महत्त्वपूर्ण कदम है जिससे मानव दूसरों की सामाजिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक आदि तत्त्वों की जानकारी प्राप्त कर सकता है।"

साहित्यिक अनुवाद की प्रकृति

विषय–वस्तु के आधार पर अनुवाद मुख्यतः दो प्रकार का माना जाता है – एक साहित्यिक अनुवाद और दूसरा साहित्येतर अनुवाद। पहले में साहित्य की विभिन्न विधाओं से संबंधित सामग्री का अनुवाद किया जाता है और दूसरे में वैज्ञानिक एवं तकनीकी विषयों से संबंधित सामग्री का अनुवाद किया जाता है। सामग्री की इस भिन्नता के कारण ही अनुवाद में भिन्नता होना जरूरी हो जाता है। यह भिन्नता उस सामग्री अथवा विषय की अनुवाद–प्रक्रिया को भी प्रभावित करती है और उसके लक्ष्य भाषायी स्वरूप को भी। साहित्येतर विषयों के अनुवाद में विशिष्ट व्यावसायिक भाषा का व्यावहारिक और समुचित प्रयोग किया जाता है तो साहित्यिक विषयों के अनुवाद में भाषा की सजनात्मक अभिव्यक्तियों का प्रयोग किया जाता है। साहित्येतर विषयों के अनुवाद में अनुवादक का काम अभ्यास, पारिभाषिक शब्दों के प्रयोग और सपाटबयानी से चल जाता है, किंतु साहित्यिक विषयों के अनुवाद में इतना ही काफी नहीं है। इसके अतिरिक्त अनुवादक में सजनात्मक प्रतिभा का होना अनिवार्य होता है। साहित्येतर अनुवाद की प्रकृति आत्मपरक एवं सूक्ष्म होती है। साहित्येतर अनुवाद में प्रायः एकार्थक अभिव्यक्ति होती है और साहित्यिक अनुवाद में बहुअर्थक। पहले में असंश्लिष्ट

अर्थछवियाँ इन दोनों प्रकार के अनुवाद की भिन्नता को दर्शाती हैं। पहले प्रकार के अनुवाद में कोशगत अर्थ तथा दूसरे प्रकार के अनुवाद में रचना के प्रसंगगत, संदर्भगत तथा सांस्कृतिक अर्थ की प्रधानता रहती है। इससे स्पष्ट है कि सभी प्रकार के विषयों का अनुवाद एक जैसा नहीं हो सकता। साहित्येतर अनुवाद की प्रक्रिया यदि सरल होती है तो साहित्यिक अनुवाद की जटिल। इससे यह भी स्पष्ट हो जाता है कि साहित्येतर अनुवाद प्रायः शब्दानुवाद होता है और साहित्यिक अनुवाद भावानुवाद एवं मुक्तानुवाद। सजनात्मक साहित्य के अनुवाद की चर्चा करते हुए डॉ॰ सुरेश सिंहल कहते हैं कि "सजनात्मक साहित्य का अनुवाद अनिवार्यतः पुनःसजन है। यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें स्रोतभाषा के कथ्य और शैली को उसकी संपूर्ण अभिव्यंजनाओं सहित रखते हुए समानार्थक अथवा समतुल्य पर्यायों के माध्यम से पूरी ईमानदारी के साथ लक्ष्य भाषा में अवतरित किया जाता है। यह केवल शब्दों का प्रतिस्थापन मात्र नहीं है बल्कि एक प्रकार का पुनःसजन है जिसमें अनुवादक को कुछ जोड़ना और कुछ छोड़ना पड़ता है। इसमें अनुवादक को किसी दूसरे के भावबोध को अपना बनाकर लक्ष्य भाषा में संप्रेषित करना होता है, जबकि मूल लेखक का भावबोध उसका अपना होता है। जिस प्रकार सफल और सार्थक मौलिक लेखन के लिए गहन जीवनानुभूति और रसपूर्ण अभिव्यंजना–शक्ति आवश्यक होती है, उसी प्रकार सफल अनुवादक बनने के लिए ऐसी शक्ति का होना जरूरी होता है।

इस प्रतिभा के बिना कोई भी अनुवादक, चाहे वह कितनी ही भाषाएँ क्यों न जानता हो, एक अच्छा अनुवादक नहीं बन सकता। मूल लेखक की भाँति उसे भी अपने लक्ष्य भाषा–भाषी समाज के लिए परकाया परिवेश करना पड़ता है। उसकी मनोभूमि तक पहुँचना पड़ता है। किन्तु कोई भी अनुवादक सजनात्मक प्रतिभा के बिना मूल लेखक की आत्मा में न तो उतर सकता है और न ही उसके भावों और विचारों को अपने समाज के पाठकों तक पहुँचा सकता है। सफल अनुवादक में पुनःसजन की यह क्षमता वैसी ही होती है जैसी की मूल लेखक में। अनूदित रचना ऐसी प्रतीत होनी चाहिए मानो मूल रचनाकार ने अपनी ही कृति को कालांतर में एक अन्य भाषा में पुनःसजित किया हो। वास्तव में देखा जाए तो अनुवादक की भूमिका दोहरी होती है और उससे की जाने वाली यह दोहरी प्रत्याशा अनुवाद के कार्य को जटिल और श्रमसाध्य बना देती है। उसे मूल कृति के प्रति तो वफादार रहना ही होता है, साथ ही उसे अपने अनुवाद की भाषा में मूल रचनाकार के अनुभवों और अनुभूतियों को भी सहेजना–सँवारना पड़ता है।

साहित्यिक अनुवाद के सिद्धांत

सफल अनुवाद के लिए अनुवादक को अपनी मातभाषा में ही अनुवाद करना चाहिए। इसके अतिरिक्त सफल अनुवाद की यह भी एक महत्त्वपूर्ण विशेषता है कि उसकी भाषा यथासंभव लोकभाषा के अधिकाधिक निकट हो। वह अपने समय की प्रचलित भाषा हो। जहाँ तक हो सके वह किताबी न हो, अस्वाभाविक न हो और नीरस न हो। सजनात्मक साहित्य के अनुवाद में तो यह बात और भी आवश्यक हो जाती है, क्योंकि मौलिक लेखन प्रायः किताबी भाषा में नहीं लिखा जाता। इसलिए अनुवादक को अनुवाद की भाषा के संदर्भ में शब्दों के पर्यायों का चयन करते समय बहुत सावधानी बरतनी चाहिए।

सफल अनुवाद में बोधगम्यता, सहजता, स्पष्टता, प्रवाहमयता और संप्रेषणीयता अनिवार्य गुण माने जाते हैं जिनका संबंध सीधे अनुवादक से होता है। अनुवाद स्वयं में एक सजनात्मक प्रक्रिया है, किंतु अनुवाद की सजन शक्ति मूलपाठ की सीमाओं में बँधी हुई होती है जिसे मूलनिष्ठता की अनिवार्यता से जोड़ दिया जाता है। इसलिए अपनी व्यक्तिगत विशेषताओं के होते हुए उसे मूल का ध्यान तो रखना ही पड़ता है। अक्सर उसे लक्ष्य भाषा में एक विचार के लिए प्रस्तुत एक से अधिक पर्यायों में से एक का चुनाव करने का अधिकार है। पर्यायों का यह चुनाव अनुवादक के शैक्षिक, बौद्धिक और भाषिक स्तर पर निर्भर करते हैं और साथ ही उसकी रुचि और अभ्यास पर भी। उसे यह चुनाव लक्ष्य भाषा की प्रकृति के अनुसार ही करना पड़ता है, वरना वह पाठक के लिए अस्पष्ट एवं असहज हो जाएगा। वास्तव में सफल अनुवाद वही है जिसमें मूल के भाव और शैली को दूसरी भाषा में बिना किसी नुकसान के संप्रेषित किया जा सके अर्थात् जो बात हम कहना चाहते हैं वह दूसरे तक उसी अर्थ और लहजे में पहुँच जाए और अनुवाद पढ़ने के बाद उसका मूल पाठ पढ़ने की आवश्यकता न पड़े। यह पढ़ने में इतना सहज होना चाहिए कि उससे पाठक को आनंद की अनुभूति हो। अनुवाद की पठनीयता के लिए उसका प्रवाहमयी होना जरूरी है। जरा भी बनावटीपन आया तो वह खटकने लगेगा। इसलिए शब्दार्थ और व्याकरण की दष्टि से अशुद्ध न होने पर भी कभी–कभी ऐसा लगता है कि भाषा का बहाव रुक–सा जाता है। पढ़ते–पढ़ते अचानक हम कहीं रुक से जाते हैं। सफल अनुवाद बहते पानी के समान होता है।

साहित्यिक अनुवाद का स्वरूप

अनुवाद को विज्ञान कहा जाए या कला, यह एक विवादास्पद विषय रहा है। अनुवाद को वैज्ञानिक दष्टि से परखने पर यह ज्ञात होता है कि अनुवादक अनुवाद का वस्तुनिष्ठता, तर्कसम्मतता, निरपेक्षता, सटीकता, शुद्धता आदि तत्त्वों के आधार पर विश्लेषण एवं अध्ययन करता हैं वह मूल कृति के सही अर्थ को समझकर अनुवाद करने की चेष्टा करता है। वह भाषा के नियमों का पालन करता है और अनुवाद–अध्ययन में अपने व्यक्तित्व, अपनी भावना और अपनी कल्पना को संश्लिष्ट नहीं करता। यह सारी अनुवाद–प्रक्रिया

बौद्धिक होती है, क्योंकि वैज्ञानिक दष्टि वाला अनुवादक एक तथ्यात्मक व्यक्ति होता है। एक वैज्ञानिक की भाँति ही अनुवादक भी शब्दकोश, विश्वकोश, व्याकरण–नियमावली आदि अनुवाद संबंधी औजारों का प्रयोग करता है। अनुवाद को विज्ञान की दष्टि से परखने वाले अनुवादक अनुवाद की सटीकता एवं शुद्धता पर अधिक बल देते हैं।

अनुवाद को कला की दष्टि से परखने पर हम पाते हैं कि ऐसे अनुवाद में अर्थ संश्लिष्ट होते हैं, सांकेतिक होते हैं और सूक्ष्म होते हैं और ऐसे अनुवाद में अर्थ भी सुनिश्चित नहीं होते। इसलिए अनुवादक कोरा अनुवादक नहीं होना चाहिए। वह मूल रचना के अर्थ को संपूर्णता में वहन कर सकता हो, शैली की भंगिमाओं को समझ सकता हो और इन सब को लक्ष्य भाषा में सुरक्षित रख सकता हो। अतः कलात्मक अनुवाद वैज्ञानिक अनुवाद से सर्वथा भिन्न होता है, क्योंकि, वैज्ञानिक अनुवाद में व्यवस्थित ज्ञान होता है ज्ञान तर्कसम्मत, सुसंबद्ध एवं वस्तुनिष्ठ होता है। इसमें केवल अर्थ ही महत्त्वपूर्ण होता है, भाषा अर्थ के साथ जुड़ी नहीं होती इसलिए इसका अनुवाद आसानी से किया जा सकता है। किंतु कलात्मक अनुवाद में स्थिति इसके विपरीत होती है। अतः अनुवाद न तो पूर्णतया विज्ञान है और न ही पूर्णतया कला। एक सीमा तक वह विज्ञान भी है और कला भी।

साहित्यिक अनुवाद की समस्याएँ

सजनात्मक साहित्य की विभिन्न विधाओं में कविता का अनुवाद अत्यधिक कठिन होता है। कुछ विद्वान् तो इसे असंभव भी मानते हैं और कुछ का कहना है कि काव्यानुवाद उस सुंदर स्त्री के समान है जो बेवफा होती है और यदि वह वफादार हो तो वह सुंदर नहीं होती। डॉ॰ सुरेश सिंहल के शब्दों में, "वस्तुतः काव्यानुवाद की प्रक्रिया में अनुवादक को मूल रचना के भाव को लक्ष्य भाषा की प्रकृति के अनुरूप ही प्रस्तुत करना होता है। किंतु यह प्रक्रिया विडंबनापूर्ण होती है, क्योंकि पद्य के बंधन के कारण अनुवादक न तो मूल भावों की रक्षा कर पाता है और न अनूदित रचना में शैलीगत सौंदर्य ही बचा पाता है। भाषा अथवा संरचना पर ध्यान देने से भाव नहीं आ पाते और भावों का अनुवाद करने पर व्याकरण साथ छोड़ जाता है।" काव्यानुवाद की प्रमुख समस्या यह है कि काव्य में भाषा के कई स्तर होते हैं। कवि के भाषिक संस्कार कवि की अपनी मातभाषा और उसके क्षेत्र की सामान्य क्षेत्रीय भाषा के आधार पर ही बने होते हैं। कवि का सामान्य प्रेषण–व्यापार इन्हीं संस्कारों पर आधारित रहता है। कवि की उत्तेजित–उद्वेलित चेतना और उद्वेलित चेतना और उद्दीप्त अनुभूति अपनी व्यंजना के लिए उचित सामग्री की खोज और उसके चुनाव और प्रयोग की जटिल प्रक्रियाओं में प्रवत्त होती है। अतः अनुवादक का भाषा–प्रयोग संबंधी दायित्व ऐसे में बहुस्तरीय हो जाता है। एक ओर तो उसे अपनी रचना को मात्र उक्ति से बचाना होता है और दूसरी ओर अपनी अनुभूति और सजन–प्रेरणा के संदर्भ में भाषा–प्रयोग प्रमाणित करना होता है। एक ओर उसे परंपरागत जनभाषा के प्रति प्रतिबद्ध होना होता है और दूसरी ओर लीक से हटकर नवीन भाषा–भूमियों की खोज भी उसके लिए अनिवार्यता बन जाती है। ऐसी स्थिति में अनुवादक की ध्वनि–योजना, छंद–योजना, रस–योजना, अलंकार–योजना, बिंब–योजना, प्रतीक–योजना आदि समस्याओं से जूझना पड़ता है जो निस्संदेह काव्यानुवाद को यदि एक असंभव कार्य नहीं तो एक कठिन कार्य अवश्य ही प्रमाणित करती है।

नाटकानुवाद भी काव्यानुवाद की तरह उतना ही कठिन है जितना कि नाटक लेखन का काम। दरअसल नाटक से जुड़ा हुआ व्यक्ति ही नाटक का अनुवाद कर सकता है। नाटक के अनुवादक के लिए रंगमंच का व्यावहारिक ज्ञान होना अत्यंत आवश्यक है। नाटक में बहुत सारी तकनीकी बातें होती हैं जिन्हें अनुवादक को जानना जरूरी हो जाता है, अन्यथा वह अनुवाद कर ही नहीं सकेगा। नाटक में रंगमंच, टी॰ वी॰, रेडियो आदि के लिए अनुवाद अलग–अलग होगा। इन सबकी तकनीकी जरूरतें अलग–अलग होने के कारण नाटक की अनुवाद प्रक्रिया भी अलग हो जाती है। नाटक की अनुवाद–प्रक्रिया निश्चित रूप से साहित्य की अन्य विधाओं से भिन्न होती है, क्योंकि नाटक तो देखा जाता है और अन्य विधाएँ पढ़ी जाती हैं। नाटकानुवाद में मूल समस्या नाटक के बिंब को दूसरी भाषा में उसी तरह या नजदीकी बिंब के द्वारा सुरक्षित रखने की है। एक प्रकार से अनुवादक को मूल नाटक की संपूर्ण अर्थवत्ता को सुरक्षित रखना होता है। अन्य विधाओं में लिखित–पक्ष पर जोर दिया जाता है, किंतु नाटक में अभिनय पक्ष पर, अन्य विधाओं में वर्णनात्मकता की प्रधानता होती है, किंतु नाटक में संवादात्मकता की। नाटकानुवाद की समस्या का मूल कारण स्रोतभाषा का भावगत और शिल्पगत विशेषताएँ हैं। सामान्यतः अनुवाद में स्रोतभाषा कही रचना को लक्ष्य भाषा में उतारना होता है, जबकि नाटकानुवाद में भाषायी तत्त्वों के अतिरिक्त कई अन्य प्रकार के नाटकीय तत्त्व भी सम्मिलित होते हैं। नाटकानुवाद में लिखित और अभिनयमूलक पक्षों में अंतर्द्वद्व की स्थिति में इन दोनों पक्षों को एक–दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता। पहल पक्ष को पकड़ने की कोशिश में दूसरा छूट जाता है तो दूसरे को पकड़ने की कोशिश में पहला। यही समस्या नाटक के अनुवादक के लिए चुनौती रूप में प्रस्तुत होती है। नाटक के लिखित पक्ष में नाटकीय–संकेत, तत्त्व और गति–संबंधी तत्त्व निहित होते हैं। अनुवादक के लिए समस्या यह है कि उसे लिखित कृति का केवल पढ़कर ही उसका लक्ष्यभाषी रूप तैयार करना पड़ता है। यदि अनुवादक मूल कृति को पढ़ने के साथ–साथ रंगमंच पर भी अभिनीत होते देखकर अनुवाद करता है तो उसकी समस्या सरल हो जाती है, किंतु ऐसा प्रायः नहीं होता है और उसे केवल लिखित पक्ष को पढ़कर ही अनुवाद करना पड़ता है। इस प्रक्रिया में उसे उस कृति में निहित नाटकीय संकेतों की ओर ध्यान दिये बिना ही

अनुवाद करना पड़ता है। नाट्य कृति अन्य गद्य व पद्य कृतियों की अपेक्षा समयबद्ध होती है, इसलिए अनुवादक को मूल कृति के संवादों को लक्ष्य भाषा की उच्चारण पद्धति के अनुरूप समयबद्ध करना पड़ता है। नाटक के अनुवादक को संवादों की निरंतर प्रक्रिया से होकर गुजरना पड़ता है।

कुल मिलाकर नाटकानुवाद की समस्या रंगमंच की व्यावहारिकता की समस्या ही है। इसकी कुछ समस्याएँ रूपांतरण के स्तर पर होती हैं और कुछ भाषांतरण के स्तर पर। अनुवादक को नाटकानुवाद में आने वाली ऐसी अनेक समस्याओं से जूझना पड़ता है, जैसे नाटक का अनुवाद किया जाए अथवा रूपांतर, अनुवाद मूलनिष्ठ हो अथवा स्वतंत्र, कथावस्तु आँचलित है अथवा सार्वभौमिक, कथावस्तु किस सीमा तक प्रासंगिक है, सांस्कृतिक परिवेश का पुनःसजन कैसे किया जाए, नाटकीय भाषा के तेवरों को कैसे वश में किया जाए आदि। यही वे तत्त्व हैं जो नाटक के अनुवाद के लिए चुनौती का काम करते हैं।

काव्यानुवाद और नाटकानुवाद की तुलना में कथा–साहित्य का अनुवाद सरल एवं आसान तो होता है, किंतु इतना नहीं जितना कि इसे समझ लिया जाता है क्योंकि मूलतः किसी भी सजनात्मक विधा का अनुवाद अपने आप में एक सजनात्मक प्रक्रिया है। इस संदर्भ में डॉ॰ सुरेश सिंहल के विचार उल्लेखनीय हैं– "कथा–साहित्य के अनुवादक को एक कलात्मक दायित्व निभाना होता है और यह कलात्मकता उसके सजनात्मक प्रयोग की क्षमता पर ही निर्भर करती है। काव्यानुवाद तथा कथा–साहित्य के अनुवाद में एक आधारभूत अंतर लेखक की अनुभूति के स्तर पर होता है। इस अनुभूति की अभिव्यक्ति कविता के अनुवाद में अमूर्त एवं सूक्ष्म होती है और नाटकानुवाद एवं कथा–साहित्य के अनुवाद में मूर्त एवं स्थूल होती है। संरचना के आधार पर कथा–साहित्य एक संश्लिष्ट साहित्यिक विधा है और इसके अनुवाद की विशिष्टता उसके कथ्य और शैली पर निर्भर करती है। इस प्रकार के अनुवाद में भाव–भंगिमाओं, शैली की सूक्ष्मताओं, अर्थ–छायाओं, लक्ष्यार्थ एवं व्यंग्यार्थ अभिव्यक्तियों, प्रतीकात्मक एवं बिंबात्मक प्रयोगों, वर्णनात्मकता की रोचकता, सांस्कृतिक परिवेश का पुनर्सजन, भाषा की स्वाभाविकता और अनुवाद मौलिक लेखन जैसा प्रतीत होने जैसी समस्याएँ अनुवादक के सामने प्रस्तुत होती हैं।"

जिस प्रकार कविता, नाटक, उपन्यास, कहानी आदि को हम नितांत सजनात्मक साहित्य मानते हैं, उसी प्रकार अन्य गद्य–विधाएँ भी सजनात्मक साहित्य के ही विभिन्न आयाम हैं और इसलिए इनका अनुवाद न तो अन्य विधाओं से बिल्कुल भिन्न है और न ही इनके अनुवाद की समस्याएँ भी पहले से कम है। इन गद्य विधाओं में विचार एवं अनुभूति की प्रामाणिक अभिव्यक्ति हुआ करती है। इसके अनुवादक को विचार एवं अनुभूति की इसी प्रामाणिकता को सुरक्षित रखते हुए अनुवाद करना होता है। इन विधाओं में एक ओर विचारों की तथ्यपरता और दूसरी ओर अनुभूति की कलात्मकता विद्यमान होती है और इन दोनों के समन्वित रूप को लक्ष्य भाषा में उतारना ही अनुवाद की सफलता की कसौटी है।

सजनात्मक साहित्य के अनुवाद की प्रक्रिया अत्यंत जटिल होती है, क्योंकि साहित्य में, विशेष रूप से काव्यभाषा में, अनेक काव्यशास्त्रीय तत्त्व निहित होते हैं। ये तत्त्व कभी बिंबों ओर प्रतीकों के रूप में तो कभी अलंकारों के रूप में प्रस्तुत होते हैं। काव्यशास्त्रीय तत्त्वों की ये जटिलता एक ओर तो काव्य की सौंदर्य वद्धि करती है और दूसरी ओर उसकी रसास्वादन में बाधक भी बनती है। कविता की भाषा अन्य साहित्यिक विधाओं से कई कारणों से भिन्न होती है। कवि के शब्दों में चयन में विशेष चमत्कारिक प्रभाव निहित होता है, क्योंकि इन शब्दों में सामान्य अर्थ के साथ–साथ कुछ विशिष्ट अर्थ–छवियाँ भी संश्लिष्ट रूप में विद्यमान रहती हैं। इस प्रकार के चुने हुए विशेष शब्दों के सामान्य अर्थ को तो अनुवादक आसानी से स्थानांतरित कर देता है, किंतु उसकी विशिष्ट अर्थ–छवियों को सुरक्षित रख पाना इसलिए संभव नहीं हो पाता क्योंकि प्रत्येक भाषा में इस प्रकार के शब्द होते ही नहीं। कोई भी काव्य–भाषा काव्यशास्त्रीय तत्त्वों के संदर्भ में जितनी भी जटिल होगी उसका अनुवाद उतना ही कठिन होगा। स्रोत भाषा के काव्यशास्त्रीय तत्त्वों को लक्ष्य भाषा में अवतरित करते समय अनुवादक एक साथ पाठक ओर सजक की भूमिका निभाता है।

सजनात्मक साहित्य का अनुवाद अपने आप में एक चुनौतीपूर्ण कार्य है और दार्शनिक एवं सांस्कृतिक तत्त्वों का अनुवाद इस चुनौती के क्षेत्र को और अधिक विस्तत कर देता है। समकालीन संदर्भ में प्रत्येक रचनाकार को कितनी ही समस्याओं के स्पष्टीकरण के लिए दार्शनिक एवं सांस्कृतिक उदाहरणों को सादश्य रूप में अपनाना ही पड़ता है। साहित्य में तो ये तत्त्व अनुभूति को गहनता और विचार को विस्तार प्रदान करने का महत्त्वपूर्ण साधन होते हैं। दार्शनिक एवं सांस्कृतिक चरित्र, नाम, घटनाएँ, अभिव्यक्तियाँ कभी प्रत्यक्ष रूप में और कभी मुहावरों के रूप में अपनाई जाकर स्थिति को अपेक्षित अर्थ प्रदान करती हैं। इसलिए अनुवादक दार्शनिक एवं सांस्कृतिक तत्त्वों के अनुवाद के उत्तरदायित्व से बच नहीं सकता। इस उत्तरदायित्व को निभाने के लिए अनुवादक के लिए आवश्यक है कि उसे स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा की दार्शनिक एवं सांस्कृतिक पष्ठभूमि का विशेष ज्ञान हो। इस प्रकार के अनुवाद में अनुवादक को एक साथ दो प्रकार की वास्तविकताओं का साक्षात्कार करते हुए दोनों का संयोजन करना होता है जिसके लिए उसे इन दोनों प्रकार की अवस्थाओं का पूर्ण ज्ञान होना आवश्यक है। साथ ही उसे ध्यान में रखना होता है कि वह दार्शनिक एवं

सांस्कृतिक अभिव्यक्ति उस संदर्भ विशेष में सार्थकता भी रखे और उसके द्वारा उत्पन्न किया गया प्रभाव भी सुरक्षित रखें।

सजनात्मक साहित्य में शब्दों की अभिव्यंजना–शक्ति एवं महत्त्वपूर्ण तत्त्व होती हैं जिसे बिंबों, प्रतीकों, व्यंग्य, ध्वनि, अलंकार, सांस्कृतिक तत्त्व आदि के प्रयोग द्वारा लेखक अपने साहित्य में उत्पन्न करता है। इसके साथ–साथ वह मुहावरों और लोकोक्तियों द्वारा भी भाषा की अभिव्यंजना में श्रीवद्धि करता है। मुहावरों एवं लोकोक्तियों का मूल स्रोत उस देश अथवा भाषा की संस्कृति विशेष हुआ करती है। ये उस देश अथवा भाषा की सांस्कृतिक चेतना के वाहक होते हैं और भाषा की अभिव्यक्ति को एक विशिष्टता प्रदान करते हुए उसे सशक्त स्वरूप प्रदान करते हैं। साथ ही ये उस भाषा को सहजता और स्वाभाविकता भी प्रदान करते हैं।

मुहावरों और एवं लोकोक्तियों जैसी लोकाश्रित तत्त्व–युगांत के लोकानुभव को हमारे सामने रखते हैं, यह लोकानुभव हमारे नैतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक जीवन पर ही आधारित होते हैं। इन लोकाश्रित अभिव्यक्तियों के प्रयोग से भाषा की अभिव्यंजना जितनी अधिक होगी, उसका अनुवाद भी उतना ही कठिन होता जाएगा।

अनुवाद एक भाषा की सामग्री का दूसरी भाषा में रूपांतरण है। इसलिए अनुवाद का संबंध भाषाविज्ञान से स्वतः ही स्थापित हो जाता है। वास्तव में, भाषा कुछ ऐसे ध्वनि–प्रतीकों की व्यवस्था हैं जिसके द्वारा हम अपनी विचार–संपदा को दूसरों तक पहुँचा सकते हैं। भाषा के ध्वनि–प्रतीकों की यह व्यवस्था अर्थगत, शैलीगत एवं व्याकरणिक संरचनाओं के नियमों के रूप में हमारे सामने आती हैं जो उस भाषा को नियंत्रित करती है। इन्हीं अर्थगत, शैलीगत और व्याकरणिक संरचनाओं के माध्यम से हम अपने विचारों का आदान–प्रदान कर सकने में सक्षम होते हैं। एक भाषा के शब्दों तथा उसकी व्यवस्था के स्थान पर दूसरी भाषा के शब्दों तथा उसकी व्यवस्था लाने के लिए दोनों भाषाओं की तुलना आवश्यक है। इस तरह अनुवाद मूलतः दो भाषाओं की तुलना पर आधारित होता है, अतः उसका सीधा संबंध भाषाविज्ञान के तुलनात्मक रूप से है। यह तुलना शब्द–समूह तथा भाषा की व्यवस्था दोनों की ही होती है। शब्द–समूह की तुलना से अभिप्राय शब्दों की अर्थगत तुलना से है, और व्यवस्था से अभिप्राय भाषा की शैलीगत एवं व्याकरणिक संरचनाओं की तुलना से है। कहने का तात्पर्य यह है कि भाषाविज्ञान के अंतर्गत भाषा का शैली एवं व्याकरण के स्तर पर अध्ययन किया जाता है और अनुवादक को इस संदर्भ में आने वाली अनेक समस्याओं से जूझना पड़ता है।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि सजनात्मक साहित्य का अनुवाद निश्चित रूप से एक कठिन प्रक्रिया है और इसी कारण किसी ने अनुवादक को प्रवंचक कहा और किसी ने अनुवाद–प्रक्रिया को ही असंभव घोषित कर डाला। इस प्रकार के अनुवाद के भावपक्ष में यह कठिनाई शैलीपक्ष की अपेक्षा कम ही होती है। डॉ॰ सुरेश सिंहल के शब्दों में, "सफल अनुवाद के लिए आवश्यक है कि भाव के साथ–साथ मूल कृति की शैलीपरक विशेषताओं को भी लक्ष्य भाषा में अवतरित किया जाए। ये विशेषताएँ प्रायः काव्यशास्त्रीय, लोकाश्रित, दार्शनिक, सांस्कृतिक, शैलीवैज्ञानिक, व्याकरणिक आदि तत्त्वों के रूप में प्रस्तुत होती है। सफल अनुवाद का मूल मंत्र यह है कि अनुवादक में ऐसी क्षमता होनी चाहिए जिससे वह इन सभी प्रकार की विशेषताओं को लक्ष्य भाषा में सुरक्षित रख सके। किंतु अनुवाद में प्रायः ऐसा हो नहीं पाता है। अनुवादक को कई कारणों से इनका अनुपात बदलना पड़ता है। कई बार मूल अभिव्यक्ति व्याकरणिक अभिधा के सहारे करनी पड़ती है। बहुत से अनुवादों में ऐसा देखने में आता है कि उनमें शैलीपरक तत्त्व मूल की अपेक्षा अधिक नहीं होते हैं। फिर भी वस्तुस्थिति यही है कि साहित्यिक अनुवाद में यह एक आवश्यक गुण है जो अनुवादक से सजनात्मकता की मांग करता है।" इस संदर्भ में यह बात दर्शनीय है कि अनुवादक से सजनात्मक की यह मांग मूल रचना की संपूर्ण अभिव्यक्ति–भंगिमा पर निर्भर करती है। भाव एवं शैली के स्तर पर अभिव्यक्ति का यह सौंदर्य जितना अधिक होगा अनुवाद उतना ही कठिन हो जाएगा। इसलिए कविता, नाटक, उपन्यास, कहानी, निबंध आदि का अनुवाद क्रमशः कठिन से आसान हो जाएगा। कहा जा सकता है कि सजनात्मक साहित्य के अनुवाद में विधा कोई भी हो, यह मूल लेखक की व उसकी कृति की मानसिकता से और उसकी पष्ठभूमि से आत्मसात् होने की एक सजनात्मक प्रक्रिया है। मूल कृति के प्रति उसे अपनी निष्ठा को सहेजना–सँवारना पड़ता है। साहित्य के अनुवादक को सजन के शब्दों की स्थूल डोर उस अदश्य सूक्ष्म प्रक्रिया से जोड़ती है जो सजन के क्षणों में मूल लेखक के मानस में घटित हुई होंगी। यह संपूर्ण प्रक्रिया अपने आप में एक सजनात्मक प्रक्रिया है और अनुवादक को इसके विविध आयामों से होकर गुजरना पड़ता है।

5.5 काव्यानुवाद और संबंधित समस्याएँ

(अ) काव्यानुवाद

यों तो सजनात्मक साहित्य की विभिन्न विधाओं, जैसे– कविता, नाटक, उपन्यास, कहानी, निबंध, आत्मकथा आदि का अनुवाद कई प्रकार से समान होता है, किंतु फिर भी प्रत्येक विधा की अपनी कुछ विशिष्ट बारीकियाँ हुआ करती हैं। प्रायः ऐसी बारीकियाँ शैली स्तर पर ही हुआ करती हैं। निश्चित रूप से इन सभी विधाओं की अनुवाद प्रक्रिया एक जैसी नहीं हो सकती। कविता में विभिन्न काव्यरूपों द्वारा, नाटक में रंगमंचीय प्रदर्शन द्वारा और कथा–साहित्य में विभिन्न कथा–शैलियों द्वारा मूल लेखक के कथ्य को पाठकों

और दर्शकों तक पहुँचाया जाता है। भाव एवं शैली के स्तर पर विभिन्नता के साथ–साथ भाषा के तेवर भी अलग–अलग होते हैं। कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि विभिन्न प्रकार की साहित्यिक विधाएँ चूँकि अपने कलेवर में भिन्न होती हैं, इसलिए उनका अनुवाद भी भिन्न–भिन्न तरीके से ही संभव होता है और उनकी समस्याएँ भी भिन्न–भिन्न होती हैं।

काव्यानुवाद के संदर्भ में यह कहना समीचीन है कि गद्य और पद्य के अनुवाद में एक मूलभूत अंतर होता है। गद्य की भाषा जहाँ अभिधामूलक होती है, पद्य की भाषा वहीं लाक्षणिक एवं व्यंजनाप्रधान होती है। अभिधामूलक भाषा का अनुवाद तो फिर भी आसानी से किया जा सकता है, किंतु कविता की लाक्षणिक एवं व्यंजनाप्रधान भाषा का अनुवाद करते समय मूल अर्थ में कुछ कमी अवश्य आ जाती है। अतः काव्यभाषा की इन्हीं जटिलताओं के कारण ही अनुवाद प्रायः असंभव–सा प्रतीत होने लगता है। ऐसा इसलिए होता है, क्योंकि प्रत्येक भाषा की प्रकृति दूसरी भाषाओं से कम या ज्यादा भिन्न होती है और उसी के अनुरूप उस भाषा में शैलीगत तत्त्वों का विकास होता है। फिर भी समान प्रकृति की भाषाओं में तो परस्पर अनुवाद कुछ सीमा तक संभव भी होता है, किंतु असमान प्रकृति की भाषाओं जैसे अंग्रेजी और हिंदी में कविता का अनुवाद प्रायः दुष्कर हो जाता है। और फिर कविता इस कारण भी अन्य साहित्यिक विधाओं से भिन्न होती है, क्योंकि इसमें कुछ ऐसे तत्त्व होते हैं जो अन्य विधाओं में नहीं होते और जिन्हें अनुवाद के लिए अनुवाद की भाषा में सुरक्षित रख पाना कठिन होता है। काव्यानुवाद में अलंकार, प्रतीक, बिंब, सांस्कृतिक–शब्दावली, रस–योजना, छंद–योजना आदि से संबंधित समस्याएँ अनुवाद के समक्ष प्रस्तुत होती हैं। इन्हीं कारणों से कई विद्वानों ने काव्यानुवाद को असंभव माना है।

कुछ विद्वानों ने अनुवाद कर्म के लिए प्रतिकूल मत व्यक्त किए हैं। एक इतालवी कथन के अनुसार अनुवादक को 'प्रवंचक' बताया गया है (Traduttori traditori) फोरेस्ट ने अनुवाद को 'स्वादहीन स्ट्राबेरी' की संज्ञा दी है– "Translation of a literary work is as tasteless as a stewed strawberry." एक अन्य अनुवादक अनुवाद को 'कालीन की उलटी तरफ' मानते हैं– "Translation from one language to another is like gazing at a blemish tapestry with the wrong side out." शावरमैन अनुवाद को 'पाप' ही मानते हैं। हम्बोल्ट तो अनुवाद की परिकल्पना और संकल्पना पर ही प्रश्नचिह्न लगाते हुए प्रतीत होते हैं– "All translation seems to me simply an attempt to solve an unsolvable problem." किंतु इस सब का अर्थ यह नहीं है कि काव्यानुवाद किया ही नहीं जा सकता। वस्तुतः कविता का अनुवाद कठिन तो है किंतु असंभव नहीं है। कितने ही सफल काव्यानुवाद आज हमारे सामने हैं। हरिवंशराय बच्चन ने शेक्सपीयर के हैमलेट, डब्ल्यू॰ बी॰ यीट्स की कविताओं अंग्रेजी रोमांटिक कवियों की रचनाओं और उमर खैयाम की रुबाइयों के जो अनुवाद प्रस्तुत किए हैं, वे मौलिक सजन से किसी भी प्रकार कम नहीं हैं।

यह काव्यानुवाद की विडंबना ही है कि इतना सब होने के बाद भी काव्यानुवाद मूल रचना के समस्त सौंदर्य के बराबर नहीं हो पाता है और मूल की छाया मात्र बनकर रह जाता है। यह सत्य है, किंतु हम यह क्यों भूल जाते हैं कि मूल और अनुवाद में एक मूलभूत अंतर होता है। मूल रचना और अनूदित रचना भला एक जैसी कैसे हो सकती है। ऐसी स्थिति में यह कहना कहाँ तक तर्कसंगत है कि काव्यानुवाद संभव ही नहीं हो सकता। काव्यानुवाद को असंभव मानने वाले शायद यही सोचकर इसे असंभव की संज्ञा देते हैं कि कविता का अनुवाद मूल कृति जैसा स्वाभाविक एवं प्रभावित करने वाला नहीं होता। यह बात काफी हद तक सही है। दरअसल अनुवाद का उद्देश्य एक अजनबी साहित्य एवं संस्कृति की रचना को ऐसे पाठकों तक पहुँचाना होता है जो उससे परिचित नहीं होते और जो उस भाषा से अनभिज्ञ होने के कारण उसका रसास्वादन करने में असमर्थ होते हैं। अनुवाद चाहे किसी भी विधा का हो, वह मूल रचना को उसके समस्त सौंदर्य सहित अधिक से अधिक ऐसे पाठकों तक पहुँचाने का प्रयत्न करता है। किंतु इस प्रक्रिया में मूल रचना का कुछ न कुछ अंश तो पीछे छूट ही जाता है। इसलिए अनुवाद कभी भी शत–प्रतिशत नहीं हो सकता है और वह भी अनुभूति–प्रधान कविता जैसी विधा का। वास्तव में अनुभूति जैसे तत्त्व को अनुवाद प्रक्रिया में पकड़ा ही कैसे जाए जबकि उसका स्वभाव पारानुमा होता है। प्रत्येक लेखक की अपनी अनुभूति होती है, अपनी भाषा होती है और अपना निजी अनुभव होता है। अनुवादक इन तत्त्वों को लाख कोशिश करने पर भी पकड़ नहीं पाता। हाँ, वह अधिक से अधिक उन्हें लक्ष्यभाषा में स्थानांतरित करने का प्रयत्न कर सकता है और वह यह कार्य अपनी पूरी ईमानदारी से करता भी है। इतना होने पर भी मूल लेखक और अनुवादक की अनुभूति, अनुभव और भाषा शत–प्रतिशत समानांतर होंगे अथवा हो सकते हैं, इसमें संदेह ही है। कविता की भाषा तो वैसे भी अन्य विधाओं की भाषा से नितांत भिन्न होती है, क्योंकि गद्यात्मक विधाओं की भाषा जहाँ अपेक्षाकृत सरल होती है, वहीं कविता की भाषा कठिन एवं जटिल हुआ करती है। भाषा की यह जटिलता बिंबों, प्रतीकों, सांस्कृतिक तत्त्वों, अलंकारों आदि काव्यशास्त्रीय विशेषताओं के कारण प्रस्तुत होती है।

काव्यानुवाद करना वास्तव में दोधारी तलवार पर चलने जैसा है, क्योंकि जहाँ अनुवादक को इसकी विशेषताओं के काव्यात्मक सौंदर्य की रक्षा करनी होती है, वहीं ये अनुवाद में कठिनाई भी उत्पन्न करती हैं। ये विशेषताएँ जितनी अधिक होंगी, अनुवाद उतना ही कठिन होगा। काव्यभाषा की ये विशेषताएँ ही अनुवादक के लिए वास्तविक चुनौती बनकर सामने आती हैं। अनुवादक को इस चुनौतियों का सामना करते हुए ही काव्यानुवाद करना पड़ता है। कविता में अत्यधिक जटिल भाषिक प्रयोगों के कारण ही अनुवादक को एक

ओर मूल निष्ठता का उल्लंघन करने जैसा अपराध करना पड़ता है और दूसरी ओर काव्यानुवाद को हू–ब–हू न कर सकने का दोष भी अपने सिर लेना पड़ता है। यदि अनुवादक इन भाषिक प्रयोगों से बोझिल शैली को नज़रअंदाज करते हुए काव्यानुवाद करता है तो वह अनुवाद अधूरा कहलाता है और यदि सिर्फ कथ्य को नज़रअंदाज करके अनुवाद करता है तो भी अधूरा ही कहलाता है। वास्तव में काव्यानुवाद की समस्या यह है कि वह कथ्य और शैली दोनों का ही गठबंधन होता है। और ये दोनों ही कुछ सीमा तक एक–दूसरे पर निर्भर रहते हैं। इन दोनों के योग के अनुपात पर ही काव्यानुवाद की सफलता भी निर्भर करती है। अनुवादक इन दोनों में जितना अधिक तालमेल बैठा पाएगा, काव्यानुवाद उतना ही अधिक सफल कहलाएगा।

(आ) काव्यानुवाद की समस्याएँ

किसी भी साहित्यिक कृति विशेषतया कविता की यह एक प्रमुख विशेषता होती है कि उसके पीछे एक पूरी की पूरी संस्कृति जुड़ी रहती है और उसी के साथ पौराणिक संदर्भ, सामाजिक मान्यताएँ, ऐतिहासिक घटनाएँ एवं पात्र आदि को बिंबों, प्रतीकों और अलंकारों के माध्यम से व्यक्त किया जाता है। इसीलिए कविता का अनुवाद सामान्य गद्य के अनुवाद से अधिक जटिल होता है। संस्कृति के घटकों में अनुवादक पौराणिक मिथकों को और घटनाओं को प्रतीकों के माध्यम से बिंबात्मकता में पिरोता है। इस प्रकार के रचित काव्य का अनुवाद अनेक प्रकार की समस्याएँ प्रस्तुत करता है। इन समस्याओं की विस्तत चर्चा यहाँ जा रही है।

1. अलंकार-योजना

काव्यानुवाद के संदर्भ में सर्वप्रथम प्रमुख समस्या अलंकार–योजना की आती है। मूल लेखक किसी भाव विशेष को अलंकारों के माध्यम से संप्रेषित करता है और अनुवाद में भी उसी भाव विशेष को उसी अलंकार के द्वारा संप्रेषित करना प्रायः असंभव ही होता है। पर फिर भी अनुवादक इस समस्या का समाधान या तो स्वतंत्र और समरूप अलंकार–योजना की सहायता से करता है या फिर मूल की अलंकार–योजना के अधिक निकट पहुँचने की कोशिश करके। हाँ, अर्थालंकारों को लक्ष्यभाषा में सुरक्षित रखने में अधिकांश अनुवादकों ने सफलता प्राप्त की है। इन दोनों ही प्रकार के अलंकारों के संदर्भ में अनुवादक को यह ध्यान रखना चाहिए कि इन्हें सुरक्षित रखने के प्रयास में कहीं मूल का अर्थ अथवा भाव पीछे न छूट जाए। इसलिए अनुवादक की सफलता इस बात में है कि वह मूल के भाव और अलंकार–योजना को यथासंभव लक्ष्यभाषा में उतारने का प्रयास करे। कुछ अलंकारों का अनुवाद तो लगभग असंभव होता है, जैसे श्लेष और यमक।

(i) **श्लेष अलंकार** – श्लेष से अभिप्रायः काव्य में ऐसे शब्द के प्रयोग से है जो एक साथ ही दो अथवा अधिक व्यंजना प्रस्तुत करता है। जब ऐसा श्लेष किसी सांस्कृतिक संदर्भ के लिए प्रयुक्त हुआ हो तो उसका अनुवाद किसी प्रकार संभव नहीं होता। हिंदी में भीष्म, भीम, राम, रावण, दुर्योधन, कुंभकर्ण, कृष्ण, सुदामा आदि सांस्कृतिक नाम श्लेष रूप में प्रयुक्त होते हैं। ये सभी शब्द व्यक्ति विशेष के नाम का तो द्योतन करते ही हैं, साथ ही उसके व्यक्तित्व के गुणों को भी ध्वनित करते हैं, जैसे भीम 'शक्ति' भीष्म 'प्रतिज्ञा', राम 'मर्यादा', रावण 'बुराई', दुर्योधन 'दुष्टता', कुंभकर्ण 'नींदप्रियता' आदि के अर्थों को वहन करते हैं। इन सबका अनुवाद यदि अंग्रेजी लक्ष्यभाषा में किया जाए तो ऐसे ही नाम और उनसे जुड़ी सांस्कृतिक प्रतीकात्मक अर्थछवियों उपलब्ध नहीं हो सकती।

सांस्कृतिक श्लेषों के अतिरिक्त व्यक्तिगत श्लेषों के अनुवाद की समस्याएँ भी आती हैं। ये ऐसे श्लेष होते हैं जिन्हें लेखक अपनी रचना–प्रक्रिया के दौरान प्रयुक्त करता है। उदाहरण के लिए, जयशंकर प्रसाद की 'तुम सुमन नोंचते करते जानी अनजानी' और और तुलसीदास की 'साधु चरित शुभ चरित कपासू, निरस बिसद गुनमय फल जासू' पंक्तियाँ देखी जा सकती हैं। यहाँ प्रसाद की पंक्ति में 'सुमन' दो अर्थों में प्रयुक्त हुआ है– 'फूल' और 'ह्रदय'। यदि अनुवाद अंग्रेजी में किया जाए तो इसमें ऐसा कोई शब्द नहीं मिलेगा जिसके अर्थ फूल और ह्रदय निकलते हों।

(ii) **यमक अलंकार** – ऐसी ही समस्या यमक के अनुवाद में देखने को मिलती है। उदाहरण के लिए, बिहारी के दोहे 'कनक–कनक ते सौगुनी मादकता अधिकाय', तुलसी की पंक्ति 'मण्डलीक मण्डली प्रताप दाय दालिरी', विद्यापति के एक दोहे में 'सारंग' की पाँच बार आवत्ति और एक अन्य दोहे 'तू मोहन के उरबसी ह्वै उर बसी समान' में एक ही शब्द का एक से अधिक बार प्रयोग करके उसमें अर्थगत भिन्नता को दर्शाया गया है। अंग्रेजी में 'कनक', 'सारंग', 'उरबसी–आदि शब्दों के ऐसे पर्यायवाची शब्द उपलब्ध नहीं है। स्पष्ट है कि इनका अनुवाद करना एक असंभव–सी बात होगी।

(iii) **उपमा अलंकार** – काव्यानुवाद में उपमा अलंकारों के अनुवाद की समस्याओं को भी झेलना पड़ता है। इसका अनुवाद प्रायः आसान होता है। उदाहरण के लिए, 'His valour is like a lion' का अनुवाद 'वह शेर की भाँति पराक्रमी है' सहज ही हो सकता है। शारीरिक उपमाओं में शरीर के अंगों की तुलना फूलों, पक्षियों, पशुओं, प्राकृतिक उपादानों आदि से की जा सकती है, जैसे 'हिरणी–सी चाल', 'झील–सी आँखें', 'फूल–सा चेहरा', 'घटाओं–सी जुल्फें', 'कोयल–सी आवाज'

का अंग्रेजी में अनुवाद क्रमशः 'gait like a deer', 'eyes like a lake', 'face like a flower', 'locks like ;clouds', 'voice like a nightingale's melody' आदि किया जा सकता है।

(iv) **अनुप्रास अलंकार** – अनुप्रास अलंकार का अनुवाद करते समय समस्या यह सामने आती है कि स्रोतभाषा में पद के अंतर्गत वर्णों की आवत्ति जिस प्रकार होती है वैसे ही आवत्तिपरक वर्ण लक्ष्यभाषा में प्रायः नहीं मिलते। फिर भी कुछ सीमा तक अनुवादक इसमें सफल होने का प्रयास अवश्य कर सकता है, जैसे प्रसाद की इस पंक्ति –

'रो–रोकर सिसक–सिसक कर कहता अपनी करुण कहानी'का अंग्रेजी में अनुवाद इस प्रकार किया जा सकता है–

'I sob and say my sad story or sorrow'.

इसी संदर्भ में निम्नलिखित वाक्य देखें –

(1) How high His Highness holds his haughty head.

(2) Bruised breeze blows behind the blemish banks of the river.

निश्चित रूप से ऐसे वाक्यों को आनुप्रासिक ध्वनिसाम्यता प्रायः अनुवाद में संभव नहीं हो पाती है। स्रोतभाषा में पद के अंतर्गत वर्णों की आवत्ति जिस प्रकार होती है, वैसे ही आवत्तिपरक वर्ण लक्ष्यभाषा में न मिल पाने के कारण ही काव्यानुवाद में अलंकारों का अनुवाद प्रायः अनुवाद की सीमा बन जाता है।

विभिन्न अलंकारों के कुछ सफल उदाहरण यहाँ प्रस्तुत हैं–

पहला उदहारण फिट्ज्ज़ेराल्ड की रुबाई का है जिसका अनुवाद बच्चन जी ने किया है–

A, make the most of what we yet may spend
Before we too into the Dust descent
Dust into Dust, and under Dust, to lie,
Sans Wine, sans Song, sans singers, and sans End.
अरे, अब भी जो कुछ है शेष भोग वह सकते हम स्वच्छंद,
राख में मिल जाने के पूर्व न क्यों कर ले जी भर आनंद,
गड़ेंगे जब हम होकर राख, राख में, तब फिर कहाँ बसंत,
कहाँ स्वरकार, सुरा, संगीत, कहाँ इस सूनेपन का अंत।

मूल अवतरण में कवि ने मानव जीवन की क्षणभंगुरता एवं अस्थिरता के भाव को अभिव्यक्ति प्रदान करने का प्रयास किया है। इसके लिए मूल कवि ने 'Dust' शब्द की पुनरावत्ति की है और इसी भाव को अनुवादक ने हिंदी में 'राख' शब्द की पुनरावत्ति द्वारा प्रस्तुत किया हैं इसी प्रकार मत्यु के पश्चात् के वातावरण की रचना के लिए मूल कवि ने अंतिम पंक्ति में 'S' ध्वनि की पुनरावत्ति की है और ऐसा ही अनुवाद में भी 'स' ध्वनि की पुनरावत्ति द्वारा किया गया है। इस प्रकार मूल और अनुवाद में भाव–साम्य और अलंकार–साम्य को सुरक्षित रखने का अच्छा प्रयास किया गया है।

ऐसे ही डब्ल्यू॰ बी॰ ईट्स की पंक्ति 'But dear, cling close to me' का बच्चन जी द्वारा किया गया हिंदी अनुवाद 'लेकिन प्यारी, अब तुम मेरे आलिंगन से अलग न होना देखा जा सकता है। बच्चन जी ने कभी अलग न होने की भावना और उससे जुड़ी आत्मीयता को सफलतापूर्वक सुरक्षित रखा है। 'cling close' की अनुप्रासता 'अब तुम मेरे आलिंगन से अलग न होना' में भी दष्टव्य है।

अर्थालंकारों के संदर्भ में जो अनुवादकों ने अत्यधिक सफलता प्राप्त की है। इसका एक अच्छा उदाहरण हमें जॉन कीट्स की पंक्तियों का यतेन्द्र कुमार द्वारा किए गए अनुवाद में देखने में मिलता है–

It a touch sweet Pleasure melteth,
Like to bubbles when rain petleth.
आनन्द मधुर तो गल जाता छूने से
पानी में जाते फूट बगूले जैसे।

कोट्स ने अपनी पंक्तियों में मानव जीवन की क्षणभंगुरता की तरह आनंद की क्षणभंगुरता का भाव उपमा द्वारा अभिव्यक्त किया हैं ठीक यही भाव उपमा के द्वारा अनुवादक ने भी अभिव्यक्त किया है। अनुवादक की सफलता तीन प्रकार के साम्य से देखी जा सकती है – प्रथम, भाव–साम्य; द्वितीय, अलंकार–साम्य और ततीय, ध्वनि–साम्य (bubbles pelteth, बगुले/पानी–

(2) **मिथकीय-सांस्कृतिक अभिव्यक्तियाँ**

काव्यानुवाद में दूसरी प्रमुख समस्या मिथकीय एवं सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों के लिए लक्ष्यभाषा में समतुल्य अभिव्यक्तियों के उपलब्ध

न होने के संदर्भ में हैं। ये अभिव्यक्तियाँ पात्रों एवं स्थानों के नामों, रचनाओं के शीर्षकों, घटनाओं आदि के रूप में प्रस्तुत होती हैं। ये सभी अपने पीछे एक संस्कृति विशेष को साथ लिए हुए चलते हैं। ऐसी स्थिति में अनुवादक का इनकी पष्ठभूमि से अवगत होना अति आवश्यक होता है अन्यथा वह अनुवाद के साथ न्याय नहीं कर पाएगा। संस्कृति प्रत्येक राष्ट्र व समाज की अपनी होती है और प्रत्येक रचनाकार अपनी रचना में अपनी संस्कृति को अपने ढंग से व्यक्त करता है। किंतु अनुवादक के लिए भाषा व संस्कृति दोनों ही नई होती हैं। अतः वह संस्कृति के प्रति प्रायः उतना सहज नहीं हो पाता और अनुवाद के साथ पूर्ण न्याय नहीं कर पाता। उदाहरण के लिए –

क्षमा बड़न को चाहिए छोटन को उत्पात।
क्या हरि को घटि गयो जो भगु मारी लात।।

पंक्तियों में वर्णन किये गए पौराणिक मिथक से परिचित होना अनुवादक के लिए आवश्यक है। इसी प्रकार सूर की निम्न पंक्तियों–

गज निरखी फहरानि वसन की।
ललकि लग्यौ मुख कमल विलोकन।
भूल गयौ सुधि ग्राह ग्रसन की।

में मगरमच्छ के मुँह में फँसे उस गज की पौराणिक कथा का उल्लेख है, जिसकी पुकार सुनकर विष्णु भगवान गरूड़ पर सवार होकर रक्षा के लिए दौड़े आए थे। यहाँ विचारणीय बात यह है कि अनुवाद की भाषा में न तो गरुड़, विष्णु, पीताम्बर आदि के लिए समतुल्य पर्याय हैं और न ही इस प्रकार की कोई पौराणिक कथा। ऐसे स्थलों पर व्याख्या ही संभव होती है, अनुवाद नहीं।

हिंदी की मध्यकालीन कविता में इंगला–पिंगला, कुण्डलनी, सुषुम्ना, कमल चक्र, ब्रह्मरंध्र, सत्पसोपान, अनहदनाद आदि शब्दों का बार–बार प्रयोग हुआ है। हठयोग साधना के कितने ही पक्षों का जिक्र वहाँ पर किया गया है। द्वैतवाद, अद्वैतवाद, शुद्ध शुद्धाद्वैतवाद, द्वैतवाद जैसी दार्शनिक शब्दावली का बहुतायत में प्रयोग हुआ है। कबीर और जायसी की रहस्यवादी एवं दार्शनिक प्रवत्तियाँ जब हम भारतवासियों की समझ में नहीं आती हैं तो अनुवाद की भाषा का पाठक इन्हें कैसे आत्मसात् कर सकेगा? इसी प्रकार 'चूहा' का सामान्य अर्थ जानवर है, किंतु पौराणिक संदर्भ में 'गणेश जी की सवारी' है और ऐतिहासिक संदर्भों में 'पहाड़ी चूहा' का अर्थ 'शिवजी' हो जाता है। 'गणेश' सामान्य व्यक्ति का नाम भी है और 'लक्ष्मीपति' भी। मुस्लिम संस्कृति में 'खतना', 'करबला', 'कयामत' आदि अनेक संदर्भ अनुवाद में समस्या उत्पन्न करते हैं।

अनुवादक प्रायः इन सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों के लिए लक्ष्यभाषा में समतुल्य अभिव्यक्तियाँ खोजने में असफल ही रहता है और यही स्थिति अनुवाद की सीमा के रूप में प्रस्तुत होती है। उदाहरण के लिए, 'Satan', 'Christ', 'Lucifer' जैसे पात्रों के नामों 'Pandemonium' और 'Garden of Eden' जैसे स्थानों के नामों 'The Fire Sermon' और 'The Game of Chess' जैसे शीर्षकों तथा 'Crucification of Christ' और 'Satanic Fall' जैसी घटनाओं के लिए हिंदी में समतुल्य अभिव्यक्तियाँ उपलब्ध नहीं हैं। इनके लिए समीपतुल्य अभिव्यक्तियों से काम चलाना ही अनुवादक की विविशता होती है। उदाहरण के लिए 'Satan' के लिए 'शैतान', 'Christ' के लिए 'बुद्ध', 'Lucifer' के लिए 'यमराज', 'Pandemonium' के लिए 'लंका' 'Garden of Eden' के लिए 'स्वर्ग', 'The Fire Sermon' के लिए 'अग्नि उपदेश', The Game of Chess' के लिए 'शतरंज का खेल' जैसी समीपतुल्य अभिव्यक्तियों का प्रयोग किया जा सकता है। यद्यपि शैतान, बुद्ध, यमराज, लंका, स्वर्ग आदि बिलकुल उसी अर्थ के वाहक नहीं हैं जिस अर्थ में अंग्रेजी के शब्दों को किया गया है।

(3) **प्रतीक-योजना**

प्रतीकों के अनुवाद की समस्या भी काव्यानुवाद में एक महत्त्वपूर्ण समस्या होती है। मूल रचना की काव्यभाषा में ये प्रतीक कई प्रकार से संयुक्त रहते हैं प्रतीक मूल रचना में विभिन्न प्रकार की प्राकृतिक स्थितियों, सामाजिक–सांस्कृतिक संदर्भों एवं पात्रों की विभिन्न मानसिकता को दर्शाते हैं। लक्ष्यभाषा में प्रतीकों का अनुवाद करते समय अनुवादक को इस तथ्य की ओर सतर्क रहना चाहिए कि उस प्रतीक विशेष की अर्थगत संवेदना स्रोतभाषा एवं लक्ष्यभाषा में एक जैसी हो और उनकी गुणात्मकता में अधिक अंतर न हो। प्रतीकों के अनुवाद में सबसे अधिक कठिनाई उस समय आती है जब अनुवादक उस प्रतीक की अर्थगत, संदर्भगत एव गुण संबंधी पष्ठभूमि से परिचित नहीं होता है। ऐसा प्रायः विदेशी संस्कृतिक से संबंधित प्रतीकों के अनुवाद में होता है। अपने देश की जानी–पहचानी परिस्थितियों से संबंधित प्रतीकों के अनुवाद में अधिक कठिनाई नहीं आती। उदाहरण के लिए, अंग्रेजी के रोमांटिक कवियों की कविताओं में प्रयुक्त किए गए अधिकांश प्रतीक प्रकृति से लिए गए हैं और उनका अनुवाद सहज ही किया जा सकता है। शैली की कविता **ओड टू द वेस्ट विंड** में 'वेस्ट विंड' और 'डेड लीव्य' क्रमशः 'परिवर्तन' और 'पुरानी मान्यताओं' के प्रतीक हैं। ऐसे ही फूल, कांटे, सागर, बादल, आकाश आदि प्रतीकों का अनुवाद सहज ही हो सकता है।

सांस्कृतिक संदर्भों के सूचक प्रतीकों का अनुवाद अपेक्षाकृत कठिन होता है, जैसे 'सुदामा के चावल', 'मारीच की चाल', 'जटायु–सा विवश', 'चित्रकूट का घाट', 'लक्ष्मण रेखा', 'चक्रव्यूह की रचना' आदि। स्पष्ट है कि इनके पीछे सांस्कृतिक संदर्भ हैं जिनका ज्ञान

अनुवादक के लिए आवश्यक होता है। लक्ष्यभाषा में क्योंकि इनके समतुल्य पर्याय उपलब्ध नहीं होते, इसलिए इनका भावानुवाद ही संभव होता है।

प्रतीकों का अनुवाद करते समय इस बात पर ध्यान देना होता है कि स्रोत भाषा में प्रतीकात्मक रूप में जो वस्तु ग्रहण की गई है, वह वस्तु लक्ष्यभाषा में वही अर्थ देती है या नहीं, जैसे–

"हर शाख पे उल्लू बैठा है।
अंजामे गुलिस्तां क्या होगा।"

का अर्थ मूल व भाषा में यह है कि हर पग पर अनिष्टकारी लोग बैठे हैं जो देश का उपवन उजड़ कर ही रहेगा। किंतु इसमें 'उल्लू' प्रतीक की अमरीकन अंग्रेजी में यह व्यंजना सार्थक नहीं होगी, क्योंकि वहाँ 'उल्लू' विवेक का प्रतीक है। इसी प्रकार चूहे, गधे, बैल आदि शब्दों का भी प्रतीकात्मक प्रयोग किया जाता है, परंतु अंग्रेजी में इनके पर्यायवाची शब्दों का प्रयोग बहुत सोच–समझकर करना होगा। उदाहरण के लिए, 'गधे' का अंग्रेजी पर्याय 'donkey' है किंतु 'मूर्खता के लक्षणों' की दष्टि से 'donkey' शब्द का प्रयोग गलत होगा। इसके लिए 'ass' शब्द का प्रयोग करना होगा। इसी प्रकार सूरज का चमकना पश्चिमी देशों में, जहाँ अधिक सर्दी पड़ती है, 'आनंद'का प्रतीक है। लेकिन भारत में स्थिति इसके विपरीत है क्योंकि यहाँ सूरज का चमकना आनंद का प्रतीक न होकर सामान्य स्थिति का प्रतीक है। इसी प्रकार 'कमीनेपन' को लक्षित करने के लिए कुत्ते का अंग्रेजी पर्याय 'dog' न होकर 'cur' करना होगा। इसी प्रकार 'वर्षा' और 'बादल' जैसे शब्द भारतवर्ष में हर्ष और उल्लास के प्रतीक हैं, किंतु पश्चिमी देशों में उदासी के सूचक हैं। मोहन राकेश के 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक में मल्लिका को वर्षा में भीगना कितना सुखद प्रतीत होता है, यह सब जानते हैं। ऐसी स्थिति में अंग्रेजी में अनुवाद करते समय सावधानी बरतने की आवश्यकता होती है।

(4) **बिंबों का अनुवाद**

काव्यानुवाद में अगली समस्या बिंबों के अनुवाद की समस्या के रूप में सामने आती है। उदाहरण के लिए, जर्मन भाषा के 'Hen' का हिंदी लक्ष्य भाषा में बिंबानुवाद 'मुर्गी' किया जाए तो यह सर्वथा अनुचित होगा, क्योंकि जर्मन भाषा में यह कुलटा स्त्री का वाचक है। इसलिए अनुवादक को दो भाषाओं का यह अंतर ध्यान में रखकर इसका बिंबानुवाद 'मुर्गी' के स्थान पर 'कुलटा स्त्री' करना होगा। इसी प्रकार अंग्रेजी में 'Hen' का हिंदी लक्ष्यभाषा में 'मुर्गी' के स्थान पर 'कमजोर दिल' करना होगा क्योंकि अंग्रेजी में यह 'chicken hearted' का वाचक है।

इन समस्याओं के अतिरिक्त काव्यानुवाद में अनुवादक को छंद–योजना, रस–योजना, ध्वनि–योजना इत्यादि समस्याओं से भी जूझना पड़ता है और ऐसी समस्याओं का समाधान वह अपनी प्रतिभा एवं अनुभव के आधार पर यथास्थिति कर सकता है।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि काव्यानुवाद किसी अनुवादक के लिए एक गंभीर चुनौती के रूप में प्रस्तुत होता है। इस संदर्भ में डॉ॰ सुरेश सिंहल के शब्दों को उद्धत करते हुए इस चर्चा के निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि "काव्यानुवाद का कार्य एक जटिल कार्य है, मूल भाषा की साहित्यिक संवेदना अपनी प्रकृति में इतनी विशिष्ट होती है कि उसका दूसरी भाषा में अवतरण प्रायः असंभव–सा होता है। इसी कारण स्रोतभाषा और लक्ष्यभाषा में भाव और शैली के आधार पर अंतर काव्यानुवाद की स्वाभाविक प्रक्रिया का परिणाम है जो आधुनिक अनुवाद–चिंतन के संदर्भ में काव्यानुवाद की उस संकल्पना को दर्शाता है जिसे पुनःसर्जन कहा जाता है।"

5.6 कहानी अनुवाद और संबंधित समस्याएँ

कहानी अनुवाद

साहित्यिक विधाओं के अनुवाद के संदर्भ में प्रायः यह समझा जाता है कि काव्यानुवाद और नाटकानुवाद की तुलना में कहानी का अनुवाद सरल एवं आसान है। किंतु वास्तव में ऐसा है नहीं, क्योंकि मूलतः साहित्यिक अनुवाद अपने आप में एक सजनात्मक प्रक्रिया है। अनुवाद चाहे कविता का हो, नाटक का हो, या फिर कहानी का; बहुत–सी बातें तो इनमें एक जैसी ही होती हैं। इसलिए अनुवादक सजनशीलता के कर्त्तव्य से नहीं बच सकता। कहानी के अनुवादक को एक कलात्मक दायित्व निभाना होता है और यह कलात्मकता उसके सजनात्मक प्रयोग की क्षमता पर ही निर्भर करती है।

यूँ तो काव्यानुवाद और नाटकानुवाद में बहुत–सी समस्याओं पर विचार किया जा चुका है, किंतु फिर भी विधा की भिन्नता के कारण कई पहलू अछूते रह जाने की संभावना बनी रहती है। काव्यानुवाद और नाटकानुवाद में तथा कहानी के अनुवाद में एक आधारभूत अंतर लेखकीय अनुभूति के स्तर पर होता है। इस अनुभूति की अभिव्यक्ति कविता के अनुवाद में अधिक अमूर्त एवं सूक्ष्म होती है और कहानी के अनुवाद में अपेक्षाकृत कम होती है। संरचना के आधार पर कहानी एक संश्लिष्ट साहित्यिक विधा है जिसमें अन्य विधाओं के गुण भी घुले–मिले रहते हैं। नाटक के विभिन्न पात्रों के समान उपन्यास और कहानी में भी विभिन्न पष्ठभूमि एवं भाषा

के द्वारा अपने पात्रों के समान उपन्यास और कहानी में भी विभिन्न पष्ठभूमि एवं भाषा के द्वारा अपने भावों की अभिव्यक्ति करते हैं, कथानक को गति प्रदान करते हैं और अन्य पात्रों एवं घटनाओं के लिए अपनी प्रतिक्रियाएँ प्रेषित करते हैं। अनुवादक को कहानी के अनुवाद में इन सभी प्रकार की विविधताओं द्वारा उत्पन्न की गई समस्याओं पर विचार करना होता है। इसके साथ ही कहानी में अन्य विधाओं की तरह ही लेखक के अपने विचार भी होते हैं जिनकी अभिव्यक्ति वह उस रचना विशेष में करता है। अनुवादक को मूल लेखक की दार्शनिक विचाराधारा को समझकर अनुवाद करना होता है। इसके अतिरिक्त कहानी व उपन्यास में भी कविता व नाटक की भाँति काव्यात्मकता का पुट रहता ही है। कहानी व उपन्यास का अर्थ बिल्कुल सपाट बयानी नहीं होता है। कहानी व उपन्यास के कुछ अंशों में, चाहे वे गद्य में हों या पद्य में, तरल अनुभूति को अपने में समाहित किए हुए काव्यात्मकता उपस्थित रहती ही है। यह बात अनेक कहानियों व उपन्यासों पर लागू होती है, चाहे, वे किसी भी साहित्यकार के हों और चाहे किसी भी भाषा में लिखे हुए हों।

इस विवेचन से स्पष्ट है कि कहानी के अनुवादक को उन सभी समस्याओं का भी सामना करना पड़ता है जो कविता व नाटक के अनुवाद में सामने आती हैं। इसलिए उपन्यास व कहानी में अन्य विधाओं की विशेषताओं का भी संश्लेषण होता है और इसी से अनुवादक की समस्या भी विकट हो जाती है। वास्तव में अनुवाद शब्दों और वाक्यों का नहीं होता, हालांकि प्रक्रिया वैसी ही है, बल्कि ऐसे भावों का होता है जो मूल लेखक की विशिष्ट भाषा–शैली के द्वारा अभिव्यक्त किए जाते हैं। दूसरे शब्दों में, इसका अर्थ यह हुआ कि कहानी के अनुवाद की विशिष्टता उसके कथ्य और शैली पर निर्भर करती है। इस प्रकार के अनुवाद में भाव–भंगिमाओं, शैली की सूक्ष्मताओं, अर्थ–छायाओं, लक्ष्यार्थ एवं व्यंग्यार्थ अभिव्यक्तियों, प्रतीकों, बिंबों, अलंकारों एवं काव्यात्मक प्रयोगों के रूप में अनेक समस्याएँ अनुवादक के सामने प्रस्तुत होती हैं। इन सबके लिए अनुवादक को दोनों समाजों, संस्कृतियों एवं भाषाओं की पूरी पकड़ होनी चाहिए, अन्यथा उसे सफलता मिलने में संदेह ही रहता है।

कहानी के अनुवाद के संबंध में मूलनिष्ठता के प्रश्न पर भी विचार करना प्रासंगिक होगा। काव्यानुवाद और नाटकानुवाद में अनुवादक को पुनःसजन की प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है। इन दोनों ही विधाओं के अनुवाद में अनुवादक को अधिक छूट देनी पड़ती है और ऐसा न करने पर अनुवाद सहज, स्वाभाविक एवं बोधगम्य नहीं बन पाता। इन दोनों विधाओं की अनूदित रचनाएँ प्रायः पुनःसजित ही होती हैं। उसमें मूल लेखक के साथ अनुवादक का व्यक्तित्व भी स्पष्ट झलकता है। अनुवाद की शैली उसके व्यक्तित्व की सूचक होती है। किंतु कहानी के अनुवाद में स्थिति कुछ भिन्न होती है। इसमें अनुवादक को एक ओर मूल रचना के प्रति वफादारी निभानी होती है और दूसरी ओर भाषा की सहजता, स्पष्टता और बोधगम्यता को भी बनाए रखना होता है। इसलिए अनुवादक को यथासंभव छूट तो देनी ही पड़ती है। किंतु इस छूट को भाव के स्तर पर अधिक नहीं लिया जा सकता, क्योंकि ऐसा करना मूल लेखक से नाइंसाफी होगी।

कहानी के अनुवाद का स्वरूप मूलरूप से वर्णनात्मक होता है। अतः यह आवश्यक हो जाता है कि अनूदित रचना में वर्णनात्मकता का वह गुण रोचक एवं आकर्षक हो। ऐसा न होने पर वह अनुवाद नीरस एवं निर्जीव हो जाता है और अनुवादक का सारा परिश्रम व्यर्थ चला जाता है। कहानी का अनुवाद रोचक एवं तर्कपूर्ण होना ही चाहिए। तभी यह पाठक को प्रभावित कर सकेगा। इसे रोचक एवं आकर्षक बनाने के लिए भाषा की सहजता, बोधगम्यता एवं प्रवाहमयता आवश्यक होती है। अनुवादक को उपन्यास व कहानी के अनुवाद में ये सभी गुण लक्ष्यभाषा में अवतरित करने चाहिए। प्रायः उपन्यास व कहानी में मूल लेखक की विचारधारा एवं दष्टिकोण का दार्शनिक अथवा मनोवैज्ञानिक विवेचन किया जाता है। हो सकता है ऐसे चिंतन–प्रधान अंशों का अनुवाद करते समय रोचकता कुछ कम हो जाए, किंतु अनुवादक को यह ध्यान में रखना चाहिए कि इन दोनों में निरंतर संतुलन बना रहे।

कहानी अनुवाद की समस्याएँ

(1) **सांस्कृतिक परिवेश का पुनः सजन** – कहानी अनुवाद की सर्वप्रथम एवं मूलभूत समस्या मूल कृति के सांस्कृतिक परिवेश का लक्ष्यभाषा में पुनः सजन है। नाटकानुवाद की भाँति उपन्यास व कहानी के अनुवाद में भी अनुवादक को मूल रचना की सांस्कृतिक पष्ठभूमि तथा मूल लेखक की मनोभूमि की अच्छी जानकारी होनी चाहिए। अनुवादक की समस्या मूल कृति के परिवेश के अनुसार ही कम–ज्यादा होती है। यह परिवेश विदेशी, भारतीय, आंचलिक, समसामयिक, तत्कालीन आदि हो सकता है। परिवेश अगर विदेशी, आंचलिक और तत्कालीन है तो समस्या अधिक होती है और यदि भारतीय एवं समकालीन है तो समस्या कम होती है। मूल कृति के विदेशी वातावरण को अनुवाद में सुरक्षित रखने के लिए अनुवादक को दोनों समाजों व संस्कृतियों का गहन अध्ययन करना पड़ता है। विदेशी संदर्भ में दोनों संस्कृतियाँ एक–दूसरे से इतनी घुली–मिली नहीं होती जबकि भारतीय संदर्भ में यह अंतर अपेक्षाकृत कम हो जाता है।

मूल कृति के सांस्कृतिक परिवेश के संदर्भ में अनुवादकों में मतभेद है। एक वर्ग का कहना है कि विदेशी कृति के पात्रों के

नामों, भौगोलिक नामों व अन्य सांस्कृतिक तत्त्वों का भारतीयकरण करना चाहिए। ऐसा न करने पर भारतीय पाठक के रसास्वादन में बाधा उत्पन्न होती है। दूसरे वर्ग का कहना है कि मूल नामों को ज्यों–का–त्यों रखना चाहिए, क्योंकि अनुवाद में मूल संवेदना और परिवेश को सुरक्षित रखा जाना चाहिए। वस्तुतः रूपांतरण में जो यह परिवर्तन हो भी सकता है, किंतु अनुवाद में नहीं होना चाहिए, क्योंकि अनुवाद का पठन–पाठन किसी अन्य देश, समाज व संस्कृति से परिचित होने की जिज्ञासा की पूर्ति हेतु किया जाता है। यदि हम जापान, यूरोप या अफ्रीका की कोई रचना अपनी भाषा में अनूदित रूप में पढ़ते हैं तो सिर्फ इसलिए कि हम वहाँ की सांस्कृतिक पष्ठभूमि से अवगत होना चाहते हैं। नामों के बदलने से हम विदेशी रचना को पढ़ने के सुख से वंचित हो जाते हैं।

(क) **विदेशी सांस्कृतिक परिवेश** – विदेशी सांस्कृतिक परिवेश के पुनःसजन के उदाहरण के लिए यहाँ चेखव की प्रसिद्ध कहानी – द ग्रीफ़ का एक अंश प्रस्तुत है। यह एक छोटी किंतु अत्यंत मार्मिक कहानी है। इसका समस्त वातावरण मानो दुःख के गहरे सागर में डूबा हुआ है। यह मनुष्य की निर्मोही और स्वार्थपूर्ण प्रकृति पर एक दुःखभरी टिप्पणी है। यह मानव की मानव के प्रति अमानवीयता और उदासीनता को स्पष्ट करती है। आज के संसार में भ्रातत्व–भाव पूर्णतया समाप्त हो गया है। आइओना का इकलौता पुत्र मर चुका है। उसका हृदय दुःख से फटा जा रहा है। हर कोई जो उससे मिलता है, उससे बातें करके वह अपने दिल को बोझ हल्का करना चाहता है, किंतु उसे केवल निर्मम उपेक्षा ही प्राप्त होती है। उसका मजाक उड़ाया जाता है। सारी दुनिया में उसे कोई ऐसा व्यक्ति दिखाई नहीं देता जो उसके दुःख की कहानी को ध्यान से सुन सके। इसलिए वह अपने घोड़े के पास जाता है और अपने पुत्र की मत्यु की सारी कहानी सुनाता है। घोड़ा शांतिपूर्वक अपने स्वामी की बात सुनता रहता है। इससे आइओना के दिल का बोझ कुछ हल्का हो जाता है। पशु मनुष्य से बेहतर साबित होता है। सारी कहानी में एक–एक शब्द जैसे दुःख का पर्याय बन गया है। ऐसी कहानी के वातावरण को हिंदी में उतारना वास्तव में कठिन कार्य है। ऐसी स्थिति तो हमारे यहाँ मिल जाएगी, किंतु भौगोलिक वातावरण की दष्टि से रूस और भारत में अंतर है। कहानी के प्रारंभिक अवतरण को यहाँ प्रस्तुत करना चाहूँगा –

It is twiligh. A thick wet snow is slowly twirling around the newly lighted street lamps, and lying in soft thin layers on roofs, on horses backs, on people's shoulders and hats. The cab driver Iona Potapove is quite white and looks like a phantom; he is bent double as far as a human body can bend double; he is seated on his box, he never makes a move. If a whole snow drift fell on his, if seems as if he would not find it necessary to shake it off. His little horse is also quite white and remains motionless; its immobility, its angularity, and its straight wooden-looking legs, even close by, give it the appearance of a gingerbread horse worth a kopek. It is, no doubt, plunged in deep thought. If you were snatched from the plow, from your usual gray surroundings, and were thrown into this sloughtful of monstrous lights, unceasing and hurrying people, you too would find it difficult not to think. (Checkhov, The Grief)

शाम का धुँधलका घिर आया है। गलियों की बत्तियाँ अभी–अभी जली है। उनके इर्द–गिर्द गीली बर्फ की मोटी तह सरक रही है। इमारतों की छतों पर बर्फ की नर्म–नर्म तहें जमा हो रही हैं। रास्तों में चल रहे घोड़ों की पीठों, लोगों के कंधों और टोपों पर भी बर्फ पड़ रही है। कोचवान, आइओना पोटापोव बर्फ की तहों के कारण एक भूत के समान लग रहा है। वह बिल्कुल नीचे झुका हुआ बैठा है। घोड़ा गाड़ी भी फिसल कर उसके ऊपर आ गिरे तो भी ऐसा लगेगा कि वह इसे अपने ऊपर से हटाने की कोशिश नहीं करेगा। उसका छोटा–सा घोड़ा भी बर्फबारी से सफेद हो गया है। वह भी बिना हिले–जुले अपनी जगह पर खड़ा है। अपनी विचित्र मुद्राओं के कारण वह असली घोड़ा दिखाई नहीं दे रहा है, मात्र घोड़े का खिलौना लग रहा है। निस्संदेह वह किन्हीं गहरे विचारों में डूबा हुआ हे। यदि तुम्हें भी तुम्हारी हर रोज वाली जगह से हटाकर इस तरह की बर्फ की दलदल में फेंक दिया जाए, तो शायद तुम भी सोचने पर मजबूर हो जाओगे . . . . बर्फ की एक ऐसी दलदल जो डरावनी किस्म की रोशनियों से भरी हो . . . . जहाँ लगातार आते–जाते लोगों का शोरगुल सुनाई दे रहा हो।

प्रस्तुत अवतरण में 'he is seated on his box', 'if a whole snowdrift fell on him', 'the appearance of a gingerbread horse', 'worth a kopek', 'if you are snatched from a plow.' आदि वाक्यांशों के अनुवाद में अतिरिक्त सतर्कता बरतनी चाहिए, क्योंकि ये मूल कृति के सांस्कृतिक वातावरण के सूचक हैं। अनुवादक को 'box', 'snowdrift', 'ginerbread horse', 'kopek' आदि शब्दों के अर्थ का ज्ञान अर्जित करने के उपरांत ही अनुवाद कार्य में प्रवत्त होना चाहिए।

(ख) **भारतीय संस्कृति का परिवेश** – मूल कृति के वातावरण को लक्ष्यभाषा में पुनःसजित करने के संदर्भ में दूसरा भेद भारतीय संस्कृति के परिवेश से जुड़ा है। निश्चय ही विदेशी परिवेश की तुलना में भारतीय परिवेश को लक्ष्यभाषा में उतारना आसान होता है। किंतु यह इस बात पर निर्भर करता है कि अनुवादक को दोनों भाषाओं व संस्कृतियों का कितना ज्ञान है और इन दोनों में कितनी दूरी है। यह दूरी जितनी कम होगी, अनुवाद उतना ही आसान होगा और यह दूरी जितनी अधिक होगी, अनुवाद उतना ही कठिन होता जाएगा। राजेंद्र सिंह बेदी द्वारा उर्दू में लिखे गए उपन्यास एक चादर मैली–सी का अनुवाद यदि हिंदी, पंजाबी, या

फिर किसी अन्य उत्तर भारत की भाषा में किया जाए तो समस्या इतनी विकट नहीं होगी, क्योंकि इनके रीति–रिवाजों में काफी हद तक समानता पाई जाती है। लेकिन यदि इसका अनुवाद मलयालम, तमिल, कन्नड़ में किया जाए या फिर किसी विदेशी भाषा में किया जाए तो अनुवाद उतना ही कठिन होता जाएगा। इस उपन्यास में 'मैली चादर' का संबंध बड़े भाई की विधवा का छोटे भाई से ब्याह कर देने से संबंधित है। यह अंतर भारत के कुछ हिस्सों में काफी प्रचलित है। 'चादर' का प्रयोग विधवा को आंशिक सुरक्षा प्रदान करने के लिए और 'मैली' का प्रयोग भावनात्मक एवं आर्थिक स्तर पर असुरक्षा भाव का भाव संप्रेषित करने के लिए किय जाता है। इस उपन्यास के शीर्षक का अनुवाद किसी भी लक्ष्यभाषा में करते समय इस सामाजिक प्रथा की विवशता के भाव को संप्रेषित नहीं किया जा सकेगा। भारतीय भाषाओं में तो फिर भी काम चल सकता है, किंतु विदेशी भाषा में कठिनाई होगी। इसी प्रकार रासो और मंगल का संबंध पहले माँ–बेटे का था, किंतु अब उन्हें पति–पत्नी की भूमिका निभानी पड़ेगी। इसके कारण जो द्वन्द्व होगा, उसे संप्रेषित करने में ही पहले जैसी ही समस्या सामने आएगी। एक अन्य शब्द 'सौत' में निहित बहु–विवाह का भाव भी ऐसी ही समस्या उत्पन्न करता है। यद्यपि अनेक समाजों में बहु–विवाह की प्रथा प्रचलित है, किंतु 'सौत' में निहित प्रतिद्वन्द्वता, ईर्ष्या एवं अधिकार जैसे सूक्ष्म भावों को अनुवाद में सुरक्षित रखते समय भी समस्या होगी। भारतीय पाठक तो फिर भी इस भाव को पकड़ ही लेगा, किंतु विदेशी पाठक के लिए कठिनाई हो सकती है। इसी उपन्यास में कई ऐसे वाक्यांश हैं जिनका अनुवाद भारतीय पाठकों के लिए समझना आसान है, किंतु विदेशी पाठकों के लिए कठिन। उदाहरण के लिए, 'सब खिली कपास की तर', 'गरीब की जोरू सबकी भाभी',

मूल

(i) remained dreaming in the sun
(ii) shop had gone
(iii) Adults disdained them
(iv) The city had swallowed up
(v) great battles were fought
(vi) beaten but liberated kite
(vii) string was cut
(ix) changed hands

सामान्य अनुवाद

(i) धूप में सपने लेता रहा
(ii) दुकान चली गई थी
(iii) बड़े लोग इनसे घणा करते थे
(iv) शहर निगल गया था
(v) महान् युद्ध लड़े जाते थे
(vi) पिटी हुई और स्वतंत्र पतंग
(vii) धागा कट जाता
(viii) नीले व अनजाने स्थान पर
(ix) हाथ बदले

प्रस्तावित अनुवाद

(i) धूप में बैठा सपने लेता रहा
(ii) दुकान जाती रही थी
(iii) युवा लोग उनसे घणा करते थे
(iv) शहर में विलीन हो गया था
(v) पतंगबाजी के बड़े–बड़े मुकाबले हुआ करते थै
(vi) हारी हुई और काटी हुई पतंग
(vii) डोर कट जाती
(viii) नीले आकश में
(ix) आदान–प्रदान किया

इन वाक्यांशों के अनुवाद को ध्यान में रखकर किया गया अनुवाद निश्चय ही रोचक, प्रवाहमयी एवं सहज होगा।

(3) **सही पर्यायों का चयन**

कहानी के अनुवाद की तीसरी समस्या अर्थ के स्तर पर सही पर्यायों व वाक्योशों के चयन की है। इस संदर्भ में कुछ उदाहरण सॉमरसेट मॉम की कहानी 'द एंट एण्ड द ग्रासहापर' से प्रस्तुत है –

मूल

(i) philander
(ii) black sheep of society
(iii) held out my hand
(iv) saving your presence
(v) laborious summer
(vi) He found him shaking cocktall
(vii) band-box
(viii) box-seat

सामान्य अनुवाद

(i) इश्कबाजी
(ii) समाज का कलंक
(iii) हाथ बढ़ाना
(iv) दूसरी उपस्थिति बचाते हुए
(v) अध्यावसायी, कठोर ग्रीष्म ऋतु
(vi) काकटेल हिलाते हुए
(vii) बाजा रखने का डिब्बा
(viii) बैठने के लिए व्यास आने वाला डिब्बा

प्रस्तावित अनुवाद

(i) गुलछर्रे उड़ाना
(ii) गद्दार, समाज का दुश्मन, समाजद्रोही
(iii) नमस्ते की
(iv) अगर बुरा न मानें गुस्ताखी माफ हो
(प्राचीन अंग्रेजी में प्रचलित)
(v) झुलसाने वाली गर्मी का मौसम
(vi) काकटेल तैयार करते हुए
(vii) बैण्ड–बॉक्स
(viii) बॉक्स–सीट

स्पष्ट है कि गलत पर्यायों के चयन से अनुवाद पर कितना बुरा प्रभाव पड़ता है।

(4) **लक्ष्यभाषा में मुहावरों का प्रयोग**

इस संदर्भ में चौथी समस्या लक्ष्यभाषा में मुहावरों एवं लोकोक्तियों के प्रयोग के स्तर पर है। भाषा को प्रवाहमयी, सहज और बोधगम्य बनाने में इनका बहुत बड़ा हाथ होता है। इसलिए स्रोतभाषा में सामान्य भाषा का प्रयोग होने पर भी अनुवादक को उपन्यासों व कहानियों के अनुवाद में यथासंभव मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग करना चाहिए। कुछ उदाहरण यहाँ प्रस्तुत हैं–

मूल

(i) I could not make out anything.
(ii) Better you get you daughter married.
(iii) I have not devoid of manly fortitude.

सामान्य अनुवाद

(i) मैं कुछ नहीं समझ सका।

(ii) अच्छा होगा यदि तुम अपनी लड़की की शादी कर दो।

(iii) मैं पौरुष से वंचित नहीं हूँ।

प्रस्तावित अनुवाद

(i) मेरे कुछ पल्ले नहीं पड़ा।

(ii) अब तुम्हें बेटी के हाथ पीले कर देने चाहिएं।

(iii) मैंने हाथों में चूड़ियाँ पहन रखी हैं।

इस प्रकार अनूदित कृति में लक्ष्यभाषा के प्रचलित मुहावरों और लोकोक्तियों के प्रयोग से भाषा रोचक, प्रभावपूर्ण और प्रवाहपूर्ण हो जाती है।

नाट्यानुवाद और संबंधित समस्याएँ

देश–विदेश की विचित्र भाषाओं में उत्कृष्ट रचनाओं का अनुवाद किसी भी साहित्य की जीवंतता और गतिशीलता का महत्त्वपूर्ण रूप भी है और प्रमाण भी। इसीलिए हर समर्थ और विकसित भाषा के एक बड़े अंश का अन्य भाषाओं के काव्य और कथा–साहित्य के अनुवाद की ओर उन्मुख होना लगभग अनिवार्य है। नाटक भी इसका अपवाद नहीं, बल्कि एक तरह से अनुवाद की इस अनिवार्यता का चरम रूप हमें नाटक में ही दिखाई पड़ता है। पिछले बीस–पच्चीस वर्षों में भारतीय भाषाओं में, विशेषकर हिंदी में, नाटकों के अनुवाद की प्रक्रिया बड़ी व्यापक और तेज़ रही है। इसमें विदेशी नाटकों के मुख्यतः अँग्रेज़ी के माध्यम से होने वाले अनुवाद तो हैं ही, बड़े पैमाने पर विभिन्न भारतीय भाषाओं के परस्पर अनुवाद भी शामिल है।

अनुवाद की इस प्रक्रिया के दो परिणाम हुए हैं। एक तो यह कि हिंदी में नियमित रूप से निरंतर चलनेवाले सक्षम रंगमंच की अनुपस्थिति के कारण, नाटकों की जो कमी थी उसे इन अनुवादों ने बहुत–कुछ दूर किया है। विभिन्न भाषाओं के अनेक नाटक सुलभ हो जाने से हिंदी रंगमंच बहुत सक्रिय, समद्ध और बहुमुखी हो सका है। यहाँ तक कि इस समय किसी भी भारतीय भाषा में कोई भी अभिनयोपयोगी नाटक लिखा और खेला जाता है तो उसका अनुवाद हिंदी में तुरंत हो जाता है। इससे हिंदी–क्षेत्र की मंडलियों को, भले ही वे अधिकांशतः शौकिया और अव्यवसायी मंडलियाँ ही हों, प्रदर्शन के लिए उपयुक्त नाटकों की कमी का ज़्यादा सामना नहीं करना पड़ता। इसके साथ ही कल्पनाशील प्रदर्शन के लिए अनेक शैलियों और शिल्पों के नाटक आसानी से मिल जाते हैं।

अनुवादों की इस बहुलता के कारण हिंदी–भाषी क्षेत्रों में एक तरह की विषमता भी पैदा हुई है। अक्सर मौलिक नाटकों की अपेक्षा अनुवाद ज्यादा खेले जाते हैं। इससे हिंदी नाटकों और नाटककारों की उपेक्षा होती है। इस स्थिति की तीव्रता का अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि पिछले दिनों कई केंद्रों में 'हिंदी नाटक या हिंदी में नाटक' जैसे मुद्दे पर बहस होती रही है। इस बहस में भी अनेक हिंदी नाटककार और नाटकप्रेमी अपना संतोष या क्षोभ प्रकट करते रहे हैं। दूसरी ओर, हिंदी अनुवादों के कारण विभिन्न भारतीय भाषाओं में भी परस्पर अनुवाद की प्रवत्ति पैदा हुई और बढ़ी है। यह इसलिए कि सभी भारतीय भाषाओं में हिंदी के जितने जानकार आसानी से मिल जाते हैं, उतने अन्य भाषाओं के नहीं। इसलिए हिंदी अनुवाद के सहारे किसी भी भारतीय भाषा में अनुवाद सहज ही संभव हो जाता है। पिछले बीस–पच्चीस वर्ष में नाटक मुख्यतः हिंदी अनुवादों से ही, इक्का–दुक्का सीधे किसी भाषा से अनुवाद के बावजूद, विभिन्न भाषाओं में अनूदित हुए हैं। जैसे, कन्नड़ से आद्य रंगाचार्य का 'सुनो जनमेजय', गिरीश कारनाड के 'तुगलक' और 'हयवदन', बँगला से शंभु मित्र–अमित मैत्र का 'काँचन रंग', बादल सरकार के 'बाकी इतिहास', एवं 'इंद्रजित', 'पगला घोड़ा', 'जुलूस' तथा अन्य, मोहित चट्टोपाध्याय का 'गिनीपिग', मराठी से विजय तेंडुलकर का 'खामोश अदालत जारी है', 'सखाराम बाइंडर', 'घासीराम कोतवाल', 'कन्यादान' आदि–आदि। इसमें कोई संदेह नहीं कि इस प्रक्रिया ने देश–भर में सभी भाषाओं के नाटकों की परिकल्पना को साकार करने में बड़ा योग दिया है। इस प्रकार हम पाते हैं कि अनुवादों की प्रक्रिया भारतीय, विशेषकर, हिंदी नाट्य–रचना का एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण अंग बन गई है।

सच बात यह है कि आज भी हमारे देश की प्रत्येक भाषा में उच्चकाटि के अभिनेय नाटकों की इतनी कमी है कि रंगमंच के उत्थान की कोई भी योजना अथवा परिकल्पना देश–विदेश की विभिन्न भाषाओं के नाटक–साहित्य के अनुवाद के बिना पूरी नहीं हो सकती। वैसे भी संसार के रंगमंच के इतिहास में रंगकर्म के उत्कर्ष के यग अक्सर अन्य भाषाओं के श्रेष्ठ नाटकों के अनुवाद के युग भी रहे हैं। संसार की ऐसी विकसित भाषाएँ बहुत कम हैं जिनमें शेक्सपीयर, इब्सन आदि महान नाटककारों की रचनाएँ अनूदित होकर अभिनीत न हुई हों।

हिंदी में भी पिछले सौ वर्षों से लगातार अँग्रेजी से तथा कुछ–कुछ संस्कृत तथा अन्य भारतीय भाषाओं से, नाटकों के अनुवाद होते रहे थे। किंतु इन अनुवादों को अभिनय के लिए हाथ में लेते ही यह जाहिर हो जाता था कि वे कितने दोषपूर्ण हैं और मूल रचना की मुख्य मौलिक विशिष्टताओं को हिंदी में प्रस्तुत करने में कितने असमर्थ थे। यों तो हर प्रकार के सजनात्मक साहित्य का सफल

अनुवाद कठिन और अत्यंत परिश्रम–साध्य होता है, पर नाटकों के अनुवाद में कुछेक अतिरिक्त मूलभूत कठिनाइयाँ हैं जिन पर प्रायः अनुवादकों द्वारा समुचित ध्यान नहीं दिया जाता और केवल भाषांतर, और अधिक–से–अधिक किसी–न–किसी प्रकार मुख्य विचारों की अभिव्यक्ति, मात्र से संतोष कर लिया जाता है।

नाटक के अनुवाद की समस्याओं की जड़ नाटक की विधा में ही मौजूद है। केवल संवादात्मक कथा का नाम नाटक नहीं है। नाटक ऐसी संवादात्मक और कार्य–व्यापारमूलक कथा है जिसे अभिनेता किसी–न–किसी रंगमंच पर दर्शकों के सामने प्रस्तुत कर सकें और करें। जो नाटक अभिनेय नहीं हैं, उनकी गणना मूलतः नाटकों में नहीं, काव्य अथवा अन्य साहित्य–रूपों में होनी ही उचित है। नाटक के रूप में स्वीकृत होने के लिए रचना का अभिनेय होना सर्वथा अनिवार्य है। इसी से यदि, अभिनय–जैसे अभिव्यक्ति के एक अन्य तथा भिन्न माध्यम से आत्यंतिक रूप में संबद्ध होने के फलस्वरूप, नाट्य–रचना का कार्य कठिन है, तो एक भाषा से दूसरी में उसका रूपांतर और भी कठिन होता है। किसी भाषा में नाटक का अनुवाद भी मूल की भाँति ही अभिनेय हो तथा उसे मूल नाटक की संपूर्ण अर्थवत्ता में और उसके विभिन्न आयामों में दश्य और रूपायित किया जा सके, इसके लिए दो भाषाओं के ज्ञान के साथ–साथ अनिवार्य रूप से सामान्य रंग–विधान से और मूल नाटक की रंग–परंपरा से परिचय अत्यंत आवश्यक है।

नाटक के संवादों में ध्वनित और अभिप्रेत अर्थों का बहुत–सा संदर्भ उसके रंग–विधान में होता है। संवाद नाटक के रूप से, कार्य–व्यापार से, अंग–परिचालन, गतियों ओर मुखाभिनय से, अविच्छिन्न रूप में जुड़े होते हैं। यदि इन बातों से अनुवादक का परिचय व्यावहारिक न हो, तो वह न तो भावानुकूल, सही या उपयुक्त शब्द ला सकेगा, न पूरी पद–रचना ऐसी कर सकेगा जिसका उसमें अभिप्रेत बाह्य तथा आंतरिक कार्य–व्यापार से सामंजस्य हो। नाटकीय संवाद में बहुत बार लक्ष्यार्थ और व्यंग्यार्थ ही प्रधान और नियामक होते हैं और इन अर्थों का संबंध नाटक के कार्य–व्यापार और समस्त नाट्य–परंपरा से होता है, जिन्हें समझे बिना उपयुक्त अनुवाद संभव नहीं। वास्तव में, यह समझना ज़रूरी है कि नाटक का अनुवाद सामान्य साहित्यिक अनुवाद से बहुत भिन्न है और अनुवादक के लिए रंगमंच का व्यावहारिक अनुभव एक अनिवार्य शर्त है।

इस सामान्य आवश्यकता और सीमा के भीतर भी नाटक के अनुवाद की अन्य विशिष्ट शिल्पगत समस्याएँ हैं जिन पर विचार करना आवश्यक है। नाटक पूर्णतः संवाद–प्रधान साहित्य–विधा है। विषय–वस्तु का हर पक्ष, कथानक, विचार–तत्त्व, चरित्र, भाव–जगत्, कार्य–व्यापार, संघर्ष आदि सभी कुछ, संवादों के माध्यम से व्यक्त होता है। बहुत बार संवादों की विविध रीतियों से विभिन्न पात्रों के व्यक्तित्वों पर अलग–अलग बल द्वारा ही, उसके आत्म–प्रकाशन की शैली और विशिष्टताओं के परस्पर संघात और तुलना अथवा विभिन्नतामूलक संतुलन द्वारा ही, लेखक का मूल मंतव्य, नाटक का मौलिक वक्तव्य और उद्देश्य अभिव्यक्त होता है। इसलिए नाटक के संवादों का अनुवाद भाषा और अभिव्यक्ति की सर्वथा विशिष्ट प्रयोग–क्षमता की अपेक्षा रखता है। विशेषकर, प्रत्येक पात्र का व्यक्तित्व उसके बात कहने के ढंग से, उसकी शब्दावली से, उसके विभिन्न वाक्यांशों पर बल से तथा उक्ति की संपूर्ण शैली से, अभिन्न रूप से जुड़ा होता है। इसलिए संवाद के अनुवाद में केवल उक्ति के अर्थ अथवा भाव का प्रकाश ही पर्याप्त नहीं है। उससे पात्र के व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति होनी चाहिए, उसके द्वारा पात्र की शिक्षा–दीक्षा, सामान्य मनोवत्ति, उसका आर्थिक–सामाजिक–सांस्कृतिक परिवेश अधिक–से–अधिक परिलक्षित होना आवश्यक है। बहुत बार पात्र की अवस्था, आयु, जीवन के अनुभव, उसके भावात्मक और बौद्धिक स्तर को भी लेखक उसके संवादों की शैली द्वारा संप्रेषित करता है, बल्कि उस संप्रेषण के फलस्वरूप संपूर्ण नाटक के मूल मंतव्य की अभिव्यक्ति को पुष्ट करके, प्रभाव की एक विशेष स्थिति उत्पन्न करना चाहता है। अनुवाद में भी यथासंभव ऐसा प्रभाव उत्पन्न होना आवश्यक है।

इसी प्रकार नाटक के अनुवाद में भाषांतर के साथ–साथ एक प्रकार का भौगोलिक स्थानांतरण भी होता है और मूल नाटक के विभिन्न पात्रों की भाषा के पारंपरिक शैलीगत संतुलन को कई बार सर्वथा भिन्न उपायों द्वारा स्थापित करना अनुवादक के लिए आवश्यक हो जाता है। उदाहरण के लिए, यह बहुत ही संभव है कि एक ढोंगी, परंपरावादी और कट्टरवादी व्यक्ति के संवाद दो अलग–अलग भाषाओं में सर्वथा भिन्न प्रकार के तत्त्वों द्वारा अभिव्यक्त करना अनिवार्य हो जाए। शब्दों के ऊपर यह आंतरिक भार नाटक के अनुवाद का बड़ा ही आवश्यक तत्त्व है, जिसके बारे में सजग और सतर्क न होने के कारण अनुवाद में नाटक कई बार सर्वथा भिन्न अर्थ देने लगता है, अथवा अर्थशून्य हो जाता है।

संवादों की भाषा के पात्रानुरूप होने की अनिवार्यता भी अनुवाद के लिए बड़ी कठिन समस्या उपस्थित करती है। इस समस्या के दो लगभग परस्पर–विरोधी छोर हैं। एक ओर, भाषा का इतना अभिव्यंजनापूर्ण और अभिव्यक्ति के उपयुक्त होना जरूरी है कि वह विभिन्न पात्रों के व्यक्तित्वों की बहुत–सी परतें दिखा सके, दूसरी ओर, वह बोलचाल की भाषा या उसकी लय से बहुत दूर नहीं हो सकती। नाटक के संवाद मूलतः किसी–न–किसी मानवीय व्यापार में प्रवत्त व्यक्तियों द्वारा बोले जाते हैं। नाटक के चरित्रों की विश्वसनीयता, प्रभावोत्पादकता, स्वाभाविकता बहुत बड़े अंश में संवादों की स्वाभाविकता पर ही निर्भर होती है।

अपने दैनिक जीवन में हम हर प्रकार की मनःस्थिति, भाव और विचार को विषय और परिस्थिति के अनुसार, जिससे बात

कर रहे हैं, उसकी ग्रहणशीलता के स्तर के अनुसार उपयुक्त भाषा में व्यक्त करते हैं। पर नाटक में अत्यंत ही घनीभूत रूप में सहजता का यह प्रभाव उत्पन्न करना भी आवश्यक है और साथ ही नाटकीय संवाद या उक्ति को दैनिक जीवन की भाषा की बहुत–सी भूलों, भ्रष्टताओं, अस्पष्टताओं से भी बचाना होता है। कभी–कभी नाटककार किसी विशेष इच्छित प्रभाव के लिए बोलचाल की कुछेक भ्रष्टताएँ भी किसी पात्र के कथन में रखता है। पर वहाँ भी मूलतः पूरी तरह सचमुच बोली जाने वाली भाषा नहीं, बल्कि उसका एक प्रकार का पुनः रचित या संपादित रूप ही नाटक में काम आता है। इस प्रकार नाटकीय संवाद पात्रों के उपयुक्त और उनके लिए सहज स्वाभाविक भाषा के एक संपादित, कलात्मक तथा निखरे हुए रूप में लिखे जाते हैं। कम–से–कम श्रेष्ठ नाट्य–रचना के संवादों में हर स्तर पर गुण पाया जाता है। मगर नाटकों के अनेक अनुवादों में संवाद की सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषता प्रायः नष्ट–भ्रष्ट हो जाती है। बहुसंख्यक अनूदित नाटकों के सभी पात्र एक–सी, वैशिष्ट्यहीन, शुद्ध संस्कृतनिष्ठ साहित्यिक पदावली में बातचीत करते पाए जाते हैं। इस भाषा में पात्रों के व्यक्तियों की भिन्नता अभिव्यक्त तो नहीं ही होती, उसके बोलने, उच्चारण करने तक में कठिनाई होती है। बहुत दिनों तक हिंदी में उपलब्ध अधिकांश अनूदित नाटकों की रंगकर्मी – निर्देशक, अभिनेता आदि हाथ लगाते डरते रहे, क्योंकि उनमें प्रयुक्त संवादों को अभिनेता न तो स्वाभाविक ढंग से बोल सकते थे, और न तो उनके माध्यम से अपना चरित्र ही प्रकाशित कर सकते थे।

हिंदी के विशेष संदर्भ में इस समस्या का एक और भी पक्ष है। विभिन्न ऐतिहासिक कारणों से पुस्तकों में लिखी जानेवाली भाषा में बोलचाल के मुहावरे का बड़ा अभाव है। छायावादी युग ने जहाँ हिंदी गद्य को नीरसता, इतिवत्तात्मकता और निष्प्राणता से उबार कर उसे रंगीनी, संगीतात्मकता, भाव–प्रवणता और सूक्ष्मता दी, वहीं उसकी स्वाभाविकता छीन ली, उसमें से बोलचाल की भाषा को एकदम निकाल बाहर किया।

उर्दू–हिंदी के झगड़े ने भी हिंदी को मुहावरे से दूर रखने में योग दिया है। उर्दू में काव्य और गद्य दोनों में कहीं अधिक मुहावरों का प्रयोग है, बल्कि मुहावरों के समुचित और उपयुक्त प्रयोग को उर्दू लेखन–शैली की एक महत्त्वपूर्ण कसौटी माना जाता है। एक यह भी बड़ा कारण है कि नाटक को रंगमंच पर प्रस्तुत करने के इच्छुक लोगों को उर्दू लेखक, उर्दू जाननेवाले अनुवादक, उर्दू–मिश्रित भाषा से अधिक समीपता अनुभव होती है। वास्तव में, यह उर्दू गद्य के बोलचाल की भाषा के अधिक समीप होने की परोक्ष स्वीकृति है। नाटक के सफल अनुवाद में हिंदी के मुहावरों की गहरी और सूक्ष्म पकड़ से बहुत मदद मिल सकती है। मुहावरों का समुचित विवेकपूर्ण प्रयोग मूल तथा अनूदित नाटकों की भाषा को कृत्रिम होने से बहुत–कुछ बचा सकता है और उर्दू तथा संस्कृत के अन्य प्रचलित शब्दों को सहज स्वाभाविक ढंग से परस्पर जोड़ने की कड़ी का काम दे सकता है। हिंदी की बोलचाल की भाषा और मुहावरे हिंदी–उर्दू की मिली–जुली संपत्ति है; वह ऐसी सम्मिलित धरोहर है जिससे मुँह फेरकर हम अपनी भाषा की बुनियाद से मुँह फेरते हैं। नाटक और उसके अनुवाद का काम हमारे लिए इस दिशा में चुनौती है जिससे बचने की कोई गुंजाइश नहीं।

बोलचाल की भाषा का एक और पक्ष है उसमें अँग्रेज़ी शब्दों का और बहुत–से तद्भव या आंचलिक शब्दों का प्रयोग। साधारण बोलचाल में प्रयुक्त अँग्रेज़ी शब्दों का नाटक में प्रयोग करने का सबसे दिलचस्प उदाहरण कन्नड़ के विख्यात नाटककार कैलासम के नाटकों में मिलता है। उनके नाटकों के संवादों में कभी–कभी तो पचास–साठ प्रतिशत अँग्रेज़ी शब्द होते हैं। इस कारण विषय–वस्तु की प्रासंगिकता के बावजूद उनका अभिनय बड़े सीमित वर्ग में ही होता है। प्रश्न यह है कि क्या उन नाटकों के अनुवाद में अँग्रेज़ी शब्दों और वाक्यों को यथावत रहने दिया जाए? विशुद्ध यथार्थवाद और मूल नाटक के रूप की रक्षा की दष्टि से शायद यही ठीक हो। पर नाटक ही अभिनेयता और संप्रेषणीयता की दष्टि से यही प्रभाव किसी और उपाय से उत्पन्न किया जा सके तो उत्तम है। इसी प्रकार अँग्रेज़ी के नाटक में कोई पात्र बीच–बीच में यदि फ्रेंच अथवा जर्मन भाषा के शब्द बोलते दिखाए गए हों तो उनके अनुवाद में भी पात्र के उस चरित्रगत अभ्यास के उद्देश्य को ध्यान में रखकर ही भाषांतर करना उचित होगा।

इससे भी जटिलतर समस्या बोलियों के अनुवाद की है। आधुनिक नाटकों में पात्रों को यथार्थ और विश्वसनीय बनाने के लिए, अथवा चरित्र की स्वाभाविकता तथा वातावरण की स्थापना के लिए, बहुत बार किसी क्षेत्र या प्रदेश की बोली में कथोपकथन रखा जाता है। बँगला और मराठी के नाटकों में इसका बहुत ही प्रचार है और बहुत–से अमरीकी या अँग्रेज़ी नाटकों में भी स्थानीय बोली का प्रयोग प्रायः होता है। इनके अनुवाद में भी क्या हिंदी की बोली का प्रयोग होना चाहिए और किसका ? इस प्रश्न का उत्तर आसान नहीं है। हिंदी की किसी एक बोली में अनुवाद नाटक–क्षेत्र को सीमित कर देगा क्योंकि किसी हिंदी–भाषी नगर में उस क्षेत्र से बाहर की बोलियों में संवाद समुचित रूप से बोलने वाले अभिनेता आसानी से नहीं मिलेंगे। नाटक को अभिनयोपयोगी बनाने की दष्टि से बोलियों में अनुवाद कई कठिनाइयाँ उत्पन्न करता है और यह भी संभव है कि वह बोली–विशेष मूल की बोली के इच्छित प्रभाव की रक्षा न कर सके। इसलिए बोलियों की बजाय, अधिकांश नाटकों के अनुवाद में कुछेक आंचलिक शब्दों के प्रयोग ओर वाक्य–योजना में परिवर्तन द्वारा संभवतः बहुत–कुछ वही प्रभाव उत्पन्न किया जा सकता है जो मूल में बोली के प्रयोग द्वारा अभिप्रेत है। 'गोदान' में होरी खड़ी बोली में ही बोलता है, पर इस कारण उसे किसान और गाँववासी मानने में कोई कठिनाई नहीं होती।

वास्तव में, अनुवाद की सफलता की कसौटी पात्रों के अनुरूप संवादों में स्वाभाविकता, उच्चारण–सुविधा, सरलता, लचीलापन तथा पारदर्शिता आदि गुण ही हैं। इनके द्वारा मूल नाटक का इच्छित प्रभाव अनुवाद में ही यथासंभव लाया जा सकता है।

नाटक के संवादों की एक अन्य महत्त्वपूर्ण विशेषता है उनकी ध्वनि–संयोजन। प्रत्येक भाषा के उच्चारण का अपना एक संगीत होता है जिसमें बहुत बार उसकी विशेषता, उसका सौंदर्य भी निहित होता है, और उसकी अर्थ और भाव–व्यंजित करने की क्षमता भी। स्पष्ट ही अनुवाद में इसकी रक्षा अथवा सष्टि लगभग असंभव है। किंतु अनुवाद की भाषा का एक अपना नाद–सौंदर्य भी होता है। नाटक के अनुवादक का उसके प्रति संवेदनशील और सजग होना बहुत आवश्यक है। कुशल अभिनेता और निर्देशक अनजाने ही, और बहुत बार सचेष्ट रूप से, संवादों के उच्चारण द्वारा ध्वनियों का एक वितान–जैसा तैयार करता है, जिसमें भावानुरूप विविधता उत्पन्न करके वह उसे एक निश्चित उत्कर्ष की ओर ले जाता है। श्रेष्ठ नाटक की भाषा में यह विशेषता अनिवार्य रूप से होती है। शेक्सपीयर और रवीन्द्रनाथ ही नहीं, किसी भी श्रेष्ठ नाटककार की रचनाओं में यह गुण अवश्य पाया जाता है। अनुवाद की भाषा में, ध्वनियों और नाद में, स्वरघात और व्यंजन–ध्वनियों की योजना में, तारतम्य, विविधता, सुसंगति और उतार–चढ़ाव होना आवश्यक है, नहीं तो रंगमंच पर जाकर नाटक में बड़ी कर्ण–कटुता और स्वर–विषमता उत्पन्न हो जाने की आशंका है। वास्तव में यदि बोली जानेवाली भाषा पर अनुवादक का अधिकार है, और उसकी ध्वनिमूलक संभावनाओं से वह परिचित है, तो उसे इस कार्य में अधिक कठिनाई न होगी, और तभी वह संवादों को एकरस, सपाट और फीके होने से बचा सकेगा।

नाटक के अनुवाद का एक अन्य महत्त्वपूर्ण तत्त्व है वातावरण की सष्टि। प्रत्येक नाटक कोई–न–कोई सामाजिक परिवेश प्रस्तुत करता है और कभी–कभी विशेष प्रकार का मानसिक अथवा आध्यात्मिक वातावरण भी। पात्रों के संवादों द्वारा अनुवाद में उसकी रक्षा होना आवश्यक है। देहाती जीवन के नाटकों में, औद्योगिक केंद्रों के यांत्रिक जीवन के नाटकों में, प्रतीकात्मक महत्त्व के ओर रहस्यमय परिस्थितियों का चित्रण करने वाले नाटकों में, वातावरण नाटकीय प्रभाव का मूलभूत अंग होता है। शेक्सपीयर की त्रासदियों में घेरती हुई नियति का आतंकपूर्ण यातनाभरा वातावरण संवाद–योजना में भी पूरी तरह परिलक्षित होता है। 'हैमलेट' के प्रारंभिक संवाद ही मन में जैसे किसी आसन्न संकट का खटका उत्पन्न करते हैं। यदि अनुवाद में यह प्रभाव अनुवाद की भाषा की अपनी विशेषताओं द्वारा न उत्पन्न किया जा सका, तो मूल नाटक का बहुत–सा भावात्मक सौंदर्य नष्ट हो जाएगा। संभवतः अनुवाद की छंदबद्धता से अधिक महत्त्वपूर्ण यह तत्त्व है जिसे हमारे बड़े–बड़े विद्वान साहित्यकार तक प्रायः नहीं निभा पाते। रवीन्द्रनाथ के प्रतीक नाटकों का ऐंद्रजालिक वैभव, चेख़व के नाटकों की सूक्ष्म काव्यात्मक अवसादमयता, इब्सन के कुछेक तथा स्ट्रिंडबर्ग के प्रायः सभी नाटकों की विस्फोटक तीव्रता अथवा आधुनिक नाटककारों में आयोनेस्को की रचनाओं में दष्टिगोचर जीवन की अवास्तविकता, ब्रेख्त के नाटकों में सामाजिक विषमता की विडंबना, यातना और उसके विरुद्ध संघर्ष तथा पिरांदेलो, सार्त्र, बैकेट, पिंटर, ऐलबी, एनुई, आसबोर्न, टैनेसी विलियम्स, आर्थर मिलर, यूजीन ओनील आदि सभी प्रमुख आधुनिक नाटककारों के नाटकों का सघन वातावरण, लगभग एक स्वतंत्र सत्ता के रूप में नाटक की मूल विषय–वस्तु के संप्रेषण में सहायक होता है। इसके निर्माण में लेखक संवादों की भाषा से तहर–तरह के काम लेता है। इन नाटकों का कोई अनुवाद उनके इन विभिन्न तत्त्वों की समुचित रक्षा के बिना बहुत सफल नहीं हो सकता।

रंगमंच पर प्रस्तुत करते समय निर्देशक नाना उपकरणों, दश्य–रचना तथा प्रकाश–योजना द्वारा तो इस वातावरण का निर्माण करता ही है, संवादों और उनकी भाषा में भी उस प्रभाव के लिए आवश्यक और उसके अनुरूप ध्वनियाँ, शब्द और वाक्य–योजना तथा शैली होना ज़रूरी है। विशेषकर भिन्न देश–काल तथा भावात्मक सघनता, तन्मयता और तनाव आदि प्रभाव–तत्त्व संवादों की रचना द्वारा बहुत बार बनते हैं और बनाए जा सकते हैं। किंतु मूलतः इसके लिए अनुवादक का नाटकीय वातावरण के विषय में स्वयं संवेदनशील होना आवश्यक है, तभी वह इस तत्त्व को समझ और निर्मित कर सकेगा।

नाटक के अनुवाद की अन्य कठिनाइयों में हास–परिहास और व्यंग्य के भाषांतरण भी हैं। बहुत–से शाब्दिक वाग्वैदग्ध्य का तो कोई अनुवाद हो ही नहीं सकता। फिर भी प्रहसनों तथा अन्य सुखांत नाटकों का अनुवाद होता है। साधारण गंभीर नाटक में भी नाटकीय संवाद सदा व्यंजनाप्रधान होते हैं और उनके लिए समुचित पर्याय और समानार्थी बिंब तथा आलंबन अनुवादक को खोजने पड़ते हैं। ऐसे सभी प्रयत्नों में मूल लेखक के इच्छित नाटकीय तथा रंगमंचीय उद्देश्य और प्रभाव को प्रस्तुत करने का प्रयत्न अधिक वांछनीय है, शब्दशः अनुवाद इतना नहीं।

अभी तक सामान्य रूप से नाटकों के अनुवाद की मुख्य कठिनाइयों और विशेषताओं पर विचार किया गया है। पर नाटक–साहित्य के कुछेक ऐसे रूप भी हैं जिनके अनुवाद की इनके अतिरिक्त विशिष्ट समस्याएँ हैं, जैसे काव्य–नाटकों तथा संस्कृत नाटकों में अनुवाद। विशेषकर शेक्सपीयर, यूनानी नाटककारों तथा रवीन्द्रनाथ के काव्य–नाटकों के अनुवाद में कई प्रकार की कठिनाइयाँ सामने आती रही हैं। शेक्सपीयर के नाटक संसार की सभी भाषाओं में अनूदित हुए हैं, पूर्णतः पद्य में, पूर्णतः गद्य में तथा मिश्रित गद्य और पद्य में। सभी यूनानी नाटकों के अंग्रेज़ी तथा अन्य यूरोपीय भाषाओं में पद्यानुवाद हुए हैं। कई भारतीय भाषाओं में भी शेक्सपीयर

के सफल अनुवाद हुए हैं पर रंगमंच पर सफलता प्रायः गद्यानुवादों को ही अधिक मिली है।

नाटक के अनुवाद के संबंध में ऊपर जिन विशेष आवश्यकताओं और बंधनों का उल्लेख किया गया है उन्हें देखते हुए यह कहा जा सकता है कि साधारणतः काव्य–नाटकों का अनुवाद लययुक्त उदात्त गद्य में करना अधिक उपयोगी सिद्ध होगा। विशेषकर अ–भारतीय भाषाओं से भारतीय भाषाओं में अनुवाद के विषय में तो यह अत्यंत ही आवश्यक है, क्योंकि साधारणतः उनके स्वर–संगीत, वाक्य और पद–रचना, छंद–विधान तथा बिंब–योजना में इतना मौलिक अंतर है कि नाटकीय तत्त्व के साथ इन सब बातों का निर्वाह लगभग असंभव हो जाता है। इसके अतिरिक्त जब तक भारतीय भाषाओं में, विशेषकर हिंदी में, पर्याप्त संख्या में मौलिक काव्य–नाटकों की रचना द्वारा काव्य–नाटक की एक अधिक लचीली, अभिव्यंजनापूर्ण, सशक्त तथा समर्थ भाषा निर्मित नहीं हो जाती, तब तक अँग्रेजी से काव्य नाटकों का पद्यानुवाद सफल होना बहुत ही कठिन है। कुछ समय पहले रेडियो के लिए कुछेक गेय रूपक तथा काव्य–नाटक लिखे गए थे, जिनसे इस दिशा में भाषा को कुछ शक्ति प्राप्त हुई। इसका कुछ प्रमाण धर्मवीर भारती के काव्य–नाटक 'अंधायुग' में मिलता है। पर जब तक ऐसा प्रयत्न रंगमंच के लिए और भी व्यापक रूप में नहीं होता, तब तक काव्य–नाटक की भाषा इतनी अपर्याप्त, अक्षम और अनुपयुक्त रहेगी कि नाटक के काव्यानुवाद में सफलता बड़ी संदिग्ध है।

पिछले सौ वर्षों में हिंदी में शेक्सपीयर के होने वाले बेशुमार रूपांतर और अनुवाद इस कठिनाई को रेखांकित करते हैं। ज्यादातर तो ये अनुवाद नहीं, अपितु शेक्सपीयर के नाटकों के कथनों में मौजूद अति–नाटकीय प्रसंगों के और भी अतिरिक्त प्रस्तुतीकरण मात्र हैं। अनेक अनुवाद इतने शाब्दिक और भ्रामक हैं कि वे विचारणीय ही नहीं हैं। पाँचवें–छठे दशकों में रांगेय राघव ने बहुत सारे नाटकों का अनुवाद बड़े यांत्रिक ढंग से फीके और निर्जीव गद्य में कर डाला। उन्हें पढ़कर शेक्सपीयर की काव्यात्मकता अथवा सूक्ष्म नाटकीयता का कोई परिचय नहीं मिलता। छठे दशक में ही कवि हरिवंश राय बच्चन द्वारा तीन महान् त्रासदियों के अनुवादों में पद्यात्मकता तो है, पर काव्य अधिकांश स्थलों में गायब है, फिर भाषा की नाटकीयता की तो बात ही क्या। अमतराय का 'हेमलेट' का गद्य–अनुवाद रांगेय राघव से बेहतर है, पर उसमें भी सपाट और बनावटी भाषा के कारण अधिकतर स्थलों पर काव्यात्कता और नाटकीयता में कमी हुई है।

इस दष्टि से सबसे संवेदनशील रघुवीर सहाय द्वारा 'मैकबेथ' का 'बरनम का' नाम से काव्यानुवाद है जो ब॰ व॰ कारंत के निर्देशन में राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय की प्रस्तुति के लिए किया गया था। इसमें बहुत–से स्थलों पर शेक्सपीयर के काव्य की अंतर्दष्टि का संप्रेषण हो सका है और भाषा में भी बहुत जगह नाटकीयता, लचीलापन, आवश्यक शक्ति, संगीतात्मकता और सूक्ष्मता है। पर अनुवाद में इस नाटक के अनेक अंश छोड़ दिए गए हैं, और कई जगह अर्थ और संदर्भ की पकड़ में भी पूरी सावधानी नहीं बरती गई है। भाषा में तथा अनुवाद के अन्य तत्त्वों के निर्वाह में एकरूपता भी नहीं है। इन प्रयासों के अनुभव से काव्य–नाटकों के अनुवाद की समस्याओं और कठिनाइयों को समझा जा सकता है।

वास्तव में पद्यात्मकता काव्य–नाटक का एक ऐसा विशेष तत्त्व है जिसकी अनुवाद में रक्षा विशेष रूप से कठिन हो जाती है। वैसे भावों की काव्यात्मकता, अनुभूति तथा चरित–संघात की काव्यात्मक उपलब्धि और उसकी अभिव्यक्ति के बिना तो कोई भी श्रेष्ठ नाटक नहीं बनता। भावों के काव्य का, जीवन के मूल उत्स और परस्पर मानवीय संबंधों की सघन अनुभूति का उद्घाटन ही श्रेष्ठ रंग–कार्य का कर्त्तव्य और धर्म है। नाटक के किसी भी श्रेष्ठ अनुवादक को मूलतः यह पहचान होनी ही चाहिए, पर काव्य–नाटक के अनुवाद के लिए कुछेक शिल्पगत सूक्ष्मताओं का ज्ञान भी अधिक अपेक्षित है।

जहाँ तक संस्कृत नाटकों के हिंदी अनुवाद का प्रश्न है, उसमें कुछ अन्य प्रकार की प्रविधिक उलझनें हैं। संस्कृत नाटक की रंग–शैली पश्चिमी रंगमंच से प्रभावित आधुनिक नाट्य पद्धति से बहुत अलग है। वे सर्वथा भिन्न प्रकार की सांस्कृतिक तथा बौद्धिक पष्ठभूमि वाले दर्शकों के लिए रचे गए थे। अनुवादक को उस रंग–शैली और उसकी मौलिक मान्यताओं और रूढ़ियों से परिचय प्राप्त किए बिना उनके अनुवाद में हाथ न लगाना चाहिए। श्रेष्ठ संस्कृत नाटक प्रदर्शन के लिए ही रचे गए थे, काव्य के रूप में केवल पड़े जाने के लिए नहीं। दुर्भाग्यवश, उनके अधिकांश उपलब्ध रूपांतर रंगकर्मियों ने नहीं, साहित्यकारों ने भी नहीं, संस्कृत पंडितों ने किए हैं, जो भौंडे–शब्दार्थ संग्रह और अन्वय से बहुत आगे नहीं जाते। इन महानुभावों को संस्कृत पाठ का ज्ञान चाहे जितना हो, सजीव हिंदी भाषा का ज्ञान बड़ा स्वल्प रहा है। आज संस्कृत नाटकों के ऐसे सजनात्मक और अभिनेय अनुवादों की बड़ी तीव्र और तात्कालिक आवश्यकता है जिनमें मूल रचना के काव्य और रंग–शिल्प के सौंदर्य का यथासंभव रूपांतर प्रस्तुत किया जा सके।

इस कार्य में सबसे बड़ी कठिनाई संस्कृत नाटकों की अलंकार–बहुल बिंब–योजना और समासप्रधान भाषा से उत्पन्न होती है। उसे अपेक्षाकृत सरल किंतु काव्यात्मक, कल्पनामूलक गद्य में प्रस्तुत करने का प्रयत्न होना जरूरी है। संस्कृत नाटकों का अनुवाद कल्पनाप्रधान काव्य–नाटकों की भाँति ही होना उचित है, और अन्य काव्य–नाटकों की भाँति, तथा स्वयं मूल संस्कृत नाटकों की भाँति ही, उनके अनुवादों का प्रदर्शन भी शिक्षित सहृदय सामाजिकों के लिए ही हो सकता है, साधारण प्रेक्षक–वर्ग के लिए नहीं। संस्कृत नाटक की मूल मान्यताओं और उसकी काव्यगत चमत्कारिक सूक्ष्मता और ऐंद्रिकता के आस्वाद के लिए, निश्चित रूप में, पर्याप्त

सांस्कृतिक चेतना और संवेदनशीलता की अपेक्षा है, और हर कोटि के दर्शक के लिए प्रस्तुत कर सकने के उद्देश्य से उसका सरलीकरण करके अथवा उसमें किसी प्रकार का परिवर्तन करके, उसके रूप को विकृत, भ्रष्ट और सस्ता बनाना आवश्यक है। बहुत–कुछ ठीक उसी प्रकार जैसे खजुराहो के मूर्ति–शिल्प का सांस्कृतिक महत्त्व शिक्षित और संस्कारी व्यक्ति के लिए है, साधारण दर्शक के लिए तो वे पत्थर पर खुदी हुई कामोत्तेजक आकृतियाँ और आसनों की तस्वीरें–भर हैं। संस्कृत नाटकों के पद्यों का अनुवाद काव्यात्मक गद्य और पद्य दोनों में ही संभव है, यद्यपि कई बार प्रदर्शन की आवश्यकता के लिए उनका पद्यानुवाद ही ज़रूरी हो जाता है। मुख्य आवश्यकता इस बात की है कि विभिन्न पात्रों की अपनी–अपनी भाषा पात्रानुरूप विविधता और विभिन्नता के साथ रूपांतरित हो, और समूचे अनुवाद में एक विशिष्ट काव्यात्मक स्वर व्याप्त रहे; उसे यथार्थवादी नाटक की तरह प्रस्तुत करने के प्रलोभन से बचा जाए।

बीस–पच्चीस वर्ष पहले तक संभवतः भारतेन्दु हरिश्चन्द्र द्वारा अनूदित 'मुद्राराक्षस' और मोहन राकेश द्वारा अनूदित 'मच्छकटिक' ही सबसे उल्लेखनीय और उपयोगी नाटक थे। पर इस बीच संस्कृत नाटकों के और भी अनेक अनुवाद हुए हैं, जिनमें से कुछ मूल के काव्यात्मक सौंदर्य की कमोबेश रक्षा करने के साथ–साथ प्रदर्शन के लिए भी उपयुक्त हैं, जैसे भारतभूषण अग्रवाल द्वारा भास के 'उरुभंग' ब॰ व॰ कारंत द्वारा भास के ही 'स्वप्नवासवदत्ता' और पंचानन पाठक द्वारा 'मध्यम व्यायोग' के अनुवाद। बोधायन के 'भगवदज्जुकम' और महेन्द्रविक्रम के 'मत्तविलास' प्रहसनों के अनुवाद भी रंगकर्मियों के बीच लोकप्रिय हुए हैं। पिछले कुछ वर्षों में सागर से प्रकाशित 'नाट्यम' पत्रिका में उसके संपादक राधावल्लभ त्रिपाठी के प्रयास से भी कई संस्कृत नाटकों के मंचोपयोगी अनुवाद निकले हैं। इस सिलसिले में हबीव तनवीर द्वारा 'मच्छकटिक' और 'उत्तररामचरित' के छतीसगढ़ी में और मदन सोनी द्वारा 'मालविकाग्निमित्र' के बुंदेली में किए गए अनुवादों का भी उल्लेख किया जा सकता है।

इस पूरे विवेचन में अनुवाद से मूलतः भाषांतर द्वारा भाव और विचार तथा रचना–शिल्प के यथसंभव अविकल संप्रेषण का अभिप्राय लिया गया है, देश–काल के अनुरूप परिवर्तन करके रूपांतर का नहीं। यह एक विचारणीय प्रश्न है कि देश के विभिन्न क्षेत्रों के अथवा विशेषकर विदेशी नाटकों के अनुवाद में पात्रों के नामों, स्थानों और वातावरण आदि को अनुवाद की भाषा के क्षेत्र के अनुरूप परिवर्तित कर लेना चाहिए अथवा नहीं, जैसे भारतेन्दु ने शेक्सपीयर के 'मर्चेण्ट ऑफ़ वेनिस' का अनुवाद 'दुर्लभ बंधु' नाम से किया था। शेक्सपीयर तथा मोलियर के बहुत–से नाटक इस प्रकार रूपांतरित हुए हैं और उन्होंने भारतीय रंगमंच पर विभिन्न भाषाओं में बड़ी सफलता भी पाई है। पिछले वर्षों में बर्तोल्त ब्रेख्त के अनेक नाटकों के तो देश की कई भाषाओं में रूपांतर बेहद लोकप्रिय ही नहीं हुए, उन्हें लगभग मौलिक नाटकों जैसी स्वीकृति मिली है। मगर सामान्यतः इस पद्धति में मूल नाटकों के भावों, विचारों और शिल्प के सौंदर्य की रक्षा कठिन हो जाती है। अक्सर मूल के साथ पूरा न्याय नहीं हो पाता, और ऐसे रूपांतर प्रायः विदेशी नाटक की छाया अथवा उसकी फीकी अनुकृति मात्र रह जाते हैं। यह प्रश्न रंगमंच की अपनी आवश्यकताओं के साथ अधिक संबद्ध है, और नाटकों के अनुवाद की मूल भावनात्मक, विषय–वस्तुपरक तथा शिल्पगत आवश्यकताओं से उसे अलग ही रखना चाहिए।

वास्तव में देखा जाए तो, अनुवाद का कार्य भाषागत जितना है उससे कहीं अधिक मूल रचना के भाव और विषय–वस्तु से संबंधित है। किंतु नाटक–जैसी दोहरी सजनात्मक विधा के क्षेत्र में तो यह बहुत बड़ी मात्रा में रंगमंच और नाटक के गहरे व्यावहारिक ज्ञान और अनुभव से संबंधित कार्य है, विशुद्ध साहित्यिक अथवा भाषामूलक कार्य नहीं। हमारे बहुत से साहित्यिक और विशेषकर विश्वविद्यालयों के आचार्यगण, अपने अहंकार में नाटक के एक मित्र और मिश्रित अभिव्यक्ति माध्यम होने के सत्य को नहीं देखते, और शास्त्रीय अथवा अन्य साहित्यिक रचनाओं की भाँति बोझिल और संस्कृतनिष्ठ भाषांतर पर ज़ोर देते हैं। इसी कारण दुर्भाग्यवश अधिकांश प्रतिष्ठित अर्ध–सरकारी तथा कई व्यवसायी प्रकाशन–संस्थाओं द्वारा प्रकाशित अनेक अनूदित नाटक प्रायः रंगमंच के किसी काम नहीं आते। उनसे न तो हिंदी के रंगमंचोपयोगी नाटक–साहित्य में कोई वद्धि होती है, न रंगमंच के विकास में और न मौलिक नाटक–साहित्य की रचना में ही कोई सहायता मिलती है। यह संतोष की बात है कि पिछले दस–पंद्रह वर्षों में हिंदी के साहित्यचार्यों का यह हस्तक्षेप कम होता गया है और अब नाटकों के अधिकांश अनुवाद प्रदर्शन की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर किसी–न–किसी रंगकर्मी द्वारा अथवा उसकी सहायता से ही किए जाते हैं।

5.7 विज्ञापन में अनुवाद

संचार क्रांति के इस युग में विज्ञापनों का महत्त्व निर्विवाद है। यह कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी कि आज का युग विज्ञापन का युग है। सुबह आँख खुलते ही विज्ञापनों का विस्फोट आरंभ हो जाता है और रात को सोने तक यह सिलसिला जारी रहता हैं। समाचार–पत्र–पत्रिका, आकाशवाणी, दूरदर्शन, सिनेमा आदि सभी जनसंचार माध्यमों में विज्ञापन का वर्चस्व दिखाई देता है। वास्तव में, आज के युग का प्रत्येक क्षण विज्ञापन से भरा हुआ है। अतः विज्ञापन उत्पादक और उपभोक्ता के मध्य एक महत्त्वपूर्ण सेतु है जो उत्पादन की संपूर्ण व्याख्या उपभोक्ता के समक्ष प्रस्तुत करता है।

भाषा मानव–मन के भावों अथवा विचरों को अभिव्यक्त करने का सशक्त माध्यम है। प्रत्येक क्षेत्र की आवश्यकताएँ भिन्न होती है और भाषा अपनी लोचपरक प्रकृति के कारण उन आवश्यकताओं के अनुसार अपना रूप बदल लेती है। डॉ॰ सुरेश सिंहल के शब्दों में, "भाषा के प्रयोक्ता को विभिन्न क्षेत्रों एवं स्थितियों के अनुसार भाषिक प्रयुक्तियों का चयन करना पड़ता है। यह बात विज्ञापन के क्षेत्र में भी पूर्णतः लागू होती है। विज्ञापन लेखक यदि भाषा का आवश्यकता अनुसार प्रयोग नहीं करता है तो वह अपने उद्देश्य में सफल नहीं हो सकता। परिणामस्वरूप विज्ञापन का चुटीलापन, पैनापन एवं आकर्षण समाप्त हो जाता है और विज्ञापन नीरस एवं शिथिल बन जाने के कारण ग्राहक के क्रय मनोविज्ञान को प्रभावित नहीं कर पाता। इसलिए विज्ञापन की भाषा का मनभावन, चित्ताकर्षक, कर्णप्रिय, पठनीय, लच्छेदार आदि होना अति आवश्यक होता है।"

विज्ञापन की भाषा का मुख्य उद्देश्य उपभोक्ता–वस्तु के प्रति ग्राहक को आकर्षित करना होता है ताकि वह उस वस्तु की विशेषताओं से प्रभावित होकर उसे खरीदने के लिए प्रेरित हो जाए। यदि विज्ञापनकर्ता सामान्य भाषा का प्रयोग करके अपने इस उद्देश्य को प्राप्त करना चाहता है तो वह इसमें कभी भी सफल नहीं हो सकता। सफलता प्राप्त करने के लिए उसे आकर्षक एवं लच्छेदार भाषिक प्रयोगों की सहायता लेनी पड़ती है। इसलिए विज्ञापन की भाषा सामान्य भाषा से नितांत भिन्न होती है। सामान्य भाषा के प्रयोग में जहाँ कुछ संरचनात्मक एवं व्याकरणिक नियमों का पालन किया जाता है, वहीं विज्ञापन की भाषा में प्रायः उन नियमों का पालन नहीं किया जाता। नियमों का यह उल्लंघन ही उसे एक विशेष दर्जा दिलाता है। सामान्य भाषा परंपरागत और यांत्रिक होने के कारण सामान्य अनुभव एवं सामान्य कथन को ही संप्रेषित कर सकती है। विज्ञापन में निहित भाव–भंगिमा विशेष को अभिव्यक्त करने के लिए भाषा भी वैसी ही होनी चाहिए।

यदि अनुवाद करना एक कला है तो विज्ञापन का अनुवाद एक विशेष कला है। इसमें अनूदित बात या कथन को उसी लय, माधुर्य, रोचकता और विशिष्टता के साथ कहा जाना अनिवार्य होता है जिस माधुर्य और आकर्षक शैली के साथ उसे मूल भाषा में प्रस्तुत किया गया है। विकास शुक्ल का कहना है कि "विज्ञापनों के अनुवाद में प्रस्तुतीकरण एक प्रमुख विशेषता होती है। यही कारण है विज्ञापन के अनुवाद में शब्दों का अनुवाद नहीं किया जाता। उसका भावानुवाद भी नहीं किया जाता, बल्कि विज्ञापन में कही गई बात अथवा संदेश को अनूदित भाषा में संप्रेषित किया जाता है। उसे उपभोक्ता के लक्षित वर्ग और आम आदमी के दिलो–दिमाग में उतार दिया जाता है। अतः विज्ञापन के अनुवाद में भाषा, व्याकरण आदि के नियम पूर्णतया लागू नहीं किए जा सकते। एक बेहतरीन विज्ञापन–अनुवादक के लिए जरूरी है कि वह अनुवाद में भाषा और शब्दों की सही स्थिति के पचड़े में पड़कर विज्ञापित संदेश को पूरी तरह उपभोक्ता के दिमाग में बैठा दे ताकि उसके क्रय–व्यवहार पर अनुकूल प्रभाव पड़ सके। किंतु इसका अर्थ यह भी नहीं है कि अनुवादक विज्ञापन का अनुवाद करने के स्थान पर नया विज्ञापन ही लिख डाले। अनुवाद के दौरान उसे कुछ छोटे–छोटे शब्द जोड़ने–घटाने की छूट तो होती है, लेकिन यह छूट मूल विज्ञापन के संदेश को स्पष्ट करने तक ही सीमित है। दरअसल, अनुवादक विज्ञापन का अनुवाद करते हुए सजन करता है, लेकिन सजन होते हुए भी वह अनुवाद ही कर रहा होता है। इसी कारण विज्ञापन का अनुवाद करना एक कठिन और विशिष्ट कार्य है। अतः एक सामान्य अनुवादक विज्ञापन का सक्षम अनुवाद नहीं कर सकता। इसके लिए उसे अनुवाद कला में सिद्धहस्त और अनुवाद की सीमाओं के भीतर सजन–कार्य करने में निष्णात होना पड़ता है।" निम्नलिखित उदाहरण प्रस्तुत कथन की भली–भाँति पुष्टि करते हैं–

1. Add good taste, gives good health (Sweekar oil)
   = बढ़िया स्वाद, बढ़िया स्वास्थ्य
2. Trust has so many reasons (Godrej)
   = भरोसा करने के हैं कारण अनेक
3. If you like being watched (Elpar)
   = जिधर से गुजरें, पीछा करें नज़रें
4. You have got a good thing, going (Hero Honda)
   = आपका शानदार हमसफर – हीरो होंडा।

अनुवाद एक भाषा में कही गई बात का दूसरी भाषा में उसकी भावगत एवं शैलीगत विशेषताओं को सुरक्षित रखते हुए पुनः प्रस्तुतीकरण है। यह प्रस्तुतीकरण मात्र शब्दों का ही प्रतिस्थापन नहीं होता, बल्कि मूल कथ्य अथवा संदेश की विशिष्टता को लगभग उसी अनुपात में, उसी लहजे में और उसी भाषिक अंदाज में पुनः प्रस्तुत करना होता है, यह प्रस्तुतीकरण जितना आकर्षक, प्रासंगिक, अर्थपूर्ण, बोधगम्य, स्वाभाविक एवं रोचक होगा, अनुवाद उतना ही सफलता के निकट होता चला जाएगा। यह प्रस्तुतीकरण प्रायः कलात्मक हुआ करता है, चाहे अनुवाद किसी भी प्रकार की सामग्री का हो। जनसंचार माध्यमों के संदर्भ

में अनुवाद के अनेक आयाम हैं जिनमें प्रिंट मीडिया एवं इलेक्ट्रॉनिक मीडिया प्रमुख हैं। इन दोनों ही प्रकार के अनुवाद को अपनी–अपनी विशेषताएँ हैं। इन दोनों क्षेत्रों में विज्ञापनों का महत्त्वपूर्ण स्थान है और इसीलिए इनका अनुवाद भी अपने आप में एक महत्त्वपूर्ण एवं सजनात्मक कला है। विज्ञापनों के अनुवाद में अनुवादक से एक विशेष प्रकार की प्रतिभा की अपेक्षा होती है, क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति इनका अनुवाद करने में सक्षम नहीं होता। वास्तव में विज्ञापनों का अनुवाद करना एक सजनात्मक कला तो है ही, साथ ही ये एक बहुआयामी प्रक्रिया भी है। इसमें एक ही समय में कई प्रकार के कार्य करने पड़ते हैं, यही कारण है कि विज्ञापनों का अनुवाद करना प्रायः एक कठिन कार्य होता है। अन्य प्रकार के अनुवाद की समस्याओं और विज्ञापन संबंधी अनुवाद की समस्याओं की तुलना करने पर हम देखते हैं कि ये समस्याएँ काफी हद तक अलग हैं। अन्य प्रकार का अनुवाद किसी विशिष्ट क्षेत्र अथवा विषय अथवा उस विषय की शाखा विशेष से संबंधित होता है; जबकि विज्ञापनों के अनुवाद में मिली–जुली सामग्री का अनुवाद करना पड़ता है। यह सामग्री न तो बिल्कुल साहित्यिक होती है और न गैर–साहित्यिक। इसी कारण इसकी अनुवाद प्रक्रिया भी एक जैसी नहीं हो सकती। कहीं केवल शब्दानुवाद करना पड़ता है और कहीं भावानुवाद। कभी–कभी इन दोनों का मिला–जुला रूप भी होता है और कभी–कभी ऐसी स्थिति भी होती है कि इन दोनों से हटकर अनुवादक को अपनी प्रतिभा और विवेक से काम लेना पड़ता है। जिस प्रकार विज्ञापन–लेखन में भाषिक एवं व्याकरणिक नियमों का पालन करना आवश्यक नहीं होता, उसी प्रकार विज्ञापनों के अनुवाद में भी भाषिक एवं व्याकरणिक नियमों का पालन करना आवश्यक नहीं होता। हाँ, इतना अवश्य है कि जो गुण विज्ञापन की भाषा में विद्यमान होते हैं, वे उनके अनुवाद में भी विद्यमान रहने चाहिए। साथ ही इस बात का भी ध्यान रखा जाना चाहिए कि विज्ञापन किस प्रकार का है, उसकी सामग्री कैसी है, उसकी भाषा के तेवर कैसे हैं, क्योंकि उसी के अनुसार– "अनुवाद में भी वैसी ही भाषा का प्रयोग करना आवश्यक होता है। डॉ॰ सुरेश सिंहल के शब्दों में– "विज्ञापनों के अनुवाद में सबसे अधिक महत्त्व भाषा के विविध प्रयोग करने का है। भाषा की विविधता उत्पन्न करने के लिए उसका लोचपरक प्रयोग करना होता है, अर्थात् अनुवादक जैसे चाहे भाषा को विज्ञापन के मूल संदेश के संप्रेषण हेतु अपने ढंग से मौलिकता प्रदान करते हुए प्रयोग करता है। किंतु इसका अर्थ यह भी नहीं कि वह मूल भाषा के मुहावरे को बिल्कुल ही बदल डाले। इस स्वतंत्रता का अर्थ है कि उसे अपनी सजनात्मक प्रतिभा के द्वारा उसमें चमत्कारी गुण उत्पन्न करना होता है। दूसरे, इस स्वतंत्रता से अभिप्राय यह भी है कि चाहे वह शब्दानुवाद करे, भावानुवाद करे या फिर कोई नया सजन, मूल उद्देश्य तो आकर्षक एवं अर्थपूर्ण विज्ञापन ही है। निश्चित ही उस पर भाषा और व्याकरण के नियमों का कोई विशेष बंधन लागू नहीं होता। उसे अक्सर कुछ शब्दों को जोड़ना और कुछ शब्दों को छोड़ना पड़ता है, क्योंकि ऐसा न होने पर विज्ञापन में जीवन्तता एवं रोचकता का तत्त्व नहीं रहता।" ऐसा केवल व्यावसायिक विज्ञापनों के अनुवाद में ही होता है। अन्य प्रकार के विज्ञापनों के अनुवाद में ऐसा नहीं होता, क्योंकि उसमें स्पष्टता एवं सरलता को ध्यान में रखकर ही अनुवाद किया जाता है। व्यावसायिक विज्ञापनों के अनुवाद से संबंधित समस्याओं पर निम्नलिखित शीर्षकों के अंतर्गत चर्चा की जा सकती है।

ञ(1) **विज्ञापन के मूल संदेश का संप्रेषण** – अनूदित विज्ञापनों की सफलता का सर्वप्रथम महत्त्वपूर्ण मापदण्ड मूल भाषा के विज्ञापन के मूल संदेश अथवा उसकी भावना को स्वाभाविक एवं रोचकपूर्ण ढंग से संप्रेषित करना है। अनुवादक इस मूल भावना को उपभोक्ता के लिए उपयोगी बनाता है और उसे मानसिक रूप से उद्वेलित करके उसे उस भावना से जोड़ता है। जब तक अनूदित विज्ञापन इस मूल संदेश का सही अर्थों में संप्रेषण नहीं करता, तब तक उसका उद्देश्य पूर्ण नहीं होता। विज्ञापन का उद्देश्य तो है ही उपभोक्ता के मानस में मूल भावना को गहराई तक उतार देना। अनुवादक को भी यह कार्य बड़ी सतर्कता से करना पड़ता है, क्योंकि यह उपभोक्ता के क्रय–व्यवहार को बहुत अधिक प्रभावित करता है। विज्ञापनों के अनुवाद की सफलता इस बात पर भी निर्भर करती है कि अनूदित विज्ञापन किस सीमा तक उपभोक्ता के क्रय–व्यवहार को प्रभावित करता है, वह उसे किसी सीमा तक उस कंपनी के उत्पादन को खरीदने के लिए मानसिक रूप से तैयार करता है। मूल भाषा के विज्ञापन में उपभोक्ता को रिझाने के लिए जो माधुर्य एवं रोचकता का प्रयोग किया जाता है, अनूदित विज्ञापन में भी वैसी ही शैली का प्रयोग अपेक्षित होता है। इस संदर्भ में निम्नलिखित उदाहरण देखे जा सकते हैं–

1. Cocacola : Takes you to the world of taste and freshness
   सामान्य : कोकाकोला आपको दुनिया के स्वाद और ताज़गी की ओर ले जाए
   प्रस्तावित : कोकाकोला : स्वाद लाजवाब, ताज़गी बेहिसाब
2. Surya Bulbs : The dazzling flood of light
   सामान्य : सूर्या बल्ब : प्रकाश की चुँधियाने वाली बाढ़
   प्रस्तावित : सूर्या बल्बों की जगमगाती दूधिया रोशनी का सैलाब
3. Oswal Wool : New arrivals of multicolured designs

सामान्य : ओसवाल ऊन : बहुरंगी डिजाइनों की नई आमद

प्रस्तावित : ओसवाल ऊन : रंग–बिरंगे डिजाइनों की इन्द्रधनुषी बहार

4. Surf Excel : Removes even the most wicked dirt

सामान्य : सर्फ एक्सल सबसे अधिक बुरे मैल को भी धो देता है

प्रस्तावित : सर्फ एक्सल : जिद्दी से जिद्दी मैल को भी धो डाले

उपर्युक्त वाक्यों से स्पष्ट है कि सामान्य अनुवाद विज्ञापनों की मूल भावना को अभिव्यक्त करने में सक्षम नहीं है। इसके स्थान पर प्रस्तावित अनुवाद कहीं अधिक सफल कहा जा सकता है, क्योंकि एक तो इनके माध्यम से मूल संदेश भली–भाँति संप्रेषित हो रहा है और दूसरे ये उपभोक्ता की क्रय–शक्ति को भी बखूबी प्रभावित करते हैं।

2. **विज्ञापन के सांस्कृतिक संदर्भ** – आज के अन्तरराष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में विज्ञापनों के अनुवादक को विज्ञापनों के सामाजिक एवं सांस्कृतिक संदर्भों की जानकारी होना बहुत आवश्यक होता है। इसके बिना वह अनूदेय विज्ञापन के उद्देश्य का न तो निर्धारण कर पाता है और न ही उसे प्राप्त कर सकता है। चलताऊ किस्म के अनुवाद से विज्ञापन अपने उद्देश्य को प्राप्त नहीं कर सकता। विज्ञापन का उद्देश्य सामाजिक–सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में पाठक या दर्शक को सूचना देकर बाजार में विज्ञापित उत्पादन की माँग को बढ़ाना होता है। यही संदर्भ इस बात का निर्धारण करते हैं कि विज्ञापित उत्पादन का उपभोक्ता में लक्षित वर्ग कौन–सा है। इस वर्ग–विशेष की आवश्यकताओं एवं आकांक्षाओं के अनुरूप ही अनुवादक विज्ञापन की भाषा का भी निर्धारण करता है। निश्चित रूप से महिलाओं, पुरुषों, नवयुवकों अथवा छोटे बच्चों के मनोविज्ञान और उनके सामाजिक संदर्भों के के अनुसार ही विज्ञापन का अनुवाद किया जाता है। ऐसा न करने पर वह अनूदित विज्ञापन उस उत्पादन विशेष की उपयोगिता और उसके ब्राण्ड विशेष की विशिष्टता की दष्टि से उपभोक्ता से संवाद स्थापित नहीं कर पाएगा। ऐसा विज्ञापन ही उपभोक्ता के मन को जीत पाया है और उसकी चयन प्रक्रिया को प्रभावित करता है जो सामाजिक–सांस्कृतिक संदर्भों के अनुकूल होता है। इन संदर्भों की जानकारी के परिणामस्वरूप अनुवादक अपने विज्ञापनों को अधिक पठनीय, श्रव्य एवं रोचक बनाने में सफल रहता है। उदाहरण के लिए महिलाओं की सौन्दर्यप्रियता के संदर्भ में निम्नलिखित विज्ञापन द्रष्टव्य हैं–

1. Lakme cleans deep into pores

सामान्य : लम्मे छिद्रों को गहराई से साफ करता है

प्रस्तावित : लक्मे–चेहरा निखारे, रंग महकाए

2. Nevia makes you look younger

सामान्य : नेविया आपको युवा दिखाए

प्रस्तावित : नेविया–रंग चमकाए, चेहरा दमकाए

3. Lakme smooths your wrinkles

सामान्य : लक्मे आपकी झुर्रियों को मुलायम बनाए

प्रस्तावित : लक्मे–झुर्रियों का दुश्मन

4. Lakme - a complete beauty treatment

सामान्य : लक्मे एक संपूर्ण सौंदर्य चिकित्सा है

प्रस्तावित : लक्मे–आपके संपूर्ण सौंदर्य का रक्षक

3. **भाषा की भास्वरता** – विज्ञापन की भाषा और उसके अनुवाद की भाषा का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण प्रयोग उसके लयबद्ध, छन्दयुक्त अर्थात् तुकबंदी वाले वाक्यों में निहित हुआ करता है, क्योंकि ये सीधे निशाने पर जाकर लगते हैं। इससे विज्ञापनों के अनुवाद की भाषा में एक विशेष प्रकार का माधुर्य, रोचकता एवं प्रभाव उत्पन्नहो जाता है, जैसे–

1. Old spice is the mark of man

सामान्य : ओल्ड स्पाइस पुरुष का चिह्न है

प्रस्तावित : ओल्ड स्पाइस की यह शान–आदमी की इससे पहचान

2. Sachin and Sehwag - Duo terribly created stirs in South Africa

सामान्य : सचिन और सहवाग ने साउथ अफ्रीका में बुरी तरह हलचल मचा दी

प्रस्तावित : सचिन और सहवाग : जांबाज जोड़ी ने किया कमाल – अफ्रीका में मचा धमाल

3. Maruti is the best - adds life to your dreams

सामान्य : मारुति सर्वोत्तम है – आपके सपनों को जीवन देती है

प्रस्तावित : मारुति सबसे अच्छी कार–सपने आपके करे साकार

4. The Haryana Govt. - at the door of the people

सामान्य : हरियाणा सरकार – लोगों के दर पर

प्रस्तावित : हरियाणा सरकार – आपके द्वार

4. **भाषा की पठनीयता-श्रव्यता-दश्यता** – विज्ञापनों के अनुवाद की भाषा का एक अनिवार्य गुण उसकी पठनीयता–श्रव्यता एवं दश्यता होता है, क्योंकि उपभोक्ता विज्ञापन को पढ़ता है, उसे सुनता है या फिर उसे देखता है। प्रत्येक स्थिति में विज्ञापन को पढ़कर–सुनकर अथवा देखकर भाषा सहज एवं अर्थपूर्ण लगनी ही चाहिए, जैसे–

1. A half-baked dream comes true after all

सामान्य : एक अधकचरा सपना सत्य सिद्ध हुआ

प्रस्तावित : आखिरकार एक अधूरा सपना साकार हो ही गया

2. The manufacturers are hitting a goldmine.

सामान्य : निर्माता लोग सोने की खान से टक्कर मार रहे हैं

प्रस्तावित : निर्माता चांदी कूट रहे हैं

3. New tracks of the future (J.K. Tyre)

सामान्य : भविष्य के पदचिह्न

प्रस्तावित : भविष्य की राह दिखाए – जे॰ के॰ टायर

5. **भाषा की विक्रय शक्ति** – अनूदित भाषा में यथासंभव पुनरावत्ति एवं विविधता के द्वारा तथा स्लोगन–वाक्यों के प्रयोग के द्वारा भाषा की विक्रय शक्ति को बनाए रखना आवश्यक होता है। उदाहरण के लिए निम्नलिखित वाक्य देखें–

1. Punjab National Bank - the name you can bank upon

सामान्य : पंजाब नेशनल बैंक – इस नाम पर आप निर्भर कर सकते हैं

प्रस्तावित : पंजाब नेशनल बैंक – विश्वास का दूसरा नाम

2. Westons are the electronics people

सामान्य : वेस्टन्स औद्योगिक लोग हैं

प्रस्तावित : वेस्टन–इलेक्ट्रॉनिक्स की दुनिया में अग्रणी नाम

3. Lux is the soap of the film stars

सामान्य : लक्त फिल्मी सितारों का साबुन है

प्रस्तावित : लक्स–लक्स–लक्स–फिल्मी सितारों का एकमात्र सौंदर्य साबुन

4. Charmis is an all-purpose cream

सामान्य : चार्मिस एक बहु उद्देशीय क्रीम है

प्रस्तावित : चार्मिस है वो नाम – संवारे आपके सारे काम

(6) **भाषा की ध्यानाकर्षण शक्ति** – विज्ञापनों के अनुवाद में भाषा का एक गुण यह होता है कि वह उपभोक्ता का ध्यान तुरंत आकर्षित कर ले और उसके जहन में उस उत्पादन विशेष के प्रति आकर्षण उत्पन्न कर दे ताकि वह उसे खरीदने के लिए बेचैन हो जाए। इस संदर्भ में कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं–

1. Satin Shampoo is for gorgeous dolls like you

सामान्य : सैटिन शैंपू आप जैसी सुंदर गुड़ियों के लिए है

प्रस्तावित : आप जैसी बेहद खूबसूरत महिलाओं के लिए ही तो बनाया गया है – सैटिन शैंपू

2. LIC - Safeguarding the interests of the million people

सामान्य : जीवन बीमा निगम – लाखों लोगों के हितों का बचाव करता है

प्रस्तावित : जीवन बीमा निगम – लाखों लोगों के हितों की सुरक्षा

4. Maggie - it's different

सामान्य : मैगी – यह अलग है

प्रस्तावित : मैगी – सबसे अच्छा, सबसे बढिया

7. **भाषा की सहजता एवं स्वाभाविकता** – विज्ञापनों के अनुवाद की भाषा जितनी सहज और स्वाभाविक होगी, अनूदित विज्ञापन उतना ही प्रभावशाली एवं बोधगम्य होगा। प्रायः इन पर अंग्रेजी भाषा का प्रभाव अधिक हो जाता है जिससे भाषा की क्तिष्टता

बढ़ जाने से विज्ञापन अपने उद्देश्य की पूर्ति करने में सफल नहीं हो पाता है। अनुवादक को लक्ष्यभाषा की प्रकृति को ध्यान में रखकर ही विज्ञापनों का अनुवाद करना चाहिए, जैसे–

1. Live life kingsize
   सामान्य : राजा के आकार का जीवन जियें
   प्रस्तावित : जीवन जीयें आन–बान–शान से
2. Made for each other
   सामान्य : एक दूसरे के लिए बनाए गए
   प्रस्तावित : एक दूजे के लिए
3. Feel the picture for a living experience
   सामान्य : जीवित अनुभव के लिए तस्वीर को स्पर्श करें
   प्रस्तावित : तस्वीर ऐसी कि जैसे हो एक जीवंत एहसास
4. This is what can be expected from the world leader in the field of watches.
   सामान्य : यह है जो घड़ियों के क्षेत्र में संसार में अग्रणी से अपेक्षित किया जा सकता है
   प्रस्तावित : आखिर घड़ियों की दुनिया की अग्रणी से यही तो अपेक्षित है
5. Raymonds : Registering a phenomenal growth
   सामान्य : रेमण्ड्स अपने व्यापार में संकल्पनात्मक वद्धि कर रहा है
   प्रस्तावित : रेमण्ड्स – नाम ऊँचा, काम ऊँचा
   अथवा : रेमण्ड्स – उन्नति के पथ पर निरन्तर अग्रसर।

5.8 विधि साहित्य का अनुवाद

अनुवाद एक भाषा में कही गयी बात का दूसरी भाषा में संप्रेषण है। दोनों भाषाओं की अपनी–अपनी कथ्यपरक एवं शैलीपरक विशिष्टताएँ होती हैं। दोनों शब्द सामर्थ्य की दष्टि से अधिक तथा कम समद्ध हो सकती हैं। दोनों की अर्थछवियों में सूक्ष्म या स्थूल अंतर हो सकता है। इन कारणों से अनुवाद का स्वरूप भी प्रभावित होता है। अनुवाद की सामग्री की जैसी प्रकृति होगी, उसाक प्रभाव भी वैसा ही होगा। अनुवाद की सामग्री यदि साहित्यिक है तो उसके अनुवाद का स्वरूप कलात्मक होगा, यदि प्रशासनिक है तो उसके अनुवाद की भाषा अलग होगी, वैज्ञानिक अथवा विधि संबंधी है तो उसके अनुवाद की भाषा का मिजाज अलग होगा। जहाँ तक विधि संबंधी सामग्री के अनुवाद का संबंध है, इसकी भाषा में एकार्थता, स्पष्टता, सरलता, सुनिश्चितता आदि गुण अपेक्षित होते हैं। स्पष्ट है कि अनुवाद की भाषा के ये गुण सजनात्मक साहित्य के अनुवाद के लिए आवश्यक नहीं होते।

सामान्य भाषा में भाषा का प्रयोग इतना सूक्ष्म नहीं होता है। बहुधा लोग शब्दों के सूक्ष्म अंतर को ध्यान में रखते हैं, किंतु कोई कठिनाई इसलिए नहीं होती कि वे एक–दूसरे का भाव समझने की स्थिति में हैं और उनकी बात का भिन्न अर्थ लगाने का कोई प्रयत्न नहीं करेगा। किंतु विधि में इस अंतर की उपेक्षा से अनेक विषम परिस्थितियाँ उत्पन्न हो सकती हैं। बोलचाल में हम जिस व्यक्ति पर मुकदमा चल रहा होता है, उसे भी 'अभियुक्त' कहते हैं और दण्ड पाए व्यक्ति को भी अभियुक्त कहते हैं। किंतु विधि में दोनों के लिए अलग–अलग शब्दों के प्रयोग की आवश्यकता होगी, नहीं तो एक के लिए की गई व्यवस्था दोनों पर लागू हो जाएगी।

अनुवाद क्षेत्र में आने पर भी वे सिद्धांत लागू होते हैं जो विधि के प्रारूपण के लिए लागू होते हैं। अनुवाद की भाषा भी संक्षिप्त और स्पष्ट होनी चाहिए। किंतु यहाँ आकर एक बहुत बड़ी कठिनाई इस बात की हो जाती है कि एक भाषा के शब्दों को दूसरी भाषा के शब्दों में प्रतिस्थापित करना होता है। यह एक भाषा–वैज्ञानिक सिद्धांत है कि एक भाषा के शब्द दूसरी भाषा के शब्दों में प्रतिबिंब नहीं होते। अतः एक भाषा में बनी विधि को दूसरी भाषा में व्यक्त करने में कठिनाई का अनुभव होना स्वाभाविक है। यहाँ कृष्णगोपाल अग्रवाल के विचार उल्लेखनीय हैं– "विधि में शब्द का विशेष महत्त्व होने के कारण यह आवश्यक हो जाता है कि अनुवाद की भाषा में प्रयुक्त शब्दों का अर्थ बिल्कुल वही हो जो मूल भाषा में प्रयुक्त शब्दों का है। यहाँ प्रस्तुत और अप्रस्तुत सभी का महत्त्व होता है। बहुत से शब्द अनेकार्थक होते हैं और परिस्थितियों के साथ उनके भिन्न–भिन्न अर्थ लिए जा सकते हैं। अनुवाद करने में यह सुनिश्चित करना होता है कि ये सारी बातें अनुवाद में भी आ जाएँ, अर्थात् मूल के जो–जो अर्थ जिन–जिन परिस्थितियों में लिए जा सकते हैं वे सारे अर्थ अनुवाद से भी लिए जा सकें। यह कितना भी अवैज्ञानिक क्यों न प्रतीत हो किंतु वास्तविक स्थिति यह है कि विधि का अनुवाद करने में हमें एक भाषा की शब्दावली का दूसरी भाषा में प्रतिबिंब प्रस्तुत करना होता है।

कहने का तात्पर्य यही है कि विधि के अनुवाद की भाषा को सामान्य भाषा की कसौटी पर कसना ठीक न होगा। उसका औचित्य विधि भाषा की आवश्यकताओं की दष्टि से आँका जाना चाहिए। यह आशा करना कि हिंदी में अनूदित विधि बोलचाल की भाषा–जैसी

लगे, ठीक नहीं। बोलचाल की भाषा में आज किसी भी सभ्य देश की विधि प्राप्त नहीं। हाँ, यह अवश्य है कि विधि के क्षेत्र में हिंदी का प्रचार एवं व्यापक प्रयोग होने पर यह स्वयं सरल एवं स्वाभाविक लगने लगेगी और अधिकाधिक व्यक्तियों का सहयोग होने से स्वयं उसका स्वरूप सामान्य आकांक्षाओं के अधिक अनुकूल हो जाएगा।

विधि साहित्य के अनुवाद की समस्याएँ

आज विधि के अनुवाद की उत्तरोत्तर बढ़ती हुई महत्ता के कारण विधि साहित्य के अनुवादकों के सामने आने वाली कठिनाइयों का उल्लेख करना अत्यंत आवश्यक प्रतीत होता है। इनमें से कुछ प्रमुख कठिनाइयाँ नीचे दी गई हैं–

1. **हिंदी में प्रारूपण की समस्या** – विधि का अनुवाद करते समय सबसे बड़ी समस्या है प्रारूपण की समस्या जोकि विधि से भिन्न अन्य किसी विषय में इतनी जटिल नहीं होती। इस समस्या का उल्लेख करने से पूर्व विधि के वाक्यों की प्रकृति पर दष्टिपात करना आवश्यक होगा। इसके लिए हम विधि को मुख्य रूप से दो भागों में बाँट सकते हैं– (क) संविधि जिसका निर्माण–स्त्रोत विधान मंडलों और संसद की संप्रभुता में होता है तथा (ख) असांविधिक और वाद विधि जिसका प्रादुर्भाव मुख्यतः विद्वान् विधिवेत्ताओं तथा सर्वोच्च न्यायाधीशों के निर्णयों से संबंधित होता है। इसी वर्ग में हम विभिन्न अधिनियमों की व्याख्यात्मक टीकाओं को भी रख सकते हैं।

विधि की भाषा–शैली संयुक्त वाक्य–विन्यासमयी, अन्तरापेक्षी तथा दुर्बोध होती हैं। इसके विपरीत असांविधिक विधियों तथा नाद्विधि आदि अन्य विधियों की भाषा–शैली इससे भिन्न होती है। वाद विधि में, संविधि में दी गई व्यवस्था का विवेचन और विश्लेषण कर उसे व्यावहारिक जीवन के तथ्यों का स्वरूप प्रदान किया जाता है। इसलिए इसकी भाषा–शैली विवेचनात्मक और विश्लेषणात्मक होने के साथ वर्णनात्मक तथा जीवन की यथार्थ घटनाओं का निरूपण करने वाली होती है। अभिप्राय यह है कि वाद् विधि में न्यायालय द्वारा विधि का निर्वाचन होता है जोकि संविधि के समान ही प्रभावी होता है अतः वाद् विधि में न्यायालय द्वारा विधि का निर्वाचन होता है जोकि संविधि के समान ही प्रभावी होता है अतः वाद् विधि के अनुवाद की समस्या संविधि के प्रारूपण की समस्या से कम महत्त्वपूर्ण नहीं है।

2. **हिंदी में प्रचलित अंग्रेजी शब्दों की समस्या** – विधि शब्दावली के अनुवाद के संदर्भ में एक समस्या अंग्रेजी भाषा के हिंदी भाषा में प्रचलित शब्दों की है। समस्या यह है कि क्या ऐसे शब्दों का ज्यों का त्यों लिप्यंतरण किया जाए या उनका हिंदी में अनुवाद किया जाए। उदाहरण के लिए निम्नलिखित शब्द देखें –

	अंग्रेजी शब्द	हिंदी अनुवाद	लिप्यंतरण
1.	Report	प्रतिवेदन	रिपोर्ट
2.	Premium	अधिमूल्य	प्रीमियम
3.	Decree	आज्ञप्ति	डिक्री
4.	Company	समवाय	कम्पनी
5.	Registration	पंजीकरण	रजिस्ट्रेशन

स्पष्ट है कि इन अंग्रेजी शब्दों के लिए नए शब्दों का निर्माण करने का कोई विशेष कारण नजर नहीं आता। एक तो ये शब्द प्रचलित नहीं हैं और दूसरे उन्हें अपनाने में भी कठिनाई आएगी। ऐसे शब्दों को लिप्यंतरण द्वारा या अपनी भाषा की प्रकृति के अनुवार ढाल कर प्रयोग में लाने से भाषा की सहजता पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता।

3. **विधि शब्दावली की विशिष्ट अर्थवत्ता की समस्या** – विधि शब्दावली के अनुवाद की एक समस्या शब्दों को विशिष्ट अर्थवत्ता से संबंधित है। विधि साहित्य में प्रत्येक शब्द अपने विशिष्ट अर्थ का वाहक होता है। विधि की शब्दावली में सूक्ष्म अर्थ का अंतर निहित होता है। अनुवाद में भी इस तरह शब्द के सूक्ष्म अंतर को याद रखना पड़ता है। कभी–कभी दो भिन्न परिस्थितियों के लिए दो स्वतंत्र शब्दों की अपेक्षा एक ही शब्द के प्रयोग से काम चला लिया जाता है। इसका कारण स्वतंत्र शब्द का अभाव मानना पड़ेगा। उदाहरण के लिए 'अभियुक्त' शब्द को ले सकते हैं। जिस व्यक्ति पर मुकद्दमा चल रहा है उसे 'अभियुक्त' कहा जाता है और जिसे सजा या दंड हुआ उसे भी 'अभियुक्त' कहा जाता है। वस्तुतः विधि में उपर्युक्त दोनों के लिए अलग–अलग शब्दों के प्रयोग जरूरी हो जाते हैं। वरना एक के लिए की गयी व्यवस्था दोनों पर लागू होती है और यहीं पर भ्रम हो जाता है। अलग–अलग परिस्थिति में उसके लिए अलग शब्द न मिलना विधि–अनुवाद की मुख्य समस्या है। उदाहरण के लिए अंग्रेजी के शब्द 'Appear', 'Present', 'Attend' जैसे शब्दों को देखने से उनके अर्थों में सूक्ष्म अंतर दष्टिगोचर होगा जिनके क्रमशः हिंदी पर्याय होंगे 'उपसंजात', 'प्रस्तुत' तथा 'उपस्थिति'। इन तीनों अर्थों में अत्यंत सूक्ष्म क्यों न हो किंतु अंतर जरूर है। कोई व्यक्ति विद्यालय के लिए किसी शिक्षण विभाग में दर्शक के रूप में 'प्रेजेण्ट' हो सकता है लेकिन तब नहीं कहा जा सकता कि उसने 'अटेंड' किया। दूसरी तरफ कोई छात्र अपने स्नातकोत्तर क्लास को 'अटेंड' कर कहता है कि मैं इस बार परीक्षा में 'एपियर' नहीं होने वाला। उसी तरह कोई दर्शक न्यायालय में 'प्रेजेंट' हो सकता है लेकिन कहना गलत होगा कि उसने न्यायालय 'अटेंड' किया और कोई वकील न्यायालय 'अटेंड' जरूर करता है परंतु कह सकता है कि मैं इस मुकद्दमे में 'एपीयर' नहीं हो रहा हूँ। अतः विधि शब्दावली के अनुवाद में ऐसे शब्दों

एवं उनके अर्थों के सूक्ष्म अंतर को ध्यान में रखा जाना चाहिए।

4. **विधि शब्दावली में एकरूपता का अभाव** – विधि साहित्य के अनुवाद में शब्दावली में एकरूपता का अभाव भी एक महत्त्वपूर्ण समस्या हैं विभिन्न विद्वानों द्वारा लिखी गई या अनुवादकों द्वारा अनूदित की गई पुस्तकों में यह समस्या प्रायः दष्टिगोचर होती है। कभी–कभी तो यह स्थिति भी सामने आती है कि एक ही पुस्तक में एक ही मूल शब्द के लिए भिन्न–भिन्न हिंदी पर्यायों का प्रयोग देखने को मिलता है। चूँकि विधि का अनुवाद, कविता–कहानी आदि साहित्य के अथवा मानविकी या विज्ञान के विभिन्न विषयों के अनुवादों से सर्वथा भिन्न है। इसका कारण यह है कि जो अन्य विषयों में अनुवाद के लिए आवश्यक गुण समझे जाते हैं वे विधि साहित्य में आकर दोष बन जाते हैं या जो साहित्यानुवाद में दोष समझे जाते हैं, वे विधि साहित्य में अनिवार्य गुण माने जाते हैं। साहित्य का पुनरुक्तिदोष इसका स्पष्ट प्रमाण है। विधि साहित्य में एक ही मूल शब्द के लिए भिन्न–भिन्न हिंदी समानकों का प्रयोग करना दोषपूर्ण हो जाता है। यह विधि की सुनिश्चितता एवं एकरूपता की दष्टि से दोषपूर्ण है। अतः विधि के प्रारूपकारों को इस ओर बड़ा सचेत एवं सचेष्ट रहना पड़ता है कि जो मानक शब्द (मूल का हिंदी समानक) उसने एक स्थल पर प्रयुक्त किया है संपूर्ण रूपांतर में उसी का प्रयोग किया जाए। यहाँ कुछ उदाहरण देखे जा सकते हैं–

	मूल शब्द	**हिंदी पर्याय**
1.	Receipt	पावती, रसीदी
2.	Company	कंपनी, समवाय
3.	Registration	पंजीकरण, रजिस्ट्रेशन
4.	Order	क्रम, आदेश
5.	Civil	दीवानी, सिविल
6.	Receiver	आदाता, प्रापक
7.	Acquiscene	उपमति, मौन सम्मति

5. **विधि की मानक शब्दावली** – 'शब्द ही ब्रह्म है' – की उक्ति विधि के क्षेत्र में सर्वाधिक चरितार्थ होती है। विधि के किसी भी उपबन्ध में प्रयुक्त शब्द के पीछे विधानांग का अनुमोदन निहित होता है और वही एक शक्ति है जो उस शब्द के स्थान पर दूसरा शब्द रखने या उसे निकाल देने के लिए सक्षम है। अतः विधि के अनुवादकों को यह स्वतंत्रता नहीं होती कि वे किसी मूल शब्द के स्थान पर अपनी भाषा के उपलब्ध पर्यायों में से किसी भी उपयुक्त शब्द का चयन करके प्रयोग कर लें। क्योंकि विधि के अनुवाद में प्रयुक्त शब्दों में अतिव्याप्ति दोषों का परिणाम विशाल जनसमुदाय के जीवन के साथ जुड़ा होता है। अनुवादक की किंचित् सी छूट से उनका जीवन संकटमय हो सकता है। ऐसी स्थिति की संभावना सबसे अधिक इसीलिए है कि विधि की मानक शब्दावली का सर्वथा अभाव रहा है। ब्रिटिश शासनकाल में जो हिंदी भाषी क्षेत्रों में विधि के नागरी लिपि में हिंदुस्तानी भाषा में अनुवाद प्रकाशित होते थे उनमें विधि की एक मानक शब्दावली का सर्वथा अभाव पाया जाता था। उनमें प्रयुक्त शब्दावली अधिकांशतः फारसी और अंग्रेजी भाषाओं की होती थी जिसे हिंदी भाषा की मानक शब्दावली के रूप में अंगीकार नहीं किया जा सकता। कृष्णगोपाल अग्रवाल के शब्दों में– "इस क्षेत्र में एकरूप मानक शब्दावली का प्रश्न हिंदी अनुवादकों के सामने एक जटिल प्रश्न बनकर आया। सबसे पहले संविधान का हिंदी रूपांतर तैयार करते समय जब भारत सरकार के सामने शब्दावली का प्रश्न आया तो इसके लिए विधायी आयोग की स्थापना हुई जो इस काम में 1961 से लगा हुआ है। और अब तक प्रायः सभी अधिनियमों में प्रयुक्त होने वाली शब्दावली का निर्माण कर चुका है। इसी शब्दावली को विधि की मानक शब्दावली माना जा सकता है। आयोग ने इस शब्दावली का प्रयोग अधिनियमों के हिंदी अनुवादों में किया है। अतः आयोग द्वारा निर्मित शब्दावली को ही न्यायालयों में न्याय–प्रशासन हेतु मान्यता दी जाएगी। निश्चय ही विधिक संकल्पनाओं की इस आधार पर रचित शब्दावली को प्रामाणित माना जा सकता है।"

6. **एकार्थता** – विधि के प्रारूपकार के समक्ष दूसरा सबसे बड़ा प्रश्न यह होता है कि उसकी वाक्य रचना से सर्वथा एक ही अर्थ ध्वनित हो। प्रयुक्त शब्द से अभिधेय की ही अभिव्यक्ति होनी चाहिए, द्वियार्थकता से अनावश्यक मुकद्दमेबाजी और न्याय–प्रशासन के क्षेत्र में व्यवस्था भंग होने का, भय रहता है। रूपांतरण करते समय यह देखना पड़ता है कि प्रत्येक शब्द का अर्थ अभिधा द्वारा प्रकट हो और अभिवक्ताओं को उसमें लक्ष्यार्थ या व्यंजनार्थ खोज निकालने का अवसर न मिले।

7. **विशुद्धता** – अन्य किसी भी विषय की अपेक्षा विधि के अनुवादक को प्रारूपण करते समय मूल पाठ के प्रति विशुद्धता का अधिक ध्यान रखना पड़ता है। अधिनियम के किसी भी उपबंध अथवा उसके निर्वाचन को हिंदी में अनूदित करते समय अनुवादक का यह कर्त्तव्य होता है कि वह मूल विधि के प्रति पूर्णतः निष्ठावान बना रहे। मूल पाठ के अभिप्रेत अर्थ को घटाने–बढ़ाने की बात तो दूर रही उसे if, it, any and every आदि सामान्य–से–सामान्य शब्दों की महत्ता और अर्थगर्भिता का पूर्णरूपेण ध्यान रखना पड़ता है। अभिप्राय यह है कि मूल के उपलबंध से भी अर्थ अभिप्रेत हो वह रूपांतर के शब्दों द्वारा यथावत् स्पष्टतः ध्वनित हो। प्रायः अनुवादकों का विचार है कि अंग्रेजी के वाक्य–विन्यास को हिंदी अनुवाद में ज्यों–का–त्यों उतार देना चाहिए। बल्कि कहीं–कहीं तो ऐसा होता है कि एक विचार को अनवरत अभिव्यक्ति प्रदान करने तथा उस पर बल देने के लिए हिंदी व्याकरण का सामान्य क्रम भी बदलना पड़ता है। उदाहरणार्थ भारतीय परिसाध्य अधिनियम की धारा 122 का हिंदी अनुवाद देखिए–

मूल

"No person who is or has been married, shall be compelled to disclose any communication made to him during marriage by any person to whom he is or has been married, nor shall he be permitted to disclose any such communication,unless the person who made it, or his representative in interest, consents, except in suits between marreid persons or proceedings in which one married person is procecuted for any crime committed against the other."

अनुवाद :

"कोई भी व्यक्ति जो विवाहित है, या रह चुका है, किसी संसूचना को, जो किसी व्यक्ति द्वारा जिससे वह विवाहित है या रह चुका है, विवाहित स्थिति के दौरान उसे दी गई थी, प्रकट करने के लिए विवश न किया जाएगा और न वह किसी ऐसी संसूचना को प्रकट करने के लिए विवश किया जाएगा और न वह किसी ऐसी संसूचना को प्रकट करने के लिए अनुज्ञात किया जाएगा, जब तक कि वह व्यक्ति जिसने वह संसूचना दी है या उसका हित प्रतिनिधित्व सम्मत न हो सिवाय उन वादों में जो विवाहित व्यक्तियों के बीच हों, या उन कार्यवाहियों में जिनमें एक विवाहित व्यक्ति दूसरे के विरुद्ध किये गए किसी अपराध के लिए अभियोजित है।"

8. **अनुवाद की भाषा की सरलता व सहजता** – विधि के अनुवादों के आलोचकों का कहना है कि वाक्य लंबे होने के कारण दुर्बोध और जटिल हो जाते हैं इसलिए हिंदी में अनुवाद करते समय मूलपाठ के एक वाक्य को विभिन्न वाक्यों में तोड़कर अनूदित करना चाहिए क्योंकि हिंदी अंग्रेजी भाषा की भाँति संलिष्ट भाषा नहीं है। वस्तुतः हिंदी अनुवादकों के समक्ष यह प्रश्न एक समस्या बनकर आता है जिसका परिणाम कभी–कभी यह होता है कि अनुवाद की सरलता के प्रभाव में आकर विधि के जटिल एवं गंभीर विचारों को प्रकट करने की संक्षिप्तता जोकि विधि प्रारूपण का एक आवश्यक गुण है, जैसे गुण से हाथ धो बैठता है। अनुवादक विधि का अनुपयुक्त विस्तार कर देता है। किंतु इसका यह तात्पर्य नहीं कि अनुवादक सरलता का सर्वथा बहिष्कार कर जटिल एवं दुर्बोध वाक्यों की संरचना करे जिसका अर्थ भी निकालना दुःसाध्य हो जाए। वस्तुतः हिंदी के प्रारूपकार को जहाँ तक हो सके, विधि के विचार को अक्षुण्ण रखते हुए सरल एवं स्पष्ट वाक्यों की रचना करनी चाहिए। उदाहरण के लिए सम्पत्ति हस्तांतरण अधिनियम की धारा 54 के निम्नलिखित अनुवादों से यह अंतर स्पष्ट हो जायेगा–

मूल :

"Sale is a transfer of ownership in exchange for a price paid or promised to be paid or part paid and part promised."

सामान्य अनुवाद :

"विक्रय किसी दिए गए या प्रतिज्ञात किए गए या भागतः दिए गए हैं और भागतः प्रतिज्ञात किए गए मूल्य के बदले में स्वामित्व का अंतरण है।"

प्रस्तावित अनुवाद :

"विक्रय ऐसी कीमत के बदले में स्वामित्व का अंतरण है जो दी जा चुकी हो या जिसके देने का वचन दिया गया हो या जिसका कोई भाग दे दिया गया हो।"

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि विधि साहित्य का अनुवाद उतना सरल व आसान नहीं है जितना कि वह प्रतीत होता है। हर भाषा की अभिव्यक्ति की अपनी विशिष्टताएँ होती हैं। इसलिए अंग्रेजी में बनी विधि की भाषा ही अंग्रेजी नहीं होती, अपितु इसकी अभिव्यक्ति शैली भी अंग्रेजी की होती है। अनुवाद करने में हम भाषा तो बदल देते हैं किंतु अभिव्यक्ति–शैली में अंतर प्रायः नहीं किया जा सकता। इस संदर्भ में कृष्ण गोपाल अग्रवाल के विचार उल्लेखनीय हैं– "हिंदी में विधि बनाने का कार्य न होने के कारण और विधि–क्षेत्र से हिंदी के प्रायः बिल्कुल बहिष्कृत रहने के कारण हिंदी में विधि की अभिव्यक्ति की परंपरा नाममात्र को ही है। अतः अनुवाद के माध्यम से हिंदी में प्रस्तुत विधि का स्वरूप अस्वाभाविक या क्लिष्ट लगना स्वाभाविक ही है किंतु समझना यह चाहिए कि इस अस्वाभाविक एवं क्लिष्टता के अपने कारण हैं। प्रयोग का प्रसार हो जाने एवं परंपरा बन जाने पर अस्वाभाविकता एवं क्लिष्टता की यह प्रतीती स्वतः घट जाएगी। साथ ही मूल प्रारूपण हिंदी में होने पर स्वाभाविक भाषा के प्रयोग का अवसर भी बढ़ जाएगा। इस समय तो विधि–अनुवाद की वर्तमान कठिनाइयों को ही विशेष रूप से समझने की आवश्यकता है।"

अध्याय-6

पारिभाषिक शब्दावली

LINGUISTICS (भाषा विज्ञान)

Adjective	-	विशेषण	Flapped	-	उत्क्षिप्त
Adverb	-	क्रियाविशेषण	Hybrid Word	-	संकर शब्द
Arbitrary	-	यादच्छिक	Labial	-	ओष्ठ्य
Aspirated	-	महाप्राण	Larynx	-	स्वरयंत्र
Close	-	संवृत	Lateral	-	पार्श्विक
Cluster	-	गुच्छ	Length	-	मात्रा
Code	-	कूट	Lexicology	-	कोशविज्ञान
Composition	-	समास	Metathesis	-	विपयर्य
Consonant	-	व्यंजन	Nasal	-	नासिक्य
Contrast	-	व्यतिरेक	Nasalized	-	सानुनासिक
Density	-	घनत्व	Phrase	-	वाक्यांश
Dental	-	दन्त्य	Retroflex	-	मूर्धन्य
Descriptive	-	वर्णनात्मक	Rising	-	आरोही
Dialect	-	बोली	Root	-	धातु
Dome	-	मूर्धा	Spelling	-	वर्तनी
Endocentric	-	अन्तर्केन्द्रिक	Unaspirated	-	अल्पप्राण
Epiglottis	-	अभिकाकल	Uvula	-	अलिजिह्वा
Etymology	-	व्युत्पत्ति	Voiced	-	सघोष
Exocentric	-	बहिःकेन्द्रिक	Voiceless	-	अधोष
Falling	-	अवरोही	Vowel	-	स्वर

HUMANITIES (मानविकी)

Aesthetics	-	सौंदर्य	Folklore	-	लोककथा
Analogy	-	अनुरूपता	Idealism	-	आदर्शवाद
Aptitute	-	अभिरुचि	Investigation	-	अन्वेषण
Comedy	-	कामदी	Journalism	-	पत्रकारिता
Concept	-	संकल्पना	Logic	-	तर्कशास्त्र
Criticism	-	समालोचना	Materialism	-	भौतिकवाद
Democracy	-	लोकतंत्र	Omnipotence	-	सर्वशक्तिमत्ता
Diologue	-	संवाद	Omnipresence	-	सर्वव्यापकता
Diplomacy	-	कूटनीति	Optimism	-	आशावाद
Ecology	-	परिवेश विज्ञान	Pessimism	-	निराशावाद
Function	-	संवेग	Portics	-	काव्यशास्त्र
Environment	-	पर्यावरण	Population	-	जनसंख्या
Epic	-	महाकाव्य	Tragedy	-	त्रासदी
Ethics	-	नीतिशास्त्र	Voluntary	-	स्वैच्छिक
Fanaticism	-	धर्मांधता	White paper	-	श्वेतपत्र

ADMINISTRATION (प्रशासनिक)

Account	-	लेखा	Corrigendum	-	शुद्धिपत्र
Account Head	-	लेखा शीर्ष	Counter Signature	-	प्रतिहस्ताक्षर
Account, Joint	-	संयुक्त लेखा	Demotion	-	पदावनति
Accountant	-	लेखाकार	Deputation	-	प्रतिनियुक्ति
Accountant Gen	-	महालोखाकार	Designation	-	पदनाम
Accounts Offic.	-	लेखा अधिकारी	Director	-	निदेशक
Acknowledgement	-	पावती	Directorate	-	निदेशालय
Act	-	कार्य/अधिनियम	Directory	-	निर्देशिका
Acting	-	कार्यकारी	Discrepancy	-	विसंगति
Action	-	कार्यवाई	Discretion	-	विवेकाधिकार

Adhoc	-	तदर्थ
Administration	-	प्रशासन
Admininstrator	-	प्रशासक
Advance	-	अग्रिम
Adviser	-	सलाहकार
Affidavit	-	शपथपत्र
Agenda	-	कार्यसूची
Agreement	-	अनुबंध
Allegation	-	आरोप
Allotment	-	आवंटन
Allowance	-	भत्ता
Amendment	-	संशोधन
Annexure	-	अनुलग्नक
Anomaly	-	असंगति
Appendix	-	परिशिष्ट
Approval	-	अनुमोदन
Article	-	अनुच्छेद
Assistant	-	सहायक
At par	-	सममूल्य
Attached	-	संलग्न
Attestation	-	साक्ष्यांकन
Audit	-	लेखा परीक्षा
Auditor	-	लेखा परीक्षक
Autonomous	-	स्वायत्त
Cashier	-	रोकड़िया
Cell	-	कक्ष
Charge-sheet	-	आरोपपत्र
Circular	-	परिपत्र
Clerk	-	लिपिक
Contingencies	-	आकस्मिक व्यय
Project	-	परियोजना
Qualification	-	योग्यता
Questionaire	-	प्रश्नावली
Quorum	-	गणपूर्ति
Receipt	-	पावती
Recommnedation	-	संस्तुति
Registrar	-	कुलसचिव
Registration	-	पंजीकरण
Reminder	-	अनुस्मारक
Dissent	-	असहमति
Draft	-	प्रारूप
Drafting	-	प्रारूपण
Employee	-	कर्मचारी
Employer	-	नियोक्ता
Enclosure	-	संलग्नक
Enquiry	-	जाँच
Faculty	-	संकाय
Fund	-	निधि
Grant	-	अनुदान
Honorarium	-	मानदेय
Honorary	-	अवैतनिक
Identity	-	पहचान
Instalment	-	किश्त
Leave	-	अवकाश
Leave, Earned	-	अर्जित अवकाश
Leave, Extraoridiary	-	असाधारण अवकाश
Leave, Maternity	-	प्रसूति अवकाश
Leave, Quarantine	-	संगरोध अवकाश
Leave, Restricted	-	प्रतिबंधित अवकाश
Manager	-	प्रबन्धक
Manifasto	-	घोषणा–पत्र
Notice	-	सूचना
Notification	-	अधिसूचना
Noing	-	टिप्पण
Official	-	शासकीय
Pay scale	-	वेतनमान
Postpone	-	स्थगित करना
Procedure	-	कार्यविधि
Proceedings	-	कार्यवाही
Remuneration	-	पारिश्रमिक
Representative	-	प्रतिनिधि
Retirement	-	सेवानिवत्ति
Sanction	-	मंजूरी
Section	-	अनुभाग
Seniority	-	वरिष्ठता
Superintendent	-	अधीक्षक
Supervisor	-	पर्यवेक्षक
Verification	-	सत्यापन

COMPUTER (कंप्यूटर)

Accessory	-	सहयंत्र
Automation	-	स्वचालन
Central	-	केंद्रीय संसाधन
Enter	-	प्रवेश
File	-	संचिका
Frequency	-	आवत्ति
Function	-	प्रकार्य
Graph	-	आरेख
Input	-	निवेश
Margin	-	उपांत
Memory	-	स्मति
Output	-	निर्गम
Processing	-	संसाधन
Rapid	-	द्रुत
Scanner	-	क्रमवीक्षक
Screen	-	प्रपट्ट
Dynamic Memory	-	गतिक स्मति
Edit	-	संपादन
Processing Unit	-	एकक
Code	-	कूट
Coding	-	कूट लेखन
Column	-	स्तंभ
Command	-	समादेश
Computation	-	अभिरकलन
Computer	-	कंप्यूटर
Context	-	संदर्भ
Data	-	आँकड़ा
Data-Entry	-	आँकड़ा प्रविष्टि
Data Processing	-	आँकड़ा संसाधन
Delete	-	विलोपन
Device	-	युक्ति